अनातोली लुनाचार्स्की

चुने हुए लेख और भाषण



प्रगति प्रकाशन

शिक्षा का ध्येय

अनातोली लुनाचार्स्की

शिक्षा का ध्येय

चुने हुए लेख और भाषण



प्रगति प्रकाशन
मास्को



पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
५ ई, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-११००५५

टिप्पणियों के लेखक: ये० द्नेप्रोव
अनुवादक: ददन उपाध्याय

А. В. Луначарский

«ОБ ОБРАЗОВАНИИ И ВОСПИТАНИИ»

Сборник статей и выступлений

на языке хинди

Anatoli Lunacharsky

ON EDUCATION

Selected Articles and Speeches

in Hindi

सोवियत संघ में मुद्रित

Л $\frac{4305000000-551}{014(01)-84}$ 361-84

अनुक्रम

पाठकों से

आपके हाथ में यह पुस्तक अनातोली लुनाचार्स्की द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में छोड़ी गयी महान विरासत से परिचित कराती है। वह सोवियत राज्य और समाज के एक प्रमुख कार्यकर्ता थे तथा उन्होंने समाजवादी संस्कृति और शिक्षा के विकास में अमूल्य योगदान किया।

व्ला० इ० लेनिन ने लुनाचार्स्की को शिक्षा जन-कमिसार के पद पर नियुक्त किया और वह शिक्षा-जगत् के अन्य सुप्रसिद्ध कार्यकर्ताओं के साथ सोवियत सत्ता के पहले वर्षों में असाधारण रूप से कठिन परिस्थितियों में नयी शैक्षिक प्रणाली की आधारशिला रखने तथा सोवियत स्कूल के निर्माण के लिए मौलिक सैद्धांतिक और व्यावहारिक नीति तैयार करने में सफल हुए। लेनिन के सीधे मार्गदर्शन में लुनाचार्स्की ने एकीकृत पालीतकनीकी श्रम स्कूल के सिद्धांतों को कार्यान्वित किया और स्कूल-पूर्व शिक्षा, व्यावसायिक तथा उच्च शिक्षा व सामान्य सांस्कृतिक और शैक्षिक संस्थानों की एक व्यापक प्रणाली का निर्माण किया।

लुनाचार्स्की के शैक्षिक सिद्धांतों की शक्ति इसमें है कि वे मार्क्सवादी-लेनिनवादी विधिविज्ञान पर आधारित हैं, कि वह शिक्षा के प्रश्नों को सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक जीवन की समस्याओं से सघन ढंग से जोड़ते हैं। लुनाचार्स्की के लेख और भाषण स्कूल-प्रणाली के संगठनात्मक रूपों के लिए गहन वैज्ञानिक, मार्क्सवादी आधार प्रदान करते हैं, वे शिक्षा के उद्देश्यों, अंतर्वस्तु संबंधी मांगों तथा अध्यापन की विधियों को परिभाषित करते हैं। लुनाचार्स्की ने स्कूल और जीवन, व्यक्ति और समूह, व्यक्ति और समाज के बीच संबंध जैसी महत्वपूर्ण शैक्षिक समस्याओं के समाधान में योगदान किया। लुनाचार्स्की के विचार में, स्कूल को शिक्षा का एक महत्वपूर्ण कारक होना चाहिए और उन्होंने मानव-व्यक्तित्व के चहुंमुखी विकास को शिक्षा के मौलिक उद्देश्य के रूप में देखा।

लुनाचार्स्की ने घोषणा की कि समाजवादी समाज में उच्चतम मूल्य व्यक्ति है। उन्होंने लिखा, "हम ऐसे मनुष्य को शिक्षित करना चाहते हैं, जो नैतिक और आत्मिक रूप से यथासंभव अधिक सामंजस्य प्राप्त करे, जिसे पूर्ण सामान्य शिक्षा प्राप्त हो और जो किसी भी क्षेत्र में उच्च सुदक्षता आसानी से प्राप्त करने में समर्थ हो। हमारा उद्देश्य एक ऐसे व्यक्ति को शिक्षित करना भी है, जो एक सच्चा सहकर्मी और अपने सहनागरिकों का शुभचिंतक बने, सभी अन्य लोगों का साथी तथा समाजवादी आदर्श के लिए एक योद्धा – जब तक संघर्ष चलता है, तब तक के लिए – बने।"

लुनाचार्स्की के सभी कार्य उज्ज्वल और सुंदर भविष्य के प्रति पवित्र विश्वास से ओतप्रोत हैं। गृह-युद्ध, आर्थिक तबाही और अकाल के कठिन वर्षों में भी उन्होंने आदर्श मनुष्य के बारे में स्वप्न देखना नहीं बंद किया – "शारीरिक रूप से सुंदर, सामंजस्यपूर्ण ढंग से विकासमान, व्यापक रूप से शिक्षित मनुष्य, जो ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों – टेक्नोलॉजी, चिकित्साविज्ञान, विधि, साहित्य, आदि – में मौलिक और महत्वपूर्ण निष्कर्षों से परिचित हो।"

भविष्य के प्रति स्पष्ट दृष्टि, समाजवादी निर्माण की संभावनाओं की रोशनी में अत्यंत महत्वपूर्ण कार्यभारों का समाधान – ये लुनाचार्स्की की चारित्रिक विशेषताएं हैं। तात्कालिक कठिनाइयों के संयत मूल्यांकन ने आनेवाले कल के प्रति उनकी दृष्टि को कुंठित नहीं किया। उन्होंने कहा, "हम वर्तमान कठिनाइयों को मनुष्य के चहुंमुखी विकास संबंधी सर्वहारा की पहली आशाओं के पुष्पों को कुचलने नहीं दे सकते।" वस्तुतः इसी दृष्टिकोण से लुनाचार्स्की ने समाजवादी स्कूल के सामान्य शैक्षिक स्वरूप के लिए, उसे पालीतकनीकी स्कूल बनाने के लिए संघर्ष किया।

सोवियत स्कूल उस समय से एक लंबा मार्ग तय कर चुका है, जब उसकी आधारशिला तैयार की जा रही थी। लेकिन सोवियत स्कूल के मुख्य सिद्धांत हमारे समय में भी अपना स्थायी महत्व बनाये हुए हैं।

लुनाचार्स्की की अंतःदृष्टि उसमें से काफ़ी-कुछ को आधुनिकता प्रदान करती है, जो उन्होंने आधी सदी पहले कहा था। स्कूल और जीवन के बीच संबंधों, पालीतकनीकी शिक्षा तथा सांस्कृतिक क्षेत्र

म रचनात्मक कार्य की आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं से प्रत्यक्ष संबंध के बारे में उनके विचार आज विशेषतः महत्वपूर्ण हैं।

निस्संदेह, लुनाचार्स्की की शैक्षिक विरासत का हमारे ज्ञान की वृद्धि के लिए महान महत्व है, क्योंकि यह सोवियत शिक्षा के विकास-काल को सुविस्तृत और स्पष्ट ढंग से व्यक्त करती है। इस विरासत का रचनात्मक उपयोग दुनिया के दूसरे देशों में भी अनेक आधुनिक समस्याओं के समाधान में सहायता कर सकता है।

यह इस पुस्तक का एक उद्देश्य है।

मिख़ाईल प्रोकोफ़ियेव,
सोवियत संघ के शिक्षा मंत्री

संपादक की ओर से

इस पुस्तक में शिक्षा और पालन-पोषण की समस्याओं पर अनातोली लुनाचार्स्की के बारह लेख और भाषण सम्मिलित हैं। यह इस क्षेत्र में उनकी विरासत का एक छोटा अंश ही है। लेकिन ये रचनाएं इस विरासत के स्वरूप, इसके परिमाण और इसके सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक महत्व के बारे में पूरा-पूरा अनुमान देती हैं।

लुनाचार्स्की के लिए कोई भी ऐसी शैक्षिक समस्या नहीं थी, जो केवल सैद्धांतिक या केवल व्यावहारिक दिलचस्पी रखती थी। उन्होंने इन समस्याओं के समुच्चय को इसकी एकता और अविभाज्यता में देखा तथा उनके समाधान के प्रति राजनीतिज्ञ, सिद्धांतकार और व्यावहारिक कर्मी का रुख़ अपनाया। यह उनके व्यक्तित्व तथा शिक्षा-शास्त्री के रूप में उनके रचनात्मक कार्यकलाप की ख़ास विशेषता थी।

लुनाचार्स्की ने किसी भी कार्य को, छोटे-से-छोटे कार्य को भी, "वैज्ञानिक समाजवादी भावना" से भर दिया और उसे समाजवादी निर्माण के सामान्य कार्यों के मातहत बनाया; इसने उन्हें किसी भी शैक्षिक परिघटना के सारतत्व तथा समग्र सामाजिक और शैक्षिक प्रक्रिया में इसके स्थान को प्रकट करने में समर्थ बनाया। इस पुस्तक में शामिल लुनाचार्स्की की अधिकांश रचनाओं के शीर्षक – 'स्कूल का दर्शन और क्रांति', 'सर्वहारा राज्य को कैसे स्कूल की ज़रूरत है', सोवियत निर्माण प्रणाली में शिक्षा के कार्यभार', 'सोवियत शिक्षाशास्त्र के समाजवैज्ञानिक पूर्वाधार', आदि – ऐसा ही दृष्टिकोण पेश करते हैं।

लुनाचार्स्की ने स्कूल के लिए सामान्य नीति को भली-भांति देखा। इस नीति द्वारा अनिवार्य बने कार्यों से वह शिक्षा तथा पालन-पोषण की ठोस समस्याओं की ओर आगे बढ़े। इस सिद्धांत का तर्क उनकी प्रत्येक रचना में स्पष्ट है। क्रांति और शिक्षा, क्रांति और स्कूल, क्रांति और शिक्षाशास्त्र के समक्ष प्रस्तुत कार्यों की अभिन्न एकता –

यह शिक्षा तथा पालन-पोषण के क्षेत्र में लुनाचार्स्की के कार्यों की मुख्य दिशा है। यह शिक्षा के इतिहास में एक पहले मार्क्सवादी शिक्षाशास्त्री के रूप में लुनाचार्स्की की मुख्य भूमिका का परिचायक है।

इस पुस्तक में सम्मिलित लेख और भाषण "क्रांति और शिक्षा" की समस्या के विभिन्न पहलुओं – राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक रूप में इसके आविर्भाव, इसकी शैक्षिक अंतर्वस्तु – को व्यक्त करते हैं। पाठक क्रांति के पहले वर्षों में लिखी गयी "स्कूल के दर्शन" तथा शिक्षा के सामाजिक और संगठनात्मक कार्यभारों को समर्पित कृतियों से लेकर तीसरे दशक के अंत की रचनाओं तक, जो वैज्ञानिक शिक्षाशास्त्र के विधिवैज्ञानिक आधारों, पालन-पोषण और शिक्षण प्रक्रिया तथा विभिन्न विशिष्ट विधियों के मुख्य प्रश्नों पर रोशनी डालती हैं, सिलसिलेवार लुनाचार्स्की के शैक्षिक विचारों के विकास तथा समृद्धि को देख सकता है।

इस पुस्तक में सम्मिलित सभी लेखों और भाषणों में एक शिक्षाशास्त्री के रूप में लुनाचार्स्की के रचनात्मक कार्य के मुख्य विचार अभिव्यक्त हैं: संस्कृति के आधार के रूप में शिक्षा, आर्थिक और राजनीतिक कार्यों से इसका अविच्छेद्य संबंध, समाजवादी शिक्षा प्रणाली के आधार के रूप में सामान्य स्कूल, स्कूल के विकास के मुख्य कार्य के रूप में पालीतकनीकी श्रम स्कूल का निर्माण, समाजवादी समाज में उच्चतम मूल्य के रूप में व्यक्ति, आदि। इन विचारों और शिक्षा जन-कमिसार के रूप में लुनाचार्स्की के सभी कार्यों ने सोवियत स्कूल और सोवियत शिक्षाशास्त्र के विकास पर, समाजवादी राज्य के सामाजिक और शैक्षिक जीवन की संपूर्ण प्रगति पर लाभप्रद प्रभाव डाला।

शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस में भाषण

साथियो, मुझे शिक्षा जन-कमिसारियत की ओर से यहां एकत्रित शैक्षिक निकायों के प्रतिनिधियों का स्वागत करने और सीधे कमिसारियत की रिपोर्ट की ओर आगे बढ़ने की अनुमति दें। मैं यहां औपचारिक भाषण नहीं देना चाहता, मैं तो आपसे सिर्फ़ हमारे कार्य के बारे में विचार-विमर्श तुरंत शुरू करने का निवेदन करना चाहता हूं और इसके पहले, बेशक, एक रिपोर्ट तो पेश की ही जानी चाहिए। स्वतःस्पष्ट है कि पिछले दस या लगभग दस महीनों के दौरान कमिसारियत के समक्ष प्रस्तुत कार्य, हमारी कमिसारियत की मशीनरी को काम करने योग्य बनाना और इसके द्वारा किया गया कार्य इतना व्यापक रहा है कि इसके कुछ विवरणों को किसी भी व्याख्यान में निर्दिष्ट नहीं किया जा सकता और, अतएव, आपको कुछ दिनों में पर्याप्त अतिरिक्त सामग्री सहित इस कार्य की विदित योजना छपे रूप में मिल जायेगी, जिसका उपयोग आप हमारे विचार-विमर्श में कर सकते हैं।

मेरी रिपोर्ट वस्तुतः एक भूमिका होगी और मैं केवल हमारे कार्य की आम दिशा दिखाने, कुछ मंज़िलों को चिन्हित करने और इस विस्तृत क्षेत्र से आपको मोटे तौर पर परिचित कराने का प्रयास करूंगा।

साथियो, हमारे लिए यह स्वयंसिद्ध बात है कि अपनी स्वाधीनता और कल्याण के लिए जनता का संघर्ष तीन दिशाओं में आगे बढ़ता है। जनता अपने को विजयी तभी समझ सकती है, जब उसे पूर्ण जन-सत्ता प्राप्त हो, जब उत्पादन के साधन और ज्ञान उसके अधिकार में हों। ये एक-दूसरे की अभिन्न रूप से पूरक शर्तें हैं। यह केवल हमारी, क्रांतिकारी समाजवादियों की ही नहीं, बल्कि सभी कमोबेश पक्के जनवादियों की भी समझ है और, उदाहरणार्थ, अमरीका में भी, जब उन्होंने अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की थी, तो उनके प्रथम राष्ट्रपति ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि यदि ज्ञान के पर्याप्त क्षेत्र पर जनता का अधिकार नहीं होगा , तो जनवाद स्वतंत्र नहीं रहेगा।[1]

१८वीं शताब्दी ने महसूस किया कि यदि ज्ञानाभाव हो, तो राजनीतिक सत्ता और क़ानून के समक्ष समानता काफ़ी नहीं हैं। लेकिन उस शताब्दी की समझ में यह बात नहीं आयी कि कोई भी राजनीतिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम वैसे ही तब तक सिर्फ़ एक सद्भावना बना रहेगा, जब तक यह उत्पादन-साधनों के समाज के हाथों में हस्तांतरण पर आधारित नहीं होता। यह तो केवल आगे चलकर ही जीवन ने क्रमशः स्पष्ट किया कि "स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व" का नारा मात्र अशिक्षित समाज में ही नहीं, बल्कि समाजवादी समाज से परे सभी अन्य समाजों में भी असंभव है। अब तो हमें यह मालूम ही है कि जनता की सरकार – वास्तविक बहुमत की सच्ची सत्ता – केवल तभी संभव है, जब ये तीन शर्तें मौजूद हों: सरकारी सत्ता (जब तक यह ज़रूरी हो, जब तक इसे राज्य रद्द न करे), आर्थिक सत्ता और हरेक को ज्ञान देना अर्थात व्यापक शैक्षिक कार्य की व्यवस्था, जिससे जनसाधारण को अधिकतम चेतना विकसित हो सके।

राजनीतिक सत्ता शीघ्रतापूर्वक ली जा सकती है, यह सामान्यतया नये हाथों में राज्यपर्युत्क्षेपण के माध्यम से हस्तांतरित होती है। एक देश के आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर तथा इसके राजनीतिक रूपों के बीच अंतर्विरोध क्रमशः जमा होने लगते हैं। राजनीतिक रूप तब तक बने रहते हैं, जब तक विस्फोट का समय नहीं आ जाता। इसके बाद नये वर्ग क्रांतिकारी साधनों से राजनीतिक सत्ता अपने हाथों में ले लेते हैं। चूंकि सरकार के संगठन की प्रक्रिया स्कूली समस्याओं पर भी रोशनी डालती है, इसलिए मैं कुछ शब्दों में इसकी चर्चा करूंगा।

जब राजनीतिक क्रांति होती है, तो नयी सरकार का संगठन कठिन नहीं लगता। फ़रवरी – मार्च में जनता ने पुरानी सरकार का तख़्ता उलट दिया। लेकिन संपूर्ण नौकरशाही मशीनरी ज्यों की त्यों बनी रही और अस्थायी सरकार इसी पुरानी मशीनरी से शासन चलाना चाहती थी, क्योंकि वह क्रांति को एक ऐसी राजनीतिक कार्रवाई के रूप में देखती थी, जिसका परिणाम केवल सुधार ही हो सकते थे।[2] राजनीतिक रूप से यह एक क्रांति थी, लेकिन वास्तव में यह मात्र अत्यधिक दयनीय सुधारों का सिलसिला था। लेकिन जब क्रांति सामाजिक स्वरूप की होती है, तो बात कुछ और ही होती है। ऐसी ही स्थिति, उदाहरणार्थ, फ़्रांस में थी, जहां ऐसी जनवादी श्रेणियां थीं, जिन्होंने

सरकारी सत्ता में कभी कोई भाग ही नहीं लिया था; वे भविष्य में पुरानी राजकीय मशीनरी का किसी भी रूप में इस्तेमाल नहीं कर सकती थीं। पुरानी राजकीय मशीनरी को अहानिकर बनाने के लिए उन्हें इसे नष्ट करके एक नयी राजकीय मशीनरी की स्थापना करनी पड़ी थी। बेशक, यह एक कष्टपूर्ण और लंबी प्रक्रिया है। पर फ़्रांसीसी क्रांति बुद्धिजीवी शक्तियों का इस्तेमाल बेहतर ढंग से करने में समर्थ रही, क्योंकि वहां बुद्धिजीवी उस समूह से संबद्ध थे, जिसके हाथों में सत्ता हस्तांतरित हुई थी। पर हमारे यहां लगभग सभी बुद्धिजीवियों ने अपने को उन सुधारवादियों में शामिल कर लिया, जिन्होंने फ़रवरी क्रांति के बाद पुरानी प्रणाली को सुधरे हुए रूप में बनाये रखने की कोशिश की।

जब नयी क्रांति – अक्तूबर क्रांति – आयी, तो शासन के व्यावहारिक ज्ञान से वंचित किसान और सर्वहारा आगे आये और वे इससे कल्पनातीत ढंग से दूर थे। राजकीय सत्ता संगठित करने की प्रक्रिया को, जो अठारहवीं शताब्दी में भी कष्टपूर्ण और विकट थी, हमें और भी बड़ी कठिनाई से पूरा करना पड़ा। हम अब भी इस निर्माण-कार्य की कठिन परीक्षा से गुज़र रहे हैं, हम नहीं कह सकते कि हमारी राजकीय मशीनरी पूर्ण है। हमारे पास एक संविधान है, जिसे हम अस्थायी संविधान के रूप में देखते हैं,[3] और एक राज्य-मशीनरी है, जो फ़िलहाल अनिवार्य है। फिर भी, दस महीनों में हमने अभूतपूर्व कठिनाइयों के बीच काम करते हुए विशाल कार्य पूरा किया है।

हमारे समक्ष संपूर्ण संपदा को जनसाधारण के हाथों में हस्तांतरित करने का कार्य प्रस्तुत है। हम सभी जानते हैं कि विद्रोह करनेवाली जनता का पहला झुकाव, यदि वह जनता अपर्याप्त रूप से अनुशासित है, यदि वह अशिक्षित है, संपदा पर अधिकार प्राप्त करना होता है। लेकिन यह प्रायः ऐसे लोगों द्वारा धन-संपत्ति पर अधिकार प्राप्त करने के प्रयासों में अभिव्यक्त होता है, जो बिल्कुल पास में ही खड़े होते हैं, जो किसी समृद्ध महल के द्वार पर ही ग़रीबी की भयानक मुसीबतें झेल रहे होते हैं। और इसलिए कि हर कोई अपने पड़ोसी पर चाकू न उठाने पाये, उस संपदा को यथाशीघ्र नष्ट या वितरित करने की कोशिश की जाती है। छोटे-छोटे अंशों में हिस्सा बंटाने की

इस प्रवृत्ति ने फ़्रांसीसी क्रांति के दौरान अपना अधिकतम ज़ोर दिखाया था, यह हमारे यहां भी घट रहा है। यहां लूट-पाट की एक विवेकहीन प्रवृत्ति विद्यमान है। भूखों द्वारा यह लूट-पाट असंगठित तथा क्रांति के लिए विनाशकारी है। यहां कुलक का टुटपुंजिया व्यक्तिवाद भी है, जो पुरानी व्यवस्था से मुक्ति के आधार पर समान, छोटी अर्थ-व्यवस्थाओं का निर्माण करना चाहता है। और यहीं पर कम्युनिज़्म के महान विचार भी अस्तित्वमान हैं, जो हमें हमारे विश्व-प्रसिद्ध शिक्षकों से विरासत में प्राप्त हुए हैं। ये शिक्षक हमसे रूसी अर्थव्यवस्था को केवल एक जन-अर्थव्यवस्था के रूप में मानने की ही नहीं, बल्कि इसे इस रूप में साकार करने की भी अपील करते हैं।

यह एक ऐसा मार्ग है, जो उच्चतम शिक्षा, व्यापक ज्ञान और असाधारण आत्मनियंत्रण की मांग करता है। बेशक, वे लोग जो केवल छिद्रान्वेषण करना चाहते हैं, हाय-तोबा मचायेंगे ही। लेकिन आधार के ठोस, स्थायी गुणों पर ध्यान देनेवाले ईमानदार प्रेक्षक हमें समझेंगे और हम यह कह सकते हैं कि दुनिया में इतना फलप्रद कार्य पहले कभी नहीं हुआ, जितना कि इन महीनों में, जिनमें हमें रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यही चीज़ स्कूलों पर भी लागू होती है। हमें यह भली-भांति मालूम है कि जनसाधारण जब तक राजकीय और सामाजिक जीवन को सुव्यवस्थित नहीं कर सकते, तब तक अर्थव्यवस्था का सही संचालन नहीं कर सकते, जब तक वे शिक्षित होकर संपूर्ण आवश्यक ज्ञान से लैस नहीं हो जाते। एक नया स्कूल कायम करने का संघर्ष तीसरी और कोई कम महत्वपूर्ण शर्त नहीं है।

जब मुझे शिक्षा कमिसार नियुक्त किया गया, तो मैं उस विशाल ज़िम्मेदारी को महसूस किये बिना नहीं रह सका, जो जनता मेरे ऊपर रख रही थी। अब कार्य है शीघ्रतापूर्वक तथा व्यापक ढंग से जनता को ज्ञान प्रदान करना, ज्ञान के विशेषाधिकार को नष्ट करना, जो पहले समाज के केवल एक छोटे भाग को ही प्राप्त था। और यह शीघ्र स्पष्ट था कि यह स्कूलों का नियंत्रण प्राप्त करने का मामला नहीं था: स्कूल भी नौकरशाही मशीनरी की भांति ही कालातीत और बेकार बन गये थे। अस्थायी सरकार की तरह हम इस बात पर निर्भर नहीं कर सके कि हम ज़िला निरीक्षकों को कुछ परिवर्तनों के लिए आदेश जारी करेंगे; हमें तो सभी चीज़ों को मिटाना था; यह पूर्णतया

साफ़ था कि स्कूल का क्रांतिकारी रूपांतरण कब का अनिवार्य बन चुका था। मैं "विनाश और पुनर्निर्माण" नहीं कहूंगा, क्योंकि स्कूली स्टाफ़ "नष्ट" नहीं किया जा सकता और वास्तव में स्कूलों को कुछ समय के लिए बंद करना, अध्यापकों को हटाना तथा नये सिरे से निर्माण करना हमारे लिए संभव नहीं था।

पुराने स्कूल का दिवालियापन बिल्कुल स्पष्ट था, लेकिन इसी पुराने स्कूल में प्रगतिशील शिक्षक भी थे, जो पुरानी प्रणाली से असंतुष्ट थे और उन्होंने इसे पुनर्निर्मित करने का प्रयास किया। ऐसे शिक्षकों का अपना ही आदर्श था – उससे अधिक परिनिष्पन्न स्कूल, जो उस समय रूस में अस्तित्वमान था – और उन्होंने शिक्षा राजकीय समिति के रूप में अपने ही कार्यकारी निकाय की स्थापना की, जो अस्थायी सरकार के अंतर्गत सुधारों की एक पूरी की पूरी शृंखला तैयार कर रहा था।[4] पर अस्थायी सरकार हद दर्जे की अयोग्य सरकार थी। इसका कोई निश्चित कार्यक्रम नहीं था और निरंतर बदलते मंत्रियों में से हर नया मंत्री राजकीय समिति को आश्वासन देता था कि कुछ न कुछ किया जायेगा। हमें मालूम था कि राजकीय समिति जैसी कोई चीज़ है, कि अनेक प्रगतिशील शिक्षक हैं; हमें ज्ञात था कि हमारा स्कूली सुधार उनके सुधार से मेल नहीं खाता, हमारा सुधार और भी आगे जायेगा, कि यह एक ऐसा मानव निर्मित करने के कार्य का सिलसिला है, जो अधिक शिक्षित, अधिक अनुशासित, समाज के जीवन के अनुरूप होगा। अब जन-शिक्षा मंत्री बिल्कुल नहीं हैं। अब राजकीय सत्ता के समक्ष एक ही कार्य है: क्रांति द्वारा प्रदान की गयी विशाल भूमिका को पूरा करने के लिए लोगों को शीघ्रातिशीघ्र अधिकतम ज्ञान से लैस करना। पहले शिक्षक पूरी शक्ति से आवाज़ नहीं उठा पाते थे, वे इस ख़्याल से मंत्रियों से डरते थे कि वे कहीं निकाल न दिये जायें, लेकिन अब वे हमसे सहमति पर पहुंच सकते हैं।

शुरू में, जब मैं शिक्षा जन-कमिसार बना और इस कार्य के लिए अत्युत्तम ढंग से तैयार पांच-छः लोगों को लाया, तो मैंने अध्यापकों से अनुरोध किया कि वे हमारी सहायता में आगे आयें।[5] मैंने उन्हें मोटे तौर पर इंगित किया कि मैं स्कूलों के समक्ष प्रस्तुत कार्यों को किस रूप में देखता हूं और अध्यापकों से राजनीति को एक ओर रखने तथा स्कूलों के पुनर्निर्माण में हमारे साथ काम करने के लिए आगे

आने का निवेदन किया। मैं राजकीय समिति को पहले से बड़ी भूमिका प्रदान करने के लिए तैयार था। मैंने आश्वासन दियां कि पहले अध्यापकों के साथ परामर्श किये बिना मैं कोई भी क़दम नहीं उठाऊंगा : इसका उत्तर था भयानक तोड़-फोड़। "इस घृणाजनक क्रांति" के, जिसे वे जनता की क्रांति नहीं मानते थे, तीव्र पतन तथा पुरानी, अक्तूबर से पहले की व्यवस्था की वापसी की प्रतीक्षा करने का एक निश्चित निर्णय किया गया था, ताकि वे स्कूलों को वैसे ही बना सकें, जैसे वे बुर्जुआ वर्ग की सत्ता में पुनः आने पर बनाना चाहेंगे। स्कूलों में शांतिपूर्ण रचनात्मक कार्य की आशा असफल हो गयी। पेत्रोग्राद* में हम हड़ताल की चट्टान को बचाने में समर्थ थे, लेकिन मास्को में एक हड़ताल हुई और उसने पेत्रोग्राद में हमारे पहले संघर्ष से भी गहरे निशान छोड़े हैं।

जनसाधारण तथा अध्यापकों के बीच एक गहरे पारस्परिक द्वेष और गलतफ़हमी का दौर शुरू हुआ। स्कूलों का सुधार स्थगित करना और प्रगतिशील शिक्षकों से बचकर स्वयं जनसाधारण पर भरोसा करते हुए इसे प्राप्त करने के तरीक़े निर्धारित करना आवश्यक बन गया। हमारा उद्देश्य उस सुधार को मेहनतकश लोगों के हितों के अनुरूप बनाना है और हम अध्यापक यूनियन[6] की बाधा को नज़रअंदाज़ करते हुए उस उद्देश्य की ओर आगे बढ़ते जायेंगे।

हम यह भली-भांति समझते थे कि हम इन लोगों के स्थान पर दूसरों को रख सकते थे, मगर हमें कार्य सौंपने थे, मशीनरी सौंपनी थी, लेकिन हमें खाली कमरे, खाली हॉल मिले।[7] अब वही लोग, जो हमारे यहां नहीं आना चाहते थे, अत्यंत दीन-भाव से लौटने की हमारी अनुमति मांग रहे हैं। यदि अध्यापकों को कोई वेतन नहीं मिला है, यदि अध्यापक समुदाय के साथ कोई संपर्क नहीं रहा है, यदि शिक्षा जन-कमिसारियत के संपूर्ण संगठन में गड़बड़ी पैदा हुई है, यदि हम काम पर आने के व्यर्थ प्रयास में लगभग साल भर इधर-उधर भटकते रहे हैं, तो इसका सारा दोष उन पर है, जिन्होंने हमें काम सौंपने से इन्कार किया। अभी हम पेत्रोग्राद में इस मशीनरी को कार्यकारी अवस्था में लाये ही थे, अभी हम यह सोच ही रहे थे

---

*अब लेनिनग्राद। –**सं०**

कि हम अब वास्तविक जीवन जी सकते हैं और कि नयी मशीनरी कोई चीज़ पैदा कर सकती है, तभी जर्मन आक्रमण शुरू हो गया। कमिसारियत के एक बड़े भाग को यहां* स्थानांतरित करना और पेत्रोग्राद में उत्तर के लिए एक बड़ा विभाग क़ायम करना तथा यहां नयी जगह में, नये लोगों के साथ अपने को संगठित करना आवश्यक हो गया।[8] बेशक, आपको तो मालूम ही है कि स्थानांतरित होने का क्या अर्थ होता है, उन सभी फाइलों, कोषों और अभिलेखागारों, आदि को स्थानांतरित करने का क्या अर्थ होता है।

अब हम एक मूलतया भिन्न समय में रह रहे हैं: हम कमोबेश सामान्य ढंग से काम कर सकते हैं और कह सकते हैं कि ख़तरा टल गया है। फिर भी, हमारे सामने बड़ी कठिनाइयां पड़ी हुई हैं।

यह अकारण ही नहीं है कि रूस के मज़दूरों और किसानों के अंतरतम से ऐसे हज़ारों लोग निकले हैं, जिन्होंने सोवियत सरकार का कार्य संभाला है। वे एक रचनात्मक शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। हम कठिनाइयों से भयभीत नहीं हैं। सोवियत रूस के लिए कोई भी कठिनाई अजेय नहीं होगी। लेकिन ख़तरा और ही तरह का है: यह संघर्ष, अभी-अभी अपदस्थ हुए शत्रु के साथ संघर्ष है, जो अब भी अपना सिर उठाने के लिए तैयार है... युद्ध का यह वातावरण, एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाने की आवश्यकता – यही हमारी सबसे बड़ी कठिनाई है। इसे हमें अपने काम को संगठित करते हुए हमेशा ध्यान में रखना चाहिए। फिर भी, कमिसारियत ने एक निश्चित, पूर्ण रूप ग्रहण किया है, प्रांतों के साथ नियमित संबंध क़ायम किये जा रहे हैं, अध्यापक समुदाय हमारे साथ काम करने की दिशा में अधिकाधिक आगे बढ़ रहा है और हमें वास्तविक कार्य संपन्न करना चाहिए, हमें स्कूली सुधार की मुख्य रूपरेखाएं निर्धारित करनी चाहिए, ताकि हम दिखा सकें कि स्कूलों में वास्तव में क्रांति हुई है और अब उनका मालिक मेहनतकश लोगों के अलावा और कोई नहीं है।

सबसे पहले, हमें जन-शिक्षा के लिए ज़िम्मेदार विभाग को एक उचित स्वरूप प्रदान करना था। यह पुराने ढंग का नौकरशाही स्वरूप नहीं हो सकता था। हम सच्ची जन-सरकार अर्थात जनसाधारण को

---

* मास्को में। – **सं०**

संपूर्ण सत्ता का हस्तांतरण चाहते हैं। हमारी नीति यह है: स्कूल के मामलों में आम लोगों की दिलचस्पी पैदा करना, ऐसी व्यवस्था क़ायम करना कि अध्यापक स्थानीय आबादी द्वारा निर्वाचित और नियंत्रित हो और समितियों या परिषदों में संगठित स्थानीय आबादी ही स्कूलों का सर्वोच्च निदेशक बने।[9] हमें मालूम था कि अनेक स्थानों में लोग हमें नहीं समझेंगे; कम्युनिस्ट सहानुभूति रखनेवाले लोगों की श्रेणियां हमारे साथ गयीं, लेकिन पूरे का पूरा टुटपुंजिया वर्ग, कृषक वर्ग का अशिक्षित हिस्सा, जो नये सुधार के अभिप्राय को नहीं समझते, जो केवल सावन के अंधे की तरह गड़बड़ी ही गड़बड़ी देखते हैं, जो प्रगति के रथ को पीछे की ओर खींचते हैं – और यह जन-समूह बहुत बड़ा है – समझौता करने को इच्छुक नहीं हैं और इसलिए अब भी स्कूल संबंधी अनेक प्रश्नों का अंतिम निर्णय सरकार को ही करना पड़ता है।

अज्ञानता में डूबी जनता पूर्ण स्वशासन नहीं प्राप्त कर सकती और जन-सरकार की पूर्वशर्त केवल स्वयं उस जनसाधारण के शिक्षित होने की अवस्था के अंतर्गत ही संभव है, जिसके हाथों में सत्ता दी जानी है। जब तक यह प्राप्त नहीं किया जाता, तब तक जो हल चुना जाना चाहिए, वह है "प्रबुद्ध निरंकुशता"। बुद्धिजीवियों की कोई सत्ता नहीं है। सत्ता जनता के हरावल, जनता के उस भाग की होनी चाहिए, जो सही अर्थों में बहुसंख्यकों के हितों का प्रतिनिधित्व करता हो, जनता के उस भाग की सत्ता, जिसमें जनता की रचनात्मक शक्ति निहित होती है। वह रचनात्मक शक्ति सर्वहारा है और सरकार का वर्तमान रूप सर्वहारा अधिनायकत्व के अलावा और कुछ नहीं हो सकता।

रूसी परिस्थितियों के अंतर्गत यह अधिनायकत्व असंभव होगा, यदि हम यह नहीं जानते कि सर्वहारा के हित गरीब किसानों के हितों से मिलते-जुलते हैं। सर्वहारा तथा निर्धन किसान ख़ुद ही एक ऐसी विशेष राजकीय मशीनरी – सर्वहारा अधिनायकत्व – तैयार कर रहे हैं, जो जनता का मन-मस्तिष्क है और जो जनता के सच्चे हितों को पूर्णतः समझती है। छोटे किसानों की आबादी ने न तो सच्चे जनवादी कार्यों और न ही स्कूली सुधारों को समझा। वह राज्य से चर्च और चर्च से स्कूल के पृथक्करण[10] से भयभीत थी तथा हमारे सुधारों को बाहर से थोपी गयी किसी चीज़ के रूप में मानती थी। हम समूचे

2–350

कार्य को आम आबादी को नहीं सौंप सके, क्योंकि वह इसके लिए तैयार ही नहीं थी। जब हमने देखा कि आबादी दिये गये कार्य को पूरा नहीं कर पा रही है, तो हमें इसके निर्णय को ठीक करना पड़ा, इसका मार्गदर्शन करना पड़ा और इस अर्थ में हमने जनता के सहायकों के रूप में काम किया और उससे कहा: "देखो कि मज़दूरों और किसानों की सरकार कैसी है।"

जिन देशों में सांस्कृतिक स्तर ऊंचा है, वहां यह कार्य अधिक आसान होता। यहां हमें अपने उद्देश्यों को अधिक मंद साधनों से प्राप्त करना पड़ा; हमें स्थानीय सरकारी निकायों को संगठित करना था, जनसाधारण के बीच पूर्वाग्रहों से संघर्ष करना था और कथनी में ही नहीं, बल्कि करनी में भी यह दिखाना था कि भावी स्कूल, श्रम स्कूल जनता के सच्चे हितों के अनुरूप ही होगा। हमें उस स्कूल को किसी भी क़ीमत पर एक वास्तविकता बनाना था और हमें पूर्ण विश्वास है कि अगले दो वर्षों में ऐसे स्कूलों के अस्तित्व से वे सभी पूर्वाग्रह, जिन-से लोग पहले से ग्रस्त हैं, टूट जायेंगे तथा वे इसके लिए हमें धन्यवाद देंगे।

जब तक हम यह नहीं प्राप्त करते, तब तक पुराने शिक्षक, धार्मिक शिक्षक और दक़ियानूसी माता-पिता सभी संभव साधनों से हमारे सुधारों का विरोध करेंगे। इस दृष्टिकोण से आगे बढ़ते हुए हमने सामूहिक संस्थाओं के रूप में स्थानीय आयोग क़ायम किये हैं, जिनमें जनवादी संगठनों के प्रतिनिधि शामिल हैं। इन संस्थाओं में हम अपने शत्रुओं को निमंत्रित नहीं कर सके, जो या तो हमसे सहमत नहीं होते, या जब सहमत भी होते हैं, तो हमें सफल होने से रोकने के लिए कोई कोर-कसर नहीं उठा रखते और जिनके लिए मुख्य बात यह है कि हमारी हर विफलता को हमारे ही विरुद्ध एक तर्क बनाया जाये, कि उसे सोवियत सरकार के सिर पर दाग़ी जानेवाली गोली बनायी जाये। इस दृष्टि से, पराये तत्वों को इनमें लाना आस्तीन में सांप पालने की तरह होता। लेकिन इन शत्रुओं में तकनीकी विशेषज्ञ हैं, सुयोग्य लोग हैं। इस दृष्टि से हमें उनकी योग्यता का उपयोग करने के लिए बाध्य होना पड़ा, लेकिन उन्हें अपने आपे में ही रखने के लिए हमने मार्गदर्शक भूमिका सोवियत संस्थाओं को दे दी है।

मज़दूर प्रतिनिधियों की सोवियतों के अंतर्गत जन-शिक्षा विभागों के साथ हमने जन-शिक्षा परिषदों की स्थापना की है, जिनमें विद्वेष-

पूर्ण तत्वों को कुछ हद तक प्रतिनिधित्व दिया गया है।[11] हम यह बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि यह ख़तरनाक है, लेकिन हमने यह रास्ता इस वजह से अपनाया कि हम व्यापक तौर पर आम लोगों से संपर्क बनाना चाहते हैं, हम अपने प्रचार को निरंतर जारी रखना चाहते हैं, ताकि हमारे विचार लोगों तक पहुंच सकें। इस तरह, हम अपने दुश्मनों को अपने सच्चे सहयोगियों में रूपांतरित करेंगे, चाहे वे शुरू में कैसी भी भावनाओं के साथ हमारे यहां आये हों। और इस क़दम के नतीजे हमारे सामने आने भी लगे हैं। लोग अपने कार्य से मंत्रमुग्ध हो गये हैं और मैं "हार मान जानेवालों" से यह बार-बार सुन चुका हूं कि "जो भी आदमी एक बार भी आपके साथ काम करना शुरू करता है, वह महसूस करने लगता है कि उसे विजय या मृत्यु तक आगे बढ़ते जाना चाहिए, क्योंकि स्वयं यह कार्य ही इतना भव्य है कि आदमी इससे मंत्रमुग्ध होकर रह जाता है।" सृजनात्मक कार्य में सक्षम सभी सच्चे और प्रबुद्ध व्यक्तियों को हमारे यहां उचित स्थान प्रदान किया जायेगा तथा वे हमारे सहयोगी बन जायेंगे। हो सकता है कि वे हमारी कार्रवाइयों से पूरी तरह सहमत न हों, पर सामान्य परिस्थितियों में वे हमारे भाई, हमारे मित्र और साथी बन जायेंगे। इसी चीज़ पर तो हमने भरोसा किया और सोचते हैं कि उन स्थानों में भी जहां ये परिषदें अपने कार्यों को बिल्कुल नहीं पूरा कर रही हैं, वहां भी वे स्कूलों में किये गये परिवर्तनों में बड़ी दिलचस्पी रखनेवाले कुछ लोगों को सक्रिय बनाने का एक कारगर साधन सिद्ध हो रही हैं। हमारा नारा है – न्यूनतम पुलिस बल-प्रयोग, आम लोगों पर न्यूनतम दबाव और अधिकतम शिक्षात्मक कार्य। जब देर-सबेर पूर्वाग्रह मिट जायेंगे, तो हर कोई उन जन-हितों के प्रति हमारे हार्दिक प्रेम और सच्ची समझदारी को महसूस करने लगेगा, जिन्होंने हमारा पथप्रदर्शन किया है।

जिस विश्वास के साथ हम अपने कार्य की ओर आगे बढ़े हैं, वह हमारे शत्रुओं को पराजित करने तथा हमारे सत्य को प्रदर्शित करने में हमारी सहायता करेगा। सबसे अच्छा प्रचार तथ्यपूर्ण प्रमाण है, पर जनता के प्रति ईमानदार सरकार ही ऐसे प्रचार की छूट देने की हिम्मत कर सकती है।

अब इस सामान्य रूपरेखा के बाद मैं उस मशीनरी का वर्णन

२*

प्रस्तुत करने की ओर आगे बढ़ूगा, जिसे हमने पुराने शिक्षा मंत्रालय के स्थान पर क़ायम किया है। मैं उन अत्यंत महत्वपूर्ण आज्ञप्तियों में से कुछ की गिनती कराऊंगा, जिन्हें हमने जारी किये हैं। सबसे पहले, हमने न्यासियों, स्कूल-निदेशकों और निरीक्षकों के पदों को रद्द करके पुरानी मशीनरी के अवशेषों को समाप्त कर दिया।[12] इस सुधार की तैयारी कई सालों से की जा रही थी; हमने इस कार्य को गंभीरतापूर्वक पूरा कर दिया। इसके बाद स्कूलों से ऐसी चीज़ों को हटाना था, जो हमें बिल्कुल अस्वीकार्य थीं और हमने धर्मग्रंथ की शिक्षा का निषेध करते हुए तथा पाठ्यक्रम से लैटिन भाषा को हटाते हुए आज्ञप्ति जारी की; हमने जिस रूप में मैट्रिक परीक्षा प्रणाली विद्यमान थी, उसका उन्मूलन कर दिया और इसके स्थान पर विज्ञान कोर्सों के अध्ययन को प्रमाणित करते हुए प्रमाणपत्र शुरू किये; हमने अंक देने की प्रणाली समाप्त कर दी और सह-शिक्षा लागू की। कोई भी शिक्षक यह मानेगा कि ये सभी सुधार सामान्य स्कूल जैसी किसी चीज़ के लिए अनिवार्य शर्तें हैं।[13]

हमने केवल स्कूल पर लदे कूड़े-करकट को साफ़ कर दिया, केवल इसे कुछ अत्यधिक स्पष्ट विरूपणों से मुक्त कर दिया। इसके बाद हमें स्कूल के सच्चे, रचनात्मक सुधार में लग जाना चाहिए।

मुझे अवश्य ही यह कहना चाहिए कि मैंने ऐसी परिस्थितियों में इन सुधारों के ख़िलाफ़ किसी प्रतिरोध या प्रतिवाद की आशा नहीं की थी, लेकिन उन्होंने शिक्षकों के बीच एक गहरी फूट तो पैदा की ही। मैं यह नहीं कहना चाहता कि शिक्षाशास्त्रीय विज्ञान स्कूल के बारे में हमारे विचारों के ख़िलाफ़ है। उल्टे, हम उस विज्ञान से एक ऐसा निष्कर्ष निकाल रहे हैं, जो स्वयं ही वैसा निकाले जाने की मांग कर रहा है। तो फिर समस्या क्या है?

निस्संदेह, हर अवधि-विशेष के लिए केवल एक ही वस्तुगत सत्य अस्तित्वमान होता है, लेकिन स्पष्टतः हरेक वर्ग इस संपूर्ण सत्य को स्वीकार करने का साहस नहीं कर पाता। केवल सर्वहारा में ही इस सत्य को स्वीकार करने का साहस होता है, जब कि बुर्जुआ वर्ग विज्ञान को उसी हद तक स्वीकार करता है, जिस हद तक यह उसके लिए मुनाफ़ादेह होता है। जब विज्ञान ऐसे निष्कर्ष निकालता है, जो इस वर्ग के लिए विनाशकारी, घातक होते हैं, तो बुर्जुआ वर्ग उन निष्कर्षों

की ओर से आंखें मूंद लेता है। यह एक ख़ास तरह का अंधापन है, जो केवल कंधों तक ही देखने देता है न कि सिर को भी। और इस संबंध में शिक्षाशास्त्र कोई अपवाद नहीं है।

बुर्जुआ वर्ग मेहनतकश लोगों के लिए स्कूल को नहीं स्वीकार कर सकता, एक ऐसा स्कूल, जो सबकी पहुंच के भीतर हो। बुर्जुआ वर्ग शिक्षाशास्त्रीय कार्य के उन नये रूपों को नहीं स्वीकार कर सकता, जो उस परिणाम को प्राप्त करना अधिक आसान बना देते हैं, जिसे हर सच्चा शिक्षक प्राप्त करने की कोशिश करता है। कुछ समय पहले, मैंने कुछ पुरोहितों के साथ वाद-विवाद में भाग लिया[14] और तब मुझे बड़ी ख़ुशी हुई, जब उन्होंने घोषणा की कि पूर्ववर्ती सरकार ईसाई धर्म के आदर्शों के अनुरूप नहीं थी, कि समाजवाद "ईसाई धर्म और उसके आदर्शों की सही समझ" है। इससे तो केवल यही स्पष्ट होता है कि वह सरकार, जिसने अपने इन नौकरशाहों को तैयार किया, अपने अस्त्रों तक को इस्तेमाल करने में असमर्थ थी। सभी प्रतिबंधों के बावजूद, अपने कर्मचारियों को भ्रष्ट करने के लिए इस्तेमाल किये गये सभी हथकंडों के बावजूद वह केवल अपने ख़िलाफ़ उनके प्रतिवादों को निमंत्रित करने में ही समर्थ रही।

अपने उद्देश्यों के लिए विज्ञान का प्रयोग करने की बुर्जुआ वर्ग की क्षमता मूलतया भिन्न होती है और यह जितना ही अधिक मज़बूत होगा, उतना ही अधिक प्रभावोत्पादक उसका निर्मित भवन होगा और उतना ही अधिक यह लोगों को अंधा बना सकेगा, जो यह विश्वास करने के लिए तैयार रहेंगे कि ये वास्तव में विज्ञान के सच्चे निष्कर्ष हैं। दुनिया में सबसे "सुसंस्कृत" देश, अमरीका में यह कौशल अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच गया है। वहां सरकार का रूप ऐसा है कि उसे वास्तविक जन-राज्य माना जा सकता है। अमरीका का हर नागरिक कहता है कि उसके देश में जनता का शासन है। वह यह अपने आठ घंटे के कार्य-दिवस के बाद, मशीन को अपने माथे के पसीने से शराबोर करने के बाद भी कह सकता है, वह यह अपने घर लौटते हुए भी कहेगा, जहां वह दसवीं मंज़िल पर एक कमरे में गुज़र-बसर करता है; वह यह किसी राकफ़ेलर के विशाल भवन के सामने भी कहेगा, जहां दौलतमंद लोग दिन में हज़ारों-हज़ार डालर ख़र्च कर डालते हैं। वहां भी वह कहेगा कि उसके यहां वास्तविक जन-

सरकार है। और यह इस वजह से है कि अमरीका में बुर्जुआ वर्ग अपने सभी उपलब्ध साधनों का पूर्ण उपयोग करने में समर्थ रहा है, वह इस बात के लिए विज्ञान का इस्तेमाल करने में सफल रहा है कि जनसाधारण केवल कंधों तक ही देख सकें न कि सिर को भी। बुर्जुआ वर्ग ने समूची दुनिया की आंखों में धूल झोंकने के लिए कोई कोर-कसर नहीं उठा रखी है और आज यह बात किसी से छिपी नहीं है कि इसके लिए वह एक ओर, स्कूल के वर्ग-स्वरूप का इस्तेमाल करता है और, दूसरी ओर, वस्तुगत सत्य की व्याख्या इस ढंग से करने की कोशिश करता है कि इससे केवल बुर्जुआ वर्ग को ही लाभ पहुंच सके। स्कूल ऐसी स्कीम के अनुसार बनाया गया है ताकि दो तरह के लोग तैयार हो सकें। और इस संबंध में अत्यधिक विकसित देशों ने आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की है। वहां सभी उपलब्ध साधनों को इस ढंग से काम में लाया जा रहा है कि विज्ञान का उपयोग अपराध को उचित ठहराने तथा उन लोगों को ही अपराध और डकैती के रक्षकों में बदलने में किया जा सके, जिनका रक्त अंतिम बूंद तक चूसा जा रहा है। दो तरह के लोगों का यह प्रशिक्षण, जिसे बुर्जुआ वर्ग की आत्मपरिरक्षण भावना अनिवार्य बनाती है, हमारे लिए एक अभिशाप है।

स्पष्टतया, वर्ग-संस्कृति का उन्मूलन करनेवाले हम लोग केवल एकीकृत स्कूल की ही स्थापना कर सकते हैं। इसमें ऐसी किसी प्रवृति का कोई स्थान नहीं होगा, जिसका उद्देश्य आदमी को शासक वर्ग का आज्ञाकारी औज़ार बनाना हो। इस दृष्टि से, मैं बुर्जुआ वर्ग से असंबद्ध शिक्षकों और ख़ास तौर से जनवादी शिक्षकों से कहता हूं कि वे हमारे साथ जायेंगे। यह अकारण ही नहीं कहा जाता है कि एक सच्चा विद्वान समाजवाद की प्रगति को ऐसे महसूस करता है, जैसे कि दासता से मुक्ति को। जहां तक वह एक "वास्तविक राजकीय पार्षद"* होता है, वहां तक उसे उस स्वर्ण-पिंजरे में दिलचस्पी होती है, जिसमें वह बैठा होता है, लेकिन जहां तक वह एक सच्चा विद्वान और प्रगतिशील शिक्षक होता है, वहां तक वह जानता है कि यह पिंजरा उसे अपने पंखों को उन्मुक्ततापूर्वक फैलाने नहीं देता। वह इसमें सड़ता रहता है और जब उसे यह महसूस होता है कि वह इससे मुक्त

---

* ज़ारशाही के अंतर्गत एक उच्च पदाधिकारी। – **सं०**

जा गया है, तो यह एक भयानक अनुभूति हो सकती है, मगर वह इसके लिए हमें धन्यवाद कहेगा।

हम शिक्षक को मुक्त करना तथा उसे अपने पेशे की सही भूमिका प्रदान करना चाहते हैं, यानी व्यक्तिवादियों को नहीं, बल्कि ऐसे लोगों को तैयार करना, जो मानव न्याय का एक अंग होंगे। यही हमारे लिए आदर्श स्कूल का कार्य है।

नार्वे में प्रगतिशील बुर्जुआ वर्ग के कुछ प्रतिनिधियों ने एकीकृत स्कूल की स्थापना की है।[15] लेकिन इस स्कूल के पास ऐसी अन्तरात्मा नहीं है, जो इसे न केवल एकीकृत, बल्कि ऊपर से नीचे तक एक जन-स्कूल भी बनाये। इस एकता को जनता में निहित शक्ति, सद्गुण और सारतत्व की छाप प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि स्कूल सच्चे अर्थों में एक श्रम का स्कूल भी बने। हमने अपनी क्रांति श्रम के झंडे तले संपन्न की। हमारे लिए यह क्रांति श्रम से मुक्त होने का मामला नहीं है, क्योंकि श्रम से परे जीवन तो एक बिल्कुल ही व्यर्थ जीवन है। हमारा विचार काम न करने में नहीं, बल्कि कार्य का सही ढंग से वितरित करने में निहित है।

आदमी श्रम करने के लिए नहीं जीता, बल्कि वह सच्चे अर्थों में मनुष्य की भांति जीने के लिए श्रम करता है। मानव-प्रकृति की इस प्रवृत्ति में ही उसकी वह दिव्यता, गरिमा निहित होती है, जो उसे जानवर से पृथक कर देती है, क्योंकि जानवर चेतनारहित होता है। मनुष्य श्रमिक है और प्रकृति उसकी सामग्री है। उसका कर्त्तव्य प्रकृति को अपने आदर्श के अनुरूप ढालना है। कार्ल मार्क्स के ये शब्द वास्तव में मूल्यवान हैं कि अब तक विज्ञान ने दुनिया की केवल व्याख्या ही की है, हमारा काम इसे बदलना है।[16]

हर आदमी को श्रमजीवी होना चाहिए, जिसके लिए विज्ञान मात्र एक समर्थन है, जिसके लिए विज्ञान श्रम के लिए एक प्रारंभिक तैयारी का काम करता है, ताकि श्रम को उपयोगी बनाया जा सके, ताकि उसे मानव आदर्श द्वारा निर्धारित मार्ग पर निदेशित किया जा सके। इसीलिए हम अपने स्कूल को एक श्रम-स्कूल बना रहे हैं (और यहां हम बुर्जुआ वर्ग से अंशतः सहमत और अंशतः असहमत हैं)। जैसा कि मैंने कहा, चतुर बुर्जुआ वर्ग ने यह समझकर कि लैटिन भाषा अधिक दूर तक नहीं जायेगी, विल्हेल्म द्वितीय के शब्दों में कहा है:

"कृपया, मुझे अपने स्कूलों से तकनीकी योग्यताएं-प्राप्त अधिकाधिक लोग दीजिये और यूनानी तथा लैटिन भाषाएं भाड़ में जायें। हम इंतज़ार नहीं कर सकते, हमें लड़ाइयां लड़नी हैं..."[17]

हम अब जो चीज़ कार्यान्वित कर रहे हैं, अत्यधिक प्रगतिशील शिक्षक उसके बहुत निकट हैं। निस्संदेह, वे हमें जो कुछ भी देंगे, हम उसका पूरा-पूरा उपयोग करेंगे। हम श्रम को अध्ययन – अर्थात तकनीकी विषयों के पूर्ण क्षेत्र के अध्ययन – के एक विषय के रूप में मानते हैं। हम श्रम को एक शैक्षिक विधि के रूप में भी मानते हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि केवल सामूहिक श्रम के ज़रिये ही हम ऐसे चारित्रिक गुणों की पूरी की पूरी शृंखला को विकसित कर सकते हैं, जो व्यक्तित्व को दृढ़ और सारपूर्ण बनाने के लिए आवश्यक हैं। हम श्रम को युवजनों और बच्चों द्वारा श्रम की सामान्य प्रक्रिया में, जिसमें संपूर्ण आबादी लगी हुई है, भागीदारी के रूप में मानते हैं। बच्चों को यह समझाना चाहिए कि श्रम मज़ाक नहीं है, कि यह वह तत्व है, जिसके बल समाज जीवित है; उन्हें अपने को सामूहिक श्रम की विशाल शक्ति में एक छोटे कर्मी के रूप में समझना चाहिए। लेकिन हम उस सामूहिक श्रम को अलाभकर ढंग से आगे नहीं बढ़ने देंगे। हम इस श्रम के स्वरूप को ऐसा बनाये रखने के लिए कोई कोर-कसर नहीं उठा रखेंगे कि वह एक बच्चे को सावधानीपूर्वक समाजवादी समाज के एक पूर्ण विकसित कर्मी के रूप में ढाल सके।

मैं उस वैज्ञानिक शिक्षा के बारे में कुछ ही कहूंगा, जो हमारे भावी स्कूल में दी जायेगी। स्कूल पाठ्यक्रमों में अभी जो विषय सम्मिलित हैं, वे आगे भी रहेंगे, लेकिन हमारे पास उन्हें कतिपय एकीकारी केन्द्रों की ओर खींचने की संभावना है। हमें मालूम है कि अपने ऐतिहासिक विकास में मानव-समाज प्रकृति से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है, कि श्रम वह मूल आधार है, जिससे प्राकृतिक विज्ञान अर्थात प्रकृति का अध्ययन विकसित होता है। अध्ययन का एकमात्र विषय वस्तुतः मानव-संस्कृति है, क्योंकि प्राकृतिक विज्ञान विकास के प्रत्येक चरण में मनुष्य की चेतना में प्रकृति के प्रतिबिम्ब के रूप में मानव-संस्कृति का एक अंग है।

मानव-संस्कृति का इतिहास प्रकृति से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। यह वह विज्ञान है, जिसका हमने सबसे बेहतर ढंग से अध्ययन

किया है और कोई भी ऐसा विज्ञान नहीं है, जो इसकी शाखा न हो। यह दृष्टिकोण हमारे लिए मार्क्सवाद द्वारा निर्धारित हुआ है, लेकिन कुछ ऐसे सुप्रसिद्ध शिक्षक भी, जिनका मार्क्सवाद से कोई सरोकार नहीं है, इस दृष्टिकोण के निकट आ गये हैं। सभी अध्यापकों ने कहा है कि दुनिया ही अध्ययन का एकमात्र विषय है और कि इसका इस ढंग से अध्ययन किया जाना चाहिए कि यह बच्चे की चेतना में विखंडित न होने पाये। प्रकृति एक सत्व है और इस वजह से बच्चों के विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं में एक "विषय" को दूसरे से अलग करनेवाली सीमाओं को मिटा दिया जाना चाहिए। जब बुनियाद डाल दी जाती है, तो क्रमशः बड़ा विभेदीकरण संभव हो जाता है। तब हमें इस बात का कोई भय नहीं रह जायेगा कि गणितशास्त्र का अध्ययन करनेवाला आदमी मानव-प्रकृति से इसके संबंधों को नहीं समझेगा।

ज्ञान-बोध और श्रम के सतत अध्ययन के ज़रिये वैज्ञानिक शिक्षा के साथ-साथ, मानव विचार के विकास के साथ-साथ शारीरिक प्रशिक्षण को भी एक बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी चाहिए। इस उद्देश्य के लिए हम अपने को केवल श्रम तक ही सीमित नहीं रखेंगे, क्योंकि श्रम (जहां तक इसका उद्देश्य एक बाह्य कार्य को पूरा करना है) अब भी मनुष्य को पूरे तौर पर स्वतंत्र नहीं बनाता। मानव का एक और कार्य भी है यानी अपने शरीर को विकसित करना। यह कार्य आदमी अपने शरीर को लचीला, स्वस्थ और सुंदर बनाने के लिए करता है। यह कार्य स्वास्थ्यविज्ञानियों द्वारा निर्धारित मार्गों से आगे बढ़ सकता है; इनमें आदमी को स्वस्थ बनाने के लिए विशेष व्यायामों की पूरी की पूरी शृंखला शामिल है।

निस्संदेह, सौंदर्यबोधी शिक्षा को दरकिनार नहीं किया जा सकता; हम इसे सौंदर्य के प्रति मनुष्य की सृजनात्मक भावनाओं के विकास के रूप में देखते हैं। मनुष्य का मुख्य कार्य स्वयं अपने को और अपने इर्दगिर्द की सभी चीज़ों को सुंदर बनाना है। आम तौर पर श्रम स्वतंत्र जीवन का आभास नहीं देता। हमारा उद्देश्य इस जीवन को अधिकतम आनंदप्रद बनाना होना चाहिए। वे सभी विधियां, जिनके द्वारा मनुष्य अपने इर्दगिर्द की चीज़ों को भव्य, सुंदर, आनंदमय बना सकता है – यह सब सौंदर्यबोधी शिक्षा का विषय होना चाहिए और यह भी प्रस्तुतीकरण में तकनीकी निपुणता का तकाज़ा करता है। शायद भविष्य में लोग जन्म-

ग्रहण के समय ही ऐसी विधियों का उपयोग कर सकेंगे, जो बुरी आनुवंशिकता के कुप्रभावों को नष्ट कर दें। जन्म से ही बच्चा समाज की देखभाल की वस्तु होना चाहिए, ताकि उसे यथासंभव मज़बूत और शारीरिक रूप से समर्थ बनाया जा सके, क्योंकि यह शारीरिक योग्यता ही अपने अंतिम विश्लेषण में वह चीज़ प्रदान करती है, जिसे हम सौंदर्य कहते हैं।

इस दृष्टि से, सौंदर्यबोधी शिक्षा को एक विशेष स्थान प्राप्त है और स्वयं "सौंदर्य" शब्द ही एक महत्वपूर्ण अर्थ ग्रहण कर लेता है। यदि कोई श्रव्य और दृश्य सौंदर्य का बोध करने में समर्थ होना चाहता है तो उसे सबसे पहले स्वयं सृजन करना सीखना चाहिए। यह सब विशाल कार्य हैं, जिन्हें हम नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते। शिक्षण का एक विषय ड्राइंग और माडलिंग, जिसे प्रायः सौंदर्यबोधी माना जाता है, केवल यही हर्गिज़ नहीं है। ऐसे आदमी को तो शिक्षित माना ही नहीं जा सकता, जो अपने विचारों को कम से कम मोटे तौर पर ड्राइंग या स्केच के रूप में व्यक्त न कर सके। यह अध्यापक, जो ऐसे जीवंत दृष्टांतों के बिना नहीं पढ़ा सकता, और विद्यार्थी, दोनों ही के लिए समान रूप से आवश्यक है। हमारे यहां सौंदर्यबोधी शिक्षा तकनीकी तथा शारीरिक शिक्षा से जुड़ी हुई है। इस प्रकार, जब हम काष्ठकर्म या धातुकर्म सिखाते हैं, तो हम बच्चे को केवल एक व्यवसाय ही नहीं, बल्कि वह सब कुछ सिखाते हैं, जो उसे एक सुंदर जीवन का निर्माण करने में सक्षम एक सुंदर व्यक्ति बनाये।

समाजवादी इसी रूप में भावी स्कूल को देखते हैं। जब स्कूलों में उचित रूप से प्रशिक्षित अध्यापक पढ़ाने लगेंगे, तो वे ड्राइंग की शिक्षा देते हुए बच्चों के शारीरिक प्रशिक्षण को भी ध्यान में रखेंगे और अपने सबक़ को इस तरह तैयार करेंगे कि बच्चों को इससे आनंद मिले न कि थकान। यह विधि हमारे गहन मानवीय विश्व-दृष्टिकोण के लिए एकमात्र संभव विधि है।

स्कूल-निदेशन के बारे में भी मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा। यहां महत्वपूर्ण बात यह है: इसे इस ढंग से व्यवस्थित करना चाहिए कि नये स्कूल के प्रति अध्यापकों और माता-पिताओं का रुख़ इसके तोड़-फोड़ का रुख़ न ग्रहण करे। स्कूलों को पूरे तौर पर शिक्षकों और माता-पिताओं को सौंप देने भर की देर है कि वे पुराने स्कूल को पुनर्जीवित

कर देंगे और लोगों को पुन: आत्मिक रूप से अपंग बना डालेंगे। यह हम नहीं होने दे सकते। फिर भी, हम यह चाहते हैं कि अध्यापक अपने स्कूलों में सभी संभव प्रयोग करने तथा उन्हें कार्यान्वित करने की कोशिश करें। हम यह नहीं चाहते कि समूचे गुबेर्नियाओं और उयेज़्दों में सभी स्कूल एक ही तरह के हों। उल्टे, जितनी ही अधिक विविधता होगी, उतना ही बेहतर होगा। लेकिन, बेशक, हम विविधता की छूट केवल कुछ सीमाओं के भीतर ही देंगे। बच्चों को मेज़ पर लगातार कई-कई घंटों तक बैठने और उन्हें धूलभरी, दूषित हवा में सांस लेने के लिए विवश नहीं किया जाना चाहिए। यह विरूपता होगी, न कि विविधता।

हमारे लिए यह महत्वपूर्ण है कि अध्यापक राज्य में सबसे सर्वतोमुखी और सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति हो, क्योंकि उसे अपने को छोटे बच्चों के लिए आनंदमय रूपांतरण का स्रोत बनाना चाहिए, जो अपनी प्रतिभाओं के क्रमशः विकास की प्रक्रिया से गुज़र रहे होते हैं। यह अध्यापक का परम कर्त्तव्य है और इसमें कोई संदेह नहीं कि कोई भी दूसरा पेशा आदमी से ऐसी मांगें नहीं करता जैसी कि अध्यापक का पेशा। अध्यापकों को अपने में मानवीय आदर्श को वास्तविक बनाना चाहिए। लेकिन एक विशेषज्ञ होने के नाते अध्यापक कुछ एकतरफ़ा भी हो सकता है और इसीलिए माता-पिताओं को भी स्कूल के निदेशन में सम्मिलित किया जाना चाहिए।

स्कूलों के आत्मनिदेशन में तीसरा तत्व स्वयं विद्यार्थी हैं। हम इस आत्मनिदेशन को अधिकाधिक व्यापक बनाना चाहते हैं; हम चाहते हैं कि केवल कालेज विद्यार्थी ही नहीं, बल्कि स्कूल के वरिष्ठ छात्र भी अपने माता-पिताओं और अध्यापकों के साथ अपने स्कूल के निदेशन में भाग लें। जहां कहीं भी वरिष्ठ छात्र अपनी आत्मनिर्भरता प्रदर्शित करें, उन्हें वैसा करने दीजिये। बच्चों को अपने कार्यों का ख़ुद प्रबंध करने दीजिये। हमें उन्हें इस ढंग से प्रभावित करने की कोशिश करनी चाहिए कि वे अपने सामूहिकों को संगठित करने में सक्षम बनें और एकजुटता की सामान्य भावना इक्के-दुक्के पथभ्रष्ठों को सही मार्ग पर लौटने के लिए विवश कर सकें। एक अत्यंत मानवीय शिक्षक ने इस परिघटना का सामना करते हुए कहा कि न चर्च, न ही आधुनिक स्कूल स्वस्थ युवा पीढ़ी को शिक्षित कर सकता है। उसने कहा कि स्वयं

युवजनों के समूहों की स्थापना की जानी चाहिए। केवल युवजनों के ऐसे संगठन ही अब अपराधों और आत्महत्याओं से जर्मनी को बचा सकते हैं।[18] यह तो ऊब ही है, जो बच्चों को तरह-तरह की शरारतों, बेवक़ूफ़ी भरी चालों, विकृत और अपमानजनक कार्यों की ओर ले जाती है; जहां आनंदपूर्ण श्रम चल रहा होता है, वहां ऐसी चीज़ों के लिए कम ही जगह होती है। स्वयं विद्यार्थियों को अधिकतम संख्या में विभिन्न प्रकार के कार्यों और कर्त्तव्यों का दायित्व ग्रहण करने दीजिये, इसी तरह वे स्वशासन के लिए प्रशिक्षित होते हैं। अंत में, बच्चों को वैज्ञानिक, जिमनास्टिक, संगीत समाजों और थियेटरों को संगठित करने तथा तरह-तरह की पत्रिकाओं, राजनीतिक क्लबों, आदि की स्थापना करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की जानी चाहिए। बेहतर तो यह होगा कि अध्यापक इन चीज़ों से अपने को अलग ही रखें, ताकि एक वयस्क आदमी की मौजूदगी से बच्चों को अपने मार्ग की तलाश में कोई बाधा न पहुंचने पाये।

जहां तक उच्च शिक्षा के सुधार का संबंध है, मैं केवल यही कहूंगा कि हाल ही में इस विषय पर आयोजित एक सम्मेलन[19] में हमने सर्वश्री प्रोफ़ेसरों से परामर्श किया और वे एक आम योजना पर हमसे बड़ी शालीनतापूर्वक सहमत हो गये। हमने अपनी ओर से बड़ी ईमानदारी के साथ काम के हित में कतिपय छूटें दी हैं। हमें मालूम है कि सब कुछ फ़ौरन ही प्राप्त नहीं हो जायेगा और उन्होंने अपनी ओर से उस सुधार के प्रति आदर भावना दिखाने की योग्यता और तत्परता प्रदर्शित की, जिसे उनमें से बहुतों ने बुद्धिसंगत पाया। लेकिन कुछ समय पहले हमें जो स्मरण-पत्र मिला है, वह इंगित करता है कि सर्वश्री प्रोफ़ेसर अब अपनी सभी छूटें वापस लेने पर तुले हुए हैं। वे घोषणा करते हैं कि विश्वविद्यालय वैसा ही रहेगा जैसा कि पहले था और कि कोई सुधार नहीं होने चाहिए। यह पूर्वी मोर्चे पर हमारी कुछ असफलताओं और निकोलाई रोमानोव के संबंध में कुछ संभावनाओं के प्रकटीकरण के साथ-साथ हुआ।[20] शायद समय अप्रत्याशित रूप से पुनः रोगग्रस्त होनेवाले इन सर्वश्री विद्वानों के लिए दवा लायेगा। लेकिन यदि यह नहीं होगा, तो हमें यह सीधे घोषणा कर देनी चाहिए कि हम अपना सुधार उनके बिना ही पूरा करेंगे। हम उन प्रोफ़ेसरों के पास जायेंगे, जो उन अनेक लोगों द्वारा स्वीकृत दृष्टिकोण को ग्रहण

करेंगे, जिन्होंने कहा कि वे हमारे सुधार में कुछ भी नया नहीं देखते, कि वे इसे हमेशा चाहते रहे हैं।

जी हां, आप इसे चाहते थे, लेकिन सरकार ने इसे आपको नहीं दिया और अब सरकार इसे आपको दे रही है, पर आप इसे किसी कारण से नहीं चाहते। इस दृष्टि से, इस कांग्रेस के लिए कुछ ऐसे क़दम स्वीकृत करना बहुत महत्वपूर्ण है, जिनसे ये सर्वश्री प्रोफ़ेसर यह निष्कर्ष निकाल सकें कि उनके प्रतिरोध का अर्थ रूसी क्रांति की मूल शक्ति के ख़िलाफ़ युद्ध-घोषणा है। इस युद्ध-घोषणा को हम स्वीकार करेंगे और यदि प्रोफ़ेसरों का यह ख़्याल है कि उन्हें अपनी स्वायत्तता की चहारदीवारी में अपनी मोर्चेबंदी करना तथा यह आदेश देना उनके अधिकार में है कि "रुक जाओ, हमारे क्षेत्र में पैर न रखो, रूसी क्रांति!" तो वे एक भारी भूल कर रहे हैं। बेहतर तो यही होगा कि यह सब आम सहमति से किया जाये। यह इस वजह से और भी कि पेश किये जा चुके तर्क सभी गलतफ़हमियों को दूर कर दिये मालूम पड़ते थे और हमें एक वादा मिला था, जिसे सबने स्वीकार कर लिया था, पर जिसे अब किसी वजह से वापस लिया जा रहा है।

अभी कुछ दिन पहले ही अध्यापक प्रशिक्षण पर एक सम्मेलन ने अपना विचार-विमर्श पूरा किया है।[21] मेरे पास इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर विस्तारपूर्वक बोलने का समय नहीं है, लेकिन सम्मेलन के निष्कर्षों को आपकी स्वीकृति के लिए पेश किया जायेगा। शिक्षक-समुदाय का प्रशिक्षण आज जिस प्रकार है, उसके बारे में मैं बोल चुका हूं। आपको भली-भांति मालूम है कि अध्यापकों की संख्या कई गुनी बढ़ानी है, कि हमें लाखों अध्यापकों के बारे में बात करनी है। वर्तमान समय में हम अध्यापकों के लिए विशेष प्रकार के प्रशिक्षण संस्थानों की रूपरेखा तैयार कर रहे हैं। इनमें हम अध्यापक बनने के इच्छुक नौजवानों के लिए गहन रूप से मानवीय स्कूल क़ायम करेंगे। काश, हमारे पास ऐसे प्रशिक्षक काफ़ी संख्या में होते, जो इच्छुक शिक्षकों को वास्तविक ज्ञान प्रदान कर सकते। ऐसे प्रशिक्षकों के बिना समूचा कार्यक्रम नक़्क़ारख़ाने में तूती की आवाज़ बनकर रह जायेगा, क्योंकि अध्यापकों से रहित स्कूल परम शून्य के अलावा और कुछ नहीं है।

मैं शिक्षा जन-कमिसारियत के विभागों के कार्य के बारे में नहीं बोलूंगा; मैं केवल यही कहूंगा कि सर्वत्र बहुत कुछ किया गया है।

हमारे पास एक स्कूल विभाग है, जो भावी स्कूल का पाठ्यक्रम तैयार कर रहा है। इसके अलावा, कमिसारियत के हाथों में आम तौर पर सभी स्कूल हस्तांतरित किये गये थे,[22] ताकि श्रमिक जनवाद की भावना में उनका सुधार किया जा सके, ताकि स्कूल में आदमी को किसी औज़ार में बदलनेवाली सभी प्रवृत्तियों को समाप्त किया जा सके। आज इसके लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। यहां एक बहुत गंभीर प्रश्न उठता है: क्या हम अपने को केवल सामान्य शिक्षा तक ही सीमित रख सकते हैं? नहीं, हमें तकनीकी शिक्षा की भी ज़रूरत है, जो आदमी को समाज का एक उपयोगी सदस्य बनायेगी, ताकि वह केवल एक ज्ञानकोश बनकर न रह जाये। यह किसी निश्चित आयु से शुरू की जा सकती है और सामान्य शिक्षा प्राप्त करने तथा सामान्य विकास की तैयारी के बाद स्कूल के अंदर या बाहर शिक्षा द्वारा संपन्न की जा सकती है।

हमारे राज्य की दिलचस्पी इस बात में है कि सभी लोग सुयोग्य कर्मी बनें, जिनकी हमारी आर्थिक संघर्ष में आवश्यकता है, क्योंकि हमें केवल प्रकृति के साथ ही नहीं, बल्कि विदेशी प्रतियोगिता के साथ भी संघर्ष करना पड़ेगा। हमें देश को तकनीकी रूप से सुसज्जित बनाने की आवश्यकता है। यह लोगों के आर्थिक उपयोग की योजना को अनिवार्य बना देता है। पर हम केवल अपने आर्थिक हितों को ही नहीं, बल्कि लोगों को विरूपित न होने देने की आवश्यकता को भी ध्यान में रखेंगे। इस संबंध में, हमें उस निर्णय पर पहुंचना ज़रूरी है, जो दोनों आवश्यकताओं को पूरा करेगा।

यह उच्च शिक्षा के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है: हम एक विशेष सम्मेलन बुला रहे हैं, जिसमें हम वस्तुतः इन्हीं शब्दों में उच्च स्कूलों के प्रतिनिधियों के साथ बातचीत करेंगे। लेकिन हम तब तक इंतज़ार नहीं कर सकते, जब तक स्कूल हमें नागरिक दे; हमें ऐसे वयस्क लोगों की भी ज़रूरत है, जो बच्चों के बढ़ने तक प्रतीक्षा किये बिना जीवन का निर्माण कर सकें। अतः हमें सिर्फ़ बच्चों के विकास के बारे में ही नहीं, बल्कि उस आयु-समूह के बारे में भी सोचने की आवश्यकता है, जो स्वयं विकास के लिए उत्कंठित है। इस दृष्टिकोण से, संपूर्ण रूस ही स्कूल है, क्योंकि हममें से हर आदमी अध्यापक है और अगर कोई भी व्यक्ति कुछ भी जानता है, तो वह इस ज्ञान को दूसरों

को देने के लिए कर्त्तव्यबद्ध है। यह हमारी बहिस्र्कूली मशीनरी के माध्यम से किया जाता है, इस क्षेत्र में हमें बहुत थोड़े समय में बहुत बड़ा काम करना चाहिए, क्योंकि रूसी लोगों ने अपना मन और आंखें खोल दी हैं और ज्ञानाभाव जनता के लिए तब यातना बन जाता है, जब उसे शासन करना होता है और वह अब भी ऐसे जी रही होती है, जैसे कि अंधकार में। इसलिए हमें इस विभाग को यथासंभव बेहतर बनाना है।

यदि एक समाजवादी जनतंत्र की शिक्षा कमिसारियत क्रांतिकारी सहयोग के सामाजिक विचारों के प्रचार के संगठन के पूर्ण अर्थ को न समझ पाये, तो वह मंदबुद्धि लोगों के झुंड के अलावा और कुछ नहीं होगी। इस संबंध में, हमारा बहिस्र्कूली विभाग हमारे शिक्षा मोर्चे पर अग्रिम पंक्ति में लड़नेवाला एक दस्ता है। जहां तक वैज्ञानिक विभाग का संबंध है, हमें अपनी सभी वैज्ञानिक शक्तियों को जुटाना है। हम मुट्ठी खोल कर पैसा ख़र्च कर रहे हैं, हम तरह-तरह के अभियानों, वैज्ञानिक प्रकाशनों, प्रयोगशालाओं, आदि के लिए करोड़ों रूबल प्रदान कर रहे हैं। हम वैज्ञानिक अध्यापकों को प्रथम श्रेणी के विशेषज्ञ मानते हैं और उन्हें उससे अधिक दे रहे हैं, जितना देना चाहिए। हमें अपनी इस उदारता पर रोक लगानी चाहिए, लेकिन हमें मालूम है कि रूस को ज्ञान की आवश्यकता है और इसी वजह से हम सर्वश्री विद्वानों के पीछे पड़े हुए हैं। लेकिन उन्हें हमारे निवेदनों को इतने ठंडे उत्साह से नहीं लेना चाहिए। हाल ही में, सर्वोच्च राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था परिषद के अन्तर्गत भी एक टेक्नोलॉजिकल-वैज्ञानिक विभाग क़ायम किया गया है और यह राज्य की टेक्नोलॉजिकल आवश्यकताओं के लिए वैज्ञा-निक शक्तियों को जुटा रहा है। इसकी अधिशासी समिति की नियुक्ति हमारे परामर्श में हो रही है और यह हमारी कमिसारियत के परोक्ष नियंत्रण में है।[23]

जहां तक कला-विभाग का संबंध है, तो इसका मैं दो-चार शब्दों में ही उल्लेख करूंगा। नव-निर्मित राजकीय मशीनरी हमारी पुरानी संस्कृति की किसी चीज़ को बिना मिटाये लोगों के लिए व्यवस्था करने की जीतोड़ कोशिश कर रही है। हम जानते हैं कि सर्वहारा पुरानी संस्कृति का अध्ययन करते हुए एक नयी संस्कृति का सृजन करेगा। इस संबंध में, कला-विभाग के वे सभी हिस्से प्रशंसा और सम्मान के पात्र हैं, जिन्होंने इतनी वीरतापूर्वक महलों और संग्रहालयों को लूटपाट

से बचाया है। सभी ज़्यादतियों को तुरंत ही रोक दिया गया और बड़े ख़तरों और कठिनाइयों के बावजूद हमने सब कुछ वैसे ही सुरक्षित रखा है। अब ज़ार के महल संग्रहालयों के रूप में जनता को दे दिये गये हैं और लोग वहां ज़ारों द्वारा जमा की गयी चीज़ों की प्रशंसा या वस्तुतः उन पर आश्चर्य प्रकट करने के लिए जाते हैं। हमें गर्व है कि हमने यह सब जनता को लौटा दिया है।

जहां तक दृश्य कला का संबंध है, तो अभी हमारा सर्वप्रमुख काम नगर को उन स्मारकों से साफ़ कर देना है, जो कला को कलुषित करते हैं। ऐसे स्मारक हैं, जो न तो ऐतिहासिक और न ही कलात्मक दृष्टि से मूल्यवान हैं, हम उन्हें नष्ट कर देना चाहते हैं। हम नहीं मानते कि हर ज़ार को किसी चौक पर तांबे का उल्लू खड़ा करने और बाद में उसे रूसी राष्ट्रीय संस्कृति की कृति घोषित करने का अधिकार है। हम स्वयं स्मारक स्थापित करने की तैयारी कर रहे हैं। हम लेनिन के विचार का उपयोग करना – स्मारकों को प्रचार के रूप में उपयोग करना – चाहते हैं। हम महान चिंतकों के महान विचारों और भावनाओं को घोषित करते हुए सर्वत्र उनके अभिलेख लगाना चाहते हैं। हम अपने मंदिर खड़े करना चाहते हैं, जहां महान लोगों के छविचित्र ही देव-प्रतिमाएं होंगे। हमारा मंदिर मानवता को समर्पित है और हमारे अपने शिक्षक हैं, जिनमें से हम इस या उस धर्मोपदेशक को तब तक अलग नहीं करते, जब तक वे शाश्वत सत्य व्यक्त करते हैं। हमारा मंदिर मानवता का स्मारक-भवन है, ऐसी सभी मूल्यवान, महान चीज़ों का संग्रह है, जिन्हें लोगों ने बनाया है। हम चाहते हैं कि नगर केवल बाज़ार-स्थान ही नहीं, बल्कि मंदिर भी बनें, ताकि काम पर जाते हुए आप उदात्त भावनाओं को प्रेरित करनेवाले विचारों को पढ़ सकें। मूर्तियों और चित्रों के माध्यम से शिक्षा महान संस्कृति का जीता-जागता उदाहरण है। हमेशा ही, जब जनवाद महान चरमोत्कर्ष पर पहुंचा – एथेन्स में, जर्मनी के उत्तरी नगरों में – हमेशा ही उसने इस तरह की शिक्षा का उपयोग किया। सांस्कृतिक रूप से विकसित सभी देशों में, वहां निर्मित सभी भव्य भवनों का उद्देश्य प्रत्येक मनुष्य को आम उत्साह में ओत-प्रोत करना था।

अभी हम कठिनाई में हैं, हमें रक्त और गंदगी में गले तक डूबकर गुज़रना है, पर हमारी क्रांति के बाद, जैसा कि हर क्रांति के बाद

होता है, सृजनात्मक शक्ति की लहर चल पड़ेगी और नूतन, सुंदर, सुरभित कला पुष्पित होगी। फ़िलहाल, हम स्मारक – हो सकता है कि वे अभी अस्थायी स्मारक ही हों – बनाने के लिए सर्वश्रेष्ठ कलाकारों को प्रतियोगिता के लिए निमंत्रित कर रहे हैं, ताकि हमारे महान नगरों और कस्बों के चौकों पर महान व्यक्तियों की मूर्तियां स्थापित की जा सकें और इन स्मारकों के अनावरण दिवस लोगों के त्यौहार बन सकें। अभी तो यहां एक-एक चीज़ पर युद्ध की छाप है और सृजन करने की हमारी आकांक्षा भी इस संघर्ष का एक तत्व है।

अब जबकि हम जर्मन गैरिज़नों का नहीं, बल्कि समूची दुनिया की बुर्जुआ प्रणाली का विरोध कर रहे हैं, पश्चिम में बड़े सम्मानपूर्वक हमारा नामोल्लेख किया जाता है, हमें ऐसे सुसंस्कृत लोगों के रूप में देखा जाता है, जो सही ढंग से समझे जन-शिक्षा के आधार पर अपने भविष्य का निर्माण कर रहे हैं। जब विदेशों के प्रतिनिधि हमारे यहां आते हैं, तो देखते हैं कि अब हमारे हाथों में एक नयी शक्ति है, जो जनता को संस्कृति के उच्चतम शिखर पर पहुंचाने की आकांक्षा पर आधारित है; वे देखते हैं कि हमारी शक्ति एक नयी और सुंदर पीढ़ी निर्मित करने की हमारी इच्छा में है और वे यह मानने को विवश हैं कि हम विजयी होंगे।

इन दस महीनों में हमने जो कुछ प्राप्त किया है, वह विश्व सर्वहारा को हममें विश्वास करने के लिए बाध्य करता है। पश्चिम में सर्वहारा को हमारी भूलों से गहरा दुःख होता है, पर उन्हें हमारी सफलताओं पर बड़ा हर्ष होता है। वे अपने देशों में कह रहे हैं: "रूस में हमने अमुक-अमुक चीज़ें प्राप्त कर ली हैं; रूस में हम नया स्कूल बना रहे हैं, वहां नया इन्सान विकसित हो रहा है।" और हम अपने देश में संस्कृति का निर्माण जितना ही बेहतर करेंगे, उतनी ही जल्दी हम सारी दुनिया के लिए वह भव्य भविष्य प्राप्त करने में समर्थ होंगे, जिसे हम अपने बच्चों के लिए जीत रहे हैं। हमारी क्रांति निष्फल नहीं होगी। हमने आकर सत्ता इसलिए नहीं ली कि एक दिन हम इसे लौटा देंगे, बल्कि इसलिए ली कि हम इस सुंदर, नयी दुनिया का निर्माण करेंगे। हमें अपने झंडे को बुलंद किये हुए अंत तक आगे बढ़ते जाना चाहिए और हमारे सर्वहारा को विश्व सर्वहारा की अगली पंक्ति में खड़ा होना चाहिए।



सामाजिक शिक्षा पर

साथियो और नागरिको, मुझे यहां सामाजिक शिक्षा पर बोलने के लिए निमंत्रित किया गया है। शुरू में ही, मुझे इस बात की ओर आपका ध्यान खींचना चाहिए कि इस अवधारणा की व्याख्या दो तरह से की जा सकती है और दोनों ही काफ़ी दिलचस्प हैं। "सामाजिक शिक्षा" शब्द सुनने पर जो पहला सवाल हमारे मन में उठता है, वह यह है: बच्चों को **कौन** शिक्षा देगा – परिवार या समाज? क्योंकि सामाजिक का अर्थ समाज द्वारा शिक्षा से लिया जा सकता है। इस शब्द की दूसरी व्याख्या का एक दूसरा ही अर्थ है – बच्चे को **किसके लिए** – स्वयं अपने लिए या समाज के लिए – शिक्षित किया जाये?

दोनों ही सवालों का अपना लंबा इतिहास है और इनके उत्तर भी अत्यंत विविध हैं, जिनमें वस्तुतः इन दो ध्रुवों के बीच बड़ा अंतर है। पारिवारिक शिक्षा के समर्थक रहे हैं, जिनके विचार में, समाज के पक्ष में एक शैक्षिक संस्था के रूप में परिवार पर किसी भी पाबंदी से नयी पीढ़ियों की शिक्षा को नुक़्सान पहुंचता है। ऐसे भी लोग रहे हैं, जिन्होंने विशुद्ध रूप से सामाजिक शिक्षा का सीधे समर्थन किया और इसके विपरीत पारिवारिक शिक्षा को एक ऐसी हानिकारक चीज़ बतायी, जिसने मूलतया मानव-धारा को छिन्न-भिन्न कर दिया। ठीक इसी तरह, दूसरा प्रश्न भी सामाजिक शिक्षा और वैयक्तिक शिक्षा के उतने ही प्रवीण और विश्वासोत्पादक समर्थकों को ला खड़ा करता है। आज मेरे इस संक्षिप्त व्याख्यान का उद्देश्य आपको इस प्रश्न के इतिहास और इसके उस समाधान के संबंध में कतिपय मूल विचार प्रस्तुत करना है, जिसका हम समर्थन करते हैं, या एक प्रकार से, जिसे हम कार्यान्वित कर रहे हैं।

आप प्रायः सांस्कृतिक प्रश्नों के उत्कृष्टतम व्याख्याकारों और गहनतम चिंतकों के यह विचार पायेंगे कि अब तक विद्यमान सभी

राज्यों में संभवतः एकमात्र सचमुच सुसंस्कृत राज्य प्राचीन यूनान था, जो अपने अति आश्चर्यजनक आंतरिक सामंजस्य के लिए विख्यात था। प्राचीन यूनान की मुग्धकारी, सामंजस्यपूर्ण वास्तुकला में हम मानो उस संस्कृति की आत्मिक और सामाजिक जीवन-पद्धति के स्पष्ट, शांत स्थायित्व को देखते हैं और अब भी (पुनर्जागरण काल से शुरू करके) जब लोग विशाल, शांत और सुसंतुलित भवन का निर्माण करना चाहते हैं, तो वे अनिवार्यतः प्राचीन यूनानी उदाहरणों की ओर मुड़ते हैं।

पुनर्जागरण काल और "एम्पायर" शैली, जिसका पेत्रोग्राद में प्राधान्य है – ये मूलतः यूनानियों द्वारा अन्वेषित एक ही वास्तुशिल्पीय प्रवृत्ति की विभिन्न व्याख्याएं हैं और यह मात्र संयोग की बात नहीं है, क्योंकि यूनानी भवन उनकी आत्मिक और सामाजिक संरचना को वैसे ही अभिव्यक्त करते हैं, जैसे कि गोथिक शैली मध्य काल की आत्मिक और सामाजिक संरचना को प्रतिबिम्बित करती है।

अद्वितीय यूनानी मूर्ति-कला भी, जिसके फलों ने उन यूनानी भवनों को सजाया, कोई सांयोगिक उपलब्धि नहीं थी। उस मूर्ति-कला ने क्लासिकीय आदर्श को प्रतिबिम्बित किया और इसे प्राचीन यूनानी शिक्षाशास्त्र में एक साधन के रूप में उपयोग किया गया। एक सुसंस्कृत राज्य सिर्फ़ इस सूरत में ऐसा हो सकता है कि वह गहन रूप से शिक्षा-शास्त्रीय राज्य हो।

एक ऐसी सामाजिक प्रणाली का निर्माण करने के लिए, जिसके सभी अंग अपनी समष्टि के अनुरूप हों, जिसमें सामंजस्य की प्रधानता हो ("सामंजस्य" शब्द से यूनानियों का आशय सांस्कृतिक सहित किन्हीं भी शक्तियों के सही सहसंबंध से था), यह आवश्यक है कि जीवन में प्रवेश करनेवाले सभी नये नागरिकों को इस तरह से तैयार किया जाये कि वे उस समष्टि का उपयुक्त अंग बन सकें। इसके अलावा, सुसंस्कृत राज्य निश्चल कदापि नहीं रह सकता: यह अपनी शक्ति का निरंतर संवर्धन करता रहता है और हर नयी पीढ़ी अपनी पूर्ववर्ती पीढ़ी से बेहतर होनी चाहिए। कम से कम समाज इस बात की पूरी-पूरी कोशिश करता है कि इस दिशा में अधिकाधिक प्रगति प्राप्त हो, कि अपने पिताओं के कंधों पर पली और बड़ी हुई पीढ़ी अपने पिताओं से उच्च सांस्कृतिक विकास प्राप्त करे। और वे सभी लोग बिल्कुल

सही हैं, जो उस सुसंस्कृत यूनानी राज्य में शैक्षणिक मामलों को दिये गये विशाल महत्व पर, जिसे सभी राजनीतिज्ञ, कवि और दार्शनिक स्वीकार करते थे, ध्यान देते हैं।

शब्द "मूसिका"* का प्रयोग एक निश्चित शैक्षणिक विधि को प्रकट करने के लिए किया जाता है और उन दिनों इसका आशय ऐसे ज्ञान और कतिपय कौशलों के एक समुच्चय से था, जो सामान्य शारीरिक गठन और शारीरिक उन्मुक्तता तथा शक्ति दोनों ही दृष्टियों से सही शारीरिक शिक्षा को सुनिश्चित बनाते हों[1] और बाद में इस सुंदर शारीरिक नींव पर उतनी ही भव्य आत्मा का निर्माण किया जाता था। यूनानियों ने "कालोस" और "अगाथोस" शब्दों को मिलाकर एक पद "कालोकागाथियां" बनाया, जिसका अर्थ है "शरीर और आत्मा का सौंदर्य"। एथेन्स के लोकतंत्र ने अपने बेटों, अपने सभी नागरिकों को बिना कोई भेदभाव किये (बशर्ते कि हम दासों को बिल्कुल ही ध्यान में न रखें, क्योंकि यूनानी सभ्यता दास को नागरिक नहीं मानती थी और न ही दासों के बच्चों को कोई शिक्षा देती थी) शरीर और आत्मा के इस सौंदर्य तक ऊंचा उठाने का प्रयास किया।

क्यों यूनानी राज्य ने अपने समक्ष किसी भी अन्य सभ्यता से अधिक सामंजस्य और सौंदर्य की शिक्षा का यह कार्य रखा? इसलिए कि छोटे यूनान को अपने व्यापार और उद्योग, कला और विज्ञान को विकसित करने के बड़े सुअवसर (यहां इन सुअवसरों का उल्लेख करना अनावश्यक प्रतीत होता है) प्राप्त होने के साथ ही ऐसे बड़े प्राच्य साम्राज्यवादी (यदि आधुनिक शब्दों में कहें तो) राजतंत्रों के आक्रमणों का भी ख़तरा बना हुआ था, जो किसी भी क्षण उस छोटे यूनान को निगल जा सकते थे। एक ऐसे छोटे देश को इन महाकाय राजतंत्रों से सैनिक रूप से अपनी रक्षा करने में समर्थ होने के लिए प्रत्येक नागरिक के विशाल उत्साह की आवश्यकता थी। और वस्तुतः इसीलिए एक ऐसा नागरिक विकसित करना आवश्यक था, जो अकेले ही सौ का मुक़ाबला कर सके, जिसका विशिष्ट महत्व सचमुच बड़ा हो। इसी चीज़ ने यूनानी राजकीय संगठन को जनवाद की ओर, संपदाओं के उपभोग में कतिपय समतावाद की ओर प्रेरित किया,

---

* इससे music (संगीत) शब्द का निर्माण हुआ। –**सं०**

ताकि कोई इतना ग़रीब न रहे कि अपने देश की रक्षा करने में उसकी कोई दिलचस्पी ही न हो।

यदि हम इस बात की जांच करें कि कैसे इस आश्चर्यजनक रूप से शैक्षणिक देश ने सामाजिक शिक्षा के प्रश्न को हल किया, तो हम पायेंगे कि यूनान के निवासी शिक्षा को राजकीय चिंता का एक आवश्यक मामला मानते थे और न केवल लड़कों, बल्कि लड़कियों के लिए भी पारिवारिक शिक्षा को कालातीत समझते थे।

यूनान के भव्यतम चरमोत्कर्ष के युग में बच्चों को एक साथ लाने तथा उन्हें विशेषज्ञों – शिक्षकों – के ज़िम्मे सौंपने का प्रयास किया जाता था। यूनानियों ने पेदागोगोस (शिक्षक) शब्द की खोज की थी और उन्होंने ही इसका प्रयोग शुरू किया था तथा इससे उनका मतलब "बच्चों का नेता" से था। इन शिक्षकों के पास बड़े जिम्नेज़ियम[2] भी थे, जहां बच्चे साथ-साथ अनेक ऐसे विषयों – जिम्नास्टिक्स, नृत्य, संगीत, इतिहास, आदि का अध्ययन और अभ्यास किया करते थे, जो उस काल की नागरिक शिक्षा की सामान्य प्रणाली का एक अभिन्न अंग थे।

बेशक, समाजीकरण के विभिन्न चरण थे; इस संबंध में एथेन्स मामले को बच्चों के बैरक-क़िस्म के राजकीय समुदायीकरण की सीमा तक नहीं ले गया। स्पार्तावासियों ने इस कार्य को और आगे बढ़ाया। स्पार्ता के नागरिक, जहां अभिजात-वर्गीय अल्पसंख्यकों को न केवल पूर्व से आक्रमणों से अपनी सीमाओं की रक्षा करनी थी, बल्कि अपनी प्रजा – पेलोपोनीज़ के ग़ुलाम निवासियों – पर अपना प्रभुत्व, अपना अधिराजत्व भी बनाये रखना था, वस्तुतः घिरे हुए शिविर में रहने के लिए विवश थे। इस तरह, एथेन्स के अर्ध-समतावाद के स्थान पर संपूर्ण देश में तो नहीं, किंतु योद्धा अभिजातों के बीच संपत्ति का लगभग पूरी तरह समाजवादी समानीकरण लागू किया गया। यहां तक कि वे पूर्ण रूप से स्वस्थ न जन्मे बच्चों को मार देने जैसे निर्मम कार्यों की सीमा तक आगे बढ़ गये थे। स्त्री-पुरुषों की शिक्षा मुख्यतया सैनिक स्वरूप की थी। एथेन्स में ऐसे अतिवादी क़दमों को कोई प्रश्रय नहीं दिया गया, यह एक वाणिज्यिक, समुद्री, व्यापक रूप से सुसंस्कृत राज्य था न कि एक विशुद्धतया सैनिक बस्ती।

जब महानतम यूनानी दार्शनिक प्लेटो (अफ़लातून) एथेन्स, अर्थात

तत्कालीन जनवाद, और स्पार्ता, तत्कालीन अभिजात-वर्गीय समाज, के अनुभव के आधार पर आदर्श राज्य का वर्णन करते हैं, तो वह सामाजिक शिक्षा के विचार की पूर्ण सिद्धि पर आते हैं। व्यावहारिक अनुभव से सैद्धांतिक निष्कर्ष निकालते हुए प्लेटो कहते हैं कि किसी भी माता-पिता को अपने बच्चों को अपने पास रखने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। बच्चों को समाज के ज़िम्मे सौंप देना चाहिए, माता द्वारा उसका पालन-पोषण केवल एक अच्छी धाय के रूप में किया जा सकता है, लेकिन इसके बाद बच्चे को विशेषज्ञों के हाथों में आ जाना चाहिए, जो उसे एक सच्चे इंसान में विकसित करते हैं। यह, प्लेटो के विचार में, उन लोगों के लिए आवश्यक है, जिन्हें वह सच्चे लोग मानते हैं। दस्तकारों और मज़दूरों को वह अर्ध-लोग मानते हैं और उन्हें इस बात में लेशमात्र दिलचस्पी नहीं है कि उनके बच्चों का क्या होता है।[3]

अब हम पूछ सकते हैं: यूनानियों ने इस सवाल को कैसे तय किया कि बच्चों को किसके लिए शिक्षित किया जाना चाहिए? (मुझे आपको बता देना चाहिए कि विल्हेल्म हम्बोल्ट जैसे व्यक्तिवादी प्रायः इस बात पर ज़ोर देते हैं कि यूनानी सभ्यता व्यक्तिवादी सभ्यता थी और व्यक्ति को अग्रभूमि में ला खड़ी करती थी,[4] पर यह कोरी बकवास है)। जब चौथी-तीसरी शताब्दियों ई० पू० में यूनान में व्यापार के विकास ने आबादी के वाणिज्यिक और औद्योगिक संस्तरों को सामने ला दिया, तो यह हेत्वाभासवादी दर्शन में भी प्रतिबिम्बित हुआ और आपको मालूम ही है कि क्लासिकीय युग की भावना के प्रति सच्चे दार्शनिकों ने उस हेत्वाभासवादी पतन को कैसे देखा: उन्होंने ध्येय के रूप में व्यक्ति की रक्षा को नितांत असंगत माना।

सभी यूनानी त्रासदियां, यूनानी थियेटर, यूनानी इतिहासकार, कवि – वे सभी समवेत सिद्धांत, व्यक्ति को एक गहन समष्टि के साथ सामंजस्यपूर्ण बनाने की इच्छा से भरे हुए हैं।

व्यक्ति के मुक़ाबले में नागरिक ध्यान की अग्रिम पंक्ति में है, लेकिन उसे गहन रूप से सचेत, प्रबुद्ध, लचीला, अत्यधिक प्रतिभासंपन्न नागरिक होना चाहिए, जो महाकाय राज्यों से लोहा ले सके और विजयी हो सके। यहां अपनी मातृभूमि के लिए मर-मिटने में समर्थ नागरिकों की आवश्यकता है। यूनानियों को जो उच्चतम मूल्य मालूम

है, वह देशभक्ति, अपनी वैयक्तिक प्रवृत्तियों को वश में रखने की योग्यता है, जिसे यूनानियों ने गर्व, दर्प कहा, उन्हें संयम, संतुलन, स्वर्णिम औसत के अधीन लाना है।

यही तो वह चीज़ है, जिसे आदमी को अपना आदर्श बनाना चाहिए। हरेक यूनानी शिक्षा देता है कि अपने को दूसरों से ऊपर उठाने की कोशिश मत करो। जब लोग अत्यधिक प्रतिष्ठित बन जाते हैं – चाहे वह कोई सुप्रसिद्ध जनरल हो या कोई सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ – तो उसे राज्य से हटा दिया जाता है, उसे बहिष्कार की सज़ा दी जाती है, इसलिए कि एक इतनी बड़ी, अति विकसित वैयक्तिकता जनवाद के लिए हानिकर सिद्ध हो सकती है।

अतः यहां बहस की गुंजाइश नहीं है। वैयक्तिकता का विकास वहां तक आवश्यक है, जहां तक यह कहकर कि "हमें नागरिक की आवश्यकता है" कहा जाता है कि "हमें एक ऐसे मज़बूत, उत्कृष्ट, निपुण, प्रबुद्ध और वैयक्तिक रूप से विकसित नागरिक की आवश्यकता है, जिसमें वैयक्तिकता व्यक्तिवाद का रूप न ले।"

ऐसा ही है शिक्षाशास्त्र का क्लासिकीय आदर्श। हम यूनानियों से जुड़ी हर चीज़ को "क्लासिकीय" कहने के आदी हो गये हैं। जब लोग "क्लासिकीय स्तंभ" कहते हैं, तो इससे उनका आशय यह होता है कि यह उत्कृष्ट यूनानी माडल पर बनाया गया है। इस दृष्टिकोण से कोई कह सकता है कि क्लासिकीय शिक्षाशास्त्र वही है, जिसका मैंने अभी-अभी ज़िक्र किया है। इन क्लासिकीय परंपराओं का सिलसिला प्रश्न का समाजवादी समाधान होगा, यानी समाज के **द्वारा** विकास, समाज **के लिए** विकास; लेकिन उस समाज को वास्तव में न्यायसंगत होना चाहिए। बच्चों को एक ऐसे समाज के हाथों में नहीं दिया जा सकता, जो अंतर्विरोधों पर आधारित हो, बौद्धिक आलोचना का सामना करने में असमर्थ हो और हमारे अंतःकरण को ठेस पहुंचाता हो। अगर समाज ऐसा है कि वह अपने को जनवादी तो कहता हो, मगर वास्तव में देश का संपूर्ण भाग्य लोलुप बुर्जुआ वर्ग के एक छोटे समूह के नियंत्रण में हो, तो बेशक इसे बच्चों को नहीं सौंपा जा सकता, चाहे वह समाज चर्च के समर्थन पर निर्भर करता हो या नहीं, चाहे वह अभिजात-वर्ग पर निर्भर करता हो या नहीं। यह एक गंभीर ख़तरा है, इसलिए कि वह बच्चों को अपेक्षानुसार नहीं तैयार

करेगा। वह निस्संदेह, इस संबंध में आदर्श की दृष्टि से ग़लतियां करेगा, पर अपने हितों की दृष्टि से कोई ग़लतियां नहीं करेगा।

बेशक, मालिकों और दासों के अस्तित्व ने क्लासिकीय संस्कृति को भी विषाक्त बना दिया। विशुद्ध क्लासिकीवाद पर पहुंचने के लिए हमने दासों से अपना ध्यान हटा दिया तथा केवल नागरिकों के बारे में ही बात की – और यह कृत्रिम है।

आज सभी देशों में मालिक और आर्थिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों से वंचित दास हैं। यदि ऐसी बात है, तो अनिवार्यतः स्कूलों में, एक ओर, दूसरों पर निर्लज्जतापूर्वक और आत्मविश्वासपूर्वक प्रभुत्व जमाने में समर्थ, ऐसा करने का अपना निर्विवाद अधिकार मानते हुए इस प्रभुत्वपूर्ण स्थिति में अपने को बनाये रखने में सक्षम मालिक और, दूसरी ओर, दास यानी आज्ञाकारी लोग ही तैयार किये जायेंगे।

और यदि हम इस दृष्टि से शिक्षाशास्त्र के इतिहास पर विचार करें और समसामयिक स्कूल को अत्यंत विस्तारपूर्वक अपने समक्ष रखें, तो हम पायेंगे कि हमारे दोनों प्रश्न विचित्र ढंग से द्विविध और परस्पर-विरोधी बन जाते हैं। यदि आप, उदाहरणार्थ, फ़ेर्स्टर[5] जैसे सुप्रसिद्ध शिक्षाशास्त्रियों की पुस्तकें खोलें, तो आप देखेंगे कि वे व्यक्तिवादी स्कूल के ख़िलाफ़ प्रतिवाद कर रहे हैं। वे सीधे कहते हैं कि बुर्जुआ स्कूल हमारे लिए उपयुक्त नहीं हैं।

फ़िलहाल हम इस सवाल को एक किनारे रख रहे हैं कि स्कूलों ने निम्न वर्गों में कैसे काम किया, लेकिन जहां तक मध्यम वर्गों का संबंध है, उन्होंने उसके बीच व्यक्तिवाद को विकसित किया। स्कूल ने कहा: हम आपको ज्ञान और डिप्लोमा प्रदान करेंगे, हम भावी पेशों और अस्तित्व-संघर्ष के लिए लोगों को लैस करेंगे। और उदारतावादी बुर्जुआ स्कूल की संपूर्ण भावना इसके अलावा और कुछ हो भी नहीं सकती थी, क्योंकि इसमें सिलसिलेवार दस साल तक पढ़ाया जाता था: राज्य एक रात्रिकालीन पहरेदार की तरह है, इसे हमारे जीवन में हस्तक्षेप न करने दीजिये, घटनाओं को यों ही निकल जाने दीजिये, उनमें उलझने की ज़रूरत नहीं है, केवल व्यवस्था बनाये रखिये। ऐडम स्मिथ[6] से शुरू करके वे दावा करते हैं कि सभी चीज़ों का निर्माण प्रतियोगिता के माध्यम से होता है; लोग संघर्ष में संपदा और समृद्धि का निर्माण करते हैं; कोई भी हस्तक्षेप प्राकृतिक घटना-

प्रवाह में एक कृत्रिम तत्व, एक ज़हरीला हस्तक्षेप है। प्राकृतिक चीज़ है लोगों के संघर्ष में अपनी आम समृद्धि का निर्माण करने, एक दूसरे के साथ होड़ करने, हरेक को धनी बनने के लिए छोड़ देना।

लेकिन आजकल नया बुर्जुआ शिक्षाशास्त्र स्कूल के एक ऐसे दृष्टिकोण के ख़िलाफ़ लड़ाई पर उतारू है। बात यह है कि बुर्जुआ वर्ग अपने आर्थिक विकास में अंतिम बाज़ारों के लिए संघर्ष की आवश्यकता पर पहुंच गया है। इसने मालों की एक ऐसी विराट मात्रा का निर्माण कर लिया है कि दुनिया इसके लिए बहुत छोटी हो गयी है, पारस्परिक आत्मरक्षा और दूसरे बुर्जुआ समूहों पर सम्मिलित हमले तथा लूट के माल को अपने बीच अत्यधिक लाभप्रद ढंग से बांटने के लिए संघ बनाने पड़े... लेकिन ज्योंही उन्हें आदर्श – मातृभूमि की रक्षा – के लिए लड़ाई के मैदान में उतरना, डकैतियों और लूट के माल को बांटने के लिए विशाल फ़ौजों को गठित करना आवश्यक हो जाता है, त्योंही उन्हें आदमी में देशभक्ति – अपने देश के लिए मर-मिटने – की तत्परता जगाना आवश्यक हो जाता है। और ज्योंही इसकी आवश्यकता होती है, त्योंही उसमें सामाजिक भावना जगाना, नागरिक को शिक्षित करना आवश्यक बन जाता है। "नागरिक शिक्षा" का विचार इसी का फल है, जो जर्मन शिक्षाशास्त्र में आदर्श बन गया है अथवा जिसे फ़्रांसीसी "नैतिक" शिक्षा कहते हैं। संपूर्ण प्रवृत्ति इस बात में है कि आदमी को इस तरह उल्लू बनाया जाये कि उसे ऐसे राज्य के लिए अपनी क़ुर्बानी देने में प्रेम और तत्परता का अनुभव हो, जो स्पष्टतः अन्याय पर आधारित है।

देशभक्तिपूर्ण स्कूलों का निर्माण करने की आवश्यकता प्रकट करते हुए लंबी-लंबी पुस्तकें लिखने के बाद फ़ेडरिक फ़ेर्स्टर निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुंचते हैं: ईश्वर में, वह कहते हैं, विश्वास बनाये रखना आवश्यक है; यदि कैथोलिक धर्म इस संबंध में अत्यधिक कमज़ोर प्रतीत हो, तो एक दूसरे धर्म को अपनाया जा सकता है। राज्य जिस रूप में क़ायम है, ऐसा नहीं है कि लोग उससे यों ही प्रेम करने लगें, बशर्ते कि उन्हें यह न बताया जाये कि वे कतिपय उच्चतर क़ानून द्वारा राज्य से प्रेम करने के लिए बाध्य हैं। आख़िरकार, यदि राज्य को उसी रूप में मान लिया जाये, जैसा कि वह वास्तविक जीवन में है, तो उससे कोई प्रेम नहीं करेगा और इसलिए ईश्वर, स्वर्ग, नर्क, आदि जैसी

कुछ व्याख्याएं जोड़नी पड़ती हैं ; तब हो सकता है कि यह ठीक-ठीक प्रतीत हो। इस तरह रहस्यमय तत्व के बिना वास्तविक नागरिक शिक्षा की कल्पना नहीं की जा सकती। फ़ेर्स्टर में हरेक पंक्ति से दिखायी पड़ता है कि रहस्यवाद का अर्थ धोखा है ; अगर सही-सही कहा जाये, तो नागरिक राज्य से घृणा करेंगे और इसीलिए सत्य को पूरक झूठों से सुंदर बनाया जाना चाहिए। यही तो असल बात है।

हम नागरिक शिक्षा के बारे में पूर्ण अधिकार के साथ केवल तभी बात कर सकते हैं, जब हम यह देख सकेंगे कि सामंजस्यपूर्ण समाज, एक सामंजस्यपूर्ण व्यक्ति का निर्माण करने में समर्थ समाज, अपने नागरिकों को प्रशिक्षित कर रहा है।

परिवार और राज्य के बीच संबंध की दृष्टि से हमें कुछ बहुत दिलचस्प परिघटनाएं देखने को मिलती हैं। यहां प्रगतिशील बुर्जुआ शिक्षक यह विचार अधिकाधिक सुनिश्चित ढंग से पेश कर रहे हैं कि सामाजिक शिक्षा आवश्यक है, क्योंकि पारिवारिक शिक्षा बच्चे में अपने ही व्यक्तित्व के उच्च मूल्यांकन की भावना विकसित करती है और स्वयं अपने ही व्यक्तित्व का उच्च मूल्यांकन करनेवाला नागरिक अपने को अच्छा सैनिक या कर्मचारी नहीं बना पायेगा, एक ऐसा नागरिक, जो समष्टि की सेवा कर सके।

समय बीतने के साथ यह प्रवृत्ति अधिकाधिक विकसित होती जा रही है, स्वयं जीवन इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए विवश कर रहा है। सुप्रसिद्ध चिंतक पॉल नाटोर्प[7] के विचार में, मज़दूरों और किसानों के बीच भी परिवार का विघटन हो रहा है, जो पूंजीवादी संस्कृति की परिधि में खींचे जाते हैं। माता अब नर्सरी या किचन में मौजूद नहीं रहती, वह कार्यालय जाती है, किसी वकील के लिए या शार्टहैंड-टाइपिस्ट, पत्रकार, आदि के रूप में काम करती है। इसलिए, लघु शैक्षिक संस्था, लघु किचन, लघु लांड्री – वह संपूर्ण अभिशाप, जिसने नारी को सामाजिक जीवन से बहिष्कृत कर दिया है, वह सब विगत की वस्तु बनता जा रहा है। अब विशाल लांड्रियां, किचन, आदि बनायी जायेंगी। अतः किंडरगार्टन भी क़ायम किये जायेंगे: बच्चों के पालन-पोषण और शिक्षण का दायित्व सामाजिक संगठनों और राज्य पर आ जायेगा। माता की गोद से मुक्त होते ही बच्चा राज्य की गोद में आ जाना चाहिए।

•

और इसके बाद क्या होगा? क्या राज्य उसमें व्यक्ति का हनन कर देगा? जी हां, बशर्ते कि वह वर्ग-राज्य हो। ऐसे राज्य को लौह-अनुशासन की आवश्यकता होती है और न केवल भय के लिए, बल्कि अन्तःकरण के लिए भी। वफ़ादारी बचपन से ही विकसित की जानी चाहिए। जब ऐसी लाइन सर्वश्री शिक्षकों द्वारा अपनायी जा रही हो, तो हमें इस बात पर आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए कि हम्बोल्ट और पेस्तालोज़्ज़ी[8] जैसे व्यक्तिवादी शिक्षक प्रतिवाद करते और मिथ्या हौवा खड़ा करते हैं। वास्तव में, यह बैरकों की दहलीज़ है, यह बलिदान की तैयारी है।

व्यक्तिवादी शिक्षा देता है कि स्कूल को केवल सामंजस्यपूर्ण व्यक्तित्व विकसित करना चाहिए और इसके लिए इसे मानव-व्यक्तित्व की समझ की ओर उसके आंतरिक नियमों से आगे बढ़ना चाहिए और जो कुछ भी उसके बाहर है, उसे स्कूल के लिए पराया होना चाहिए। जब कोई पुरोहित या पुलिसवाला ऐसे स्कूल में आये, तो इसे उन्हें बता देना चाहिए: यहां आपका कोई स्थान नहीं है, यहां बच्चा अपने आंतरिक नियमों के आदेशानुसार विकसित हो रहा है, एक ऐसी चीज़, जिसका निर्माण कोई समाज नहीं कर सकता।

लेकिन ज़रा देखिये कि बुर्जुआ समाज में यह सामंजस्यपूर्ण, विकसित व्यक्ति क्या है? आप देखेंगे कि यह या तो अपनी आवश्यकताओं और समकालीन समाज के, जो व्यक्ति को अपनी दासता से निकलने की कोई संभावना नहीं प्रदान करता, संपूर्ण उत्पीड़न की समाधि-शिला के बोझ तले दबा हुआ है या इसकी दीवारों पर अपना सिर पटक-पटक कर तोड़ लेने पर भी वह कुछ नहीं कर पायेगा, यदि वह निर्धन वर्ग का है। और यदि उच्च वर्ग के एक व्यक्ति के सामंजस्यपूर्ण विकास की बात है, तो यहां फ़ेर्स्टर ऐंड कंपनी उनकी घात में बैठी हुई है और कहती है: क्या आप जानते हैं कि यह किस तरह का व्यक्ति है? यह स्वार्थवादी है, जो कहता है कि वह अच्छा खाना और अच्छा सोना चाहता है तथा इस के लिए उसे धन की आवश्यकता है। यदि बाप ने उसके लिए पैसा छोड़ रखा है, तो उसे उनका आभारी होना चाहिए और यदि नहीं छोड़ा है, तो कमाया जाना चाहिए। और यह "सामंजस्यपूर्ण व्यक्ति" अपना आधा जीवन पैसा कमाने में लगा देगा और बाद में, जब वह गंजा हो रहा होगा, तो कूपन काटना शुरू कर

देगा और परजीवी की भांति रहने लगेगा। यह एक दंभी, घृणित व्यक्ति है, जो केवल अपने लिए जीता है – एक ऐसा व्यर्थ आदमी, जिससे कोई कभी कुछ प्राप्त नहीं कर सकता, क्योंकि वह एक निकम्मा स्वार्थी है।

हम समाजवादी शिक्षा के प्रश्न पर एक बिल्कुल भिन्न ढंग से विचार करते हैं। केवल समाजवाद में ही शिक्षाशास्त्र अपनी स्वाभाविक अभिव्यक्ति पाता है। यूनानी आदर्श इसलिए क्लासिकीय प्रतीत होता है कि इसमें मानव-प्रकृति का मूल नियम अभिव्यक्त होता है, लेकिन मानव-प्रकृति का यह नियम यूनान में केवल एक भ्रामक स्वप्न की भांति ही रह सका। असाधारण परिस्थितियों में रखे इस छोटे राज्य में उसे अभी भी दासों की पीठ पर विकास प्राप्त हुआ।

समाजवाद सामान्य मानव समाज है, इसका मुख्य और मूलभूत सिद्धांत सबकी भलाई के लिए सभी लोगों के सहयोग की सरल अवधारणा में निहित है।

प्रश्न यह है कि इसे यथार्थ में कैसे संगठित किया जाये। यह एक विशाल समस्या है। पर मुख्य चीज़ स्पष्ट है : मानव द्वारा मानव का शोषण नहीं, बल्कि सामान्य उद्देश्य के लिए शक्तियों का एकीकरण होना चाहिए। इस तरह, सामान्य समाज का निर्माण सबकी भलाई के लिए होना चाहिए, न कि विशेषाधिकारप्राप्त लोगों की भलाई के लिए। केवल इस समय से ही, कम से कम आशाप्रद ढंग से, शिक्षाशास्त्र सामान्य बनने लगा है। सामान्य शिक्षा सामाजिक शिक्षा है, इसलिए – शिक्षा के उद्देश्यों की दृष्टि से – शिक्षा के व्यक्तिवादी और सामाजिक पहलुओं के बीच अंतर्विरोध ख़त्म हो गया है।

वास्तव में, समाजवाद नागरिक शिक्षा के समर्थकों से सहमत है और कहता है कि मनुष्य में नागरिक विकसित किया जाना चाहिए, ऐसा व्यक्ति विकसित किया जाना चाहिए, जो दूसरों के साथ सामंजस्यपूर्ण ढंग से रह सके, भाईचारा सीख सके, औरों के साथ विचार और सहानुभूति के सूत्र में सामाजिक रूप से बंध सके।

लेकिन कोई भी हम पर इस बात का आरोप न लगाये कि ऐसा करने में हम व्यक्ति को अपंग बना सकते हैं। यदि हमसे पूछा जाता है कि "क्या आपके स्कूल में वैयक्तिकीकरण की अनुमति होगी?" तो हम उत्तर देते हैं : "बेशक।"

यदि हमसे पूछा जाता है कि "आप सुसामंजस्यपूर्ण आर्केस्ट्रा चाहते हैं, आप एकलयता में अधिकतम पूर्णता प्राप्त करना चाहते हैं, क्या इसमें कला-मर्मज्ञ को विभिन्न वाद्य-यंत्रों को बजाने की अनुमति होगी?" बेशक उत्तर होगा: "यह अन्य प्रकार से हो भी कैसे सकता है?" आर्केस्ट्रा अत्यधिक स्वर-विविधता की अपेक्षा करता है, यह एकलय युक्त बहुस्वरता की अपेक्षा करता है। इसमें ऐसी स्थिति की गुंजाइश नहीं होनी चाहिए, जब कोई न जाने कि वह क्या बजाये. जब कोई एक दूसरे की बजायी धुन को दबाने या अपनी धुन का अनुसरण करने के लिए विवश करने की कोशिश करे। ऐसा ही कृत्रिम, पागल आर्केस्ट्रा है बुर्जुआ समाज। सच्चे आर्केस्ट्रा में हर कोई उसी वाद्ययंत्र को नहीं बजाता। समाज ऐसा ही आर्केस्ट्रा है, जिसमें हर वाद्ययंत्र-वादक अपना ही वाद्ययंत्र बजाता है। पहला कला, दूसरा विज्ञान, तीसरा टेक्नोलॉजी, आदि का अध्ययन करता है। और इस समाज में सब कुछ हर व्यक्ति की पहुंच के भीतर होता है: संगीतज्ञ न होते हुए भी कोई संगीत सुनने आ सकता है; संगीतज्ञ होते हुए भी वह खगोलविज्ञान में दिलचस्पी ले सकता है, वस्त्र बनाने की विधियों की जानकारी प्राप्त कर सकता है, आदि। वह उस असभ्य आदमी की तरह नहीं होगा, जो गुज़रती हुई ट्रामगाड़ी को ऐसे देखता है, जैसे कि, जर्मन कहावत के अनुसार, गाय रेलगाड़ी को देखती है।

संस्कृति का यही एकीकरण हम स्कूल, यहां तक कि किंडरगार्टन से ही पूरा कर रहे हैं। हम एक भी प्रतिभा को दबा नहीं सकते। हम अपव्ययी नहीं हो सकते, जबकि हमें एक-एक चीज़ की ज़रूरत है। हमें भली-भांति खोज करनी चाहिए कि व्यक्ति-विशेष की प्रतिभा का झुकाव किस क्षेत्र में सर्वाधिक है, यदि उसमें गणितशास्त्रीय प्रतिभा है, तो हमें उसे रट-रट कर लैटिन सीखने अथवा एक जीवंत कल्पनाशील व्यक्ति को नीरस बीजगणित या रेखागणित पढ़ने के लिए विवश नहीं करना चाहिए।

यही विशाल विशिष्टीकरण सच्चे समाजवादी स्कूल का एक अंग है और बच्चा जितना ही अधिक विकसित होता है (और यह हम किसी भी स्कूल, किसी भी किंडरगार्टन में देखते हैं), यह उतना ही अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है कि उसे प्रारंभिक आयु से ही दूसरे व्यक्ति के सामाजिक स्वभाव का आदर करना सिखाया जाये, खेलों में एकसाथ

समय बिताने के तरीक़े खोजे जायें और बच्चों में सहयोग-भावना विकसित की जाये।

स्कूल थियेटर जैसी चीज़ें, स्कूल उद्यान, फ़ार्म, लाइब्रेरी, प्रयोग-शाला की देखरेख बच्चों को एकसाथ काम करने के लिए बाध्य करती हैं। क्या उनमें से प्रत्येक को यह बात समझ में नहीं आ जायेगी कि वह स्कूल के केवल एक पहलू से संतुष्ट नहीं हो सकता और दूसरों की फ़िक्र न करते हुए केवल अपने में ही लीन नहीं रह सकता?

खेल भी एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें सहयोग की आवश्यकता होती है। वह हर चीज़ जिसमें समवेत, सामंजस्यपूर्ण सिद्धांत कार्य करता है – सामाजिक शिक्षा है, यह सब बच्चे को एक ऐसी संजटिल किंतु एकीकृत संरचना में खींचता है, जिसे एक सच्चे समाज को होना चाहिए।

सौंदर्यशास्त्री कहते हैं कि सौंदर्य रूप-विविधता की एकता है। अतः समाजवाद सौंदर्य है; समाजवादी स्कूल सौंदर्य है, क्योंकि इसमें अधिकतम व्यक्तिवाद का अधिकतम एकता से स्वाभाविक सामंजस्य होता है।

हमें असत्य की आवश्यकता नहीं है, हमें लोगों को ऐसे कार्य में नहीं खींचना है, जो उनके लिए पराया हो, बल्कि सहपाठियों के बीच सहमति, सहानुभूति और गहन संपर्क में यह समाज स्वयं बढ़ेगा, क्योंकि यह एक-दूसरे के साथ स्वतंत्रतापूर्वक सहयोग करनेवाले लोगों का समाज है।

जब तक तलवार आवश्यक है, जब तक हमें अपनी रक्षा करनी आवश्यक है, जब तक ऐसे लोग हैं, जो हमारी समाजवादी आशाओं को ख़ून की नदियों में डुबो देना और विगत की ओर लौटना चाहेंगे, तब तक स्वयं राज्य भी आवश्यक है। तब तक संघर्ष आवश्यक है, राज्य आवश्यक है, सर्वहारा अधिनायकत्व आवश्यक है। सर्वहारा अधिनायकत्व के इन दिनों में हम सामान्य परिस्थितियों के बारे में चर्चा नहीं कर सकते, लेकिन हम सामान्य परिस्थितियों के लिए संघर्ष कर रहे हैं। हमें बच्चों में यह समाजवादी संघर्ष-भावना पैदा करने की आवश्यकता नहीं है, यह आगे चल कर स्वतः विकसित हो जायेगी। उन्हें स्वतंत्र समाज, मानव-स्वतंत्रता तथा उन लोगों के प्रति पूर्ण उत्साह और प्रेम सिखाना ही काफ़ी है, जो उनके भाई हैं और एक-दूसरे

से बंधे हुए हैं। जब बच्चे कुछ बड़े होंगे, तो वे महसूस करेंगे कि उनके और आदर्श के बीच पथ को रोके एक दीवार खड़ी है और अपने समय में वे निज में उस दीवार को तोड़कर आदर्श-पथ को मुक्त करने की संघर्ष-भावना पायेंगे।

हम स्वयं, जिनका जीवन भावी पीढ़ी की तुलना में कुछ मंद हो गया है, हम स्वयं इस लाल सागर को पार करेंगे, जिससे होकर हम बुर्जुआ मिस्र से आगे बढ़ रहे हैं। हमारे बच्चों को "अभीष्ट धरती" में जीवन के लिए स्वयं तैयारी करनी चाहिए, जो लाल सागर के पार हमारी प्रतीक्षा कर रहा है और जिसे हमने अपने हाथों से जीता है।

मेरे लिए अब यही कहने को रह जाता है कि परिवार अथवा स्कूल द्वारा शिक्षा के प्रश्न के प्रति हमारा क्या दृष्टिकोण है।

फ़्रांसीसी क्रांति के दौरान (यह ऐतिहासिक भ्रमण करना आवश्यक है) दोनों ही दृष्टिकोणों को सुस्पष्ट रूप में व्यक्त किया गया था। कहना न होगा कि कोंदोर्से[9] शिक्षा पर अपने व्याख्यान में परिवार के समर्थक थे, नहीं, यहां समाज बड़ी भूमिका अदा करता है। लेकिन तो भी, वह छोटी आयु के बच्चों को परिवार के वातावरण में रखते हैं; स्कूल परिवार का सहायक है। उन्हें भय है कि राज्य स्कूल में हस्तक्षेप कर सकता है और इसे विकृत कर सकता है। स्कूल एक ऐसा केन्द्र, स्थान है, जहां बच्चा परिवार से जाता है और फिर परिवार में लौटता है। कोंदोर्से अत्यधिक सावधानीपूर्वक शैक्षणिक कम्युनिज़्म के शिक्षकों के आक्रमण से इन सीमाओं की रक्षा करते हैं। इस संबंध में वह मोंतेन[10], आदि के व्यक्तिवादी युग के सच्चे शिष्य हैं।

एक दूसरे महान जनवादी लेपेलेत्ये[11] इस विचार से आगे बढ़ते हैं कि बच्चों के भाग्य को संयोग पर छोड़ देना अनुज्ञेय नहीं है: एक की माता अचतुर है, जबकि दूसरे की चतुर है; एक के लिए परिवार स्नेहशील और प्यार-भरी देखभाल का स्थान हो सकता है, जबकि दूसरे के लिए कठोरता से भरा हुआ। यह सब भविष्य में नैतिक रूप से अपंगों, शरारतियों, परजीवियों, हमेशा अपनी देखभाल किये जाने की आशा करनेवाले मम्मी के लाड़लों की एक भीड़ को जन्म दे सकेंगे। इसकी अनुमति नहीं दी जा सकती; राज्य सूरज की भांति सबके लिए समान रूप से चमकता है। लेपेलेत्ये के अनुसार, राज्य को बच्चों की शिक्षा को पूर्णतया अपने हाथों में लेना चाहिए।

आइये गौर करें कि परिवार क्या है।

बुर्जुआ समाज में परिवार की स्थापना केवल महिलाओं की दासता के माध्यम से की गयी। शिलर[12] ने इसे अत्युत्तम ढंग से व्यक्त किया, जब उन्होंने कहा कि स्त्री के लिए उसका घर ही दुनिया है, जबकि पुरुष के लिए सारी दुनिया ही उसका घर है। स्त्री अपने को किचन और नर्सरी के लिए अर्पित करते हुए पारिवारिक जीवन चलाती रही। पुरुष परिवार में आराम करने और, बेबेल[13] के शब्दों में, इसलिए आता था कि स्त्री उसके चेहरे से झुर्रियों को साफ़ कर ले। पुरुष के पास अपना ही काम करने को था: अगर वह सैनिक था, तो हत्या करने के तरीक़ों के बारे में और अगर व्यापारी था, तो दूसरों को ठगने के तरीक़ों के बारे में सोचने में व्यस्त था।

पत्नी अपने बच्चों के पालन-पोषण में व्यस्त रहती है; इसकी वजह से वह अंडा सेनेवाली मुर्ग़ी की नैसर्गिक प्रवृत्ति विकसित कर लेती है और वह दूसरे लोगों के बच्चों के प्रति बिल्कुल उदासीन बन जाती है। यदि किसी दूसरे के बच्चे के साथ एक बूंद दूध में भी हिस्सा बंटाने की बात आती है, तो अंडा सेनेवाली मुर्ग़ी की प्रवृत्ति बाघिन की नैसर्गिक प्रवृत्ति में बदल जाती है और वह पराये बच्चों को मौत के घाट उतारने के लिए कमर कस लेती है। इस तरह, मातृ-सुलभ पवित्र प्रेम – सच्ची परोपकारिता का मूल स्रोत – अच्छी से अच्छी माताओं के साथ भी कठोर कूपमंडूकता में बदल जाती है।

यदि माता ग़रीब है, तो वह कामों से लदी रहती है, वात-बात पर चिढ़ उठती है, बच्चों को तमाचे लगाती है। बेशक वह उनसे प्यार करती है, लेकिन साथ ही घृणा भी करती है, और बच्चे बाहर भाग जाते हैं तथा वहां अपनी ही "सामाजिक अकादमी" बनाते हैं, जो उनके मस्तिष्क या चरित्र के लिए बिल्कुल उपयोगी नहीं होती। यदि वह संभ्रांत महिला है, तो वह परोपकार-कार्यों में लगी रहती है, बाल-नृत्य और थियेटर जाती है, उसके पास अपने बच्चों के लिए निजी शिक्षक यानी आया रखने के लिए काफ़ी साधन होते हैं – वही कुख्यात आया, जो बच्चों को तहेदिल से घृणा करती है, जो स्वयं ही संभ्रांत महिला बनना चाहेगी, लेकिन भाग्य की इच्छा से आया होने और विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के बच्चों का पालन-पोषण करने के लिए बाध्य है।

यही तो पारिवारिक जीवन कहलाता है। १०० स्त्रियों में से ६६ ऐसी हैं, जो अपने को परिवार के दायरे से बाहर पाती हैं। समय के गुज़रने के साथ इनकी संख्या और बड़ी होती जायेगी।

हम ऐसी व्यवस्था को आदर्श के रूप में नहीं क़ायम कर सकते, इसकी रक्षा नहीं कर सकते। जब ग़रीब स्त्री को फ़ैक्टरी में काम करने के लिए बुलाया गया, तो बच्चा परिवारविहीन हो गया। जब मध्यम वर्ग की स्त्री को कार्यालय में काम करने के लिए बुलाया गया, तो बच्चा माताविहीन हो गया। तब स्त्री की आंखें खुलने लगीं और उसने देखा कि दुनिया उसके घर की चहारदीवारी के भीतर नहीं है।

हम किसी से भी बच्चों को छीनने नहीं जा रहे हैं। एक भी माता को तब अपने बच्चों की रक्षा आंसू बहाते हुए नहीं करनी पड़ेगी, जब हम उन्हें स्कूल ले जायेंगे। बल्कि बहुत-सी माताएं तो आंसू बहाते हुए हमारे पास आती हैं और कहती हैं: "इन्हें ले लीजिये, मैं इन्हें कुछ नहीं कर सकती।" ऐसी माताओं की संख्या बहुत बड़ी है। हम, समाजवादियों को इस बारे में नहीं सोचना है कि परिवार में बच्चों को शिक्षित करने की कोशिश करनेवाले लोगों से बच्चों को कैसे लिया जाये, बल्कि इस बारे में सोचना है कि अपने को परिवार-विहीन पानेवालों की कैसे व्यवस्था की जाये।

उनकी व्यवस्था के लिए हम ऐसी स्त्री को निमंत्रित करेंगे, जो शब्द के पूर्ण अर्थ में माता बनना **जानती** है, जिसे धुलाई नहीं करनी पड़ेगी, फ़ैक्टरी, आदि नहीं जाना होगा, वह अपनी रोज़ी शैक्षणिक कार्य से ही कमायेगी। वह सब समय बच्चों के पास रहेगी, वह उन्हें अपना प्यार देगी, शारीरिक और मानसिक ख़ुराक देगी। उसे ऐसे कार्य के लिए प्रशिक्षित किया जायेगा। वह कोल्या की वह माता नहीं होगी, जो मित्या से नफ़रत करती है, बल्कि वह एक सामान्य माता होगी, जिसकी मातृ-सुलभ नैसर्गिक प्रवृत्ति हर बच्चे को देखकर जाग उठेगी। ये विशेष शैक्षणिक प्रतिभाएं स्त्रियों में प्रचुर मात्रा में हैं, वे प्रायः मिलती हैं। कला, टेक्नोलॉजी, विज्ञान, आदि के क्षेत्रों की भांति इस क्षेत्र में भी यह आवश्यक है कि हमारे पास विशेषज्ञ हों। तब हमारे पास युवा पीढ़ी के लिए आम निधि होगी, तब पालेस्त्रा[14] और अकादमियां पुनर्जीवित हो उठेंगी। लेकिन इस सुसंस्कृत समाज में दास नहीं होंगे, मशीनें और मोटरें ही कठोर काम करेंगी।

तब हम वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक जीवन और समाज के लिए शिक्षित करने में समर्थ होंगे और इसका मतलब सामंजस्यपूर्ण ढंग से विकसित व्यक्ति को शिक्षित करना भी होगा।

ऐसा है सामाजिक शिक्षा का सामान्य आदर्श और इससे शिक्षण तथा अध्यापन की निश्चित विधियां आविर्भूत होती हैं। इस दृष्टि से हम व्यक्तिवाद के रक्षकों से वे विधियां ले सकते हैं, जिनसे व्यक्ति-विशेष की प्रतिभाएं विकसित की जाती हैं। और नागरिक शिक्षा के पक्षधरों से "समवेत" शिक्षा की कुछ विधियां भी ले सकते हैं।

बुर्जुआ स्कूल व्यक्तिवादी के, जिसके जंगली पशु के विषदंत दिखायी देते हैं, और दास के रूप में अनुशासित व्यक्ति के आदर्शों के बीच डांवांडोल है और इसे बचने का रास्ता नहीं मिल रहा है। हमारे लिए व्यक्तिवाद और सामाजिक सिद्धांत सामंजस्यपूर्ण ढंग से गुंथे हुए हैं। सामाजिक विचार द्वारा मानवजाति की शिक्षा पर कितना उज्ज्वल प्रकाश पड़ता है!

रूस में विध्वंस के बावजूद, उस थकावट के बावजूद, जिसे हम सभी युद्ध और क्रांतिकारी प्रयासों के परिणामस्वरूप महसूस कर रहे हैं, हम उस ध्रुवतारे के मार्ग-दर्शन से बहुत कम समय में, आश्चर्यजनक रूप से कम समय में सिद्धांत से व्यवहार में संक्रमण कर सकेंगे और शुरू में एक उदाहरण से और बाद में अधिक व्यापक रूप से तथा अंत में पूर्ण रूप से उस सामान्य शिक्षा को दिखा सकेंगे, जिसके बारे में सामान्य शिक्षक कहेगा: अब मैं अपनी बुद्धि और अंतःकरण के आदेशों का पालन कर सकता हूं।

शिक्षा क्या है?*

इस छोटे-से भाषण में मैं आपको स्पष्ट करूंगा कि बहिस्स्कूली शिक्षा की अवधारणा से हमारा क्या तात्पर्य है...

सबसे पहले, स्वयं यह **शिक्षा** क्या है? इसे परिभाषित करना उतना आसान नहीं है।

हमारे यहां माना जाता रहा है कि वह आदमी, जिसने जिम्नेज़ियम** अथवा, इससे भी अधिक, विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त की हो, एक शिक्षित आदमी है। लेकिन इस पर अधिक आलोचनात्मक दृष्टि से विचार किया जाना चाहिए। यह बिल्कुल सही नहीं है कि जिम्नेज़ियम या विश्वविद्यालय पास करनेवाला हर आदमी एक शिक्षित आदमी है, जबकि ऐसा हर कोई, जो किसी विशेष शैक्षणिक संस्थान से पास नहीं हुआ है, अशिक्षित आदमी है...

रूसी शब्द образование***[ओब्राज़ोवानिये] जर्मन Bildung की भांति образ**** [ओब्राज़] से व्युत्पन्न हुआ है। स्पष्टतया, जब हमारे लोगों को यह परिभाषित करने की आवश्यकता हुई कि प्रत्येक आदमी को अपने को क्या बनाना चाहिए और समाज को उसे क्या बनाना चाहिए, तो उनके मन में किसी सामग्री से उभरता हुआ मानव-रूप का काल्पनिक चित्र था। शिक्षित आदमी वह आदमी है, जिसमें मानव-रूप की प्रधानता होती है। आप जानते हैं कि कैसे धार्मिक लोग कहा करते थे मनुष्य का सृजन ईश्वर के रूप के अनुसार किया गया था और कि उसमें कुछ न कुछ ईश्वरीय है। हमारे एक महानतम

---

* संक्षिप्त रूप में प्रकाशित। – **सं०**

** क्रांति-पूर्व रूस में माध्यमिक स्कूल। – **सं०**

*** शिक्षा। – **सं०**

**** रूप। – **सं०**

4*

शिक्षक फ़ायरबाख़ ने, जिन्होंने धार्मिक विचारों का विवेचन वैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया, बिल्कुल ठीक कहा कि मानव का सृजन ईश्वर-रूप में नहीं, बल्कि ईश्वर का सृजन मानव-रूप में हुआ है।[1]

मानव-रूप में ईश्वर का सृजन कैसे हुआ?

यदि आप या तो यूनान के देवताओं पर गौर करें, जो आश्चर्यजनक रूप से सुंदर, अनश्वर, बुद्धिमान सत्त्व थे, या ईसाई धर्म द्वारा अपने ईश्वर को दी गयी परिभाषाओं पर, जब यह कहता है कि उसके ईश्वर या उसका ईश्वर (त्रिरूपेश्वर) सर्वहितैषी, सर्वशक्तिमान्, सर्वन्यायसंगत, सर्वव्यापी है, तो आप पायेंगे कि मानव इसके बहुत कम सदृश है, कि मनुष्य सर्वशक्तिमान् अथवा सर्वहितैषी होने से बहुत दूर है। दरअसल, मूर्तिपूजक अपने देवताओं में और ईसाई अपने ईश्वर में मानव-**आदर्श** का सृजन कर रहे थे। जब अपने अंतरतम की गहराई से मानव ने उस चीज़ के बारे में कल्पना की कि वह क्या बनना चाहेगा, तो उसने शक्तिशाली वीर अथवा ईश्वर के आदर्श का सृजन किया, जो संपूर्ण विश्व को अपनी सेवा में लगानेवाला और अधिकतम विकास की सभी संभावनाओं से संपन्न एक अनश्वर वीर है।

ऐसा ही मनुष्य होना चाहता था। मनुष्य स्वयं अपने में अपना आदर्श धारण किये हुए है।

आइये हम उदाहरण के लिए मानव-शरीर को लें। शरीर निज में अपना आदर्श धारण किये हुए है। यदि आप स्वास्थ्य-विज्ञानी से पूछें कि सामान्य मानव-शरीर कैसा होना चाहिए, तो वह आपसे यह **नहीं** कहेगा कि आप सौ लोगों को ले लीजिये, उनके सीने, हृदय, आदि को माप लीजिये, भाग देकर औसत संख्या प्राप्त कीजिये और यही सामान्य मापदंड होगा। नहीं, स्वास्थ्य विशेषज्ञ यह नहीं कहेगा, वह तो यह कहेगा कि मानव-शरीर को इतना विकसित किया जाना चाहिए कि उसकी पेशियां हृदय, आदि को नुक़्सान पहुंचाये बिना अधिक से अधिक मज़बूत और सुडौल बन जायें। वह आपको शरीर के अन्य अंगों पर बुरा प्रभाव डाले बिना प्रत्येक अंग का अधिक से अधिक विकास दिखाने का प्रयास करेगा। यानी वह मानव-शरीर के सभी अंगों के अधिक से अधिक **सामंजस्यपूर्ण**, सुडौल विकास को दिखायेगा: स्वस्थ हृदय, स्वस्थ फेफड़े, स्वस्थ पेट, स्वस्थ पेशियां,

मज़बूत हड्डियां – हर चीज़ अपने-अपने स्थान पर, हर चीज़ हरकत के लिए तैयार, हर चीज़ रक्त-वाहिकाओं द्वारा सही ढंग से पोषित। और आपके समक्ष तुरंत सुंदर मानव, सामंजस्यपूर्ण सत् का रूप प्रकट हो जायेगा, जिसे देखना आनंदप्रद होता है और जो स्वयं इस बात से आनंद अनुभव करता है कि वह जीवंत है। मनुष्य की शारीरिक शिक्षा को जीवन द्वारा ग़लत ढंग से इस्तेमाल की गयी, आनुवंशिकता द्वारा नष्ट की गयी मानव सामग्री – हमारी विकृत मानव सामग्री – को ऐसे ही रूप में विकसित करना चाहिए। ऐसी है शारीरिक शिक्षा।

अब हम इसी प्रश्न को बौद्धिक शिक्षा के क्षेत्र में रखते हैं। जब किसी आदमी से पूछा जाता है कि वह क्या बनना चाहता है, तो वह अपने धर्म की ज़बान से उत्तर देता है: मैं सर्वज्ञ होना चाहता हूं, मैं सब कुछ जानना चाहता हूं। लेकिन हमारे छोटे मानव जीवन की परिस्थितियों के अंतर्गत, जबकि हम शाश्वत जीवन जीने से बहुत दूर हैं, सब कुछ जानना संभव नहीं है। सभी विज्ञानों के पूर्ण आकार को एक मस्तिष्क में समाना असंभव है। इसके अलावा, हमारी सभी समकालीन संस्कृति इस ढंग से बनी है कि एक अपने लिए एक कर्त्तव्य लेता है, तो दूसरा दूसरे और एक ही समय में समान रूप से अच्छा डाक्टर, चित्रकार, संगीतज्ञ और टेक्नोलॉजिस्ट होना संभव नहीं है। यह नहीं होता। हमारे समाज में प्रत्येक अच्छे नागरिक की अपनी विशेषज्ञता है, जिसमें वह अपने को पूर्ण बनाता है, जिसे वह भली-भांति जानता है, जिससे वह अभ्यस्त है और अतएव जिसमें वह सहज-तापूर्वक काम करता है। तो क्या **सामान्य** शिक्षित **मनुष्य** खो जायेगा? क्या सर्वज्ञान किसी मनुष्य को कभी नहीं दिया जा सकेगा? तो क्या एक इंजीनियर बनेगा, दूसरा एक कृषिविज्ञानी और तीसरा एक दर्ज़ी और प्रत्येक केवल अपने विशिष्ट व्यवसाय को उसी तरह जानेगा, जिस तरह हमारे शरीर में हृदय की कोशिकाओं और मस्तिष्क की कोशिकाओं को एकीकृत करना संभव नहीं है, क्योंकि वे अपने विभिन्न उद्देश्यों और विभिन्न अस्तित्वों के साथ मूलतया भिन्न होती हैं?

नहीं, बेशक नहीं। मानव समाज श्रम-विभाजन की दिशा में बढ़ रहा है। सच्चा मानवीय, सही समाज श्रम-विभाजन का मार्ग अपनाता है, ताकि भौतिक मूल्यों और ज्ञान की यथासंभव विशाल राशि प्राप्त की जा सके। लेकिन यदि कोई भी ज्ञान के इस **आम** भंडार

के प्रति सचेत नहीं है, इस बात के प्रति सचेत नहीं है कि औषधिविज्ञान, भूगोल, खगोलविज्ञान की उपलब्धियां, रसायनविज्ञान, यांत्रिकी, जीव-विज्ञान और शिक्षाशास्त्र वस्तुतः क्या हैं; यदि हर कोई **केवल** अपने ही कार्य को जानता हो और कार्य के अन्य क्षेत्रों के सामान्य निष्कर्ष उसके लिए पराये हों, तो हमारी संस्कृति छिन्न-भिन्न हो जायेगी।

शिक्षित आदमी वह है, जिसे इस **सबका** सामान्य और संक्षिप्त ज्ञान होता है, लेकिन जिसके पास अपनी विशेषज्ञता भी होती है, जो अपने कार्य को भली-भांति जानता है और जो शेष चीज़ों के बारे में भी कह सकता है कि कोई भी मानवीय चीज़ मेरे लिए परायी नहीं है। वह आदमी, जिसे टेक्नोलॉजी, औषधिविज्ञान, क़ानून, इतिहास के मूलतत्वों और निष्कर्षों का ज्ञान होता है, वास्तव में शिक्षित आदमी है। वह वस्तुतः सर्वज्ञता के आदर्श की ओर बढ़ रहा होता है, लेकिन हर चीज़ का केवल सतही ज्ञान प्राप्त करने के ढंग से नहीं। उसके पास **अपनी** विशेषज्ञता होनी चाहिए, **अपना** काम होना चाहिए, लेकिन साथ ही उसकी हर चीज़ में दिलचस्पी होनी चाहिए और ज्ञान के किसी भी क्षेत्र में प्रवेश करने की सामर्थ्य होनी चाहिए। ऐसा आदमी अपने इर्दगिर्द पेश किये जा रहे पूरे कंसर्ट को सुनता है, सभी स्वर उसकी पहुंच के भीतर होते हैं, वे सभी एक में घुलमिल कर एक सामंजस्य बनाते हैं, जिसे हम संस्कृति कहते हैं। और साथ ही, वह स्वयं भी इसमें एक वाद्ययंत्र बजा रहा होता है और भली-भांति बजाता है तथा आम संपदा में अपना मूल्यवान योगदान करता है और यह संपूर्ण आम संपदा समग्रतः उसकी चेतना, उसके हृदय में प्रतिबिम्बित होती है।

ऐसा होता है बौद्धिक रूप से विकसित मनुष्य, एक **शिक्षित** मनुष्य।

अब सौंदर्यबोधी, कलात्मक शिक्षा को लें। जैसे मैंने डाक्टरों और वकीलों के बारे में ज़िक्र किया, वैसे ही कलाकारों के बारे में भी चर्चा की जानी चाहिए। यदि आप प्रतिभासंपन्न हैं, तो आप चित्रकार बन सकते हैं। लेकिन यदि चित्रकार होते हुए आप कहते हैं कि "मैं संगीत बिल्कुल नहीं समझता, इसके दावों को अंगीकार नहीं करता, मेरा काम चित्रकारिता है," तो आपको लानत है। और यदि आप कहें कि "खगोलविज्ञान से मेरा क्या काम, मेरा अब भी विश्वास है कि सूर्य पृथ्वी का चक्कर लगाता है," तो भी आपको वैसे ही लानत है।

किसी को भी अज्ञानी नहीं रहना चाहिए। सबको सभी विज्ञानों और कलाओं के मूलतत्वों का ज्ञान होना चाहिए। चाहे आप मोची हों या रसायनविज्ञान के प्रोफ़ेसर, यदि आपकी आत्मा में किसी कला के लिए स्थान नहीं है, तो इसका मतलब है कि आप काने और बहरे की भांति अपाहिज हैं। क्योंकि आदमी की शिक्षा वस्तुतः इसमें है कि वह सब कुछ, जिसमें मानवजाति अपने इतिहास और संस्कृति का निर्माण करती है, जो मनुष्य के लिए उपयोगी या सांत्वनाप्रद अथवा जीवन में आनंद प्रदान करनेवाली कृतियों में प्रतिबिम्बित होता है – यह सब कुछ प्रत्येक आदमी की पहुंच के भीतर हो, पर साथ ही, उसके पास कोई विशेषज्ञता भी हो। यह आवश्यक नहीं कि उसके पास एक ही विशेषज्ञता हो, कुछ ऐसे महान प्रतिभाशाली लोग भी हैं, जिनके पास एकाधिक प्रतिभाएं हो सकती हैं। उदाहरणार्थ, हमारे महान संगीतकार बोरोदीन[2] एक वैज्ञानिक – रसायनज्ञ – भी थे। ऐसी चीज़ें होती हैं और वे मानवजाति को ख़ुशी ही प्रदान करती हैं। लेकिन किसी भी हालत में विशेषीकरण को सामान्य शिक्षा का और सामान्य शिक्षा को विशेषज्ञता का हनन नहीं करना चाहिए, जिससे एक सबसे घृणित परिघटना – पल्लवग्राहिता – उत्पन्न होती है।

सब कुछ ऐयाशी के लिए करनेवाले, फूलों को नष्ट करनेवाले और मलाई उतार कर चट करनेवाले पल्लवग्राही व्यक्ति का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि किसी एंक क्षेत्र में मनुष्य स्वयं सर्जक हो, कि वह इस क्षेत्र में अपनी वैयक्तिक रचनात्मक प्रतिभाओं के पूर्ण उपयोग के साथ गहराई से काम करे और अपनी पूरी शक्ति से मानवजाति के लिए वास्तविक महत्व रखनेवाली वस्तुओं का निर्माण करे।

अब हम नीतिशास्त्र – नैतिकता – की चर्चा करेंगे। अभी जब हम मनुष्य के बौद्धिक, तकनीकी और कलात्मक विकास के बारे में बात कर रहे थे, तो हम अपने से यह पूछ सकते थे: "ज़रा ठहर जाइये, आप कहते हैं कि सारी मानवजाति को प्रत्येक आदमी की सेवा में होना चाहिए, कि खानों, खेतों, उद्यानों, मिलों, कारख़ानों, कलाकारों के स्टुडियों और सभी वर्कशापों, अकादमियों, विश्वविद्यालयों और प्रयोगशालाओं में उत्पादित सब कुछ हर आदमी की पहुंच के भीतर होना चाहिए, ताकि हममें से प्रत्येक अपनी आस्तीनें

चढ़ाकर अपनी जगह पर आठ घंटे काम करने के बाद मानव-संस्कृति के मंदिर जा सके और वहां न केवल अपने हाथों के कार्यों, बल्कि संपूर्ण समाज के लोगों के कार्यों का आनंद ले सके। लेकिन क्या बुर्जुआ संसार में ऐसा होता है?" नहीं, तथाकथित "आम लोगों" का अधिकांश हिस्सा, जो श्रम का मुख्य बोझ वहन करता है, इस संस्कृति से बिल्कुल कटा हुआ है, इसका उपयोग करने में पूर्णतः असमर्थ है।

इसके अलावा, हम पाते हैं कि लगभग सर्वत्र विशेषीकरण इस हद तक पहुंच गया है कि इसने मानव-रूप को विरूपित कर दिया है। लोग इतनी पूरी तरह अपने विशेष क्षेत्र में घुस गये हैं कि जर्मनी जैसे अपेक्षाकृत प्रगतिशील देश में विशेषीकरण सच्चे आदमी को अपाहिज बना रहा है। लेकिन साथ ही, निठल्लेपन की रोटियां तोड़नेवाले परजीवियों का बड़ा समूह भी है, जो इस संबंध में मानव-रूप को विरूपित करते हैं कि वे केवल ऐयाशी करते हैं और कुछ भी सृजन नहीं करते, जिससे उनकी आत्मा की रचनात्मक शक्ति क्षीण हो जाती है। वे उन परजीवियों की तरह हैं, जो धीरे-धीरे अपने पैरों और पंखों को खो देते हैं और दूसरे जीवों द्वारा पोषित एक कीड़े के थैले के अलावा और कुछ नहीं रह जाते। यह एक विशाल विरूपण है और चाहे इसे कितने ही चमकीले कलात्मक अलंकरणों से क्यों न सजाया जाये, फिर भी यह विरूपण ही रहता है। यह संपूर्ण जीवन को ज़हरीला बना देता है। यही कारण है कि हमारी समकालीन संस्कृति के लगभग संपूर्ण चेहरे पर हमें सच्चे ढंग से शिक्षित आदमी नहीं दिखायी देता।

जब मनुष्य ने नैतिक संबंध में ईश्वर के रूप में आदर्श खींचा, तो उसने कहा कि ईश्वर सर्वहितैषी है, कि वह प्रेमपूर्ण है, कि उसके प्रेम की परिधि में संपूर्ण मानवजाति आ जाती है। संपूर्ण मानवजाति? नहीं, यह नहीं कहा जा सकता...

जब इंजील कहता है: "तुम सिद्ध बनो, जैसा तुम्हारा स्वर्गीय पिता सिद्ध है," सुनिये कि स्वर्ग में पिता क्या कहता है: "पलटा लेना मेरा काम है, मैं ही बदला दूंगा।" उसकी सिद्धि को यह बात हानि नहीं पहुंचाती कि वह निर्णय दिवस पर लोगों का फ़ैसला करनेवाला डरावना निर्णायक होगा और अपश्चात्तापी पापियों को ऐसी यातना – शाश्वत अग्नि – में भेजेगा, जिसमें मानवीय शक्ति में भेजने

की सामर्थ्य नहीं है। अतः मनुष्य की कल्पना में ईश्वर महान प्रेम और महान क्रोध का एक सत्त्व है। प्रेम अपने अंतिम रूप में केवल तभी विजयी हो सकता है, जब क्रोध के लिए कोई चीज़ नहीं रहेगी, जब कोई विरूपता नहीं रहेगी, जब कोई द्वेष नहीं रहेगा। लेकिन जब तक वे हैं, तब तक उनका उन्मूलन किया जाना चाहिए। इस तरह, एक दिन अपनी विजय में मनुष्य, जब उसे संघर्ष करने को बिल्कुल नहीं रह जायेगा, संभवतः शुद्ध आनंद की मूर्ति होगा : "विजय से चेहरा चमकता है।"[3] लेकिन जब तक विजय नहीं होती, तब तक उसे सरसराते तीर निशाने पर – संस्कृति को छिन्न-भिन्न करनेवाले दानव पर – छोड़ते रहने चाहिए। तब तक मनुष्य को योद्धा बना रहना चाहिए। किस लिए ? मानव-रूप के लिए, वस्तुतः उसके निर्माण के लिए, वस्तुतः उसकी शिक्षा के लिए।

और क्रांति, समाजवादी क्रांति, स्कूली और बहिर्स्कूली शिक्षा में एक क्रांति है। यह क्रांति मानव की शिक्षा में एक क्रांति है, केवल आज अपाहिज और इसलिए अशिक्षित लोगों के प्रति ही नहीं, बल्कि हमारी अगली पीढ़ियों के युवाजनों के प्रति भी महान प्रेम की क्रांति है, जिन्हें हम इसलिए स्नेह करते हैं कि उनमें हम वह मानव देखते हैं, जैसा कि हम बनना चाहते थे, लेकिन दुर्भाग्यवश हम स्वयं वैसा नहीं बन सकते। अपने को उत्कृष्ट मानव के रूप में अनुभव करने का यह अभाव आदर्श के लिए भयानक लालसा और उन सभी बाधाओं के विरुद्ध क्रोध में बदल जाता है, जो इस आदर्श की सिद्धि में मानव-जाति के मार्ग में आती हैं। इस दृष्टि से क्रांति उस मानव का विद्रोह है, जो अपने को व्यष्टि के तौर पर नहीं, बल्कि समष्टि के तौर पर शिक्षित करता है, क्योंकि यदि वास्तविक समाज की स्थापना नहीं की गयी है, तो मनुष्य को नैतिक शिक्षा नहीं दी जा सकती।

केवल एक न्यायसंगत समाज में ही, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति वस्तुतः इसलिए नहीं काम करता है कि कोई अन्य उसके श्रम का इस्तेमाल करे, बल्कि आम कोष में, उस आम मंदिर में अपना योगदान करने के लिए काम करता है, जिसमें वह स्वयं रहता है और स्वयं महान तथा सुंदर की स्तुति करता है – केवल ऐसे ही समाज में वास्तव में शिक्षित मनुष्य संभव है, केवल वहीं वह अपना हृदय खोल सकता है और मोपासां के इन शब्दों को दोहराना बंद कर सकता है कि आदमी

हमेशा अकेला होता है और उसका सर्वोत्तम मित्र भी उसके लिए पहेली होता है।[4] लोगों के दिलों में एक-दूसरे के प्रति यह संदेह का बीज सामाजिक परिस्थितियों, निजी संपत्ति के ज़ोर से बोया गया। उसे पिघलना चाहिए, भाईचारे के वातावरण में, प्रेम और पारस्परिक सहायता के वातावरण में दिलों को मिल कर एक हो जाना चाहिए तथा वस्तुतः इसी प्रेम की ख़ातिर हर समय अन्याय रूपी दानव को देखते ही जलते क्रोध से भर जाना चाहिए, उसे पृथ्वी से साफ़ कर देना चाहिए।

इस तरह यह स्पष्ट है कि शिक्षा के उद्देश्य क्या होने चाहिए। उसे वर्तमान समाज द्वारा विकृत मनुष्य से शारीरिक सौंदर्य से संपन्न एक ऐसे व्यक्ति का निर्माण करना चाहिए, जो उन अंगों की उपस्थिति द्वारा आदेशित सभी चीज़ों को पूरा करने में समर्थ हो, जिन्हें हम अभी दबे हुए पाते हैं न कि विकसित। उसे अपने सभी अंगों को ऐसे सामंजस्यपूर्ण ढंग से विकसित करना चाहिए कि वे एक-दूसरे को बाधा न पहुंचायें। और समाज को एक समष्टि के रूप में अपने सभी अंगों को उस ढंग से विकसित करना चाहिए कि वे एक-दूसरे को बाधा न पहुंचायें। जिस तरह एक शिक्षित व्यक्ति के शरीर में प्रत्येक कोशिका सभी कोशिकाओं के लिए रहती है और काम करती है तथा आनंद-अनुभूति में सभी मिल कर एक हो जाती हैं, उसी तरह समाज में हर चीज़ को आम उद्देश्य की सेवा करनी चाहिए और प्रत्येक व्यक्ति को अधिकतम रचनात्मक प्रयास करना चाहिए, ताकि सब मिल कर एक सामंजस्य बन जायें।

और सबका यह सामंजस्य, जिसे हम संस्कृति कहते हैं, शिक्षा है। स्कूल को इस शिक्षा की सेवा करनी चाहिए। लेकिन वह इसे कैसे कर सकता है? क्या वह आदमी को इस तरह की पूर्ण शिक्षा दे सकता है? नहीं, इसे किसी निश्चित अवधि में नहीं प्राप्त किया जा सकता, ऐसी शिक्षा की प्रक्रिया पालने से क़ब्र तक जारी रहती है। जब तक मनुष्य जीवित रहता है, तब तक सीखता रहता है और कोई भी ऐसी अवधि नहीं होती, जिसमें उसने कुछ न सीखा हो। स्वयं जीवन ही इस तरह बना है कि मनुष्य के लिए सीखना आवश्यक है, केवल इसलिए नहीं कि सभी विज्ञान और कलाएं निरंतर विकसित हो रही हैं, बल्कि इसलिए भी कि जीवन हर महीने हमारे इर्दगिर्द

नये-नये कार्य प्रस्तुत कर रहा है, हमें अपने आपको कोई न कोई नयी चीज़ के अनुकूल बनाना पड़ता है। एक सुप्रसिद्ध जापानी कलाकार ने कहा कि ७० की आयु पर पहुंच कर ही उसकी समझ में आया कि चित्रकला क्या है, केवल ७० की आयु पर पहुंच कर ही वह अपने को एक सच्चा कलाकार महसूस कर सका। और प्रसंगवश, यह एक सच्चा महान कलाकार था, जो तब तक काफ़ी उत्कृष्ट चित्र बना चुका था, लेकिन ७० की आयु में तो उसने अपनी कूंची से वस्तुतः चमत्कार कर दिया और लोगों को विवश होकर उसे एक महान चित्रकार के रूप में स्वीकार करना पड़ा।[5]

न केवल हमें सब समय सीखना चाहिए, बल्कि साथ ही, निरंतर सतर्क, नमनीय भी होना चाहिए, नये प्रभावों को प्राप्त करने के लिए तैयार रहना चाहिए। यदि कोई शिक्षा से यह अर्थ लगाता है कि २२ साल की आयु में मनुष्य हमेशा के लिए और अंतिम रूप से ढल जाता है, तो यह कितना भयानक निष्कर्ष है। नहीं, उसे निरंतर अपने को नये के अनुकूल ढालते रहना चाहिए, उसे हर नये स्वर में दिलचस्पी लेनी चाहिए, हर नयी अर्थच्छटा, हर नयी खोज को समझने में समर्थ होना चाहिए।

आप जानते हैं कि इस तरह के बूढ़े लोग हैं, जिन्हें आप चाहे जितना नूतन और उत्कृष्ट दिखायें, फिर भी वे कहेंगे: "नहीं, हमारे ज़माने में चीज़ें बेहतर थीं, हमारे ज़माने में सब कुछ बेहतर था, तब बिल्कुल भिन्न तरह के लोग थे। आप वैसे वीर नहीं हैं।" वस्तुतः यह बकवास है, यह केवल उस काल के जीवन के रूपों से चिपके रहना है, जब स्वयं मनुष्य का निर्माण हुआ था।

बच्चा होना एक महान कला है, लेकिन स्वयं जीवन यह कला सिखाता है। लगभग हर मनुष्य में बच्चा होने की योग्यता होती है, सिर्फ़ उसकी ख़ुशी में बाधा न पहुंचायें। जीवन में ख़ुश होने की उसकी इस मेधावी योग्यता में बाधा न डालें, इसे नष्ट न करें। बाद में, जब हम क्रमशः युवावस्था, प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था में पहुंचते हैं, तो जीवन की महान कला सबसे महत्वपूर्ण कला सिद्ध होती है। जी हां, उत्तम वयोवृद्ध होना एक महान कला है। और संभवतः विवेक से भरे वयोवृद्ध में मानवजाति जितनी पूर्णता से अभिव्यक्त होती है, उतनी और किसी चीज़ में नहीं, उस वयोवृद्ध में, जिसका हृदय हर

नूतन चीज़ के लिए खुला रहता है, जो नयी पीढ़ी का अभिनंदन करता है, जो अपना अनुभव उसे हस्तांतरित करता है, जो कह सकता है कि उसका जीवन वस्तुतः प्रेम के आलोक में गुज़रा है। और फिर यह जीवन अपने शांत तथा भव्य अंत की ओर आता है, जब अपने दिनों से संतृप्त होकर मनुष्य क़ब्र से परे जीवन के बारे में चिंता न करते हुए चेतना के साथ मरता है कि उसने जो कुछ प्राप्त किया है, वह अब भावी पीढ़ियों के हाथों में हस्तांतरित हो गया है...

यह सब सीखना आवश्यक है। जब तक आदमी अपने को जवान देखने का आदी होता है, तब तक उसकी दूसरी अवस्था शुरू भी हो चुकी होती है और यदि वह उस चीज़ को देखने से अपना चेहरा चुराता है, जो दूसरों के लिए दुर्भाग्य और विभीषिका है, तो उसका पतन होगा। हमें हमेशा सीखना चाहिए। तात्पर्य कि शिक्षा केवल स्कूल का कार्य नहीं है।

स्कूल तो सिर्फ़ शिक्षा की कुंजियां देता है। स्कूल को मनुष्य को काम करने की शिक्षा देनी चाहिए, इसे दुनिया के रहस्यों के अध्ययन की कुछ निश्चित विधियों की आधारशिला रखनी चाहिए, इसे इस ढंग से पहली प्रेरणा देनी चाहिए और उसके बाद जीवन आगे बढ़ता जायेगा और कोई भी यह पूर्वानुमान नहीं कर सकता कि मनुष्य का पथ कैसा होगा।

बहिर्स्कूली शिक्षा संपूर्ण जीवन है! मनुष्य को अपने को संपूर्ण जीवन शिक्षित करते रहना चाहिए, क्योंकि आदर्श दूर स्थित है और ऐसा कोई क्षण नहीं होना चाहिए, जिसे मनुष्य बिना किन्हीं उपलब्धियों के बिताये। यदि ऐसा क्षण है, तो इसे उसने अपने जीवन से चुराया होगा। बेशक, सोना और आराम करना आवश्यक है। लेकिन इतना ही सोना और आराम करना आवश्यक है कि बाद में नयी शक्ति प्राप्त करके वह अपने खोये समय को पूरा करने में समर्थ हो सके। एक कहावत है: "जो सोता है, सो पाप नहीं करता।" नहीं, वह आदमी, जो अत्यधिक सोता है, भयानक पाप करता है, वह समय गंवाता है, समय नष्ट करता है; और जो समय नष्ट करता है, वह स्वयं अपने को नष्ट कर रहा होता है, अपने में मानव-रूप को नष्ट कर रहा होता है, समाज को और स्वयं मानवता के आदर्श को नष्ट कर रहा होता है। जब क्लर्कों की एक या दूसरी मंडली एकत्र होती है और

कहती है, "आइये, समय **नष्ट करने** के लिए ताश खेलें," तो वे अपने काम का वर्णन बिल्कुल सही ढंग से कर रहे होते हैं: वे चार हत्यारे हैं, जो एक-दूसरे की हत्या करने में लगे हुए हैं और सामाजिक रूप से उपयोगी समय को नष्ट कर रहे हैं। उनका जीवन इतना कमीना और क्षुद्र होता है कि केवल यहीं हरी मेज़ पर कोई क्लर्क या रजिस्टर-कीपर महसूस करता है कि उसके रास्ते में भाग्य के टपकने, "ग्रैंड स्लैम" जीतने की कुछ संभावना है – यह उसके लिए बड़ी घटना है, उसके जीवन में और कोई घटनाएं नहीं हैं।

अपने को शिक्षित करने का प्रयास करनेवाले व्यक्ति को अपना समय नहीं नष्ट करना चाहिए। उसके लिए सभी घटनाएं, छोटी से छोटी घटनाएं भी एक प्रश्न उठाती हैं, जिसका उत्तर पाने के लिए उसे पुस्तकों का गहन अध्ययन करना चाहिए, पूछताछ करनी चाहिए और अन्वेषित चीज़ को आत्मसात् करना चाहिए। और आत्मसात् करने का क्या अर्थ है? किसी चीज़ को अपना अभिन्न अंग बनाना, उसे अपनी निधियों का एक तत्व बनाना। मनुष्य की सच्ची संपदा वह है, जिसे उसने आत्मसात् कर लिया हो।

ऐसे शौक़िया लोग हैं, जिनके पास अपनी चित्र गैलरी, अपने थियेटर हैं। लेकिन उन्होंने इनमें से किसी भी चीज़ को **आत्मसात्** नहीं किया है और इसलिए इनके मालिक वे नहीं, बल्कि निर्धन कलाकार है, जो गैलरी आता है और इस या उस चित्र की पूरी समझदारी के साथ प्रशंसा करता है। वह इसका उस व्यक्ति से हज़ारगुना अधिक मालिक है, जिसने एक हज़ार रूबल अदा किये, लेकिन चित्र को आत्मसात् करने, इसे अपनी ख़ुशी का स्रोत बनाने क़े लिए कुछ नहीं किया।

स्कूल इसकी संभावना प्रदान करता है।

और बहिस्कूली शिक्षा क्या है, जिसके लिए आप यहां एकत्रित हुए हैं? आप इसलिए यहां एकत्रित हुए हैं, ताकि स्कूल के बाहर पढ़ा सकें और सीख सकें। बहिस्कूली शिक्षा ऐसे सांस्कृतिक केन्द्रों – संग्रहालयों, पुस्तकालयों, थियेटरों, जन-विश्वविद्यालयों, कोर्सों, जिमनास्टिक क्लबों, आदि – की स्थापना और उपयोग का मामला है, जो आदमी को अपने जीवन को केवल समय गुज़ारने की चीज़, केवल एक सरल प्रक्रिया न बनने देने में सहायता कर सकें। इन सबको आम

लोगों की पहुंच के भीतर बना दीजिये, इनमें आम लोगों को खींचिये, ताकि वे पढ़ सकें और सिखा सकें कि कैसे शिक्षा प्राप्त की जानी चाहिए, ताकि वे आम निधि में अपनी आत्मा, अपनी सभी मूल्यवान चीज़ों को दे सकें।

रूस में यह कार्य विशेष रूप से तीव्र महत्व ग्रहण कर लेता है। यह कहना एक बात है: "जीवन दैनिक जीवन का सागर है, हमें तैरना जानना चाहिए और जीवन के अभीष्ट तटों पर पहुंचने में समर्थ होना चाहिए।" लेकिन यह कहना और बात है: "लोग डूब रहे हैं, हमें तैरना सीखना चाहिए ताकि हम उन्हें बचा सकें।" रूस में कोई सच्चे स्कूल नहीं थे, कोई भी सच्चे स्कूल से नहीं गुज़रा है। हमारे स्कूल लोगों को अपंग बना देते हैं, उन्हें एक-दूसरे से अलग-थलग कर देते हैं, ऐसा ज्ञान देते हैं, जो भुला दिया जाता है। और ऐसे कितने लोग हैं, जो बंद आंखों के साथ चलते हैं और यह नहीं जानते कि वे अंधे हैं और जब वे अपनी आंखें खोलेंगे, तो आकाश, सूर्य और पृथ्वी देखेंगे! हमारे लिए बहिस्स्कूली शिक्षा अनेक शैक्षणिक यानी वैज्ञानिक और कलात्मक मूल्यों के प्रचार तथा ऐसे लोगों के सांस्कृतिक प्रबोधन का एक विशाल साधन है, जिन्हें अंधेरे तहख़ानों में रखा गया है, जिन्हें ज़मीन के नीचे छछूंदर के बिलों में रखा गया है, जिन्हें अपने पंख फैलाने का कोई मौक़ा नहीं दिया गया है, ताकि वे अपनी विजय का पूर्ण उपयोग करने में समर्थ हो सकें।

राजनीतिक रूप से वे जीत चुके हैं, आर्थिक रूप से वे अर्थव्यवस्था के सभी केन्द्रों को अपने शक्तिशाली हाथों में ले रहे हैं। लेकिन यदि उनके पास ज्ञान नहीं है, तो वे कैसे शासन करेंगे, अपनी अर्थव्यवस्था का संचालन कैसे करेंगे? वे स्कूलों में ज्ञान प्राप्त करेंगे, लेकिन यह काम अत्यंत मंथर गति से हो रहा है। हमें अभी ही ज्ञान प्रदान करना चाहिए, और केवल उदीयमान पीढ़ी को ही नहीं, जिससे हम आशा करते हैं कि नया इंसान विकसित करेंगे, बल्कि उन लोगों को भी, जिन्होंने अभी विजय प्राप्त की है। उन्हें समाज को बदलने का अवसर दीजिये, उन्हें ज्ञान दीजिये! जो भौतिक भूख हम अब महसूस करते हैं, वह उतनी ख़तरनाक नहीं है, जितनी कि आत्मिक भूख, अर्थात्, सांस्कृतिक अर्थ में जनता का कुपोषण। वह कितनी ग़लतियां कर रही है, कितने ऐसे बदमाशों को आगे बढ़ाती है, जो अपनी घृणित धूर्त्तता

से मज़दूरों और किसानों के ध्येय को बदनाम करते हैं। लेकिन जनता क्या करे, जब उसके पास ज्ञान ही नहीं है, जब वह आगे आनेवाले सभी लोगों पर टूट पड़ने के लिए विवश है? वह क्या करे, जब बुद्धि-जीवियों ने अपने पूर्वाग्रह के कारण प्रारंभिक दिनों में उसकी राजकीय सत्ता का तोड़-फोड़ किया? क़दम-क़दम पर ग़लतियां की जा रही हैं, लेकिन जनता को अपने में विश्वास है, उसका सच्चा और दृढ़ विश्वास है कि उसे **अनिवार्यतः** विजयी होना है, उसके पास ज्ञान की लालसा है, इसलिए और भी अधिक कि उसने पुरानी संस्कृति के भवन को गिरा दिया है, वह ध्वंसावशेषों के बीच रह रही है तथा एक नये भवन की आधारशिला रख रही है।

यह जानने के लिए कि क्या गिराया जाये और कैसे गिराया जाये, नये भवन की आधारशिला सही ढंग से रखने के लिए विपुल ज्ञान की आवश्यकता होती है। और हमें भय है कि कहीं अंधी जनता, हालांकि इसने अपनी शक्ति महसूस कर ली है और राजनीतिक रूप से मालिक बन गयी है, आर्थिक व्यवस्था में ज़ारों तथा अभिजातों से विरासत में प्राप्त बुराई से मुक्त होने में असमर्थ न हो जाये। इसीलिए यह मामला इतने तीव्र महत्व के साथ प्रस्तुत हुआ है।

और आपका कार्य वह सब कुछ पूरा करना है, जो सामान्यतया स्कूल द्वारा पूरा किया जाता है यानी साक्षरता प्रदान करना। लेकिन साथ ही, यह कभी न भूलें कि आदर्श इसमें नहीं है, न ही आदमी को एक या दूसरे व्यवसाय में पारंगत बनाने में है, बल्कि उसे मानवीयता के लिए एक योद्धा बनाने में है। और यह आदमी केवल तभी बन सकता है, जब वह जानता हो कि दुनिया क्या है,, यह कैसे अस्तित्व में आयी, पूंजीवादी प्रणाली से वर्तमान स्थिति कैसे उत्पन्न हुई, वैज्ञानिक, कलात्मक तथा आर्थिक कार्यभारों से इसका क्या संबंध है और किसी इवान या स्तेपान के रूप में इस दुनिया में मेरा क्या स्थान है तथा मुझे क्या करना चाहिए। दुनिया में अभूतपूर्व महान क्रांति की अवधि में उसे वह सब कुछ करने की योग्यता प्रदान कीजिये, जो उसे करना चाहिए!

यही कारण है कि मज़दूरों और किसानों की हमारी सरकार बहिर्स्कूली शिक्षा को सर्वप्रथम, विशाल महत्व प्रदान किये बिना नहीं रह सकती। यही कारण है कि संभवतः कोई भी संसाधन इसके लिए

काफ़ी नहीं हो सकता तथा यही कारण है कि मज़दूरों और किसानों की सरकार बहिर्स्कूली शिक्षा के ध्येय की सहायता करने में कोई कोर-कसर नहीं उठा रखेगी।

यदि हमारे पास काफ़ी संख्या में अध्यापक होते, तो हम अभी ही संपूर्ण रूस के कोने-कोने में जन-विश्वविद्यालय[6] क़ायम कर सकते थे। लेकिन यह करना उतना आसान नहीं है, क्योंकि इस ढंग से प्रकाश-वाहक के रूप में काम करने में समर्थ लोगों की संख्या बड़ी नहीं है। सबसे पहले, हमें प्राध्यापकों को प्रशिक्षित करना चाहिए, संचालकों को प्रशिक्षित करना चाहिए और यह सर्वोच्च प्राथमिकता-प्राप्त कार्य होना चाहिए। तब तक हम जनता के लिए जो कुछ भी कर सकते हैं, उससे संतुष्ट होना चाहिए।

तो भी मुझे कहना चाहिए कि यदि बहिर्स्कूली शिक्षा आम लोगों को एक नये स्तर पर उठानेवाला शक्तिशाली उत्तोलक है, तो यह उन लोगों के रूपांतरण के लिए भी कोई कम शक्तिशाली उत्तोलक नहीं है, जो अपने को शिक्षित मानते हैं। हम शिक्षित लोगों से इस क्षेत्र में काम लेंगे, यहां तक कि उन लोगों से भी, जो स्वयं यह नहीं करना चाहते। हम उन लोगों को ले आयेंगे, जो हमें सहयोग देने के लिए आगे बढ़ते हैं, ताकि वे अपनी शिक्षा का उपयोग जनता की सेवा में कर सकें। जो भी ज्ञान उनके पास है, उसे उन्हें जनता को दे देना चाहिए और ऐसा करने से वे निर्धन नहीं हो जायेंगे, बल्कि उल्टे और समृद्ध होंगे।

वयस्क लोगों के साथ काम करना स्कूल में काम करने की तरह नहीं है। हालांकि हम स्कूल में भी मांग करते हैं कि अध्यापक विद्यार्थी का सहयोगी बने, लेकिन वहां आख़िरकार बात अप्रौढ़ विद्यार्थी और प्रौढ़ अध्यापक की है; यहां बात ऐसे आदमी की है, जो श्रम से कटा हुआ है, जिसे कोई वास्तविक कठिनाइयां नहीं मालूम हैं, जिसके पास कोई सामाजिक सहजबोध नहीं है, सृजनशील आत्मा की कोई क्रांतिकारी लहर नहीं है – वह उन मज़दूरों और किसानों का शिक्षार्थी होगा, जिनके पास वह आता है और जिन्हें वह पढ़ाना शुरू करता है। जी हां, शिक्षा देते हुए उसे सीखना पड़ेगा! उनके पास आते हुए उसे ख़ुशी से कांपते हाथों से इस वीर-जनता को भौतिकविज्ञान, रसायनविज्ञान, आदि के बारे में अपने संपूर्ण ज्ञान को हस्तांतरित

करना चाहिए। और उसे मालूम होना चाहिए कि सरल सहयोग में जनता से उसे जो सहयोग मिलेगा, उससे उसे नयी शक्ति प्राप्त होगी। रूसी बुद्धिजीवी दमित और दयनीय जीवन जी रहा है। यदि वह निरंकुशता के, जो उसे दासों के भावी निरीक्षकों के रूप में ढालती है, चाटुकार से एक सच्चा नागरिक बन सकता है और अपने को उन सभी भावनाओं से अनुप्राणित कर सकता है, जो श्रमजीवी जनता के सर्वोत्तम लोगों में भरी होती हैं, तो केवल इस श्रमजीवी जनता के साथ सहयोग के माध्यम से ही वह सच्चा नागरिक बन सकेगा।

इसका उपयोग करते हुए हम जनता की विशाल माला को, जो विगत की मुसीबतों का बोझ वहन करते हुए अपने भविष्य की ओर कष्टपूर्ण ढंग से चल रही है, उन विज्ञानों और उस कला की माला के साथ पिरोने में समर्थ होंगे, जो बहुत मूल्यवान हैं और जिन्हें अपनी अपेक्षाकृत छोटी धाराओं को इस गंदली और अंधेरी नदी में मिला देना चाहिए। यह संगम कल्याणप्रद होगा, क्योंकि यह गंदली और अंधेरी किंतु शक्तिशाली नदी वह माध्यम है, जो समकालीन संस्कृति की सभी अच्छाइयों को विकसित और दीप्त करने का अवसर प्रदान करेगा, क्योंकि इससे कौन इन्कार कर सकता है कि विगत का विज्ञान और कला बड़े मूल्यवान हैं। जनता से संपर्क से यह सब नये प्रकाश से दीप्त हो उठेगा, जड़ से जीवित में रूपांतरित हो जायेगा। यह सब सच्ची रचनात्मकता की लौ से जल उठेगा और साथ ही जनता की विशाल किंतु अब तक अंधेरी आत्मा, अंधेरी किंतु जलती, अंधेरी किंतु समृद्ध आत्मा की आंतरिक गहराइयां भी प्रकाशमान हो उठेंगी।

हम उन लोगों का आह्वान करते हैं, जो अज्ञानियों को ज्ञान देना और श्रमजीवी जनता की शक्ति से मुग्ध होना जानते हैं। दोनों के सम्मिलन से धीरे-धीरे शिक्षित मानव, अद्भुत बुद्धि-संपन्न योद्धा का निर्माण शुरू होगा, जो अपनी सारी शक्तियों को पृथ्वी और बाद में मानव-ईश्वर, उस प्राणी को रूपांतरित करने में लगा देगा, जिसके लिए संभवतः दुनिया बनायी गयी थी, जो प्रकृति का राजा होगा, लेकिन एक ऐसा राजा, जिसके बारे में हम स्वप्न देखते हैं, जब हम कहते हैं: एक शिक्षित मानव।

हमारा आदर्श ईश्वर सदृश मानव का रूप है, जिसके संबंध

में हम सभी मात्र कच्चे माल, केवल आकार दिये जानेवाले धातुपिंड हैं, लेकिन ऐसे जीवित धातुपिंड हैं, जो निज में अपना आदर्श धारण किये हुए हैं।

वर्तमान समय – द्रवित समय, तप्त समय, क्रांतिकारी समय, जो विशाल डग भरने में समर्थ है – में हमें सबको मिल कर, चाहे हमारा शैक्षिक स्तर कुछ भी क्यों न हो, सबको मिल कर इस जाज्वल्यमान भविष्य की ओर आगे बढ़ना है। वस्तुओं की ऐसी व्यवस्था के अंतर्गत किसी भी कोर्स का समारंभ, जिनमें मज़दूरों और किसानों की सरकार, जो ज्ञान के ज्वलंत विश्वास और लालसा की वाहक है, जिनसे रूसी लोग ओत-प्रोत हैं और जिन्हें वह सरकार आप में भी अनुप्राणित करने की कोशिश कर रही है – ऐसे कोर्सों का समारंभ एक महान घटना है।

साथियो, पिछले दिनों में, जब सोवियत सत्ता जीतें प्राप्त करने लगी है, जब यह दुःस्वप्नपूर्ण चेतना कि किसी भी समय हम फिसल जा सकते हैं, कि किसी भी समय आंतरिक षड्यंत्रकारियों की तलवार अथवा बाह्य शत्रुता का दानव इस नवजात शिशु यानी समाजवाद का गला घोंट सकते हैं, जो अपने विशाल अखिल-रूसी पालने में लेटा हुआ है, अब जबकि वह दुःस्वप्नपूर्ण चेतना कुछ हद तक गुज़र गयी है, जब हम ख़ुशी की सांस ले सकते हैं, जब हम देखते हैं कि कैसे साम्राज्यवाद बुल्गारिया से शुरू करके[7] सर्वत्र ढह रहा है, जब हम महसूस करते हैं कि वह समय उतना दूर नहीं है, जब हमारी विजय कमोबेश पूर्ण हो जायेगी, जब हमारे करोड़ों भाई, जो अब तक हमसे पिछड़ गये थे, हमसे आकर मिल रहे हैं – इन दिनों में पीटर्सबर्ग के विभिन्न इलाक़ों की यात्रा करते हुए, सभी तरह के कोर्सों और सभी तरह के क्लबों के उद्घाटन के अवसरों पर बोलते हुए मैं अपने हृदय में अपार ख़ुशी अनुभव करता हूं। मैं इतने लोगों को काम करने के लिए तैयार पाता हूं और केवल निम्नतम स्तर पर ही नहीं, बल्कि बुद्धिजीवियों के बीच भी, जिनकी पांतों से अनेक लोग बड़ी तत्परतापूर्वक हमारे पास आ रहे हैं और केवल यही पूछते हैं: "क्या जो कुछ हम जानते हैं, वह किसी काम का है? यदि यह आवश्यक है, तो ले लीजिये।" और वे अपने साथ मूल्यवान ज्ञान लाते हैं, जिसके अस्तित्व का आभास मुझे भी, यानी उस आदमी को, जो पुराने अर्थ

में शिक्षित प्रतीत होता है, नहीं था और जिसे वे अब हमारी सेवा में अर्पित कर रहे हैं।

रूस अपने लाल पीटर्सबर्ग का अनुसरण करते हुए विशाल आत्मिक क्षमताओं से परिपूर्ण है। हमें अपने नव-निर्माण के लिए विशाल क्षमताएं उपलब्ध हैं और इन क्षमताओं के होते हुए यह भय काफ़ूर हो जाता है कि हम बहुत अज्ञानी, बहुत छोटे, बहुत अप्रौढ़ हैं, कि यूरोपीय परिवार में सबसे छोटा भाई हैं, एक ऐसा छोटा भाई, जिसने ऐसी समस्या को हल करने का बीड़ा उठाया है, जो बड़े भाई के बल-बूते के भी परे प्रतीत होती है। हमें धैर्य की ज़रूरत है, लेकिन ऐसा धैर्य नहीं, जो बिलम्बकारी हो, बल्कि ऐसा धैर्य, जो कार्य की पूर्ति के लिए कोई कोर-कसर नहीं उठा रखता, जो पूरी संरचना के तुरंत ही खड़ी न होने पर निराश नहीं हो जाता। इसका यह अर्थ नहीं कि हम धीरे-धीरे काम कर सकते हैं। सब कुछ पूरी शक्ति से, सब कुछ अधिकतम प्रयास से – और हम नये मानव का सृजन कर देंगे!

सारी दुनिया की नज़रें हम पर टिकी हुई हैं। कुछ लोगों ने हमें देखा और गुप्त, ईर्ष्यापूर्ण ख़ुशी से कहा: "देखो, वे लड़खड़ाते हैं, गिरते हैं, मगर फिर उठ खड़ा होते हैं!" अब वे देखते हैं कि हम ज़मीन में गहरी जड़ें जमा रहे हैं, कि हम अपनी सर्वहारा वर्षगांठ मनानेवाले हैं और यदि अभी ही नवोदित वृक्ष पर स्वर्णिम फल नहीं लगे हैं, तो पहली कोंपलें निकल ही आयी हैं, पहली कलियां दिखायी देने ही लगी हैं। इस वृक्ष की एक कोंपल, एक भावी कली आपके कोर्स हैं, जिनका मैं शिक्षा जन-कमिसारियत की ओर से स्वागत करता हूं।

कम्युनिस्ट प्रचार और जन-शिक्षा

वर्ग राज्य के शिक्षा-कार्य पर, जिसके बारे में हमने प्रायः लिखा है, हमेशा वर्ग की छाप होती है।

फिलहाल हम तथाकथित "वस्तुगत ज्ञान" के क्षेत्रों, यथातथ्य विज्ञानों को एक किनारे रख दें, हालांकि यहां भी हम उल्लेख कर सकते हैं कि वर्ग की गंध बड़े व्यापक ढंग से गणितशास्त्र सहित विज्ञान के अत्यंत दुर्गम प्रतीत होनेवाले कोनों तक पहुंच जाती है।

पर यदि हम अपना ध्यान मानविकी पर केन्द्रित करें, तो हम पाते हैं कि यहां विधि की अत्यधिक परिशुद्धता के लिए सुप्रसिद्ध चिंतक भी वस्तुतः हाल में आत्मगतता की विशाल मात्राओं के अस्तित्व को सिद्ध करते रहे हैं।

सचेत या अचेत ढंग से, उदाहरणार्थ, इतिहासकारों द्वारा प्रयोग की गयी विधियों का अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुंचाता है कि यहां वैयक्तिक प्रवृत्तियां बड़ी भूमिका अदा करती हैं और कि सर्वाधिक वस्तुगत ऐतिहासिक अनुसंधान भी अंतिम विश्लेषण में उन सामग्रियों का एकीकरण है, जिनसे अन्य इतिहासकार समान ईमानदारी और वैज्ञानिक औचित्य के साथ विपरीत निष्कर्ष निकाल सकते हैं।

अस्वैच्छिक वर्ग पूर्वाग्रह के अलावा, जो इस ढंग से वैज्ञानिक कार्यों और अतएव उन पर आधारित शिक्षा को प्रदान किया जाता है, हमारे समक्ष एक या दूसरे वर्ग पूर्वाग्रहों के उपयुक्त बनाने अथवा एक या दूसरे वर्ग हितों की सेवा करने के लिए विज्ञान-विशेष की सीधी जालसाज़ी के कमोबेश भोंडे रूप भी हैं।

इस दृष्टि से राजकीय कार्यकलाप के रूप में शिक्षा हमेशा आम लोगों की मनोवृत्ति को एक या दूसरी वर्ग सरकार के इरादों के अनुकूल बनाने का साधन रही है। कहने की आवश्यकता नहीं कि वर्ग सरकार की संपूर्ण शैक्षिक नीति सामाजिक वातावरण के विभिन्न संस्तरों में विभिन्न रूपों में प्रतिबिम्बित होगी।

शासक वर्गों, मध्यम समूहों (ऐसे लोगों के समूह, जिन्हें निरीक्षक कहा जा सकता है) और निम्न वर्गों की, जो राज्य के लिए मात्र श्रम-शक्ति का साधन थे, शिक्षा के अलग-अलग उद्देश्य हैं।

हम क्षण भर के लिए भी इस बात से इन्कार नहीं करते कि समाजवादी प्रणाली भी अपने विकास के प्रथम चरण में, यानी सर्वहारा अधिनायकत्व की अवधि में, विभिन्न वर्गों का समाज है। इसके पास निश्चित तौर से राजनीतिक रूप से प्रभुत्वकारी वर्ग – सर्वहारा वर्ग – होता है और इसके अलावा यह आवश्यक रूप से माना जाना चाहिए कि यह वर्ग अपने को अपने प्रभुत्व को बनाये रखने के कटु संघर्ष की स्थिति तथा इतिहास के चक्र को पीछे मोड़ दिये जाने के निरंतर ख़तरे में पाता है। इस परिस्थिति में शिक्षा को सर्वहारा के हाथों में वर्ग-संघर्ष के एक महत्वपूर्ण अस्त्र के रूप में देखा जाना चाहिए।

बलात्कारी बुर्जुआ राज्य और सर्वहारा अधिनायकत्व के राज्य के बीच संपूर्ण अंतर इस बात में है कि बुर्जुआ राज्य के सारे प्रयास स्वयं राज्य और इसके साथ ही मुट्ठी भर लोगों द्वारा अन्य लोगों की दासता को सदा-सर्वदा के लिए क़ायम करने में लगाये जाते हैं, जबकि सर्वहारा अधिनायकत्व के राज्य के प्रयास आत्महत्या यानी ऐसी परिस्थितियों की स्थापना करने में लगाये जाते हैं, जिनमें स्वयं राज्य आवश्यक नहीं रह जायेगा तथा प्रत्येक मानव-व्यक्तित्व का पूर्ण विकास होगा। तो भी, इनकी प्राप्ति का साधन और मार्ग बल-प्रयोग ही है।

शिक्षा के क्षेत्र में ये सिद्धांत इस अर्थ में प्रतिबिम्बित होते हैं कि शिक्षा तथा शिक्षा की संपूर्ण राजकीय मशीनरी का उपयोग कम्युनिस्ट प्रचार के उद्देश्यों के लिए किया जाना चाहिए; इसमें बल-प्रयोग इस अर्थ में हो सकता है कि राजकीय शैक्षिक मशीनरी के अंग के रूप में उन लोगों को, जो कम्युनिस्ट प्रचार को क्षति पहुंचाते हैं अथवा कम से कम इसके निष्क्रिय प्रचारक होने से इन्कार करते हैं, राजकीय मशीनरी से निर्ममतापूर्वक निकाल दिया जाना चाहिए।

इसके साथ ही, इस मशीनरी को यथासंभव अधिक सक्रिय कम्युनिस्ट प्रचारकों के रूप में सेवा करने में सक्षम तत्वों से भरा जाना चाहिए।

बुर्जुआ वर्ग द्वारा बल-प्रयोग के रूप में राज्य और सर्वहारा द्वारा बल-प्रयोग के रूप में राज्य के बीच मूल अंतर के अनुसार हम यहां

भी बुर्जुआ वर्ग द्वारा प्रेस, आदि की भांति ही स्कूल के ज़रिये अपनी बुर्जुआ भूठ को थोपने के प्रयास देखते हैं।

और कम्युनिस्ट अधिनायकत्व बल-प्रयोग से मुंह न मोड़ते हुए उस सत्य के प्रचार के लिए कोई कोर-कसर उठा नहीं रखता, जो स्वयं सर्वहारा का तथा संपूर्ण मानवजाति का भी है।

बुर्जुआ राज्य की सोद्देश्यता वैसे ही घृणाजनक है, जैसे कि बुर्जुआ राज्य की तलवार अभिशप्त मानवता-विरोधी अस्त्र है।

कम्युनिस्ट ज्ञान का फ़ौरी प्रचार भी सोद्देश्य है, लेकिन इसकी प्रवृत्ति मानवजाति के विकास के हितों की पूर्णतः सेवा करते हुए वैसे ही एक उदात्त प्रवृत्ति है, जैसे कि संक्रमणकालीन अवधि में कम्युनिस्ट तलवार उत्पीड़कों से उत्पीड़ितों की रक्षा करते हुए एक पूर्णतः उदात्त अस्त्र है।

अब तक हमारे व्यवहार में कम्युनिस्ट प्रचार और शैक्षिक प्रणाली के बीच कोई एकीकरण, न केवल कोई एकीकरण बल्कि, मेरे ख़्याल में तो कोई सरल समन्वय तक नहीं हुआ है।

एक कम्युनिस्ट के लिए कम्युनिस्ट प्रचार के परे कैसी जन-शिक्षा का अस्तित्व हो सकता है? क्या हम, कम्युनिज़्म के प्रचारकों ने कभी जन-शिक्षा के अलावा किसी और चीज़ के बारे में दिलचस्पी ली? क्या क्रांतिकारी प्रचार जनता के लिए अत्यंत आवश्यक, अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र में जनता की शिक्षा नहीं है?

जब कभी भी जन-शिक्षा कमिसारियत के समक्ष कम्युनिस्ट शिक्षा के एक साधन, सोवियत रूस की संपूर्ण आबादी के बीच कम्युनिस्ट विचारों के प्रचार के लिए एक शक्तिशाली निकाय के रूप में कार्य करने का कर्त्तव्य प्रस्तुत होता है, तो तुरंत दो तरफ़ से विरोध किये जाते हैं।

"शुद्ध" और "वस्तुगत" शिक्षा के समर्थक कहते हैं: "क्या! आप विज्ञानों को एक पार्टी-विशेष की नीति के अधीन बना देना चाहते हैं? आप आबादी की शिक्षा के मुक़ाबले में प्रचारकों द्वारा शुद्ध जन-सभा संबंधी अपीलों, आदि के प्रभाव को वरीयता देते हैं?"

इन विरोधों का हम यह उत्तर देते हैं: कोई भी न तो वैज्ञानिक अन्वेषण की स्वतंत्रता का, न ही वस्तुगत ज्ञान (भाषा, गणित-शास्त्र, प्राकृतिक विज्ञानों, कलाओं, तकनीकी कौशलों, आदि का

ज्ञान) के माध्यम से लोगों की यथासंभव व्यापक – आदर्शतः बहुत व्यापक, अब तक अस्तित्वमान किसी भी चीज़ से असीम रूप से व्यापक – शिक्षा का ज़रा भी अतिक्रमण करता है।

यह सामान्य स्कूली शिक्षा हमारे यहां वस्तुतः इस वजह से बिल्कुल स्वतंत्रतापूर्वक आगे बढ़ सकती है कि सर्वहारा और इसके आदर्श को सत्य-प्रकाश से ज़रा भी भय नहीं है। लासाल ने बहुत पहले विज्ञान और "चतुर्थ वर्ग" के बीच इस प्राकृतिक संबंध को इंगित किया था।[1]

पर हम जानते हैं कि स्कूल सर्वप्रथम बच्चों और युवजनों को मानवजाति के विगत के बारे में पढ़ाने, उनके समक्ष वर्तमान का चित्र प्रस्तुत करने और उनमें भविष्य के प्रति आशाएं जगाने के लिए कर्त्तव्य-बद्ध है और इसे निरपेक्ष वस्तुगतता के साथ पूरा करना एक ऐसी चीज़ है, जिसे दुनिया में कोई नहीं प्राप्त कर सकता, क्योंकि यह निरपेक्ष वस्तुगतता मानव की आंखों से ओझल रहती है।

हम यह भी जानते हैं कि वस्तुगतता की आड़ में लोग बच्चों और युवजनों के समक्ष इतिहास को कालातीत दृष्टि से, कालातीत वर्गों (ज़मींदारों, बुर्जुआ वर्ग) या मध्यम वर्गों, विभिन्न तुच्छ "बौद्धिक" आदर्शों की दृष्टि से पेश करते हैं।

जहां तक उनकी वैज्ञानिकता और वस्तुगतता का संबंध है, ये संस्कृति के इतिहास के प्रति बेसाल्ट जैसे ठोस वैज्ञानिक समाजवादी दृष्टिकोण की तुलना में मात्र तुच्छ ठीकरे हैं।

सर्वहारा कार्यनीति के कारणों से यह मांग करते हुए कि स्कूल के अंदर और बाहर शिक्षा वैज्ञानिक समाजवाद की भावना से अनु-प्राणित होनी चाहिए, हम सच्चे मन से उच्चतम वैज्ञानिक वस्तुगतता के कारणों से भी उसकी मांग कर सकते हैं।

वास्तव में, ऐसा कोई विज्ञान या तकनीकी कौशल नहीं है, जो कम्युनिज़्म के विचार या कम्युनिज़्म के निर्माण से बिल्कुल अछूता हो।

इसके विपरीत, सभी ज्ञान, चाहे यह सामाजिक प्रश्नों से असंबद्ध प्रकृति के नियमों का ज्ञान अथवा तकनीकी कौशलों का ज्ञान हो तब नये प्रकाश से चमक उठते हैं, जब हम प्राकृतिक जगत् को संपूर्ण मानवजाति के युक्तिसंगत सुखी समुदाय के अधिकाधिक सचेत आत्म-निर्माण के नियमों के सोपान के रूप में देखते हैं, जब हम हर कार्य को सामाजिक और सांस्कृतिक निर्माण की अधिकाधिक युक्तिसंगत योजनाओं के एक सामंजस्यपूर्ण अंग के रूप में देखते हैं।

अतः स्कूल की स्वतंत्रता के समर्थकों द्वारा बुद्धिसंगत विरोधों से हमें ज़रा भी परेशान नहीं होना चाहिए ; यदि स्कूल अधिक से अधिक कम्युनिस्ट बनेगा तो वह मानवजाति के दुःखद विगत से मुक्त हो जायेगा, अत्यधिक वस्तुगत, अत्यधिक वैज्ञानिक बन जायेगा।

लेकिन दुर्भाग्यवश हमारा विरोध दूसरे पक्ष से भी, कुछ कम्युनिस्ट साथियों और सर्वप्रथम हमारी पार्टी के विभिन्न प्रचारकों द्वारा भी किया जाता है।

उन्हें भय है कि यदि शिक्षा जन-कमिसारियत को कम्युनिस्ट सच्चाई के प्रचार के लिए मुख्य निकाय के रूप में स्वीकार कर लिया जाये, तो सामान्य शिक्षा की व्यापक धारा में शुद्ध पार्टी प्रचार की धारा आ मिलेगी तथा राजनीतिक, कार्यनीतिक, कार्यक्रम की शिक्षा, आदि संबंधी ज्वलंत प्रश्न सामान्य शिक्षा के अनंत विस्तार में लुप्त हो जायेंगे।

मुझे ऐसे विरोधी भी मिले हैं, जिन्होंने इस विचार को और भी भोलेपन से सूत्रित किया है: कुछ साथियों ने गंभीर चेहरों के साथ मुझे आश्वस्त किया है कि प्रचार कार्य को पार्टी लोगों से छीन कर उच्च शिक्षा के अध्यापकों को नहीं दिया जा सकता।

यह स्वतः स्पष्ट है कि हमारे पार्टी प्रचार को एक मिनट के लिए भी अन्य तत्वों से पतला बनाना नितांत असंगत होगा ; बात दरअसल इसे कमज़ोर करने की नहीं, बल्कि मज़बूत बनाने की है।

पार्टी प्रचारक व्यक्तिगत रूप से तथा स्वयं सांगठनिक संघों में, जो अब उनके लिए क़ायम हैं, पहले की भांति बने हुए हैं और वे केन्द्रीय समिति के नियंत्रण के अलावा और किसी नये नियंत्रण के अधीन नहीं हैं। स्थानीय पार्टी संगठनों के साथ उनके संबंध पूर्णतया अलंघनीय हैं और अब शिक्षा जन-कमिसारियत के समूचे साधन उनकी सेवा में उपलब्ध हैं। वे अपने को इसमें क़ायम कर सकते हैं, वे हमारे स्कूलों, जन-विश्वविद्यालयों, जन-सामाजिक केन्द्रों, पुस्तकालयों, थियेटरों, कंसर्टों, प्रदर्शनियों, आदि का उपयोग कर सकते हैं।

यह पार्टी को शिक्षा कमिसारियत (उन अध्यापकों और वैज्ञानिक कर्मियों सहित, जो अधिकांशतया कम्युनिज़्म से बहुत दूर हैं) के अधीन लाने का मामला नहीं है ; बल्कि उल्टे, इस संस्था और इसके कर्मचारियों को यथासंभव सीधे पार्टी के अधीन लाने का मामला है।

मैं ज़ोर देकर कहता हूं कि इस समय कार्यान्वित किये जा रहे कार्य को कोई क्षति नहीं पहुंच सकती, क्योंकि शिक्षा कमिसारियत के कार्य के निकटतर लाते हुए पार्टी प्रचार कार्य में कोई परिवर्तन नहीं किये जा रहे हैं ; बल्कि शिक्षा कमिसारियत के कार्य में अत्यावश्यक परिवर्तन किया जा रहा है क्योंकि यह अपने को कम्युनिस्ट विज्ञान और वैज्ञानिक कम्युनिज़्म के प्रचार के एक साधन में रूपांतरित करने का प्रयास करते हुए कम्युनिस्ट पार्टी की विशेष सहायता के बिना इस कार्य को संपन्न नहीं कर सकती।

इस तरह, जिस विचार पर मैं हमारे पार्टी प्रचारकों को बहस करते हुए और उसे समझते हुए देखना चाहूंगा, वह यह नहीं है कि पार्टी प्रचार शिक्षा जन-कमिसारियत का अंग होना चाहिए, बल्कि शिक्षा जन-कमिसारियत का कार्य कम्युनिस्ट पार्टी के कार्य का एक अंग, एक अत्यंत महत्वपूर्ण अंग होना चाहिए।

सोवियत रूस में बहिस्कूली शिक्षा के कार्यभार *

साथियो, सारतः शिक्षा की परिघटना रहने योग्य प्रत्येक मनुष्य और मानव समाज के संपूर्ण सचेत जीवन के लिए बुद्धिसंगत अस्तित्व की मुख्य धुरी है। यदि पुरानी कहावत के अनुसार, मनुष्य खाने के लिए नहीं रहता, बल्कि रहने के लिए खाता है, तो यह किसी प्रकार भी नहीं कहा जा सकता कि मनुष्य रहने के लिए शिक्षित होता है, शिक्षित होने के लिए नहीं रहता। वह मात्र शिक्षित होने के लिए, अपने को शिक्षित करने के लिए रहता है। जीवन का एक भी ऐसा क्षण, जीवन का एक भी ऐसा कार्य, जो हमारी आत्मा को मज़बूत नहीं बनाता, हमारी जीवन-धारा को व्यापक नहीं बनाता, खोया हुआ वरदान है।

सहस्राब्दियों के लंबे काल के दौरान मनुष्य ने ब्रह्मांडीय या तात्विक कारणों पर निर्भरता में अपनी शिक्षा प्राप्त की और इस तरह वह प्रकृति द्वारा पथप्रदर्शित हुआ। विकास की एक अवस्था में आवश्यकता और प्रकृति से पीड़ित एक के बाद एक मानव समूह आत्मबोध और आत्मज्ञान के सूर्य-प्रकाश में आता है तथा अपने समक्ष एक लक्ष्य – अंतिम लक्ष्य के रूप में अपने आत्मिक विकास का लक्ष्य – निश्चित करता है। जब हम "बहिस्कूली शिक्षा" शब्द सुनते हैं, तो इसके व्यापक कार्यभार से हम बरबस दंग रह जाते हैं।

निश्चित रूप से मनुष्य की शिक्षा के कार्य का मुख्य भाग उसकी युवावस्था से संबद्ध है और संभवतः स्कूल-पूर्व आयु में प्राप्त हुनर तथा किया गया कार्य असीम रूप से महत्वपूर्ण हैं। हम सभी स्कूल-पूर्व शिक्षा (जो हमारी इस कांग्रेस के कुछ दिन पहले आयोजित कांग्रेस का विषय थी[1]) को विशाल महत्व प्रदान करते हैं, लेकिन तो भी स्कूल-पूर्व शिक्षा में आदिम सादगी की प्रवृत्तियां विद्यमान हैं। जीवन,

---

* संक्षिप्त रूप में प्रकाशित। – सं०

कला, टेक्नोलॉजी और मानवजाति के विगत से परिचय स्कूल शुरू करने के बाद दिया जाता है और वे देश सौभाग्यशाली हैं, जहां प्रत्येक नागरिक को यह सब स्कूल में स्वतंत्र तथा उच्च योग्यता-प्राप्त अध्यापकों के मार्गदर्शन में प्राप्त हो जाता है। मगर इन देशों में भी, जो दरअसल काल्पनिक हैं न कि वास्तविक, स्कूली शिक्षा कभी भी पूर्ण नहीं हो सकती। जब तक मनुष्य जीवित है, भले ही उसके बाल सफ़ेद हो गये हों, तब तक वह शिक्षा प्राप्त कर सकता है, करना चाहता है और करनी चाहिए। इस तरह, स्कूल के बाहर प्राप्त सारी शिक्षा वस्तुतः बहिर्स्कूली शिक्षा की ही प्रक्रिया है, क्योंकि समूचे जीवन को स्कूल के सीमित ढांचे में नहीं समाया जा सकता।

लेकिन शिक्षा कमिसारियत के कार्य अथवा बहिर्स्कूली शिक्षा पर इस कांग्रेस के कार्य को इतने व्यापक अर्थ में लेना विरोधाभासी और असंगत होगा। ठीक-ठीक कहा जाये, तो बहिर्स्कूली शिक्षा का अर्थ उस सहायता से समझा जाना चाहिए, जिसे राज्य और स्कूल शिक्षा के मामले में ऐसे लोगों को प्रदान करते हैं, जिन्हें इस संबंध में अब तक कोई सहायता नहीं प्राप्त हुई है, यानी उन लोगों को, जिन्हें स्कूल ने बहुत कम दिया और जो स्कूल नहीं गये। आगे बढ़ने में उन्हें सहायता करना, उन लोगों की शिक्षा को पूरा करना तथा समान बनाना, जो स्कूल में काफ़ी ज्ञान प्राप्त करने में असफल रहे या जिन्होंने आत्मा के विकास में सहायता करने के बजाय उसे अपंग करनेवाली शिक्षा प्राप्त की – ऐसा है बहिर्स्कूली शिक्षा का उद्देश्य।

हालांकि हमने इस तरह बहिर्स्कूली शिक्षा के कार्यभार को सीमित कर दिया है, हमारे समक्ष अब भी असीम विस्तार फैला हुआ है। ख़ास तौर से रूस में, जहां बड़ी संख्या में निरक्षर लोग हैं, बहिर्स्कूली शिक्षा में कर्मियों के समक्ष विशाल कार्यभार – साक्षर होने के प्रत्येक व्यक्ति के अधिकार और कर्त्तव्य को कार्यान्वित करना – प्रस्तुत हो गया है। इस समस्या के हल के लिए हम सबको हर प्रकार से और अपनी पूरी योग्यता से काम करना चाहिए। यह रूस में बहिर्स्कूली शिक्षा की सबसे महत्वपूर्ण बात है।

बेशक, जन-थियेटर जैसी चीज़ों से मुग्ध होना, आश्चर्यजनक सामाजिक केन्द्रों की संभावनाओं की रूपरेखा बनाना सुखद है, लेकिन इसके बारे में केवल कल्पना करना ही नहीं, काम करना भी आवश्यक

है। सबसे पहले बहिस्स्कूली शिक्षा की तहख़ानेवाली मंज़िल पर उतरना चाहिए और याद रखना चाहिए कि मूल, कठिन जन-कार्य वस्तुतः निरक्षरता, सबसे आदिम और सबसे घृणित जाहिलता के विरुद्ध संघर्ष है।

हम वस्तुतः अपने मार्ग को ऐसी अलग-अलग मंज़िलों में विभाजित करने तक ही अपने को कदापि सीमित नहीं कर सकते, जैसी कि इस मंज़िल-विशेष में हमें सिर्फ़ लोगों को साक्षर बनाना है। यह स्वतः स्पष्ट है कि साक्षरता एक कार्यात्मक अवधारणा है, जो हमारे हाथों में योग्यता के अर्थ में एक अवधारणा के रूप में विकसित हो जाती है। ऐसा साक्षर आदमी किस काम का है यदि वह कोई किताब ही न पढ़े? यह वह आदमी है, जिसे पुनः फिसल कर निरक्षरता के गर्त्त में गिरना बदा है। और हम जानते हैं कि रूस में ऐसे लोगों की संख्या बहुत बड़ी है, जो पढ़ना सीख कर उसे फिर भूल गये और केवल रूस में ही नहीं, बल्कि अधिक विकसित देशों में भी हम ऐसी परिघटना देखते हैं।

साक्षरता एक कुंजी है। यदि आपने किसी आदमी को उपहार में कुंजी के साथ खोलने के लिए संदूक या रत्न-मंजूषा नहीं दिया है, तो उसे आपने कुछ नहीं दिया है। इसी तरह, साक्षरता अपने आप में कोई मूल्य नहीं है, हालांकि इसके बिना अन्य मूल्य प्राप्त नहीं किये जा सकते। हमें वहां से शुरू करना चाहिए, जहां से स्कूल शुरू करता है, यानी हमें केवल साक्षरता के बारे में ही नहीं, बल्कि अपने आपको **संपूर्ण वयस्क आबादी के आत्मिक विकास के सभी स्तरों के अनुकूल बनाते हुए** उसे सामान्य शिक्षा का मूलतया आवश्यक आहार प्रदान करना चाहिए। अपने आपको विभिन्न स्तरों के अनुकूल बनाने से मेरा मतलब यह है कि सभी प्रकार के कोर्सों, रविवारीय स्कूलों, सांध्य स्कूलों, पूरक स्कूलों, अलग-अलग व्याख्यानों, आदि – इन सबको ऐसे नौसिखियों को मानसिक आहार प्रदान करने में समर्थ होना चाहिए, जिनके पास कोई वैज्ञानिक धारणा, कोई प्रारंभिक प्रशि-क्षण नहीं है और ऐसे ही उन लोगों को भी, जिन्होंने शैक्षिक रूप से उनसे उच्च स्तर प्राप्त किया है और संभवतः अत्यधिक शिक्षित लोगों की आवश्यकता पूरी करने तक। रूस में हमें संस्कृति को आदिम संस्कृति तक ही सीमित नहीं कर देना चाहिए तथा शिक्षित लोगों के और आगे विकास को असंभव नहीं बना देना चाहिए।

हम आम लोगों को ऊंचा तभी उठा सकते हैं, जब वैज्ञानिक और सांस्कृतिक कार्य उच्च स्तर पर जारी रहे। बहिस्र्कूली शिक्षा के निदेशन के लिए हमें बहिस्र्कूली अध्यापकों की ज़रूरत है और इसलिए कि वे स्वयं-शिक्षा में समर्थ हो सकें, हमें प्रोफ़ेसरों की आवश्यकता है।

हमें उच्च कोटि की जीवंत संस्कृति की आवश्यकता है। सामाजिक अवयव को संस्कृति के निम्नतम स्तर से उच्चतम स्तर तक समान रूप से विकसित होना चाहिए।

वैज्ञानिक ज्ञान का प्रचार, कला का प्रचार, सामाजिक-राजनीतिक प्रचार – ऐसे हैं बहिस्र्कूली शिक्षा के मूल कार्यभार।

अक्सर स्कूली अध्यापक बहिस्र्कूली शिक्षा का काम लेता है। निरक्षर वयस्क के प्रति उसका दृष्टिकोण युवा विद्यार्थी की भांति ही होता है। लेकिन जहां तक जीवन-अनुभव का संबंध है, मज़दूर या किसान कभी-कभी स्वयं अध्यापक से ऊंचा होता है। अतः वयस्कों को पढ़ाने में सामान्य स्कूल में काम में लायी जानेवाली विधियों का उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। वयस्कों को पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया ज्ञान के सामान्य विस्तार के वातावरण में आगे बढ़नी चाहिए, इसे पुस्तकें, अख़बार और आज्ञप्तियों के पढ़ने पर आधारित होना चाहिए।

जीवन के साथ, कार्यकारी अनुभव के साथ शिक्षा का जो संबंध है, वह वैज्ञानिक ज्ञान के प्रचार के मामले में भी बना रहना चाहिए। यहां व्याख्यान कार्य को कम करके न्यूनतम बना देना चाहिए और इसके स्थान पर प्रयोगशालाओं, फ़ैक्टरियों, आदि में व्यावहारिक कार्य शुरू करना चाहिए।

लेकिन क्या कहा जा सकता है कि व्याख्यानों की कोई ज़रूरत नहीं है, कि वे मात्र स्कूली कार्य हैं? नहीं, बेशक नहीं। प्राध्यापकों के जीवंत शब्द, विशेष रूप से रूस में, बड़े महत्व के हैं। किंतु अध्यापकों को यथासंभव सर्वत्र और हमेशा दृश्य-साधनों, जादुई लालटेनों, फ़िल्मों का उपयोग करना चाहिए। संक्षेप में, उन्हें बहिस्र्कूली विद्यार्थियों को सभी सुलभ साधनों से ज्ञान के व्यावहारिक, सक्रिय अवबोधन की प्रक्रिया में खींचना चाहिए।

पर वैज्ञानिक ज्ञान की अंतर्वस्तु किस सीमा तक आम लोगों के कम्युनिस्ट प्रबोधन में योगदान कर सकती है?

प्राकृतिक विज्ञान कम से कम विवादास्पद हैं। पूंजीवादी व्यवस्था

के स्वरूप के कारण ही प्राकृतिक-वैज्ञानिक विश्व-दृष्टिकोण के आधार कमोबेश वस्तुगत होने चाहिए। आप पौधों, जानवरों, यांत्रिकी के नियमों, आदि के बारे में विज्ञानों की सचेत या अचेत जालसाज़ी की आशा कैसे कर सकते हैं, यदि इस प्रकार के सत्यों की जालसाज़ी के अंतर्गत अर्थव्यवस्था को चलाया ही नहीं जा सकता? जहां तक अर्थ-व्यवस्था को चलाना है, मशीनों को ठीक ढंग से काम करना है, रोगग्रस्त मवेशियों का इलाज किया जाना है और ज़मीन को उर्वर बनाना है, वहां तक वस्तुगत ज्ञान की आवश्यकता है। अतः ज्ञान का यह क्षेत्र हर देश में बिल्कुल ईमानदार क्षेत्र है। इसका कार्य अधिक से अधिक मितव्ययी और गहन विधियों का उपयोग करते हुए प्रकृति का अन्वेषण करना तथा यथासंभव तथ्यतः और किफ़ायती ढंग से उस सबको सूत्रित करना है, जिसकी प्रकृति मांग करती है। अतः हमारे पास बड़ी संख्या में वैज्ञानिक हैं – उच्चतम क़िस्म के वैज्ञानिक और निचले स्तरों पर कमोबेश प्रतिभाशाली प्रचारक या कम से कम विद्वान प्राध्यापक, जिन्हें हम ब्रह्मांड-रचना विज्ञान से लेकर व्याव-हारिक ज्ञान के छोटे-से-छोटे विवरण तक प्राकृतिक विज्ञानों के अध्यापन के संपूर्ण कार्य को बिना किसी भय के सौंप सकते हैं।

सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में बिल्कुल भिन्न बात है। यहां हर चीज़ उच्चतम मात्रा में विवादास्पद है, क्योंकि मनुष्य इतिहास को कैसे देखता है, किस चीज़ को अपना आदर्श समझता है, अपने वर्तमान जीवन में किस चीज़ को सर्वाधिक महत्व प्रदान करता है – इस सब पर ही यह निर्भर करता है कि मनुष्य कौन-सा रास्ता लेगा, वह क्या करेगा, वह कैसे काम करेगा। अब तक समाज सामाजिक असमानता पर आधारित था। विभिन्न देशों में विशेष वर्ग क्रमशः कमोबेश सीमा तक प्रभुत्वकारी थे। सामंतों के बाद पूंजीपति बुर्जुआ वर्ग सर्वत्र प्रभुत्व-कारी बन गया। यह पूंजीपति बुर्जुआ वर्ग हर क़ीमत पर और शायद अधिकाधिक सचेत ढंग से विज्ञान को झुठलाने के लिए विवश था।

समय के गुज़रने के साथ बुर्जुआ वर्ग के समक्ष एक अधिकाधिक रूप से भयानक शत्रु – सर्वहारा – प्रकट हुआ, जिसे वही अस्तित्व में लाया और संगठित किया था, जिसने मानवजाति के विगत, वर्तमान और भविष्य को मूल्यांकन की अपनी मूलतया भिन्न कसौटी से बिल्कुल दूसरे रूप में देखा। और जब बुर्जुआ विज्ञान को नवोदित सर्वहारा

विज्ञान के साथ जीवन-मृत्यु के संघर्ष में उतरना पड़ा, तो वह संघर्ष आदर्शों के मामले तक ही सीमित नहीं रहा, बुर्जुआ वर्ग के उपयुक्त बनाने के लिए स्वयं तथ्यों को, यहां तक कि "निष्पक्ष" आंकड़ों की भाषा, सांख्यिकी को भी झुठलाया और बदला गया।

मैं यह नहीं कहना चाहता कि समग्र बुर्जुआ विज्ञान या संपूर्ण आधिकारिक विश्वविद्यालयी विज्ञान सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में बेकार था। मैं इस तरह की कोई चीज़ नहीं कहना चाहता! मार्क्स ने, जब उन्होंने ऐडम स्मिथ और डेविड रिकार्डो जैसे बुर्जुआ विद्वानों की थॉमस माल्थस जैसे एक बुर्जुआ विद्वान से तुलना की, कहा कि रिकार्डो और स्मिथ ने अपने इर्दगिर्द विद्यमान परिघटनाओं के दबाव के अंतर्गत काम किया तथा इन परिघटनाओं को पूरी ईमानदारी से ध्यान में रखा; मात्र एक विशेष वर्ग और एक विशेष समय के प्रतिनिधियों के रूप में वे **पूर्ण** सत्य पर नहीं पहुंच सके, चूंकि उनकी आंखें दूसरी दिशा में मुड़ी हुई थीं, इसलिए वे इसे नहीं देख सकीं। लेकिन माल्थस ने, मार्क्स के शब्दों में, विज्ञान को **सचेत रूप से** तोड़ा-मरोड़ा, अपने जीवन और अपनी रचनाओं से उन्होंने अपने को बुर्जुआ वर्ग के एक सचेत **समर्थक** के रूप में पेश किया।[2]

स्पष्टतः विज्ञान में दोनों तरह के तत्व प्रतिबिम्बित होते हैं। जहां तक सचेत रूप से जालसाज़ीकृत विज्ञान का संबंध है, यह कम नुक़्सानदेह है, आलोचना के स्पर्श मात्र से ही इसकी स्वाभाविक मृत्यु हो जाती है। लेकिन जहां तक अस्वैच्छिक जालसाज़ी का संबंध है, यहां मामला अधिक जटिल है। और जब हम, नवोदित सर्वहारा विज्ञान के प्रतिनिधि, संग्रहीत रचनाओं के अपने बारह या पंद्रह खंडों पर बैठे विभिन्न श्वेतकेशी प्रोफ़ेसरों से बात करते हैं, तो वे विश्वस्त होते हैं कि वे असाधारण रूप से वस्तुगत, असाधारण रूप से महत्वपूर्ण सम्मति प्रकट कर रहे हैं, जब वे कहते हैं: "विज्ञान वस्तुगत है," "विज्ञान स्वतंत्र है।" और जब हम मार्क्सवादी वर्ग-चेतना, सर्वहारा विश्व-दृष्टिकोण, सर्वहारा वैज्ञानिक आंदोलन के बारे में बात करते हैं, तो वे दावा करने लगते हैं यह एक संकीर्ण वर्ग दृष्टिकोण या विशुद्धतया पार्टी दृष्टिकोण है।

जहां हम सफ़ेद देखते हैं, वहां वे काला देखते हैं। उनके विचार में, सामाजिक विज्ञान, जिसे उन्होंने अपनी माता के दूध के साथ और

उसी तरह अपने उन प्रोफ़ेसरों के व्याख्यानों से ग्रहण किया, जो उनके लिए महान विशेषज्ञ थे, – वह विज्ञान "वस्तुगत" है। लेकिन हमारे दृष्टिकोण से यह स्वयं अपनी जड़ से लेकर शीर्ष तक बुर्जुआ सत्ता से जनित ऐसे हज़ारों पूर्वाग्रहों से विषाक्त है, जो सामाजिक प्रक्रियाओं के सारतत्व को तोड़ते-मरोड़ते हैं और उन्हें मिथ्या प्रकाश में रखते हैं। यहां उनके और हमारे बीच मतभेद इतने गंभीर हैं कि हम यह प्रश्न पूछे बिना नहीं रह सकते: "बहिर्स्कूली शिक्षा के लिए उपलब्ध हो सकनेवाली शैक्षिक सेना के बड़े भाग के साथ हम क्या करेंगे?.."

हमें अपना ध्यान व्याख्यान-सीमिनार क़िस्म तथा अध्यापक प्रशिक्षण कालेज क़िस्म के कार्य पर संकेंद्रित करना चाहिए, ताकि वैज्ञानिक समाजवाद पर आधारित सामाजिक विज्ञान का महान ख़मीर प्राप्त किया जा सके तथा स्कूली और बहिर्स्कूली शिक्षा की लोई तेज़ी से बढ़ और फैल सके।

इस दिशा में उत्साहपूर्ण सक्रिय कार्य किये बिना हमें विभिन्न इलाक़ों के साथियों, यहां तक कि पेत्रोग्राद और मास्को के साथियों से भी इस तरह की बात सुनने को मिलती रहेगी: "अब हमारे पास एक लिखित, एक अत्युत्तम पाठ्यविवरण है, जिसका उद्देश्य आम लोगों के बीच सामाजिक ज्ञान के स्तर को ऊंचा उठाना है। इस पाठ्यविवरण के आधार पर कोर्सों के पढ़ाने का कार्य हर हालत में ऐसे लोगों को सौंपा जाना चाहिए, जो निश्चित समाजवादी हों, लेकिन वे नहीं हैं। और हमें इन कोर्सों के पढ़ाने का कार्य ऐसे लोगों को सौंपना पड़ता है, जो इस पाठ्यविवरण के शत्रु हैं, जो उन सभी स्थलों पर 'नहीं' कहेंगे, जहां उन्हें 'हां' कहना चाहिए। इस हालत में पाठ्यविवरण अपना ही खंडन करता है।"

और अक्सर इस स्थिति से निकलने का रास्ता नहीं होता है। मैंने इस कठिनाई को इंगित किया है। यह एक ऐसी कठिनाई है, जिससे शिक्षा जन-कमिसारियत को निरंतर संघर्ष करना है। यहां एक ओर, लोग कहते हैं: "इस पर कुछ न सोचें। प्राध्यापक कुछ न कुछ पढ़ायेगा और आम लोग उससे अपने मतलब की चीज़ स्वयं छांट लेंगे। यदि वे 'विष का प्याला' भी पीयेंगे, तो नहीं मरेंगे!" और दूसरी ओर, लोग कहते हैं: "यहां पढ़ने से हमें क्या मिला है? यह तो सीधे प्रतिक्रांति है!"

तो हमें क्या करना चाहिए? क्या बहिस्स्कूली प्रणाली के अधिकांश स्कूलों, अधिकांश संस्थाओं को बंद कर दिया जाये? क्या सांस्कृतिक कार्य के ढांचे को नष्ट कर दिया जाये और वसंतकालीन घास की तरह इसे नीचे से बढ़ने दिया जाये? बेशक, यह भी बिल्कुल मूर्खतापूर्ण है और यह स्पष्ट है कि कोई बीच का रास्ता होना चाहिए।

सामाजिक विज्ञान के नये क़िस्म के अध्यापकों की तैयारी के लिए निश्चित चयन, निश्चित नियंत्रण और ज़बर्दस्त कार्य होना चाहिए। मैं जानता हूं कि अनेक लोग इच्छापूर्वक या अनिच्छापूर्वक अपने को नये युग के अनुकूल बना रहे हैं: इच्छापूर्वक तब, जब वे उन सत्यों का प्रचार करने में सावधानी बरतते हैं, जो फ़िलहाल समय से मेल नहीं खाते और उन तत्वों पर ज़ोर देते हैं, जो नये हैं; और अनिच्छापूर्वक तब, जब वे मज़दूर वर्ग के संघर्ष की विशालता से मुग्ध हो जाते हैं, जो उनके सामने विकसित हो रहा है। हमारी नज़रों के समक्ष कुछ लोग धीरे-धीरे और कुछ लोग तेज़ी से रूपांतरित हुए नये लोगों के रूप में उभर रहे हैं। यह प्रक्रिया समय के गुज़रने के साथ तेज़ होती जायेगी, क्योंकि अध्यापकों की सेना की भर्ती मुख्यतया बुद्धिजीवी वर्ग से की जा रही है न कि बुर्जुआ वर्ग से।

यदि बुद्धिजीवी वर्ग ने दशकों तक ज़ारशाही और पूंजी के दबाव तले रहते हुए कभी-कभी अनजाने ही अपने साथ विश्वासघात किया और जनता को दबाने और सत्य को विकृत करने का साधन बना, तो अब यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि नयी प्रणाली जितनी ही मज़बूत होगी, उतनी ही तेज़ी से और विशाल लहर के रूप में बुद्धिजीवी वर्ग हमारी ओर, दुनिया के उस नये मालिक की ओर आयेगा, जो इसे अपनी कल्पित "वस्तुगतता" से मुक्त कर देगा और वास्तविक, सच्ची स्वतंत्र रचनात्मकता के लिए मुक्त कर देगा... अतः हमें निराश होने की ज़रूरत नहीं है। ये कठिनाइयां अस्थायी हैं और वे विधियां, जिनके बारे में मैं बोल रहा हूं – सर्वाधिक उपयुक्त लोगों का चयन, मामलों की व्याख्या की तुलना में तथ्यपूर्ण ज्ञान पर अधिक ज़ोर देना, जबकि व्याख्या-कार्य को किसी ऐसे व्यक्ति को नहीं सौंपा जा सकता, जो भावनात्मक रूप से रूस से कटा हुआ हो, तथा साथ ही उपयुक्त कर्मियों के प्रशिक्षण पर उत्साहपूर्वक सक्रिय कार्य – ये विधियां हमें इन कठिनाइयों से छुटकारा दिला देंगी।

6–350

जहां तक कलाओं के प्रचार का सवाल है, यह एक ऐसा मामला है, जो पहली नज़र में विलास-वस्तु प्रतीत होता है और अक्सर लोग सोचते हैं कि बहिर्स्कूली शिक्षा का कला से संबंध संभवतः इसलिए है कि, जैसा कि लैटिन कहावत है, "मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षा दी जा सके।" यह कलात्मक कार्य के संबंध में बहिर्स्कूली शिक्षा के समक्ष प्रस्तुत कार्यभारों के प्रति हास्यास्पद दृष्टिकोण है।

मैं कला के विभिन्न गूढ़ सिद्धांतों की चर्चा नहीं करूंगा, जिनके बारे में लंबे समय तक बात की जा सकती है। मैं कमोबेश सामान्य रूप से स्वीकृत ऐसे तथ्य का ज़िक्र करूंगा, जिसकी कला के सभी सिद्धांतों में प्रधानता है; कला एक ऐसी शक्ति है, जो कलाकार द्वारा अभिव्यक्त निश्चित भावनाओं से श्रोताओं या दर्शकों की भावनाओं को प्रेरित करती है। यह वास्तव में सही है। **भाषण-कला** का संबंध वहीं तक है, जहां तक वक्ता केवल प्रचारक (यानी अपने श्रोताओं के ज्ञान-क्षेत्र का विस्तार करनेवाला) ही नहीं, बल्कि आंदोलनकारी (यानी उनकी भावनाओं को आंदोलित करनेवाला) भी होता है... जब मनुष्य आंदोलित होता है, उत्साहित होता है, प्रेम करता है, जब उसके भावनात्मक, अनुभूति-तत्व के तारों को स्पर्श किया जाता है, तो उसका चरित्र बदल जाता है। और यही चीज़ तो कला करती है! और सभी जातियों ने, यहां तक कि अपने जीवन के प्रारंभ-काल में भी, तरह-तरह के नृत्यों और गीतों का सहारा लिया है।

कला मानव-हृदयों को वैसे ही संगठित करती है, जैसे कि विज्ञान मानव-मस्तिष्कों को संगठित करता है और इसके प्रत्यक्ष परिणाम के रूप में जनता का नैतिक उन्नयन होता है। लेकिन इसके लिए आवश्यक है कि कला भ्रष्टकारी कला न हो, जिसे बुर्जुआ वर्ग ने अपने अस्तित्व की हाल की अवधि में अपना लिया है...

लेकिन इसके साथ ही, विगत की कला में बुद्धिजीवी वर्ग के अनेक समूहों ने बुर्जुआ भावना के विरुद्ध अत्यंत सक्रिय ढंग से विद्रोह किया है। इतिहास की संपूर्ण अवधि में उन्होंने हमेशा अपने लिए एक कलात्मक चेतना, धार्मिक कला का निर्माण करने का प्रयास किया है।

विगत में भी किसी भी मानव-समूह के उच्चतम विकास के युगों में हम ऐसी महान कला पाते हैं, जो हमारे लिए प्रेरणा और आनंद का स्रोत बन सके। इस कला, विगत से विरासत में प्राप्त इन महान

निधियों के आधार पर हम ऐसी कला विकसित कर सकते हैं, जो हमारे महान समय के अनुरूप हो, इसलिए और भी अधिक कि महान फ़ांसीसी क्रांति के काल में ही एक नयी जन-संस्कृति की आधारशिला रखी गयी। आधी १९वीं सदी उस कला से जीवित रही। संगीत में फ़्रांसीसी क्रांति ने बीथोवेन पैदा किया, वास्तुकला में 'एम्पायर' शैली, जो आधुनिक यूरोप द्वारा सर्जित महानतम शैली है तथा क्रांति की साहित्यिक कृतियों से दो धाराएं – रोमांसवाद और यथार्थवाद – फूटीं।

उस क्रांति के युग ने, जिसे बहुतों ने "काव्यसौंदर्यविहीन" माना और इसकी वास्तविक कला में केवल सोद्देश्यता देखी, दरअसल रचनात्मकता को ज़बर्दस्त बढ़ावा दिया। वे जन-त्यौहार, जिन्हें पेरिस ने अपने समय में देखे, अब हमारे यहां लाल पेत्रोग्राद और मास्को में आंदोलन के उससे भी उच्च स्तर पर मनाये जा रहे हैं, जिसे फ़्रांसीसी क्रांति ने प्राप्त किया था।

उसी तरह, हम विज्ञान के क्षेत्र में भी क्रांति द्वारा प्रेरित या उसके साथ-साथ घटे पूरे के पूरे महानतम परिवर्तन देख रहे हैं।

इस तरह, हम यह सोचने को प्रवृत्त हैं कि कला का समाज की आत्मा के निर्माण संबंधी सभी कार्य से प्रत्यक्ष संबंध है। सामान्यतया "**शिक्षा**" शब्द के तीन अर्थ होते हैं। एक ओर, हरेक व्यक्ति अपने को शिक्षित करता है अर्थात अपने को उस रूप के निकट लाता है, जिसे उसने अपना आदर्श बनाया है। दूसरी ओर, ऐसा शिक्षित आदमी, जो मानव रूपी अर्ध-तैयार माल, मानव रूपी धातुपिंड से मनुष्य की उस भव्य अवधारणा के सदृश किसी चीज़ में रूपांतरित हो गया है, जिसने अभी तक संभवतः जन्म नहीं लिया है, बल्कि जिसे हम जन्म देना चाहते हैं – यह शिक्षित आदमी एक व्यक्ति के रूप में उपयुक्त परिस्थितियों के बिना नहीं जीवित रह सकता। उसे उपयुक्त वातावरण, ऐसे लोगों के समाज की आवश्यकता होती है, जो मात्र झुंड, शिक्षित लोगों का मात्र समूह नहीं होते, बल्कि एक नया संगठित समाज, शब्द के पूर्ण अर्थ में सर्वोच्च अवयव होते हैं, जिसमें एक महान सामाजिक आत्मा वास करती है। यह समाजवाद है, यह कम्युनिज़्म है, यही तो वह चीज़ है, जिसे हम उस समाज के मुक़ाबले में रखते हैं, जो मात्र लोगों का झुंड है। यहां व्यक्तिवाद और सामाजिक बोध मिल कर एकाकार हो जाते हैं। शिक्षा का कार्य केवल एक व्यक्ति को शिक्षित

6*

करने का कार्य नहीं, बल्कि मानवजाति को सांचे में ढालने, संपूर्ण समाज को सांचे में ढालने का कार्य है।

अंत में, मनुष्य केवल अपना, अपने सामाजिक वातावरण का ही नहीं, बल्कि अपने प्राकृतिक वातावरण का भी निर्माण करता है। वह न केवल कपड़े पहनता है, औज़ार, भवन, नगर, आदि बनाता है, बल्कि उन नगरों के आस-पास पार्कों और फलोद्यानों को भी विस्तारित करता है; नदियों की धाराएं बदलता है, समुद्र-तट की रूपरेखा बदलता है, वहां खाड़ियां और जलडमरुमध्य बनाता है, जहां पहले ऐसी कोई चीज़ नहीं थी, और इस तरह ऐसे जीवन का निर्माण करता है, जो इस विकासमान मनुष्य की सभी आत्मिक आवश्यकताओं को पूरा करता है।

इस दृष्टि से स्वयं-शिक्षा पर कार्य, राजनीतिक और सामाजिक स्वरूप का कार्य तथा सौंदर्यबोधी कार्य – ये सभी शिक्षा की धाराएं हैं, ये सभी उस रूप, उस प्ररूप की ओर आती हैं, जिसकी हम कल्पना करते हैं और जिसे आदर्श कहते हैं।

इससे आगे बढ़ते हुए और ऐसे दो कार्यों के बारे में कुछ शब्द कहे जाने चाहिए, जिनकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते।

हम **तकनीकी** बहिर्स्कूली शिक्षा को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते। यदि समाज सड़ी हुई डाल पर बैठा हो, तो व्यक्ति की शिक्षा का सपना नहीं देखा जा सकता, किन्हीं सामाजिक आदर्शों को प्राप्त करने के बारे में सोचा नहीं जा सकता। इस तरह तो हम नीचे आ गिरेंगे और अपने सिर तोड़ लेंगे, चाहे हम कितने ही बढ़िया राजदूत या नेता क्यों न हों। हमारी लाल सेना सभी मोर्चों पर विजयी हो सकती है, हमारे राजनीतिक नेता अपनी विदेश नीति से सारी दुनिया को आश्चर्यचकित कर सकते हैं, लेकिन यदि हमारे पास कोई रेलवे न हों, कोई रोटी न हो और यदि हम कुछ पैदा न करें, तो हमें अपनी क्रांति में भारी क्षति उठानी पड़ेगी।

रूस में यह एक बड़ी सीमा तक सामान्य कारणों, युद्ध-जनित विनाश, आर्थिक पिछड़ेपन पर निर्भर करता है, लेकिन, बेशक, इसके अलावा हमारे पास सभी दृष्टियों से कम प्रशिक्षित कर्मी हैं – यही तो वह मुख्य चीज़ है, जो सभी कामों में बाधा डालती है। हमारे पास तकनीकी रूप से प्रशिक्षित, वास्तविक श्रम अनुशासन की दृष्टि से प्रशिक्षित, हमारे समक्ष प्रस्तुत कार्यभारों की नैतिक समझ की दृष्टि

से प्रशिक्षित कम लोग हैं। ये सभी सवाल मिल कर एक अटूट धारा में एकाकार हो जाते हैं।

यदि हमारे पास काम करना जाननेवाले कर्मी न हों, तो हम अपने को आर्थिक कार्यभारों के लिए प्रस्तुत नहीं कर सकते। हमारे पास इने-गिने सुदक्ष कर्मी हैं, बहुत ही कम संख्या में इंजीनियर हैं और इससे भी कम संख्या में मध्यम दर्जे के तकनीकी कर्मी हैं, सामान्यतया योग्यताप्राप्त कर्मियों की संख्या बहुत छोटी है। हमें सभी सुलभ साधनों से यह संख्या बढ़ानी है और गुण में भी सुधार करना है।

अब हम देख रहे हैं कि नगरीय संस्कृति ग्रामीण क्षेत्रों में घर करने लगी है। संभवतः यही प्रक्रिया वर्तमान स्थिति में लाभकारी है; संभवतः इसकी वजह से मज़दूर वर्ग के हज़ारों लोगों ने गांवों में जड़ पकड़ ली है; संभवतः यह आधार-कार्य का निर्माण करेगा, जो हमें ग्रामीण श्रेत्रों में सोवियत आदर्शों का एक सच्चा दुर्ग बनाने में समर्थ बनायेगा; संभवतः इसकी वजह से नगरों का भार उतर जायेगा, जो इन कठिन दिनों में अपना भरण-पोषण नहीं कर सकते। लेकिन यदि हम उस छोर पर ही झुक पड़ें और एक विशिष्ट कृषि-प्रधान जनतंत्र में बदल जायें, तो चाहे हम कम्युनिज़्म और समाजवाद के बारे में कितनी ही बात क्यों न करें, कोई भी कम्युनिज़्म, कोई भी समाजवाद नहीं होगा; उलटे सामाजिक विकास के नियमों के परिणामस्वरूप ग्रामीण बुर्जुआ वर्ग का विकास होगा...

राजनीतिक और आर्थिक दोनों ही कारणों से हमें तकनीकी शिक्षा की आवश्यकता है।

शीघ्र ही शिक्षा जन-कमिसारियत इस बात पर ज़ोर देते हुए एक घोषणा प्रकाशित करेगी कि एकीकृत श्रम स्कूल का उद्देश्य विशुद्ध तकनीकी शिक्षा को नुक़सान पहुंचाना नहीं हो सकता, कि उलटे एकीकृत श्रम स्कूल स्वयं ही एक तकनीकी स्कूल है और अपने को पालीतकनीकी स्कूल में रूपांतरित करने का उद्देश्य रखता है। इस घोषणा में स्थानीय कर्मियों के लिए इस आशय के निर्देश होंगे कि श्रम स्कूल विशेष तकनीकी स्कूलों की समाप्ति का कारण नहीं होना चाहिए। बहिस्र्कूली शिक्षा के कार्य में इसी तरह का स्वर हमेशा ध्वनित होते रहना चाहिए। बहिस्र्कूली तकनीकी शिक्षा के कार्यभारों की उपेक्षा किसी तरह भी नहीं की जानी चाहिए।

मुझे मालूम है कि इस मामले में कौन-सी कठिनाइयां हमारे सामने आयेंगी, लेकिन मुझे यह भी मालूम है कि हमारे समक्ष कितनी विशाल संभावनाएं हैं। यदि हम अपने निर्दिष्ट मार्ग पर दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ सकें, तो कोई संदेह नहीं कि बहिस्र्कूली तकनीकी शिक्षा तकनीकी दक्षताएं प्राप्त करने के इच्छुक लोगों को ऐसे तकनीकी टोलियों में बदल देगी, जो फ़ैक्टरियों में काम करते हुए उनके अनुभव को कारगर बनायेंगे, श्रमिकों की श्रम-क्षमता तथा उत्पादन-स्तर को ऊंचा उठायेंगे। वे देश के उत्पादन को बढ़ाने में एक शक्तिशाली प्रेरक के रूप में काम कर सकेंगे। मैं इस पहलू पर केवल संक्षिप्त रूप से ही चर्चा कर सकता हूं। कांग्रेस में बहिस्र्कूली शिक्षा के इस पहलू का गहन ज्ञान तथा सोवियत रूस के समक्ष प्रस्तुत कार्यभार संबंधी आधुनिक जानकारी रखनेवाले लोग एक विशेष रिपोर्ट पेश करेंगे और तब आपको इस सवाल की पूर्ण व्याख्या मिल जायेगी।

शारीरिक शिक्षा का भी उल्लेख किया जाना चाहिए। मैं इसके बारे में अधिक नहीं कहूंगा, क्योंकि इस विषय का सामान्यतः विशद विवेचन किया गया है और इससे सभी परिचित हैं। मेरे जैसे परिचयात्मक भाषण में इसका विस्तारपूर्वक विवेचन नहीं किया जा सकता। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि शारीरिक शिक्षा के ज़रिये भी हम स्वास्थ्य के प्रति, जो संपूर्ण जीवन का आधार है, उचित देखरेख प्रोत्साहित करते हुए जनता के बीच चेतना का उच्च स्तर प्राप्त कर सकते हैं। मानव की शक्ति, हुनर और सौंदर्य को विकसित करते हुए तथा लोगों को सामूहिक कार्यकलाप में इस तरह लाते हुए कि यह सामाजिक जीवन का एक तत्व बन जाये, उपयुक्त नतीजे यहां तक कि कुछ बुर्जुआ देशों (उदाहरणार्थ, जर्मनी) में भी प्राप्त किये गये हैं। खेलकूद और जिमनास्टिक के उनके संघों ने शारीरिक संस्कृति का उच्च स्तर प्राप्त किया है तथा इसके साथ ही कुछ संघ तो मज़दूर वर्ग संगठन की इकाइयां बन गये हैं और आवश्यकता पड़ने पर उनका उपयोग भी किया गया है। शारीरिक शिक्षा को एक सामूहिक कार्यकलाप होना चाहिए न कि वैयक्तिक कार्यकलाप और इस क्षेत्र में काफ़ी बड़ी उपलब्धियां प्राप्त की जा सकती हैं।

यदि हम पुनः याद करें कि हमें निरक्षरता से लड़ना, वैज्ञानिक ज्ञान का प्रचार करना, लोगों को कलाओं से परिचित कराना और

उनमें रचनात्मक कार्य के समर्थ लोगों को आगे लाने में सहायता करना तथा तकनीकी और शारीरिक शिक्षा का उचित ध्यान रखना चाहिए, तो आप देखते हैं कि आपके समक्ष कार्य का कितना असीम क्षेत्र खुलता है और इस बीच हमें यह मानने में असफल नहीं होना चाहिए कि इसे मारे राजनीतिक प्रचार का मुख्य विषय होना चाहिए...

अब तक मार्क्सवाद ने मानवजाति के संपूर्ण इतिहास का वर्णन, समाज के सभी आधारों का अन्वेषण इतनी गहराई से कर दिया है तथा ऐसे विशाल नतीजे प्राप्त किये हैं कि हम कह सकते हैं कि ज्ञान की कोई भी ऐसी शाखा नहीं है, विज्ञान का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है, जिसे इस ढंग से न पढ़ाया जा सके कि वह समाजवादी विश्व-दृष्टिकोण के भवन का एक अंग बन सके। हम वहां किसी भी विज्ञान से शुरू करके मार्ग खोल सकते हैं। हम किसी भी विज्ञान से शुरू करके सामाजिक संरचना के अंतस्तल में पहुंच सकते हैं...

मैं कोई भी उदाहरण, कोई भी विज्ञान, कोई भी वैज्ञानिक समस्या ले सकता हूं और यह दिखा सकता हूं कि इसे सामाजिक प्रचार की मूल धारा से जोड़ने से और कोई काम आसान नहीं है। दूसरी ओर, कोई भी ऐसी राजनीतिक समस्या या बैठक का विषय नहीं है, जिसका वैज्ञानिक ढंग से विवेचन न किया जा सके, जिसे सिद्ध करने के लिए आप ज्ञान की विभिन्न शाखाओं से अनेकानेक तथ्य उद्धृत न कर सकें। यही हमारा लक्ष्य होना चाहिए।

चाहे आदमी कोई भी ज्ञान प्राप्त कर रहा हो, हमें उसे यह बताने का प्रयास करना चाहिए कि यह ज्ञान किस काम के लिए है। इस बात के लिए कि वह बेहतर ढंग से काम कर सके, उसे यह बताना आवश्यक है कि वह देश की अर्थव्यवस्था के निर्माण के लिए काम कर रहा है। उसे यह जानना आवश्यक है कि वह श्रम की उस नयी दुनिया का नागरिक है, जो अभी जाग्रत और संगठित हो रही है। ज्ञान के प्रत्येक अंश को इस तरह पेश किया जाना चाहिए कि यह वैज्ञानिक सिद्धांतों के और आगे प्रचार के लिए श्रोता के हाथों में एक औज़ार बन सके।

यही चीज़ मैं कला के बारे में भी कह सकता हूं। बेशक, यह सभी समझते हैं कि व्याख्यान तब कलात्मक बन जाता है, जब यह भली-भांति दिया जाये, कि वह कलात्मक मात्र इसलिए नहीं है कि वह

अनेकानेक बिम्बों से भरा है और जोशीले स्वर में दिया जाता है, बल्कि इसलिए भी कि इसकी शैली उत्तम है। यह रचनात्मक कला है और इस अर्थ में अध्यापन एक ऐसी महानतम कला है, जिसके द्वारा अध्यापक, बहिस्कूली शिक्षक सबसे उदात्त सामग्री – मानव आत्मा – का निर्माण करता है। और उनका निर्माण करना आना चाहिए – पहले उन्हें नरम बनाते हुए, आपके स्पर्श के प्रति, उनके उदात्त पक्ष पर आपके हल्के-से स्पर्श के प्रति उन्हें सहज बनाते हुए।

यह केवल तभी किया जा सकता है, जब आपने लोगों पर कुछ प्रभाव प्राप्त कर लिया हो, जब उनके और आपके बीच उनमें आपके प्रति कुछ सहानुभूति संचारित करते हुए धाराएं पैदा हो गयी हों।

यदि आप गायन और संगीत का उपयोग करेंगे, जैसा कि अक्सर हम अपनी जन-सभाओं में करते हैं, यदि चित्रकार की कला स्वयं उड़कर हमारे पास आती है, जैसा कि यह हमारे झंडों और पोस्टरों पर उतरती है, यदि कलाओं का संपूर्ण फूलोद्यान आपकी सहायता के लिए खिलता है, तो यह ऐसा ही होना चाहिए। और आपको इस बात के लिए प्रतीक्षा नहीं करनी है कि आपके श्रोता स्वयं उसकी आवश्यकता महसूस करें, बल्कि आप सभी नौ कला-देवियों को बुला सकते हैं, ताकि वे आपके कार्य में आपकी सहायता कर सकें।

एक शौक़िया थियेटर मंडली से लेकर किसी क्लब की दीवारों पर चित्र बनाने तक एक ऐसा कोई भी कार्य नहीं है, जिसका उपयोग लोगों की सुरुचि के विकास में, उन्हें जीवन में आनंद की नयी लहर महसूस करने में, उनसे कला की भाषा में, जो अत्यंत बोधगम्य है, उन महान सत्यों की भाषा में बात करने में न किया जा सके, जो हमारे लिए स्वर्ग का सूर्य हैं।

साथियो! मैं यहां आपके समक्ष इन विचारों की व्याख्या उन्हें उस जन सांस्कृतिक प्रासाद के रूप में एकसाथ लाते हुए करने का सुअवसर प्राप्त करना चाहूंगा, जो वस्तुतः बहिस्कूली कार्य का आधार और आदर्श है। बहिस्कूली कार्य, बेशक,, स्वयं-शिक्षा मंडलियों, मज़दूर और किसान क्लबों, तरह-तरह के कोर्सों, पुस्तकालयों, थियेटरों के ज़रिये चल सकता है, लेकिन जन सांस्कृतिक प्रासाद की अवधारणा में यह सब एकाकार हो कर एक संपूर्ण, समन्वित स्वरूप ग्रहण कर लेता है। यह अवधारणा बहिस्कूली शिक्षा केन्द्र की अवधारणा से भी

व्यापक है। सांस्कृतिक प्रासाद को केवल एक सांस्कृतिक और शैक्षिक केन्द्र के रूप में ही नहीं, बल्कि राजनीतिक, ट्रेड-यूनियन और सहकारी जीवन के केन्द्र के रूप में भी देखा जाना चाहिए।

लेकिन संपूर्ण जन सांस्कृतिक केन्द्र का यह विचार मैं अधिक विस्तार के साथ आपके समक्ष प्रस्तुत करना चाहूंगा, यदि मैं इस कांग्रेस में इसके बारे में एक विशेष रिपोर्ट पेश करूं और यदि नहीं तो कम से कम इस विषय पर उन लेखों के परिशिष्ट के रूप में कुछ और बातें कहूं, जिन्हें मैं लिख चुका हूं और जिन्हें संभवतः एक अलग पैम्फ़लेट के रूप में प्रकाशित करना संभव होगा। अभी, मेरे ख़्याल में, बहिर्स्कूली शिक्षा की संरचना, इसके वर्तमान साधनों की कतिपय रूपरेखाओं को इंगित करना ही अधिक महत्वपूर्ण है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि साथी न० को० क्रूप्स्काया ने अपने भाषण में जिस बात की ओर संकेत किया है[3], वह बहिर्स्कूली शिक्षा की प्रणाली में निर्विवाद रूप से बड़ा महत्वपूर्ण है। यदि हम बहिर्स्कूली शिक्षा को उसी रूप में समझें, जिस रूप में मैंने उसका विवेचन किया है, तो स्पष्टतः इसे कमिसारियत के कई अन्य विभागों से संपर्क रखना होगा। फिर भी, यह विस्तृत समझ ग़लत और विरोधाभासी होगी, यदि हम कहें कि चूंकि थियेटर, पुस्तकालय, संग्रहालय, गैलरियां, प्रदर्शनियां और सिनेमा – यह सब और स्वयं पुस्तकें, सभी शिक्षा के तथा इस रूप में बहिर्स्कूली शिक्षा के साधन हैं, तो इन सबका प्रबंध बहिर्स्कूली विभाग द्वारा किया जाना चाहिए।

बेशक, यदि आप थियेटर जाते हैं और इससे बाहर आते समय अपने को उसमें अंदर जाते समय से अधिक शिक्षित नहीं पाते, तो उस थियेटर को बंद कर दिया जाना चाहिए, क्योंकि यह थियेटर नहीं, बल्कि हल्का मनोरंजन है। उसमें आप मानों सो जाने जैसा ही आराम पाते हैं और केवल उसी दृष्टि से उसे क़ायम रहने का कुछ दुर्बल अधिकार है। थियेटर शिक्षा का साधन है। संपूर्ण सामाजिक जीवन प्रत्येक व्यक्ति के लिए शिक्षा की एक प्रक्रिया है, लेकिन यह जन-कमिसार परिषद (सोव्नार्कोम) का कार्य है न कि शिक्षा विभाग का।

हम अपने कार्यभार की सीमाओं की निश्चित रूपरेखा प्रस्तुत करेंगे। बहिर्स्कूली विभाग का कार्य आबादी के बीच उन लोगों की सहायता करना है, जो अपने प्रयास से शिक्षा नहीं प्राप्त कर सकते, जिन्हें

बहिस्कूली शैक्षिक संस्थाओं के ज़रिये मदद करनी चाहिए यानी ऐसे संस्थाएं, जो सामान्य स्कूलों से कुछ भिन्न स्वरूप के, अपने ही तरह के स्कूल हों, मगर हों वे शैक्षिक संस्थाएं ही। चूंकि यह ऐसा है, इसलिए हमारा थियेटर विभाग थियेटरों से शिक्षा में सीधी सहायता की आशा कर सकता है।

लेकिन थियेटरों का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है, उन्हें अपने कलात्मक दायित्व भी निभाने हैं, वे एक व्यापक कलात्मक रंगपटल बना रहे हैं तथा मंच-कला के यथासंभव बड़े प्रभाव प्राप्त करने के लिए प्रयास कर रहे हैं। यदि आप चाहते हैं, तो थियेटर आइये और सीखिये, लेकिन थियेटर आपके पास नहीं आयेंगे! मगर यदि आप व्याख्यान के बाद एक विशेष प्रस्तुतीकरण का आयोजन करना चाहते हैं, तो यह बहिस्कूली विभाग का कार्य है। इस उद्देश्य से बहिस्कूली विभाग किसी प्रांतीय या नगर थियेटर के साथ यह कहते हुए सहमति प्राप्त कर सकते हैं कि हमें ऐसा प्रस्तुतीकरण दीजिये, जो, उदाहरणार्थ, मानवजाति के इतिहास में इस या उस युग को दृष्टांत के साथ पेश कर सके, या ऐसे पांच-छः नाटक, जो लगातार कई युगों को पेश कर सकें – यही तो बहिस्कूली विभागों के कर्मचारियों का उचित कार्य है, लेकिन जहां तक शेष बातों का सवाल है, थियेटर को अपनी कलात्मक प्रगति के नियमों के अनुसार विकसित होने के लिए स्वतंत्र छोड़ देना चाहिए।

मनुष्य को अपनी कलात्मक और वैज्ञानिक रचनात्मकता को यथा-संभव व्यापक बनाना चाहिए, क्योंकि इस वृक्ष पर ऐसे फल लगेंगे, जो बाद में सबका पोषण करेंगे। और कला में हर चीज़ को ही साधारण-सुबोध स्तर पर नहीं उतार देना चाहिए। हमें इस चीज़ को ध्यान में रखना चाहिए कि लोकप्रिय मनोरंजन के द्वारा अधिकाधिक लोगों को कलात्मक रचनात्मकता, वैज्ञानिक क्षेत्रों में काम करने की उच्च योग्यता, रचनात्मकता को पूर्णतया मुक्त करने के स्तर तक कैसे उठाया जाये। बेशक, राज्य थियेटर विभाग को बहिस्कूली शिक्षा विभाग के एक उप-विभाग में नहीं बदल सकता, लेकिन यदि इससे एक दूसरा ग़लत निष्कर्ष निकाला जाये, तो यह दुःखद होगा: इस स्थिति में तो बहिस्कूली शिक्षा विभाग को यहां कुछ करने को नहीं रह जाता है। थियेटर विभाग को शौक़िया थियेटर मंडलियों या सीधे-सादे प्रस्तु-तीकरण मंचित करनेवाले थियेटरों के विकास के बारे में स्वयं सोचने

दें, उसे उपयुक्त रंगपटल तैयार करने तथा इसे थियेटरों को सौंपने के बारे में सोचने दें, उसे व्याख्यानों, आदि के साथ लोकप्रिय प्रदर्शनियों के बारे में सोचने दें।

इस तरह का निष्कर्ष अत्यंत अनुपयुक्त होगा। बहिस्कूली शिक्षा की एकीकृत संरचना तब टुकड़े-टुकड़े हो जायेगी। तब जन सांस्कृतिक केन्द्र की ज़िम्मेदारी कौन संभालेगा, जिसमें थियेटर, प्रदर्शनियां और कंसर्ट होंगे, जहां हर कार्य एक या दूसरे विभागों से संबद्ध होगा? बेशक, इसका मतलब यह होगा कि बहिस्कूली शिक्षा का हमारा कार्य विसंगठित हो जायेगा। यह पुस्तकालय संबंधी कार्यों के मामले में साफ़-माफ़ दिखायी देगा। पुस्तकालय बहिस्कूली शिक्षा का एक अंग है। इसके साथ ही, पुस्तकालय विभाग के पास सभी प्रकार के पुस्तकालयों को विस्तारित करने का कार्य है; इसका अर्थ यह है कि बहिस्कूली विभाग का आधा कार्य उससे ले लिया जानेवाला कार्य होगा।

तब इस समस्या को एक दूसरे ढंग से हल किया जा सकता है। पुस्तकालय विभाग, सिनेमा विभाग क़ायम करने दीजिये, लेकिन हम अपने छोटे-से थियेटर विभाग, सिनेमा विभाग, पुस्तकालय विभाग क़ायम करेंगे, जो सिर्फ़ हमारे लिए, बहिस्कूली शिक्षा संबंधी लोगों के लिए ही होंगे। लेकिन यदि वह छोटा-सा विभाग अपने में सर्वोत्तम कलात्मक और वैज्ञानिक प्रतिभाओं को संकेन्द्रित नहीं करता, यदि सभी मुख्य कला निकायों को उसके अंतर्गत नहीं लाया जाता, तो परिणाम बहिस्कूली विभाग के अंदर बहुत छोटे कुटीर उद्योग जैसी कोई चीज़ ही होगा। और उस विभाग में राज्य के सभी संसाधनों का उपयोग करने की क्षमता नहीं रह जायेगी।

अतः वह समाधान, जिस पर विचार करने के लिए मैं कांग्रेस से सिफ़ारिश करूंगा, यह है कि हमारे विभागों से संबद्ध हर विभाग को अपने अंदर एक ऐसा उप-विभाग क़ायम करना चाहिए, जो अपने कार्य के बहिस्कूली शैक्षिक पहलू से निपटने के लिए, उस विशेष कला या विज्ञान को आम लोगों के समक्ष सर्वसुलभ रूप में रखने के लिए खास तौर से कमोबेश विकसित किया गया हो, जो स्थिति-विशेष में उस विभाग का मुख्य कार्य हैं और कि हर ऐसे उप-विभाग को बहिस्कूली शिक्षा के अंतर्गत उसके सहायक अवयव के रूप में आना चाहिए। यह अत्यावश्यक है कि कांग्रेस को इस सांगठनिक केन्द्र के बारे में सोचना

चाहिए, क्योंकि इलाक़ों में, प्रांतों में इसी तरह की कोई चीज़, संभवतः छोटे रूप में, दुहरायी जा सकती है और वहां लगभग यही समाधान लागू किया जाना चाहिए...

निस्संदेह, मैंने यहां जो परिचयात्मक भाषण किया है, वह उन सभी प्रश्नों को स्पर्श नहीं कर सकता, जिन पर इस दस-दिवसीय कांग्रेस को विचार-विमर्श करना है और जिन पर यह अंतिम शब्द नहीं कह सकती, चाहे इसकी क्षमता कितनी भी विशाल क्यों न हो। मैं यह सोचना चाहूंगा कि इस परिचयात्मक भाषण में मैंने आंशिक रूप में वह उद्देश्य प्राप्त कर लिया है, जिसे मैंने अपने समक्ष रखा था, यानी आपको बहिर्स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में किये जा रहे व्यापक और महत्वपूर्ण कार्य का स्मरण कराना तथा इसकी मुख्य समस्याओं की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत करना। इन्हें मैंने विश्व इतिहास के उस भव्य क्षण के प्रकाश में देखा है, जिससे अब हम गुज़र रहे हैं।

हमें, यहां एकत्र एक हज़ार लोगों को निराश होकर यह नहीं कहना चाहिए कि यह बहिर्स्कूली शिक्षा पर कांग्रेस आयोजित करने का समय नहीं है, जबकि हमारे शत्रुओं की अग्रगति हर तरफ़ से ख़तरा प्रस्तुत कर रही है, जबकि सोवियत रूस युद्ध के इन सभी शिकारी कुत्तों से अपनी रक्षा, मैं कमज़ोर नहीं कहूंगा, लेकिन थके हुए हाथ से कर रहा है।

नहीं, यह भव्य है, यह प्रतीकात्मक है, यह हमारे आंदोलन की शक्ति दिखाता है, कि वर्तमान समय में, जबकि हम लोगों को इन बेशर्म आक्रमणकारियों को मार भगाने के लिए युद्ध में, मोर्चों पर बुला रहे हैं, उसी समय में हम सैकड़ों लोगों को यहां, केन्द्र में, रूस के मध्य में इस बात के लिए जमा कर रहे हैं कि जन-शिक्षा के प्रश्नों पर विचार-विमर्श किया जा सके। क्योंकि एक हाथ में तलवार और दूसरे में मशाल – यही अब हमारे लिए आवश्यक है। दोनों ही हमारे लिए समान रूप से विजय की महत्वपूर्ण शर्त हैं। इस तरह यहां भी हम युद्ध परिषद की बैठक कर रहे हैं, यहां भी हम उसी महान युद्ध में हैं।

और जैसा कि लाल सेना के प्रतिनिधि ने यहां कहा है – वह हमारी सेवा कर रही है और हम उसकी सेवा कर रहे हैं। यह सब, साथियो, अब संपूर्ण विश्व इतिहास के लिए इतना महत्वपूर्ण है: हमारी सेवा संपूर्ण मानवजाति के भाग्य के लिए महान सेवा है।

वर्ग स्कूल पर

बुर्जुआ और कम्युनिस्ट श्रम स्कूल

वर्ग समाज में जो हर चीज़ राज्य करता है, उसका सुनिश्चित वर्ग स्वरूप होता है।

राज्य के बारे में दो प्रमुख विचार हैं: एक को उदारतावादी बुर्जुआ वर्ग पेश करता है, तो दूसरे को मार्क्सवादी पेश करते हैं।

उदारतावादी बुर्जुआ वर्ग दावा करता है कि राज्य व्यवस्था का संगठन है। इस बात से इन्कार न करते हुए कि वर्तमान समाज में विभिन्न वर्गों का अस्तित्व है और कि वे एक-दूसरे के विरुद्ध लड़ सकते हैं, उदारतावादी कहते हैं कि अपने क़ानून के साथ राज्य वर्गों से ऊपर है और उसे इस चीज़ की चिंता करने का कर्त्तव्य है कि परस्पर संघर्ष के दौरान ये वर्ग सामान्य एकता को न नष्ट कर दें। यह न्याय की रक्षा करता है, और इसके साथ ही संचार-साधनों, अस्पतालों, स्कूलों, संक्षेप में, जीवन के उन पहलुओं की चिंता करता है, जो सबके लिए आवश्यक हैं और जो अतएव आम निकाय, सामाजिक स्वरूप के उच्चतम निकाय – राज्य – के अधिकार में आते हैं।

फलत: उदारतावादी मांग करते हैं कि स्वयं राज्य को संसद पर निर्भर करना चाहिए, जिसके चुनाव स्वतंत्र होने चाहिए, ताकि हर वर्ग अपने प्रतिनिधि संसद में भेज सके। इस तरह, उनके विचार में, संसद देश में शक्तियों के बीच संबंधों का प्रतिबिम्ब है।

समाज में विभिन्न वर्गों को संयुक्त करते हुए एक समझौते, एक संविदा के रूप में राज्य का यह सिद्धांत जनवादी संसदीय प्रणाली के अंतर्गत कुछ पुष्टि पाता है। फिर भी, यह सिद्धांत बिल्कुल ग़लत है। वास्तव में, यथार्थ इसके अनुरूप नहीं है। वास्तव में राज्य, जैसा कि मार्क्स के पहले अनेक विधिवेत्ताओं ने ठीक ही अनुमान किया और जैसा कि मार्क्स ने यथातथ्य और निश्चित रूप से सिद्ध किया, शासक वर्ग की सरकार के संगठन के अलावा और कुछ नहीं है।

शासक वर्ग अल्पसंख्यक वर्ग है, जो बहुसंख्यक वर्ग का शोषण करता है, बहुसंख्यक वर्ग के श्रम पर ज़िंदा रहता है और भूमि, उपकरण, पशुओं तथा अपने कर्मचारियों को नियंत्रित करता है। वह इस नियंत्रण को केवल बल-प्रयोग की एक विस्तृत मशीनरी तैयार करके ही लागू कर सकता है। दुनिया के सभी राज्यों के पास सशस्त्र सेनाएं और पुलिस-दल हैं, जो शासक वर्ग की सेवा में उपलब्ध हैं और जो अल्पसंख्यक वर्ग के हाथों में होनेवाली विशाल संपत्ति तक पहुंचने के बहुसंख्यक वर्ग के किसी भी प्रयास को दबा देते हैं तथा अत्यंत निर्मम प्रतिशोध-कार्रवाइयां करते हुए उसे पुनः अंकुश में लाते हैं।

ऐसा ही दास-प्रथावाले राज्य में था, जहां दास-स्वामी सशस्त्र था, जबकि दास शस्त्रविहीन, जहां दास-स्वामी के पास नौकर-चाकर होते थे, जो उसके चुटकी बजाते ही दासों पर टूट पड़ने के लिए तैयार रहते थे, यदि वे विद्रोह करने का साहस करते थे। और ऐसा ही सबसे परिष्कृत जनतंत्रों में है, जहां शोषण के ख़िलाफ़ मज़दूर आंदोलन के प्रतिवादों पर न्यायिक प्रतिशोध कार्रवाइयां की जाती हैं या सीधे दंडात्मक अभियान चलाये जाते हैं – यह ब्रिटेन, अमरीका और स्विट्ज़रलैंड तक में होता है (हाल ही में, स्विस पुलिस ने ज़ूरिख़ की सड़कों पर मज़दूरों पर गोलियां चलायीं)।

हर राज्य का मुख्य उद्देश्य शासक वर्ग का प्रभुत्व सुनिश्चित करना होता है। लेकिन जब बहुसंख्यक वर्ग शिक्षा और संगठन प्राप्त करने लगता है, जब राजनीतिक विचार रखनेवाला सर्वहारा तथा आमूल परिवर्तनवादी टुटपुंजिया बुर्जुआ वर्ग विद्यमान होता है (यह वहां होता है, जहां बड़ा बुर्जुआ वर्ग या तो सत्ता के निकट होता है या सत्ता अपने हाथों में ले चुका होता है, जहां अच्छे संचार-साधन होते हैं, जहां पूंजीवादी विकास का एक निश्चित स्तर प्राप्त हो चुका होता है), तब बड़ा बुर्जुआ वर्ग अपने को एक ऐसी व्यवस्था क़ायम करने में असमर्थ पाता है, जिसके अंतर्गत सत्ता बिना किसी शर्त के और बिना किसी मुखौटे के उसकी होती है। उसने यह सरकार के तथाकथित संपत्ति-योग्यता पर आधारित रूप को लागू करने का प्रयास किया, जो केवल धनी लोगों को ही संसद में आने देता था। लेकिन यह कठिन था, क्योंकि यह प्रौढ़ जनवादी हिस्सों (यहां तक कि संपत्तिशाली वर्गों के बीच भी) की आंखों में खटकता था, जिन्हें भय था कि कहीं

क्रांति न हो जाये। अतः इन कारणों से बुर्जुआ वर्ग ने (कभी-कभी पूरी स्वेच्छा से) सार्विक मताधिकार की धूर्त मशीनरी लागू की है, जो सभी नागरिकों को राजनीतिक समानता देते हुए प्रतीत होता है, लेकिन साथ ही इस चीज़ को भी सुनिश्चित बना देता है कि सत्ता धनी वर्गों के साथ ही रहे।

अमरीका, ब्रिटेन और फ़्रांस में सार्विक मताधिकार है; ये जनवादी देश हैं (जनवाद का अर्थ है "जनता की सत्ता"), लेकिन वहां अधिकांश लोग दरिद्रता का जीवन जीते हैं, जबकि मुट्ठी भर लोग फ़ैक्टरियों, मिलों, ख़ानों, भवनों, अपार संपत्तियों के मालिक हैं और घोर ऐशो-आराम का जीवन जीते हैं। और ये जनवादी राज्य के बेहतरीन नमूने हैं। यदि वहां ऐसे लोग हैं, जो कहते हैं कि मशीनें, भवन और भूमि – सब जनता के होने चाहिए और केवल तभी जन-सत्ता क़ायम होगी, तो उन्हें पकड़ कर जेलों में बंद कर दिया जाता है, उनके अख़बार बंद कर दिये जाते हैं – संक्षेप में, ऐसी शिक्षाओं का निर्मम दमन कर दिया जाता है।

इसे केवल बल-प्रयोग से नहीं प्राप्त किया जा सकता। बेशक, बुर्जुआ वर्ग मज़दूरों से बेहतर ढंग से सशस्त्र हो सकता है, लेकिन विकास की इस अवस्था में बुर्जुआ वर्ग बहुत बड़ी सशस्त्र सेनाएं रखने के लिए बाध्य है। बड़े देश और बड़ी संख्या में विद्रोहियों को क़ाबू में करने और उसी तरह अन्य लुटेरे राज्यों के हमलों से अपनी रक्षा करने के लिए एक विशाल स्थायी सेना की आवश्यकता होती है। अतः सेना के संबंध में बुर्जुआ वर्ग को सार्विक अनिवार्य भर्ती पर निर्भर करना पड़ता है।

लेकिन जन-सेना आसानी से विद्रोहियों से आ मिल सकती है। बात यह है कि किसी भी समय में राज्य ने केवल बर्बर शक्ति पर ही निर्भर नहीं किया है। निम्नवर्गीय लोगों को दबाने का **मुख्य** साधन **तलवार**, बर्बर शक्ति, रही है, लेकिन इसके साथ ही, समाज के निम्नवर्गीय लोगों की **चेतना को विषाक्त करने की विधियां** भी चलती रही हैं।

पहले, निम्नवर्गीय लोगों को ज्ञान नहीं दिया जाना चाहिए, जनसाधारण को अज्ञानी ही रहना चाहिए; दूसरे, उस अज्ञान के आधार पर उनमें ऐसे विचार, ऐसी मनोदशा विकसित की जानी

चाहिए कि दास वर्तमान स्थिति को बिल्कुल सही माने, कि वह इसे एक उचित व्यवस्था के रूप में देखे; उसकी सहज-बुद्धि को विकृत किया जाना चाहिए और उन परिस्थितियों को स्वेच्छापूर्वक स्वीकार करने के लिए विवश कर देना चाहिए, जिसके अंतर्गत वह रह रहा है।

हमारे लेखकों ने ऐसे भू-दास या घरेलू नौकर का चित्रण किया है, जो एक कुत्ते की तरह अपने मालिक की देखभाल करता है और आश्वस्त होता है कि ईश्वर ने उसे अपने मालिक के लिए अपना जीवन अर्पित कर देने का आदेश दिया है। याद करें कि कैसे फ़ौजी सिपाही इससे आश्वस्त हो जाया करता था कि ज़ार के लिए अपना जीवन अर्पित करना वीरता का कार्य है। देखा कि कैसे लोगों को पालतू बनाया गया! उन्हें इतनी सफलतापूर्वक पालतू बनाया गया कि वे अपने रोम-रोम से दास बन गये और अपनी दासता को सराहा। यह धार्मिक विकृति की सहायता से, पुरोहितों के ज़रिये किया गया। वे बचपन से ही अपने अधीनों के दिमाग़ इस विचार से भरने लगते थे कि यह दुनिया असली दुनिया नहीं है, कि क़ब्र के पार एक दूसरी ही दुनिया है, जहां सब कुछ यहां से बिल्कुल भिन्न है और जिसे यह समझने के लिए जानना आवश्यक है कि यहां कैसे व्यवहार करें। धर्म बड़ी चतुराई से शिक्षा देता है कि दुनिया इस तरह बनी ही है कि यहां ग़रीब बुरा जीवन जीता है ताकि परलोक में अपना महान पुरस्कार प्राप्त कर सके, कि यदि, इसके विपरीत, यहां वह भाग्य के विरुद्ध विद्रोह करता है, तो उसे परलोक में घोर यातनाएं भुगतनी पड़ेंगी।

अन्य कई पूर्वाग्रहों के साथ ये विचार किसानों के दिमाग़ में भी भरे गये हैं और इस तरह किसान, निम्नवर्गीय लोग इस विचार से ओत-प्रोत हो गये।

दुनिया में एक ऐसा महान सम्राट – ईश्वर – है, जिसके ख़िलाफ़ कुछ नहीं किया जाता, जिसके इशारे पर अच्छी और बुरी फ़सल, लोगों के भाग्य, जीवन और मृत्यु, बीमारी, सफलता और असफलता – सब कुछ नाचते हैं, सब कुछ उसी पर निर्भर करता है। वह सांसारिक ज़ार ही नहीं है, जो आपको जेल में बंद कर सकता है; उस पर मनुष्य का भाग्य न केवल अपने जीवन-काल में निर्भर करता है, बल्कि उसकी शाश्वत आत्मा का भाग्य भी उसी पर निर्भर करता है। और उस शाश्वत आत्मा के मुक़ाबले में मनुष्य का यह अल्प जीवन

क्या है? और इसी महान ज़ार ने पृथ्वी पर वर्तमान व्यवस्था क़ायम की है।

ईसाई धर्म कहता है कि ईश्वर ग़रीब आदमी को ही प्यार करता है, कि वह उसकी तरफ़ है। कोई नहीं जानता, हो सकता है कि धनी आदमी का सचमुच परलोक में बुरा हाल होगा और इस संक्षिप्त प्रलोभन को बर्दाश्त करना चाहिए तथा इहलोक में धनी आदमी की आज्ञा का पालन करना चाहिए। बेशक, यह सिद्धांत धनी आदमी के लिए लाभप्रद है और ग़रीब आदमी अपनी अज्ञानता में इस संपूर्ण धूर्ततापूर्ण चाल में विश्वास करता है तथा उसका समर्थन करता है। यहां तक कि पश्चिम यूरोप में भी हम यही चीज़ देखते हैं; यह देखते हैं कि राज्य द्वारा (या जहां राज्य चर्च से पृथक् है, वहां "समाज" द्वारा) विषघातकों की इस विशाल फ़ौज, मानव-चेतना को धुंधला बनानेवालों, सभी प्रकार के पुरोहितों के रख-रखाव पर विशाल रक़म ख़र्च की जा रही है।

और एक देश जितना ही अधिक सुसंस्कृत होता है, ईसाई धर्म उतना ही अधिक परिष्कृत और धूर्त बनता है, ताकि पर्याप्त रूप से कारगर नशीला विष बना सके।

कमोबेश सभ्य राज्य के विकास की अवस्था में यह अपने हाथों में मानव-चेतना को विषाक्त बनाने के लिए विशाल संसाधन प्राप्त करता है, यह राष्ट्रीय बैरकें प्राप्त करता है। सार्विक अनिवार्य भर्ती का मतलब यह है कि हर नौजवान अपने को एक निश्चित समय के लिए फ़ौजी मशीन की लौह पकड़ में पाता है। वास्तव में, दो-तीन साल की फ़ौजी सेवा हरेक व्यक्ति के लिए आवश्यक नहीं है। युद्ध के अनुभव ने दिखा दिया है कि अधिक से अधिक दो-तीन महीने में एक अच्छा सैनिक तैयार किया जा सकता है।

लेकिन नौजवान को सेना में लंबे समय के लिए ले लिया जाता था, ताकि अफ़्सर उसे पूर्णतः चेतनाशून्य बना सकें, ताकि वह आदेश मिलते ही किसी पर भी गोली चलाने के लिए तैयार रहे। "देशभक्तिपूर्ण" कर्त्तव्य की ओट में लोगों को इशारे पर नाचनेवाली कठपुतलियों में बदल दिया जाता है और इस तरह से प्रशिक्षित आदमी न केवल अपने सैनिक जीवन के वर्षों में, बल्कि उसके बाद भी अपनी आत्मा में यह आदेश-पालन की तत्परता, आदेश के शब्दों से सम्मोहित होने का कौशल लिये फिरता है।

इसके बाद राज्य प्रेस, यानी विशाल मात्रा में काग़ज़ पर (स्वयं राज्य के रूप में या ऐसे अख़बारों के ज़रिये, जिन्हें यह ख़रीद लेता है या जिनका यह समर्थन करता है) कोई भी मिथ्या निन्दाएं प्रचारित करने, अपने लिए लाभदायी सूचनाएं फैलाने, समाजवाद के विरुद्ध मिथ्या अभियान चलाने, गपें, अफ़वाहें और झूठी ख़बरों का जाल फैलाने की क्षमता प्राप्त करता है। प्रेस की रगों से, विशेष रूप से पश्चिम में, झूठ की एक पूरी नदी बहती है। यह सर्वत्र, वस्तुतः प्रत्येक किसान की झोंपड़ी में घुस जाती है और अपनी विनाशलीला दिखाती है। भाड़े के अख़बार तथाकथित जनमत बनाते हैं। यह जनमत, जो स्वयं आम लोगों के बीच तक पहुंच जाता है, शब्द के पूर्ण अर्थ में गढ़ा हुआ होता है। राज्य कहता है : कृपया अमुक-अमुक क़िस्म के जनमत तैयार कीजिये और सभी अख़बार लाइन देने में व्यस्त हो जाते हैं; उन पर विश्वास किया जाता है। फिर उन्हें "विजातीय" प्रेस, समाजवादी प्रेस से लड़ना है। जनवादी जनतंत्रों में समाजवादी अख़बारों को यों ही बंद नहीं किया जा सकता, लेकिन उनके विरुद्ध संघर्ष अपेक्षाकृत आसान है। बड़ा अख़बार चलाने के लिए बड़ी पूंजी की आवश्यकता होती है। मज़दूरों के पास इतनी बड़ी पूंजी नहीं होती और उनके अख़बार नगण्य साधनों से निकाले जाते हैं। इसके अलावा बुर्जुआ बैंक और फ़र्में उन्हें विज्ञापन नहीं देते और एक सू में एक अख़बार बेचने के लिए, जैसा कि फ़्रांस में किया जाता था, विज्ञापनों की आवश्यकता होती है, अन्यथा अख़बार नहीं चल सकता। इस वजह से समाजवादी प्रेस कई मामलों में बुर्जुआ प्रेस से पिछड़ा रहा है।

अंत में, बुर्जुआ राज्य के पास एक और साधन – **उत्पीड़ित लोगों और मज़दूर वर्ग के नेताओं को ख़रीद कर अपने पक्ष में लाना** – भी रहा है।

अक्सर स्वयं मज़दूरों के बीच से ऐसे कुछ लोग संसद के लिए चुने जाते हैं, जो इस संपूर्ण प्रणाली को समझते हैं और जनता को शिक्षा देना शुरू करते हैं ताकि वे अपनी आंखें खोलकर देख सकें कि यह जनतंत्र बिल्कुल नहीं है, कि यह सरासर धोखा है, कि बैरकों, प्रेस तथा घूसख़ोरी की मदद से ऐसे मुट्ठी भर लोग उन पर शासन कर रहे हैं, जो उनके जीवन को दयनीय बना रहे हैं।

शुरू में ऐसे लोगों को सभी सुलभ साधनों से मिटा दिया गया, लेकिन बाद में यह असंभव हो गया, क्योंकि उनकी संख्या बहुत अधिक हो गयी।

चूंकि संसदीय प्रणाली के अंतर्गत ये लोग, यदि वे अच्छे वक्ता होते हैं तो, नगर-परिषदों या प्रांत में... बड़ी परिषदों या अंत में संसद के लिए चुने जाते हैं, इसलिए उन्हें ख़रीदना सुविधाजनक पाया जाता है। ऐसे आदमी को सभी अच्छी चीज़ों का आश्वासन दिया जाता है, क्लबों में जगह दी जाती है, कुछ तो बुर्जुआ लड़कियों से शादी कर लेते हैं, सहसा उच्च पद प्राप्त कर लेते हैं, उन्हें कम्पनियों के शेयर बेच दिये या मुफ़्त में दिये जाते हैं। मज़दूरों के कुछ प्रतिनिधि इन प्रलोभनों के वश में आ जाते हैं और अपने को बेच देते हैं। कुछ अपने को किसी ब्रिआन[1] की भांति तन-मन से बेच देते हैं और बुर्जुआ वर्ग के घोर उपजीवी बन जाते हैं, लेकिन फिर भी वे आड़ के लिए समाजवाद का झीना मुखौटा पहने रहते हैं। वे सभी तरह की क्रांतिकारी लफ़्फ़ाज़ी झाड़ते रहते हैं, लेकिन क्रांति को कुछ सौ वर्षों के लिए टाल देते हैं और, ईश्वर न करें, मज़दूरों को उन लोगों का अनुसरण करने से आगाह करते हैं, जो बिना विचारे अभी ही समाजवाद लागू करना चाहते हैं। वे **विकासवादी समाजवादी** बन जाते हैं। वे मंत्री बनाये जाते हैं। वे योग्य लोग हैं और बुर्जुआ वर्ग उन्हें अपना संपूर्ण भाग्य सौंप देता है, उन्हें राज्य रूपी जलपोत का मुख्य कर्णधार बना देता है, क्योंकि समाजवादी लफ़्फ़ाज़ी की आड़ में वे राजनीतिज्ञों के रूप में उस सामान्य बुर्जुआ से अधिक उपयोगी होते हैं, जिसके भेड़िये जैसे दांत लोगों को साफ़-साफ़ दिखायी देते हैं।

ऐसा ही उन्होंने रूस में भी किया। ज्योंही बुर्जुआ वर्ग ने फ़रवरी–अप्रैल (१९१७– **सं०**) में सत्ता प्राप्त की, उसने मांग की कि समाजवादियों को मंत्री बनाया जाना चाहिए। उसने चेर्नोव, त्सेरेतेली, आदि को बुलाया। उसने उन्हें एक ओट के रूप में खड़ा किया और उन्होंने होज़पाइप के सच्चे उस्तादों की भांति क्रांति की ज्वाला को बुझाने के लिए दौरे किये। उन्होंने आंखें बंद कर के हर तरह से सेवा की, जब कि वास्तविक सत्ता पूंजीपति कोनोवालोव, ज़मींदार ल्वोव, बैंकर तेरेश्चेन्को[3] के हाथों में थी। हमारे पास ऐसे लोग नहीं थे, जिन्हें बुर्जुआ वर्ग संपूर्ण सत्ता सौंपे, लेकिन पश्चिमी यूरोप में लॉयड

7*

जार्ज और मिलेरां[4] जैसे जनता से ऊपर उठे कुछ लोग हैं, जो प्रधान मंत्री और राष्ट्रपति बनते हैं (बेशक, उन्हें अंकुश में रखा जाता है)।

कुछ लोग ऐसे हैं, जो अपने को आंशिक रूप से बेचते हैं। उनकी परिस्थितियां कमोबेश आरामदेह बन जाती हैं, वे जल्दी करना बंद कर देते हैं, लेकिन कथनी में वे मानो पूर्ण समाजवादी बने रहते हैं। वे सब समय लगे रहते हैं, मज़दूरों के बीच आंदोलन चलाते हैं, संगठन क़ायम करते हैं, लेकिन यथार्थ में यह सब कुछ बुर्जुआ वर्ग के साथ मिलीभगत में होता है। वे कहते हैं कि लक्ष्य, यानी क्रांति, कुछ नहीं है, बल्कि इसका रास्ता, यानी सुधार, सब कुछ है। आज कार्य समय में आधे घंटे की कटौती की गयी, कल मज़दूरी दर में दस कोपेक की बढ़ोत्तरी होगी। यही "संसदीय संघर्ष" का यथार्थ है। धीरे-धीरे, सुविधापूर्वक चलिये। बुर्जुआ वर्ग ऐसी छूटें सहर्ष दे देता है। जर्मन सामाजिक-जनवादी पार्टी जैसी विशाल पार्टियां और काउत्स्की[5] जैसे अति वामपंथी लोग अपने को इस संसदीय दलदल में धंसा हुआ पाते हैं। इस तरह, मज़दूर वर्ग अपने नेताओं से वंचित हो जाता है।

आप देखते हैं कि बुर्जुआ वर्ग के पास कितनी विशाल शक्तियां हैं, लेकिन इसमें **स्कूल** का महत्व ज़रा भी कम नहीं है, जिसे बुर्जुआ वर्ग जनता की चेतना को विकृत करने के एक अस्त्र में बदल देता है।

शासक वर्ग की सरकार अपने लिए जो पहला कार्य निर्धारित करती है, वह निम्नवर्गीय लोगों को अविकसित रखने, आलोचनात्मक विचार की शक्ति से वंचित रखने में है। जब हम रूस जैसे एक देश के बारे में सोचते हैं, तो यहां ज़ारशाही सरकार की समाप्ति तक शिक्षा मंत्री, श्चेद्रीन के शब्दों में, बहुत कुछ अशिक्षा मंत्री था।[6] यदि कोई समाज स्कूल खोलना चाहता था, तो मंत्री इसकी अनुमति नहीं देता था; यदि कोई नगर विश्वविद्यालय खोलना चाहता था, तो मंत्री इसकी अनुमति नहीं देता था; यदि कोई प्रतिभाशाली प्रोफ़ेसर होता था, तो उसे विदेशों में भगा दिया जाता था; यदि विद्यार्थी स्कूलों के वैज्ञानिक कार्यकलापों के विस्तार के लिए लड़ाई करते थे, तो उन्हें सेना में भेज दिया जाता था। यह शिक्षा मंत्रालय की नियमित नीति थी। शिक्षा मंत्रालय गृह मंत्रालय के एक विभाग की तरह था। गृह मंत्रालय इसकी पूरी कोशिश करता था कि स्कूल उसी के अधिकार में रहें।

लेकिन रूस में भी वित्त मंत्रालय ने (जिसे बजट को संतुलित बनाने में दिलचस्पी थी और जिसने महसूस किया कि इसके लिए विकसित पूंजीवाद आवश्यक है, कि इसके बिना रूस निराशाजनक ढंग से अन्य देशों से पिछड़ जायेगा, क्योंकि एक ग़ैर-पूंजीवादी देश हमेशा ही पूंजीवादी देश से पराजित हो जायेगा) स्कूलों के निर्माण की आवश्यकता पर ज़ोर दिया और शिक्षा मंत्रालय से उसका तीव्र टकराव शुरू हो गया। वित्त मंत्रालय ने पश्चिमी यूरोप के सर्वोत्तम माडलों पर अपने पालीतकनीकी कालेज और वाणिज्यिक स्कूल खोले। सच बात तो यह है कि लोगों को अज्ञानता में नहीं रखा जा सकता, यदि आप सुदक्ष कर्मी रखना चाहते हैं, यदि आप अच्छे कारिंदे रखना चाहते हैं, यदि आप ऐसे किसान रखना चाहते हैं, जो कृषि संबंधी किसी पत्रिका को पढ़ सकें और अपनी खेती में सुधार ला सकें।

व्यापक साक्षरतावाले देश, अच्छी शैक्षिक प्रणालीवाले देश, चाहे बुर्जुआ शैक्षिक प्रणाली ही क्यों न हो, अधिक अच्छे सैनिक, किसान और मज़दूर रख सकते हैं। जब पश्चिम यूरोप ने यह महसूस कर लिया, तो इसने जन-स्कूलों पर विशेष ध्यान देना शुरू कर दिया।

तो भी, उसने यह नहीं चाहा कि जन-स्कूल लोगों को पूर्ण ज्ञान दें। इससे उनकी क्या भलाई होगी? उन्हें प्रशिक्षण की आवश्यकता थी, ताकि वे पढ़-लिख सकें, लेकिन इसके साथ ही वहां उन्हें पुरोहित की देखरेख में यथासंभव अधिक ईसाई विष भी खिलाया जाना चाहिए। एक साधारण आदमी को तकनीकी ज्ञान एक निश्चित सीमा तक ही देना चाहिए, लेकिन बिना किसी गंभीर तकनीकी प्रशिक्षण के और सबसे बड़ी बात थी प्रारंभिक स्कूल से किसी उच्च स्कूल में आगे बढ़ने के उसके सभी रास्तों को बंद कर देना।

और यह इतनी चालाकी से किया जाता था कि रूस में, उदाहरणार्थ, प्रारंभिक स्कूल से माध्यमिक स्कूल जानेवाले किसान और मज़दूर वर्गों के लोगों की संख्या मात्र एक प्रतिशत की चौथाई थी। ४०० लोगों में से एक किसी उच्च स्कूल में पहुंच पाता था और वह भी तब, जब कोई उसे संरक्षण प्रदान करता था या जब वह धनी किसान का लाड़ला होता था।[7]

इस तरह, आम लोगों के बीच से कोई आदमी अधिक से अधिक तीन-चार साल तक शिक्षा पाता है और उसके बाद उसे स्कूल से बहि-

ष्कृत कर दिया जाता है। यदि वह पालीतकनीकी सांध्य कोर्सों में कोई आगे शिक्षा प्राप्त करने में सफल हो सकता है, तो वहां वह केवल अपने व्यवसाय में अपनी दक्षता ही बढ़ा सकेगा। यह सब कुछ इस बात को ध्यान में रखकर किया जाता है कि आदमी पूर्ण ज्ञान न पाने पाये और आसानी से, उदाहरणार्थ, एक सामाजिक-जनवादी में न बदल जाये। इसीलिए जर्मनी, फ़्रांस, इंगलैंड, सभी यूरोपीय देशों में निचले स्कूलों से ऊपर जाने का कोई रास्ता नहीं है। अमरीका में ऐसा नहीं है। वहां उच्च स्कूलों में पहुंचनेवाले मज़दूरों और किसानों का प्रतिशत ज़्यादा अधिक – कम से कम चार-पांच प्रतिशत – है। यह ऐसा क्यों है? अमरीका आम लोगों से उठे लोगों से उतना भयभीत नहीं है। वहां स्कूल इस ढंग से बनाये गये हैं कि शहरी मज़दूरों और किसानों का एक अल्प प्रतिशत उनमें पहुंच तो जाता है, लेकिन स्कूल उनमें बुर्जुआ चेतना विकसित करने, स्कूली बच्चे में यह विचार भरने में कोई कोर-कसर नहीं उठा रखता कि वह अपने लोगों से विमुख हो जाये। और इन लोगों से घृणास्पद कोई चीज़ नहीं हो सकती, जो अपने माता-पिताओं, निम्नवर्गीय स्कूल के अपने साथियों को देख कर इस वजह से शर्मिंदा होते हैं कि वे भिन्न ढंग से कपड़े पहनते हैं, भिन्न ढंग से खाते हैं और उनसे शासक वर्ग भिन्न ढंग से व्यवहार करते हैं। यह उल्लेखनीय है कि मज़दूरों और किसानों के बच्चों को माध्यमिक स्कूलों में न लेने की जर्मन नीति बुर्जुआ वर्ग के लिए हानिकर है, क्योंकि प्रतिभाशाली मज़दूर अपने मज़दूर वर्ग के साथ ही रहते हैं और इस वजह से जर्मनी में बहुत-से प्रतिभाशाली मज़दूर नेता हैं। परिणामस्वरूप सामाजिक-जनवादी पार्टी के वर्ग-सचेत प्रशासकों और संगठनकर्ताओं की संख्या जर्मनी में एक प्रभावशाली स्तर तक बढ़ गयी है। इसके विपरीत, अमरीका अधिक चतुर है। वहां सामंतवाद के अवशेष नहीं हैं, वह इन लोगों को अपनी सेना में अफ़सर बना देता है, उन्हें ऊंचा उठाकर अपने आज्ञाकारी इंजीनियर बना देता है और यदि पोलैंड, रूस, जर्मनी के ग़रीब उत्प्रवासी वहां लगातार नहीं पहुंचते रहते, तो अमरीका में कोई समाजवादी नेता नहीं होता। वहां समाजवादी नेता अधिकांशतया इतालवी, यहूदी, पोल और आयरिश हैं, जो यूरोप से गये हैं। मूल अमरीकी ज्योंही स्कूल जाता है और ज्योंही यह पाया जाता है कि वह प्रतिभाशाली है, त्योंही उसे पशुओं की

तरह पालतू बनाया जाने लगता है। स्कूल में केवल व्यावहारिक स्वरूप का ज्ञान दिया जाता है। वहां इतिहास "वफ़ादारी" की भावना में पढ़ाया जाता है। वहां ईसाई धर्म की शिक्षा दी जाती है, जो बच्चों की चेतना को विषाक्त बना देती है, सभी विज्ञान आदिम स्तर पर और तीन-चार साल के लिए पढ़ाये जाते हैं। जब बच्चा १२ साल का हो जाता है, तो उसे और कुछ पढ़ने की आवश्यकता नहीं रह जाती। वह मिल, फ़ैक्टरी या वर्कशाप में अप्रेंटिस बन जाता है, उसे स्कूल से बहिष्कृत कर दिया जाता है, उसकी शिक्षा समाप्त हो जाती है।

बुर्जुआ वर्ग धर्म की शिक्षा को लेकर भ्रम में है। उदाहरणार्थ, सुप्रसिद्ध जर्मन शिक्षाशास्त्री पाउल्सेन[8] दावा करते हैं कि स्कूल में धर्मग्रंथ की शिक्षा, जो स्पष्टतः अन्य अध्यापकों द्वारा दिये गये वैज्ञानिक पाठों से भिन्न होती है, विद्यार्थियों में स्कूल के प्रति अविश्वास की भावना प्रेरित करती है। जब बच्चे यह समझ जाते हैं कि उन्हें कही गयी बाइबिल की कहानियां विज्ञान-विरोधी मनगढ़ंत बातें हैं, तो वे अन्य अध्यापकों की "वफ़ादार" आवाज़ और शिक्षाओं में विश्वास करना बंद कर देते हैं। इसी वजह से, पाउल्सेन के विचार में, वर्ग स्कूल को, जिसका कार्य बच्चों को शासक वर्गों के हित में तैयार करना है, अपने सबसे बड़े दोष यानी धर्मग्रंथ की शिक्षा से बाज़ आना चाहिए। दूसरी ओर, एक दूसरे सुप्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री फ़ेर्स्टर[9] ज़ोर देते हैं कि धर्मग्रंथ के बिना स्कूल चलाने के सारे प्रयास विशेषाधिकार-प्राप्त वर्गों के लिए असफल हो जाते हैं। उनकी शिकायत है कि छोटे किसानों और सर्वहाराओं को किसी तरह भी आश्वस्त करना संभव नहीं है कि उन्हें अपनी उस मातृभूमि के लिए अपना ख़ून बहाना चाहिए, जिसमें वे शोषित अछूत हैं। ऐसी व्यवस्था के न्याय की बुद्धिसंगत ढंग से रक्षा नहीं की जा सकती तथा ईश्वर की इच्छा और परलोक के विचार को लाकर ही "वफ़ादार" शिक्षा दी जा सकती है यानी वस्तुतः विद्यार्थियों के मन-मस्तिष्क को विषाक्त किया जा सकता है। फ़्रांसीसियों ने, मोटे तौर पर पाउल्सेन द्वारा बताये गये कारणों की वजह से धर्मग्रंथ का परित्याग करके, इसके स्थान पर बुर्जुआ धर्मनिरपेक्ष नैतिकता क़ायम करने का प्रयास किया है। बुइसोन[10] के अनुसार, जो कि एक आमूल परिवर्तनवादी हैं न कि समाजवादी, इन नैतिकताओं की पाठ्यपुस्तकें मूर्खता की हद हैं।

इस तरह , बुर्जुआ राजनीतिक विचार दुःस्वप्नग्रस्त है: पुरोहितों से मूर्खता मिलती है, लेकिन पुरोहितों के बिना जीवित भी नहीं रह सकते ; शिक्षा वास्तव में एक अधिकाधिक कठिन मामला बनती जा रही है। सांस्कृतिक स्तर इतना ऊंचा उठ गया है कि एक छोटे जर्मन या फ़्रांसीसी को नाक पकड़ कर राह दिखाना कठिन हो गया है। वह अपनी ही आंखों से देखने लगा है और यही स्कूलों में संकट का कारण है।

यह कैसे किया जाये कि स्कूल ऐसे वफ़ादार नागरिक तैयार कर सकें, जो उस जेल के लिए निर्विवाद रूप से मर-मिटने के लिए जायें, जिसमें वे शोषित हैं? यह एक कठिन समस्या है।

लेकिन यह न सोचें कि माध्यमिक स्कूल के साथ मामला कोई बेहतर है। पश्चिम यूरोप में माध्यमिक स्कूल इस ढंग से संगठित किया गया कि इसमें प्रारंभिक स्कूल की भांति ही बच्चे पढ़ने के लिए जाने लगे, लेकिन वे केवल बुर्जुआ वर्ग के बच्चे होते थे। इस बात के लिए कि ग़रीब बच्चे उसमें न पढ़ सकें, ऊंचे शुल्क रखे गये। वे सशुल्क स्कूल हैं और शुल्क ऐसे रखे गये हैं कि मज़दूर उन्हें कैसे भी अदा नहीं कर पायेगा। कुछ निःशुल्क स्थान भी रखे जाते हैं, ताकि टुट-पुंजिया वर्ग के परिवारों के बच्चों को जगह मिल सके। यहां हम द० अ० तोलस्तोय द्वारा घोषित उस नारे को कार्यान्वित हुआ पाते हैं कि माध्यमिक स्कूल बावरचिनों के बच्चों [11] के लिए जगह नहीं है। यह नारा सारे बुर्जुआ वर्ग के लिए आम है। इन स्कूलों की मुख्य पैदावार विभिन्न सेवाओं – चाहे यह सेना या उद्योग या नौकरशाही हो – के लिए अफ़्सर हैं ; यहां ऐसे लोग हैं, जिन पर पूंजी **अपने** लोगों, **अपने कारिंदों** की भांति निर्भर कर सकती है, ताकि शेष लोगों पर शासन किया जा सके।

जब सरकार बहुत सड़ी हुई हो, जब वह समय से पीछे हो, जब वह दानवीय हो, जैसा कि वह रूस में थी, तो ऐसी सरकार यहां तक कि अपने अफ़्सरों को भी बड़े संदेह की नज़र से देखती है। जब बुद्धिजीवी हर तरह से दबाये जाते हों, जब देश को अज्ञान, बर्बरता की ऐसी अवस्था में रखा जाता हो कि एक डाक्टर अपनी जीविका नहीं कमा सकता, हालांकि कोई डाक्टर नहीं हैं, जब पत्रकार, लेखक साइबेरिया में रखे जाते हों और उन्हें लिखने की मनाही हो, हालांकि कोई पत्रकार नहीं हैं, तो यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि बुद्धिजीवी भी सरकार के ख़िलाफ़ हों। यह सामंती , ज़मींदारों की सरकार है।

माध्यमिक स्कूल में उसका अविश्वास इस तथ्य में प्रकट होता है कि मदूतमभाई ही माध्यमिक स्कूलों के निदेशक नियुक्त किये जाते हैं। विराट मूर्खता से भरी पाठ्यपुस्तकें और अन्य पुस्तकें प्रकाशित की जाती हैं तथा अधिकांश शैक्षिक संस्थान इस ढंग से संगठित किये गये हैं कि वे यहां तक कि राज्य के लिए भी किसी काम के नहीं हैं। प्रथम स्थान मृत भाषाओं को दिया जाता है। कभी मृत भाषाएं, उदाहरणार्थ लैटिन, बड़ी महत्वपूर्ण थीं। कभी कैथोलिक यूरोप में लेखक अपनी सभी पुस्तकें लैटिन में ही लिखते थे; अंग्रेज़, इतालवी और पोल सभी लैटिन में लिखते थे। यह उस ज़माने की अंतर्राष्ट्रीय भाषा थी।

आज लैटिन अपने सभी महत्व से वंचित हो गयी है। इस आशय की बातें कि यूनानी और रोमन समाजों का अध्ययन मृत भाषाओं के प्रयोग से ही किया जा सकता है, सही नहीं हैं। "क्लासिकीय" माध्यमिक स्कूलों में कहीं पृष्ठभूमि में आप संस्कृति के इतिहास को असत्यीकृत और विकृत पाते हैं, जिसे इतिहास का अध्यापक हफ़्ते में दो-तीन घंटे पढ़ाता है, जबकि व्याकरण और अपवाद रोज़ ही पढ़ाये जाते हैं — सारा ध्यान मात्र भाषा के रूप पर केन्द्रित किया जाता है।[12]

इसके लिए जो औचित्य पेश किया जाता है, वह यह है कि इससे मानो बुद्धि का विकास होता है, कि यह अच्छा है कि बच्चा कोई ऐसी चीज़ पढ़े, जो उसे उबा देती हो, कि वह कोई ऐसी चीज़ पढ़े, जो उसके लिए बिल्कुल आवश्यक नहीं है। मानो यह एक विशेष व्यायाम हो! वास्तव में, यह इसलिए किया जाता है, कि उस व्यक्ति का मस्तिष्क कुंठित हो जाये, जिसे व्याकरण की कोई ज़रूरत नहीं है, जो इसे भूल जायेगा, किंतु जिसे आज्ञाकारिता प्रदर्शित करना और उस चीज़ को सुनना और पढ़ना आवश्यक है, जो उसे सुनने और पढ़ने को कहा जाता है। माध्यमिक स्कूलों के ये बुद्धू अपनी स्कूली पोशाकों में बैठे रहते हैं, हिलने-डुलने तक का साहस नहीं करते, पूछे जाने पर ही उन्हें उत्तर देना चाहिए और बाक़ी समय ख़ामोश रहना चाहिए। पाठ यहां से यहां तक निर्धारित किये हुए होते हैं, उन्हें निर्दिष्ट चीज़ को कंठस्थ कर लेना चाहिए, सब कुछ सैनिक बैरकों की भांति आदेश-पालन पर आधारित होता है। जो ज्ञान वे माध्यमिक स्कूल में प्राप्त करते हैं, वह नगण्य होता है।

उदाहरण के लिए, विश्वविद्यालय और तकनीकी कालेज इन बच्चों की अतैयारी पर चकरा उठते थे।

"आधुनिक" माध्यमिक स्कूल में पढ़नेवाले कुछ बेहतर थे, लेकिन आपको आधुनिक स्कूलों और क्लासिकीय स्कूलों के बीच अंतर दिखाने के लिए मैं निम्नलिखित दृष्टांत पेश करूंगा। जब विल्हेल्म द्वितीय सिंहासनारूढ़ हुआ, तो आधुनिक स्कूलों के समर्थक शिक्षाशास्त्री उसके यहां गये और कहा: "हमें अच्छे व्यापारिक एजेंट चाहिए, हमें अच्छे कप्तान चाहिए, हमें अच्छे क्लर्क और इंजीनियर चाहिए। आप हमारे बच्चों के दिमाग़ यूनानी और लैटिन से क्यों भरते हैं? हम साफ़-साफ़ मांग करते हैं कि उपयोगी स्कूल दिये जायें।" और विल्हेल्म ने, जिसकी नज़रें साम्राज्यवादी उद्देश्यों पर लगी हुई थीं, जिनके परिणामस्वरूप जर्मनी अब तहस-नहस हो रहा है, उस विल्हेल्म ने भी यही दृष्टि-कोण अपनाया: उपयोगी चीज़ें पढ़ायी जानी चाहिए, क्योंकि जर्मनी को उद्योग और व्यापार के विस्तार की आवश्यकता है और युद्ध में अच्छे संगठन की ही विजय होती है।

लेकिन ज़िद्दी क्लासिकीय अध्यापकों ने उत्तर दिया: "महामहिम, आप बड़ी भूल करने जा रहे हैं। हो सकता है कि आधुनिक स्कूल आपको इस या उस क्षेत्र के विशेषज्ञ दें, लेकिन ऐसे अच्छे और वफ़ादार नागरिक तो नहीं ही दे सकते। यदि आप वास्तव में वफ़ादार नागरिक चाहते हैं, तो उन्हें तो केवल क्लासिकीय स्कूल ही देगा।"[13]

यह मामले की बिल्कुल सही प्रस्तुति है। विल्हेल्म ने सीधे उत्तर दिया कि मुझे इस बात की परवाह नहीं है कि वे अच्छे नागरिक नहीं बनेंगे, बशर्ते कि वे कुछ बुद्धिमान बन जाते हैं। आगे चल कर उसे इसके बारे में पछताना पड़ा। बाद में वह विज्ञान का इतना घोर विरोधी बन गया कि विश्वविद्यालयों से सुप्रसिद्ध प्रकृति वैज्ञानिकों को उनके राजनीतिक विचारों की वजह से निकाल दिया।

अमरीका और पश्चिमी यूरोप में बुर्जुआ स्कूल रूसी स्कूलों से कुछ बेहतर हैं। वहां बुर्जुआ वर्ग ने बुद्धिजीवियों को पक्के तौर पर ख़रीद लिया है, इसलिए ऐसे बुद्धिजीवियों को ज्ञानसंपन्न होने देने से ज़्यादा भयभीत होने का कोई कारण नहीं है। एक कुशल इंजीनियर को यह भली-भांति मालूम होता है कि जिस कंपनी में वह काम करेगा, उसमें उसके लिए स्टाक और शेयर प्राप्त करने की व्यवस्था की जायेगी,

कि अपने मालिक की ओर से वह मज़दूरों से जितना ही अधिक पैसा ऐंठेगा, उसे उतना ही ऊंचा वेतन मिलेगा और बेहतर ढंग से रहेगा। वकील, पत्रकार, डाक्टर – अधिकांश मामलों में ये ऐसे लोग हैं, जिन्हें अपने पिताओं के ज़माने में ही पक्के तौर पर ख़रीद लिया गया था, ऐसे लोग, जो बुर्जुआ वर्ग को स्वेच्छापूर्वक सहारा देनेवाली शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। रूसी सरकार के लिए शब्द **क्रांतिकारी** और **विद्यार्थी** लंबे समय तक पर्यायवाची थे। ज्योंही लोग कोई शिक्षा पाते थे, रूसी सरकार उनके विरुद्ध निरंतर संघर्ष में आ जाती थी, पर कोई शिक्षा न देना भी संभव नहीं था, क्योंकि कर्मचारियों और विशेषज्ञों की आवश्यकता थी। और रूसी सरकार इस दुविधा के शिकजे में फंस गयी थी। लेकिन ध्यान दें कि रूस में बुर्जुआ स्वतंत्रता के आते ही छात्र-समुदाय का एक भाग सर्वहारा और इसके आदर्शों के ख़िलाफ़ बुर्जुआ वर्ग की तरफ़ पाया गया। मास्को क्रांति के दौरान विद्यार्थियों ने मज़दूरों पर गोलाबारी की और वे श्वेत गार्ड के दस्तों के सर्वोत्तम अंश थे,[14] क्योंकि उनका विश्वास था कि उनके लिए सर्वहारा के बजाय बुर्जुआ वर्ग के साथ होना बेहतर होगा: "शैतान ही जानता है कि सर्वहारा के साथ क्या होगा, वे रूखे, अज्ञानी हैं, हमें किन्हीं गंवारों का हुक्म बजाना पड़ेगा, यह हमें पसंद नहीं है।"

यूरोप में माध्यमिक स्कूल अधिक बुद्धिसंगत ढंग से संगठित किये गये हैं, लेकिन तो भी, बुरे ढंग से संगठित किये गये हैं, वहां बुर्जुआ वर्ग रूढ़िवादी दृष्टिकोण से कैसे भी निजात नहीं पा सकता। अमरीका में माध्यमिक स्कूल सर्वोत्तम ढंग से चलाये जाते हैं और हमें इस बात पर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए कि कैसे अमरीकी बुर्जुआ वर्ग ने अपने बच्चों के लिए स्कूलों की व्यवस्था की है। हम अपने एकीकृत श्रम स्कूल में जो कुछ लागू कर रहे हैं, उसका बहुत कुछ अमरीका में सर्वोत्तम बुर्जुआ स्कूलों में प्रयुक्त विधियों का समाजवादी कार्यान्वयन है। मगर बुर्जुआ वर्ग शिक्षा को पूर्णतः यथार्थवादी बनाने से भयभीत है।

जब किसी विज्ञान का अध्ययन उसके अंतिम निष्कर्षों तक किया जाता है, तो प्रत्येक विज्ञान निरपवाद रूप से समाजवादी प्रवृत्तियों से भरा हुआ पाया जाता है। ये अंतिम निष्कर्ष न केवल धार्मिक विचारों को चकनाचूर कर देते हैं, बल्कि बुर्जुआ प्रणाली की रक्षा करने को

भी असंभव बना देते हैं। यदि कोई बुद्धिजीवी, सच्चा बुद्धिजीवी, ईमानदार बुद्धिजीवी, जो इन चीज़ों के बारे में नहीं सोचता कि वह कितना पैसा कमायेगा, किससे शादी करेगा, कैसे घर बनायेगा, बल्कि जो वस्तुतः अच्छा डाक्टर या अच्छा अध्यापक बनना चाहता है – यदि वह अपने को अपने विज्ञान में गंभीरतापूर्वक लगाता है और अंतिम निष्कर्ष तक जाता है, तो वह अनिवार्यतः समाजवादी बन जायेगा। वह सोचने लगेगा कि अच्छे जीवन का निर्माण कैसे किया जाये? क्या प्रत्येक विचारशील, सामाजिक ढंग से सोचनेवाले मनुष्य का स्वाभाविक उद्देश्य ऐसे सामंजस्यपूर्ण जीवन को संगठित करने के लिए दूसरों के साथ काम करना नहीं है, जिसमें मनुष्य का चहुंमुखी विकास होगा और जिसमें ये विकसित लोग समष्टि की ख़ुशहाली के लिए एक-दूसरे के साथ भ्रातृत्वपूर्ण सहयोग में रहेंगे? रूसो [15], पेस्तालोज़्ज़ी [16], हेर्बार्त [17] और फ़्रेबेल [18] जैसे महान शिक्षाशास्त्री ऐसे व्यापक आदर्श की रोशनी में इस कार्य को देखने में असफल नहीं हुए। विज्ञान ने हमेशा लोगों को समाजवादी दिशा में प्रेरित किया है, बशर्ते कि वे ईमानदार और व्यापक दृष्टिवाले लोग हों।

इंजीनियर को यह सवाल पूछना चाहिए: कम से कम समय में अधिक से अधिक उत्पादन कैसे करें? अर्थव्यवस्था का संगठन कैसे करें कि प्रतियोगिता से नुक़्सान न पहुंचे? और वह कहेगा कि सबसे पहले पूंजीवाद से छुटकारा लेना चाहिए, क्योंकि प्रतियोगिता संसाधनों की बड़ी बर्बादी है, क्योंकि टेक्नोलॉजी का मुख्य कार्य मनुष्य को उसके लिए कम से कम हानिकर परिस्थितियों में ज़्यादा से ज़्यादा उत्पादन करने तथा प्रतिष्ठानों को एक बुद्धिसंगत प्रणाली में संगठित करना है। एक ईमानदार डाक्टर महसूस करेगा कि बीमारी का इलाज प्रशामक है, कि डाक्टर के लिए सबसे महत्वपूर्ण रोग-निरोधन, सफ़ाई का कार्य है। आवश्यक यह है कि रिहायशी मकान अच्छे हों, अत्यधिक काम करने की ज़रूरत न हो, पौष्टिक आहार हो और तब लोग सौगुने अधिक स्वस्थ हो जायेंगे, लेकिन यह सब केवल समाजवाद ही दे सकता है।

ऐसा हर बुद्धिजीवी, जो अपने काम को सभी मानों में एक विशेषज्ञ के काम के रूप में मानता है, समाजवादी हुए बिना नहीं रह सकता। अतः इस बात के लिए कि वह समाजवादी न बने, उसके अंतःकरण

का हनन कर देना चाहिए, उसे अंतःकरणविहीन मनुष्य बना देना चाहिए, लेकिन यह हमेशा ही सफल नहीं हो सकता।

फलस्वरूप, अग्रणी बुद्धिजीवी अक्सर विद्रोह करते हैं और ख़ास तौर से हाल के समय में अनेकानेक सुप्रसिद्ध बुद्धिजीवी समाजवाद के पक्ष में आये हैं। दरमियानी लोग अधिक आसानी से ख़रीद लिये जाते हैं। लेकिन शुरू में एहतियात के तौर पर उन्हें बुद्धू बनाना बुरा नहीं है। अंत में, उनके लिए यह बेहतर है कि वे पूरी सच्चाई न जानें। यही सभी तरह की जालसाज़ियों और चालबाज़ियों की जड़ है। इसीलिए आप पायेंगे कि यूरोप में माध्यमिक स्कूल शिक्षा की पुरानी शैली से चिपके हुए हैं। आपको माध्यमिक स्कूल के पास कितने ही ऐसे लोग मिल जायेंगे, जो सरलतम उत्पादन प्रक्रिया तक को साफ़-साफ़ नहीं समझा पायेंगे। उनकी शिक्षा मुख्यतः साहित्यिक रही है। तकनीकी क़िस्म के माध्यमिक स्कूल विशेष ज्ञान संपन्न लोगों को तैयार करते हैं, लेकिन वे अन्य सभी मामलों में असभ्य होते हैं। उनके ग्रेजुएट को केवल व्यावसायिक जानकारी रहती है और अन्य चीज़ों के बारे में कुछ भी नहीं। ऐसे ही तो माध्यमिक स्कूल संगठित किये जाते हैं।

हम समाजवादी इस वर्ग स्कूल की जगह क्या दे सकते हैं? सबसे पहले हमें अलग-अलग प्रारंभिक (या जन) स्कूल और माध्यमिक स्कूल नहीं रखने चाहिए। सभी लड़के-लड़कियां, चाहे वे किसी भी परिवार में जन्मे हों, एकीकृत श्रम स्कूल (पहला चरण) की पहली कक्षा में जायेंगे। उनमें से प्रत्येक को चार साल का पहला चरण पूरा करने के बाद चार साल के दूसरे चरण में जाने का समान अधिकार होगा। सबके लिए एक एकीकृत स्कूल है।[19] बेशक़, यहां एक शर्त है इस बात के लिए कि हम प्रत्येक लड़के-लड़की की शिक्षा का अधिकार दे सकें, हमारे पास और स्कूल, उससे भी बहुत बड़ी संख्या में स्कूल होने चाहिए, जो अभी हमारे पास हैं। जब तक देश की अर्थव्यवस्था अपने पैरों पर नहीं खड़ी हो जाती, तब तक स्कूल अपने आदर्शों से दूर ही बना रहेगा, क्योंकि यह अर्थव्यवस्था पर निर्भर करता है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि हमें इन आदर्शों को अपने समक्ष नहीं रखना चाहिए। नहीं, हमें इस पवित्र कर्त्तव्य को अवश्य ही अपने ऊपर लेना चाहिए।

दूसरे चरण के स्कूलों के साथ तो मामला पहले चरण से भी ख़राब

है, क्योंकि यह दूसरा चरण भूतपूर्व क्लासिकीय माध्यमिक स्कूलों और भूतपूर्व "आधुनिक" स्कूलों के अनुरूप है। रूस में उनकी संख्या बहुत कम है, वे सिर्फ़ बुर्जुआ वर्ग और बुर्जुआ बुद्धिजीवियों के लिए खोले गये थे; उनकी संख्या इतनी कम है कि जबकि प्रारंभिक स्कूलों में ६० प्रतिशत बच्चे पढ़ते थे, तो इनमें केवल १० प्रतिशत से कम ही पढ़ सकते थे। हमें दूसरे चरण की स्कूल प्रणाली में दस गुनी वृद्धि करनी है और दूसरे चरण की शिक्षा के लिए प्रयोगशालाओं, भौतिकविज्ञान की कक्षाओं, आदि के अध्ययन के लिए उपकरणों, सुप्रशिक्षित अध्यापकों, आदि की ज़रूरत होती है। हमारे देश के समक्ष इतना विशाल कार्य प्रस्तुत है। इसे कई वर्षों की अवधि में ही पूरा किया जा सकता है।

तब हम इस सिद्धांत की घोषणा करते हुए क्या करेंगे कि पहले चरण के स्कूल का प्रत्येक बच्चा दूसरे चरण में जा सकता है, जबकि अभी हम यह सभी बच्चों के लिए सुनिश्चित नहीं बना सकते? हमें सबसे योग्य बच्चों को स्थानांतरित करने का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। अक्सर अधिक योग्य बच्चा वह सिद्ध होगा, जिसकी तैयारी बेहतर ढंग से हुई होगी, जिसका घरेलू वातावरण बेहतर होगा और जो किसानों तथा सर्वहाराओं के बच्चों से तेज़ी से अपने ज्ञान का विस्तार कर सकता है। इसलिए मुझे मेहनतकशों के बच्चों को तरजीह देना अत्यधिक उचित प्रतीत होता है। इसमें हम कोई जोखिम नहीं उठा रहे हैं। यह सही नहीं है कि ऐसा करके हम मंद और कम होनहार बच्चे को दूसरे चरण के स्कूल में भेजेंगे। उल्टे, किसानों और मज़दूरों के बीच ऐसे होनहार बच्चों की संख्या बहुत बड़ी है, जो इस वजह से माध्यमिक स्कूल नहीं जा सके कि उनकी परिस्थितियां बुर्जुआ बुद्धिजीवी हलक़ोंवाले बच्चों से ख़राब थीं।

हम अपने स्कूलों को एकीकृत **श्रम** स्कूल कहते हैं। इसका क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि बुर्जुआ वर्ग ने पांडित्यवादी स्कूल से "स्कूली कमरे" की शिक्षा पद्धति, यानी पुस्तक, पाठ्यपुस्तक का स्कूल विरासत में प्राप्त किया है, जिसमें अध्यापक मौखिक पाठ देता है और विद्यार्थी, जो अपनी मेज़ पर कुछ निश्चित घंटों तक बैठा रहता है, मौखिक उत्तर – ठीक-ठीक निर्धारित समय-सारिणी और रट-रट कर कंठस्थ करने का स्कूल। हम इस स्कूल को शिक्षाशास्त्रियों द्वारा बुरी तरह

में निन्दित मानते हैं। यहां तक कि सर्वोत्तम बुर्जुआ शिक्षाशास्त्री भी उसे छोड़ कर चले गये हैं।

श्रम सिद्धांत की पहली समझ इस बात में है कि बच्चे को शिक्षा के विषयों को श्रम के ज़रिये, यानी जीवंत, सक्रिय प्रक्रियाओं के ज़रिये ग्रहण करे। जब एक बच्ची गुड़िया के साथ खेलती है, तो वह गृहिणी और मां बनने की तैयारी कर रही होती है, जब एक बच्चा लड़ाई-लड़ाई खेल रहा होता है, तो वह सैनिक बनने की तैयारी कर रहा होता है। आम तौर से बच्चे अपनी कल्पना में अपने को बड़ों के रूप में सोचते हैं, आम तौर से वे ऐसे खेल खेलते हैं मानों वे स्वयं बड़े हों और खेल-खेल में वे बड़ों के रूप में जो अभ्यास करते हैं, उसे बाद में गंभीरतापूर्वक यथार्थ में उतारेंगे।

खेल स्वयंशिक्षा की एक विधि है। "स्कूली कमरे" की शिक्षा पद्धति इस तथ्य को नज़रअंदाज़ करती है। यह कहती है: बच्चा दौड़ना चाहता है – उसे चुपचाप एक जगह बैठा दीजिये; बच्चा ख़ुद ही चीज़ें बनाना चाहता है, किसी दिलचस्प चीज़ में ख़ुद लगना चाहता है – उसे लैटिन पढ़ने को बैठा दीजिये! संक्षेप में, यह बच्चे की प्रकृति के ख़िलाफ़ संघर्ष है। हमारा दृष्टिकोण इससे बिल्कुल भिन्न है। हम कहते हैं: किंडरगार्टन का संपूर्ण कार्य और स्कूल में पहले वर्षों का कार्य बच्चों को उपयोगी ढंग से खेलने में मदद करना है! नृत्य करते हुए, गाते हुए, कांट-छांट कर भिन्न-भिन्न चीज़ें बनाते हुए, माडल बनाते हुए बच्चे बहुत कुछ सीख रहे होते हैं। उनके अध्यापकों को खेलों का चयन इस ढंग से करना चाहिए कि रोज़ ही उनसे नया-नया ज्ञान मिले, रोज़ ही बच्चों को कुछ न कुछ मिले, रोज़ ही वे इस या उस छोटे हुनर को सीखने में समर्थ बनें। और यह सब कुछ दिलचस्प होना चाहिए।

पहले चरण के स्कूल में इसी प्रवृत्ति का प्राधान्य होता है, लेकिन खेल से शब्द के पूर्ण अर्थ में श्रम की ओर संक्रमण आवश्यक है। मामले को ऐसे संगठित किया जाना चाहिए कि बच्चा **खेलते हुए और इसके साथ ही श्रम करते हुए भी ज्ञान प्राप्त करे।** श्रम अंततोगत्वा तब तक आनंदप्रद होता है, जब तक यह थकान पैदा करनेवाली चरम सीमा तक नहीं जाता। अध्यापकों को बच्चों को अलग-अलग ग्रुपों में बंटने में सहायता करनी चाहिए, कामों का चयन करना चाहिए तथा उन्हें

विशेष ज्ञान अर्जन की ओर ले जाना चाहिए। अपने समक्ष सुनिश्चित उद्देश्य रखते हुए उन्हें बच्चों को काम करने और निष्कर्ष निकालने के लिए तैयार सामग्री देनी चाहिए। शिक्षा की नूतन पद्धति का सार रट-रट कर कंठस्थ करना नहीं, बल्कि सैर-सपाटों पर जाना, स्केच और माडल बनाना तथा श्रम-प्रक्रिया की वे सभी संभावनाएं हैं, जिनके माध्यम से बच्चा स्वयं अपना अनुभव बढ़ाता है।

मिसाल के लिए, ज्यामिति को लें। आप बच्चों से कहते हैं, "यह हमारा अहाता है: इसे अलग-अलग हिस्सों में बांटो। इसके एक हिस्से में क्यारियां होंगी, और दूसरे हिस्से में हमारे पशुओं के रखने का स्थान होगा, आदि, आदि। आओ हम सब मिल कर इसे करें।" और बच्चे यह सोचने और कल्पना करने लगेंगे कि अहाते को आवश्यक हिस्सों में कैसे बराबर-बराबर बांटा जा सकता है। और यहीं पर आप उन्हें भूमि के मापन की सरल विधियां दिखायें, क्योंकि समतलमिति (प्लैनीमैट्री) का अर्थ भूमापन है। इसी तरह, जब आप त्रिविममिति (स्टीरियोमैट्री) पर पहुंचते हैं, तो आप बच्चों के साथ मिल कर घन, पिरामिड और गोले बनाते हैं। बच्चा स्वयं बना रहा होता है, वह स्वयं लकड़ी के टुकड़ों से इन पिंडों को जोड़ रहा होता है, उनसे पहला परिचय प्राप्त कर रहा होता है। "इस लकड़ी के टुकड़े से एक बेलन बनाओ।" बच्चा एक टुकड़ा नष्ट करेगा, दूसरा करेगा; किसी दूसरे बच्चे को उसकी सहायता करने दीजिये।

मानचित्र से भूगोल पढ़ाने के पहले आप बच्चों के साथ बाहर जाइये और उन्हें दिखाइये कि पहाड़ी, नदी और मैदान क्या हैं, भूमि के उतार-चढ़ावों को कैसे मापा जा सकता है। बच्चों के साथ मिल कर पठार और पर्वतीय चोटी के मिट्टी के माडल बनाइये। कक्षा के बच्चे अपने इलाक़े का मिट्टी का मानचित्र और बाद में जनतंत्र के किसी भाग – उदाहरणार्थ, क्रीमिया – का मानचित्र बना सकते हैं। यही "श्रम के ज़रिये शिक्षा" कहलाता है। इस तरह से प्राप्त ज्ञान कोई नहीं भूल सकता।

उदाहरण के लिए हम एक और विधि यानी थियेटर के ज़रिये शिक्षा को लें। मिसाल के लिए, बच्चे स्कूल के किसी उत्सव के लिए अपने ही बल पर कोई प्रस्तुतीकरण तैयार करें। यह अपने आप में

भव्य पाठ है, सारे ग्रुप का श्रम कार्य है! यहां सबसे बड़ी बात इसमें है कि नाटकीकरण वस्तुतः खेल का मुख्य तत्व है। जब बच्चे गुड़ियों से खेलते हैं या चोर-सिपाही खेलते हैं, तो यह चीज़ थियेटर-प्रस्तुतीकरणों के बहुत क़रीब होती है! मान लीजिये कि हम मानव सांस्कृतिक इतिहास के आदिमकालीन काल का अध्ययन कर रहे हैं। तब हमें गरमी में एक हफ़्ते आदिमकालीन मानव की तरह जीवन-यापन करना चाहिए, जंगल में चले जाना चाहिए, चक़मक़ पत्थर से आग जलानी चाहिए, अपने हाथों अपना खाना पकाना चाहिए, आदि, आदि। पितृसत्तात्मक परिवार का अध्ययन करते समय हम ऐसा ही कर सकते हैं। आइये, ज़रा खेल-खेल में इसे करके देखें और नतीजा बहुत ही दिलचस्प होगा!

मान लें कि आप मध्यकालीन युग का अध्ययन कर रहे हैं, इसे बच्चों को स्वयं समझना है: उन्हें ऐसा काम दीजिये, उन्हें यह वर्णन करके समझाने का प्रयास कीजिये कि शिल्पसंघ के कारीगर और उसके ग्राहक के बीच अथवा पुरोहित वर्ग की भूमिका सहित राजा और उसकी प्रजा के बीच क्या संबंध था; पूरे दृश्य का वर्णन इस तरह कीजिये कि बच्चों के मन में दिलचस्पी जगे; तब ऐसे पाठ से उन्हें एक ऐसी समझ प्राप्त होगी, जिसे वे कभी नहीं भूल पायेंगे, क्योंकि उन्होंने इसकी स्वयं अनुभूति की है, यह उनके ख़ून में है।

खेल के ज़रिये इस तरह की शिक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण है।

इस सब में ड्राइंग पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। मेरा तात्पर्य सौंदर्यबोधी मांगों, कलात्मक शिक्षा से नहीं, बल्कि लिखने या बोलने की भांति संप्रेषण के एक आवश्यक साधन के रूप में ड्राइंग से है। जो ड्राइंग नहीं जानता, वह अशिक्षित होता है। अमरीका में अध्यापक को अपने पूरे पाठ को ड्राइंग के माध्यम से पढ़ाना पड़ता है। जब उससे पूछा जाता है कि केटरपिलर कैसे बनता है, तो वह उसे आपकी नज़रों के सामने खींच कर बना देता है और प्रत्येक बच्चे को यह स्वयं बनाने का प्रयास करना पड़ता है। बड़ी संख्या में श्रोताओं को संबोधित करते हुए आदमी के हाथों में पेंसिल या चाक उसके भाषण का एक और साधन होता है। अपनी बात को सचित्र समझाने में समर्थ होना चाहिए।

बच्चे दृश्य-दर्शन पर जाते हैं – उन्हें इसका चित्र बनाने दीजिये।

8–350

वहां अमुक इमारत है – उसके चित्र बनाओ। उस वृक्ष-विशेष को हमने पहली बार देखा, घर पहुंचते ही स्मृति के सहारे उसका चित्र बना डालो। अपने घर का स्केच – यह कैसे बना है, चारपाई कहां लगी है, कहां खिड़की है, आदि। ये स्केच, ये निदर्श-चित्र असाधारण रूप से महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि जीवन में अक्सर ऐसी चीज़ों की आवश्यकता पड़ेगी। यदि आपने बच्चों को यह या वह काम संगठित करने को सौंपा है, तो एक काग़ज़ लीजिये और उसके संगठन की स्कीम बना डालिये। निदर्श-चित्र के एक साधन के रूप में पेंसिल एक नितांत ज़रूरी चीज़ है।

ऐसा है स्कूल में श्रम सिद्धांत का पहला कार्यान्वयन।

इसके अलावा, श्रम स्कूल का एक और भी महत्व है। हम वैसे साहित्यिक बुद्धिजीवी नहीं पैदा कर सकते, जैसे कि पहले के माध्यमिक स्कूल किया करते थे। श्रम स्कूल को सबको काम करने की शिक्षा देनी चाहिए, यानी हमें सिर्फ़ इस बात का ही ध्यान नहीं रखना चाहिए कि **श्रम के ज़रिये** अध्ययन-विषयों की शिक्षा दी जाये, बल्कि बच्चों को स्वयं **श्रम करने** की शिक्षा दी जानी चाहिए।

यहां हम लेव तोलस्तोय के अनुयायी बुद्धिजीवियों[20] सहित, जो भी श्रम पर ध्यान केन्द्रित करने की शिक्षा देते हैं, इस विचार के अनेक समर्थक पाते हैं। इस उद्देश्य को कम्युनिस्ट अर्थ में नहीं, बल्कि तोलस्तोय के विचार में समझना आसान है। तोलस्तोय के अनुयायियों के ख़्याल में आदमी को अपना चूल्हा बनाना, अपना खाना पकाना, अपने जूते बनाना 'आना चाहिए, ताकि वह अपनी आवश्यकताओं को ख़ुद ही पूरा कर सके और जितना ही अधिक आदमी अपने इस्तेमाल की चीज़ों को ख़ुद बना सकेगा, उतनी ही कम उसे दूसरे लोगों की आवश्यकता होगी। यह तो टुटपुंजिया आदर्श है।

कम्युनिस्ट प्रणाली बड़े उद्योगों, फ़ैक्टरियों और मिलों पर आधारित है। आप, उदाहरणार्थ, पेटी या कील बनानेवाली फ़ैक्टरी में काम करनेवाले आदमी को कैसे मजबूर कर सकते हैं कि वह घर लौटने पर भी अपनी ज़रूरत की चीज़ों को ख़ुद बनाये। नहीं, हम नहीं चाहते कि उसकी पत्नी कपड़ों की धुलाई करे, हम ऐसी बड़ी लांड्री चाहते हैं, जहां सबके कपड़े धुल सकें, हम नहीं चाहते कि वह अपना खाना ख़ुद पकाये, हम सबके लिए बड़े सुसज्जित होटल बनाना चाहते हैं। कम्युनिस्ट प्रणाली सभी चीज़ों को औद्योगिक आधार प्रदान करती

है। इसका उद्देश्य हर चीज़ को स्वयं करना नहीं, बल्कि छोटे श्रम को बड़े सामाजिक संस्थानों के श्रम में रूपांतरित करना है।

बेशक, यह सब हम बच्चों को तुरंत नहीं दे सकते। बेशक, टटपूंजिया बुर्जुआ और छोटे किसान रूस में रहते हैं और वे लंबे समय तक बने रहेंगे। और किसानों की प्रवृत्ति, जहां तक वे व्यावसायिक स्कूलों के संबंध में हमसे अपेक्षाएं करते हैं, शिल्प कौशल की ओर है: "आप मेरे बच्चे को ऐसे पढ़ायें कि वह घोड़े की नालें भी बना सके और कपड़े भी बना सके।" हम नहीं कह सकते कि आज यह अनावश्यक बन गया है। हमें इस तरह का ज्ञान, ख़ास तौर से देहाती क्षेत्रों में, देना चाहिए, लेकिन हमारी मुख्य धारा इस दिशा में नहीं है और इसलिए जब श्रम स्कूल में बहुधा तोलस्तोयी "स्वयंसेवा" का लक्षण प्रदान किया जाता है, तो यह सच्चे समाजवादी विचार के बिल्कुल प्रतिकूल है।

कभी-कभी आप बच्चों से पूछते हैं कि उन्होंने पिछले वर्ष क्या पढ़ा है। वे कहते हैं: "बहुत कम, पढ़ने के लिए हमारे पास समय ही नहीं था।" "तो आप क्या करते रहे?" "हम स्वयंसेवा करते रहे, रोज़ ही हम जलाने की लकड़ी ले आते रहे, खाना बनाते रहे, सब्जियों को साफ़ करते रहे।" दरअसल, यदि बच्चा स्कूल में अंगीठी जलाता है, तो यह संभवतः स्वयंसेवा के लिए नहीं, बल्कि व्यावहारिक रूप में यह जानने के लिए किया जाना चाहिए कि दहन का क्या अर्थ है, क्यों लकड़ी जलती और ऊष्मा प्रदान करती है। हर कार्य के ज़रिये, यहां तक कि सूप तैयार करते हुए भी सारी दुनिया और इसके नियमों को स्पष्ट किया जा सकता है। लेकिन ऐसी शिक्षात्मक सामग्री हम अक्सर नहीं पाते। हमसे कहा जाता है: "कम से कम उन्होंने यह तो पढ़ा है कि कैसे श्रम करें, वे अपने हाथ गंदे करना नहीं पसंद करते थे और अब वे उससे भयभीत नहीं होते, वे धोवन आदि ले जाते हैं।" यह शुद्धतः तोलस्तोयी दृष्टिकोण है। यह कार्य एक कम्युनिस्ट जनतंत्र का सच्चा नागरिक तैयार करना नहीं, बल्कि बुद्धिजीवियों के बच्चों में शारीरिक श्रम के प्रति नफ़रत की भावना को दूर करना है।

मैंने एकीकृत श्रम स्कूल के ऐसे समर्थकों से, जो बहुत विवेकशील नहीं हैं, यह बात भी सुनी है: रूस में प्रत्येक फ़ैक्टरी को लागत से

8*

अधिक उत्पादन करना चाहिए, इसलिए स्कूल को भी अपना व्यय पूरा करना है। बच्चों से पोशाक बनाने या काष्ठकर्म का काम लिया जा सकता है, वे जो कुछ बनाते हैं उसे बाज़ार में बेचा जा सकता है या वस्तु-विनिमय के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है और तब स्कूल में कोई लागत नहीं लगेगी। यह विचार इस समझदारी से बिल्कुल ख़ाली है कि स्कूल माल नहीं, बल्कि ज्ञान-संपन्न लोग पैदा करते हैं। वे ही तो उसकी पैदावार हैं! विद्यार्थियों का ज्ञान और हुनर ही असली पैदावार हैं, बाक़ी चीज़ें एकदम गौण हैं। निस्संदेह, बच्चों को सच्चे श्रम का प्रशिक्षण-प्राप्त होना चाहिए, जो वास्तव में उपयोगी होता है। स्कूलों को लकड़ी के फ़्रेम बनाने, आदि जैसे अनावश्यक और कृत्रिम श्रम नहीं खोज निकालना चाहिए, इस तरह का श्रम व्यर्थ का होता है। हमें ऐसे श्रम के बारे में सोचना चाहिए, जो बच्चों को शैक्षिक परिणामों के साथ संपन्न कर सकें। स्कूल में श्रम का शैक्षिक औचित्य होना चाहिए, यानी यह ऐसी मात्राओं में किया जाना चाहिए, जो कि बच्चों को सीखने में समर्थ बनायें और यदि बच्चा श्रम करने के बावजूद कुछ भी प्राप्त नहीं करता, तो इसका अपराधी स्कूल है।

स्कूल में ऐसे श्रम को एक घंटे के लिए भी बने रहने का कोई अधिकार नहीं है, यदि उसके माध्यम से बच्चा अधिक जानकार और हुनरमंद नहीं बनता। इसका यह अर्थ नहीं है कि हमें पहले चरण के स्कूल के लिए श्रम के विचार की निन्दा करनी चाहिए। उल्टे, अमरीकी बिल्कुल सही ही इस विचार को विकसित कर रहे हैं कि हाथों की निपुणता को बढ़ाये जाने की आवश्यकता है। अतः यह बहुत उपयोगी है, यदि पहले चरण के स्कूल में बच्चों के पास कोई धातुकर्मशाला है, यदि उन्हें काष्ठकर्म और ख़राद में प्रशिक्षण प्राप्त होता है, यदि वे ठीक माप-तौल करके कोई चीज़ बनाते हैं। पहले चरण के स्कूल में छोटे-मोटे औज़ारों को इस्तेमाल करना बताना अच्छी बात है। यहां तक कि "स्वयंसेवा" भी सर्वोत्तम चीज़ सिद्ध हो सकती है, बशर्ते कि उसका सुदक्षतापूर्वक मार्गदर्शन किया जाये। स्कूल की इमारत में छोटे-मोटे मरम्मती काम करना या शाक-सब्ज़ी वाटिका में काम करना या छोटे जानवरों – ख़रगोशों, बकरे-बकरियों – की देखभाल करना – यह सब अत्यंत महत्वपूर्ण है, लेकिन साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे थक न जायें, बराबर अवलोकन

करते रहें और अनुभव को विस्तारित करें। हमें सिर्फ़ इस बात के लिए ही गायें नहीं पाल लेनी चाहिए कि उनसे दूध मिले – इसके कई स्थानों पर बुरे नतीजे निकले हैं – बल्कि गायों की देखभाल करने का कष्ट उठाते हुए प्राणिवैज्ञानिक, शरीरक्रियावैज्ञानिक, तकनीकी और पशुचिकित्सा संबंधी ज्ञान, आदि प्राप्त करने में बच्चों की मदद करनी चाहिए। संक्षेप में, इससे अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त किया जाना चाहिए।

जहां तक दूसरे चरण के स्कूलों का संबंध है, स्थिति बिल्कुल भिन्न है। १०–१२ साल की आयु से शुरू करके दूसरे चरण में हमें बच्चों को उनके आयु-समूह को सुलभ फ़ैक्टरी क़िस्म के वास्तविक तकनीकी, बड़े सामाजिक उत्पादन में प्रशिक्षित करना चाहिए। हमारे पाठ्यक्रम के अनुसार यह पालीतकनीकी ढंग से किया जायेगा, अर्थात हमारा उद्देश्य १२ से १६ साल तक की अवधि के अंत में प्रशिक्षित दस्तकार या सुदक्ष कर्मी, एक ऐसा कर्मी निकालना नहीं है, जो धातु-उद्योगों अथवा चर्मशोधन के एक विशेष विभाग में काम करने के पूर्णतया योग्य हो। हमारा उद्देश्य यह होना चाहिए कि १६ साल की उम्र में स्कूल पास करते समय एक लड़के को इस बात का कुछ अंदाज़ा हो कि सामान्यतया उद्योग क्या है, कि उसे फ़ैक्टरी, वाष्प चालित मशीन, डाइनेमो, लेथों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण क़िस्मों की संरचनाओं, वर्कशापों और विभागों में फ़ैक्टरी के बंटवारे का स्पष्ट ज्ञान हो, कि उसे इस बात की जानकारी हो कि भंडार और वितरण-विभाग कैसे काम करते हैं, कच्चा माल कैसे आता है, कार्यालय कैसे काम करते हैं – कि उसे इन सभी चीज़ों की बहुत अच्छी जानकारी हो। उसे फ़ैक्टरी के सभी अंगों में, चाहे हफ़्ते-हफ़्ते भर ही सही, काम का अनुभव होना चाहिए।

स्कूल के विद्यार्थी फ़ैक्टरी में आते हैं, वे ग्रुपों में बंट जाते हैं, काम करने के लिए विभिन्न वर्कशापों में जाते हैं और कुछ दिनों के बाद कार्य-स्थल बदल जाते हैं। जब बच्चे स्कूल से वापस लौटते हैं, तो रिपोर्टों और वाद-विवादों द्वारा अर्जित ज्ञान का मूल्यांकन करते हैं। फिर अध्यापक इन सबकी एक एकीकृत तसवीर पेश करता है। वह अलग-अलग विद्यार्थियों से सवाल पूछेगा तथा उनके दिमाग़ में एक फ़ैक्टरी की रूपरेखा मज़बूती से बैठ जायेगी। यदि उन्होंने एक फ़ैक्टरी के बारे में जानकारी प्राप्त कर ली है, तो दूसरी फ़ैक्टरियों

को जानना और आसान हो जायेगा। अध्यापक उन्हें बतलायेगा कि उन फ़ैक्टरियों में कौन-कौन सी चीज़ें मिलती-जुलती हैं और कौन-कौन सी चीजें तथा क्यों नहीं मिलती-जुलतीं। यह आवश्यक नहीं है कि बच्चे उत्पादन की विभिन्न क़िस्मों की बड़ी संख्या से परिचय प्राप्त करें। इतना ही काफ़ी है, यदि उन्होंने इनमें से सबसे महत्वपूर्ण क़िस्मों का परिचय प्राप्त कर लिया है। यह वांछनीय है कि आदर्शतः स्कूल पास करनेवाला हर लड़का या लड़की धातु उद्योग, सूती उद्योग, रासायनिक उद्योग के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त कर चुका हो। उन्हें उत्पादन की ये क़िस्में दिखायी जानी चाहिए।

हमारा देश पिछड़ा हुआ है, फ़ैक्टरियां और मिलें बहुत कम हैं। कुछ ऐसे भी नगर हैं, जिनमें एक भी फ़ैक्टरी या मिल नहीं है। ऐसी बहुत-सी फ़ैक्टरियां हैं, जो काम नहीं कर रही हैं। हम इस दिशा में बड़ी कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं, लेकिन मुख्य समस्या अध्यापकों के बीच प्रशिक्षण का अभाव है। यदि कई फ़ैक्टरियों को नहीं दिखाया जा सकता तो उदाहरण के तौर पर एक फ़ैक्टरी को दिखाया जा सकता है और फिर अध्ययन, बहसों तथा रेखाचित्रों की सहायता से एक फ़ैक्टरी से दूसरी फ़ैक्टरियों की भिन्नताओं को दर्शाया जा सकता है। यदि अन्य फ़ैक्टरियां नहीं हैं, तो रेलवे, इंजिनों और रेलवे वर्कशापों के अध्ययन से बड़ी सहायता मिल सकती है। छोटे नगरों में बड़े जल-पोतों, डाक और तार केन्द्रों का उपयोग किया जा सकता है। किसी भी वाष्पचालित मशीन, छापाख़ाने या बिजलीघर का उपयोग किया जा सकता है। जैसे-जैसे फ़ैक्टरियों का जाल बढ़ता जायेगा, जैसे-जैसे हम बच्चों को आवश्यक स्थानों पर ले जाने, लंबी यात्राएं संगठित करने में समर्थ होते जायेंगे, वैसे-वैसे यह समस्या सुलझती जायेगी। चार वर्षों के दौरान बच्चे बहुत-से औद्योगिक संस्थानों को देख लेंगे और उनके लिए केवल देखते जाना ही आवश्यक नहीं है, बल्कि वहां लंबी अवधि तक ठहरना भी चाहिए। तब इस पर सभी स्कूली विषयों को आधारित किया जा सकता है।

केन्द्रीय, मूल विषय है मानव संस्कृति का इतिहास – अर्थव्यवस्था के आधार पर मानव संस्कृति के सभी रूप कैसे विकसित हुए हैं। वाष्प इंजिन का अध्ययन करने में आप निदर्श-चित्रों के साथ बतलायेंगे कि यह कैसे प्रकट हुआ, इसके पहले क्या था; उद्योग से अपने परिचय

ग बच्चा जो छापें प्राप्त करता है, उनसे हर पाठ अधिक फलप्रद बन जायेगा। उद्योग एक बहुत ही समृद्ध क्षेत्र है, इसमें रसायनविज्ञान, भौतिक विज्ञान, स्वास्थ्य और सफ़ाई विज्ञान, शुद्ध आर्थिक, राजनीतिक और वर्गों से संबंधित प्रश्न शामिल हैं। अध्यापक को यदा-कदा स्वयं वर्णन करना चाहिए, वह विद्यार्थी से कहेगा, "अमुक-अमुक किताब में देखो, ख़ुद मज़दूरों से सवाल पूछो, ख़ुद हल करो।" इस प्रकार, स्वतंत्र मानसिक कार्यकलापों की सामर्थ्य विकसित होती है। बाद में आप विद्यार्थियों से रिपोर्ट पेश करवाना शुरू कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, रूस में सूती मिल के बारे में – कैसे यह प्रकट हुई, कब प्रकट हुई, उसकी संरचना क्या है। विद्यार्थी को रिपोर्ट बनाने के लिए तैयारी करनी, सामग्री जमा करनी चाहिए; आपको बस पुस्तकों में अध्ययन किये जानेवाले कुछ मुख्य सूत्रों को इंगित कर देना चाहिए, आप बता दीजिये कि उसे किनसे सवाल पूछना है। उसे स्वयं ही रिपोर्ट पढ़नी चाहिए। इसके बाद, उस पर बहस होगी।

काम की व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि छात्र को कुछ भी रट-रट कर याद न करना पड़े, बल्कि वह ख़ुद ही सब कुछ ग्रहण करे।

हाल ही में एक प्रतिभाशाली व्यक्ति ने, जो औषधीय कार्य को सुधारना चाहता है, मुझसे कहा कि यदि बच्चों से एक तालिका के अनुसार जड़ी-बूटियां जमा कराके सुखवायी जायें, तो बड़े नतीजे हासिल किये जा सकते हैं। एक समय में ही आप बच्चों को पौधे चुनने और उनके लक्षणों को समझने की शिक्षा दे रहे हैं, वनस्पति विज्ञान का एक उत्कृष्ट पाठ दे रहे हैं तथा भेषजज्ञों के लिए बड़ी मात्रा में मूल्यवान सामग्री जमा कर रहे हैं। यह एकदम सही विचार है। बच्चों को यह महसूस करने दें कि वे स्वतंत्र, उपयोगी, आवश्यक काम कर रहे हैं। बेशक, बच्चों पर उनकी क्षमता से अधिक भार नहीं डालना चाहिए, उनके काम में हाथ बंटाना नहीं चाहिए, पर उन्हें ज़रा घूम-फिर कर स्वयं ही खोजबीन करने दें। बाद में आप बता सकते हैं कि अमुक-अमुक नियम हैं, अमुक-अमुक फ़ार्मूले हैं, जिनसे तुम्हें सभी बातें स्पष्ट हो जायेंगी; अब इस नियम की दृष्टि से इस घटना-विशेष को समझने की कोशिश करो। मान लें कि आप बच्चों को हवा की धारणा देना चाहते हैं। आप बच्चों का ध्यान इस बात की ओर खींचें कि चीज़ें अलग-अलग गतियों से नीचे गिरती हैं, पत्थर तेज़ी से गिरता है और

पंख धीरे-धीरे गिरता है, जबकि हाइड्रोजन से भरा गुब्बारा ऊपर को उड़ता है – अब ज़रा सोचो कि ऐसा क्यों होता है। शायद वह कहेगा कि गुब्बारा हवा से हल्का होता है, पंख लगभग हवा जितना ही भारी होता है और पत्थर हवा से भारी होता है। शायद वह सोचेगा कि यह चीज़ों के आकार पर निर्भर करता है, लेकिन वह आपको कोई अन्य व्याख्या नहीं दे पायेगा और आपको उसका मार्गदर्शन करना होगा।

बच्चों को शुरू में खेल के माध्यम से और आगे चल कर अधिकाधिक श्रम के माध्यम से ऐसी अनेक चीज़ों का ज्ञान अर्जित करना चाहिए, जिनका पाठ्यक्रम में उल्लेख पहले से ही होना चाहिए, ताकि अध्यापक साल के अंत में यह जांच-पड़ताल कर सके कि उसने सभी आवश्यक चीज़ों को पढ़ा दिया है या नहीं। वह अपने वर्ष को कैलेंडर के चरणों के साथ छोटी अवधियों में बांट सकता है। पहले चरण की अवधि में स्कूल के बच्चों को श्रम के विशेष रूपों – काष्ठकर्म, धातुकर्म, आदि – को सीखना चाहिए। और प्रगतिशील बुर्जुआ स्कूल में चलनेवाली चीज़ें – शाक-सब्ज़ी उगाना, बाग़बानी, पशुओं की देखभाल, स्थलजीवशाला, जलजीवशाला – यह सब पहले चरण में उपयोगी हैं। दूसरे चरण में हम मुख्य ध्यान टेक्नोलॉजी पर केन्द्रित करते हैं, लेकिन हम विशेषज्ञ नहीं, बल्कि ऐसे लोग तैयार कर रहे होते हैं, जिन्हें कमोबेश सभी टेक्नोलॉजियों के बारे में ज्ञान होता है। उन्हें मालूम होता है कि आम तौर पर उद्योग क्या चीज़ है और तदनुसार वे आर्थिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से समाज की और भौतिकविज्ञान, रसायनविज्ञान तथा जीवविज्ञान के नियमों की जीवंत धारणा प्राप्त कर चुके होते हैं।

एक कृषि-प्रधान देश के नाते रूस कृषि की उपेक्षा कभी नहीं कर सकता। रूस की अधिकांश आबादी के लिए शहर आना-जाना बहुत कम होता है। हालांकि हमारी योजना में इस बात का प्रावधान है कि देहाती बच्चों को कम से कम नगरों की विस्तारित यात्राएं करनी चाहिए, लेकिन इसमें अनेकानेक कठिनाइयां पेश आयेंगी, उल्टे, शहरी बच्चे अधिक आसानी से देहातों की यात्रा कर सकते हैं। उनकी संख्या थोड़ी है और देहाती क्षेत्र विशाल है। पर देहातों में रहनेवालों के लिए श्रम स्कूल चाहे-अनचाहे औद्योगिक स्वरूप की अपेक्षा कृषि

स्वरूप ग्रहण कर लेता है। बेशक, जब तक हम प्रत्येक गांव स्कूल को कृषि-अध्ययन का एक संस्थान नहीं बना देते, तब तक अपने श्रम स्कूल का उचित ढंग से विकास नहीं कर सकते।

गांव स्कूल को कृषि स्कूल होना चाहिए। हाल ही में मैंने कम से कम १३ ज़िलों की यात्रा की है, मैं रूस और उक्राइना में था और मैंने तरह-तरह के स्कूलों को देखा है तथा किसानों से स्कूलों के बारे में बातचीत की।

कुल मिलाकर, किसान आज जिस रूप में श्रम स्कूल क़ायम है, उससे असंतुष्ट हैं, हालांकि अधिकांश मामलों में अध्यापक और अध्यापिकाएं इस विचार को यथार्थ में परिणत करने के लिए एड़ी-चोटी का पसीना एक कर रहे हैं। लेकिन स्थिति क्या है? मान लें कि किसी अध्यापिका ने ब्लोन्स्की की कोई पुस्तक या कालाश्निकोव[21] का कोई पैम्फ़लेट प्राप्त किया है, उसे उद्योग पर आधारित स्कूल के बारे में अच्छी जानकारी है, मगर कोई फ़ैक्टरियां नहीं हैं, कोई लेथ सुलभ नहीं हैं। तो वह इस सबको अमल में कैसे ला सकती है? पर उसने यह भी पढ़ा है कि संगीत-लय के साथ किया जानेवाला जिमनास्टिक अच्छी चीज़ है, कि माडलिंग अच्छी चीज़ है और ड्राइंग भी, जबकि किताबों में सिर गड़ाये रहना बुरी चीज़ है। इसलिए वह काम को ऐसे संगठित करती है कि बच्चे व्याकरण, गणित बहुत कम पढ़ते हैं और माडलिंग, ड्राइंग, नृत्य तथा गायन पर ज़्यादा समय लगाते हैं। किसान त्रस्त हैं और कहते हैं, "यही तो हो रहा है, वे देव-प्रतिमाओं को ले गये, वे अब असली चीज़ बिल्कुल नहीं पढ़ाते, उन्होंने बाइबिल पढ़ानी बंद कर दी, अब वे सारा समय नाचने-गाने में लगाते हैं। पुराने ज़माने में अच्छा होता था – यदि बच्चे ज़रा भी गुस्ताख़ी करते थे, तो मास्टर जी उनकी अच्छी-ख़ासी पिटाई कर देते थे, पर अब तो हाल इतना तंग हो गया है कि अगर मैं अपने लड़के पर हाथ उठाऊं, तो वह कहेगा, 'बापू, सोवियत सत्ता के अंतर्गत इसकी मनाही है!' यह बिल्कुल व्यर्थ सिद्ध होगा, इससे हमें कोई फ़ायदा नहीं होगा। हमें इस तरह के स्कूल की ज़रूरत नहीं है और हम उस अध्यापिका का भरण-पोषण नहीं करेंगे।"

अपनी राय में किसान सही है। उसका ख़्याल है कि पुराने ज़माने की तरह ही बच्चों से कवायद कराना, उनकी पिटाई करना तथा उनके

मन में ईश्वर के प्रति भय बैठाना, लिखना-पढ़ना सिखाना आवश्यक है और बाक़ी चीज़ें एकदम अनावश्यक हैं। ये बुरे विचार हैं, मगर अंततोगत्वा यह भी सही है कि देहाती क्षेत्रों में सौंदर्यबोधी शिक्षा गौण चीज़ है। जब मैं एक स्कूल में गया और देखा कि सभी दीवारें बच्चों के चित्रों से ढंकी हुई हैं तथा महसूस किया कि इस पर बहुत ज़्यादा समय लगाया गया है, तो मैं समझ गया कि इसने अवश्य ही किसानों पर निराशाकारी प्रभाव डाला होगा। मुश्किल यह है कि अध्यापिका को खेतीबारी और प्रकृति के बारे में बहुत कम जानकारी है तथा इसलिए वह बच्चों को इनके बारे में ज़्यादा नहीं पढ़ा सकती। उसे, जैसा किसान कहते हैं, हेंगे और फावड़े में अंतर तक नहीं मालूम है और अतएव वे स्कूल के प्रति आदर भाव नहीं रख सकते।

इसके साथ ही, रूसी किसानों को ख़ुद ही खेतीबारी के मामले में बहुत अच्छी जानकारी नहीं है; यदि रूसी किसान उस ढंग से खेती करें, जिस ढंग से जर्मनी में होती है, तो हम इस समय रूस में बड़ी से बड़ी फ़सल से भी छः गुनी ज़्यादा फ़सल बटोरेंगे। और यदि आजकल अमरीका में प्रयुक्त वैज्ञानिक विधियों को काम में लाया जाये, तो यह नहीं कहा जा सकता कि कितनी बड़ी फ़सलें बटोरी जा सकेंगी, क्योंकि अमरीकियों ने खेतीबारी को ऐसे संगठित किया है कि उन्हें न तो धूप की ज़रूरत है, न बारिश की। उन्होंने बुरी फ़सल के बारे में सभी धारणाओं को समूल नष्ट कर दिया है। वे तय करते हैं कि अनाज की लंबाई कितनी होनी चाहिए, विभिन्न क़िस्मों के गेहूं की बालियों में कितने-कितने दाने होने चाहिए, वे विभिन्न पदार्थों को मिला कर या सूक्ष्मजीवों को समाविष्ट करके मिट्टी के गुणों को बदल देते हैं तथा अच्छी फ़सल को सुनिश्चित करने में सच्चे चमत्कार कर रहे हैं। उनकी तुलना में हमारे किसान वास्तव में बर्बर हैं, पर यदि हमारे स्कूल उन्हें इस मामले में सहायता करें, तो वे स्कूलों के प्रति आदर-भाव रखने लगेंगे।

रूसी कृषि-विज्ञान को अपने संस्पर्शकों को अध्यापकों तथा बच्चों के माध्यम से किसानों तक फैलना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए हम आजकल अपने शरदकालीन और वंसतकालीन अभियान संगठित करने की भरसक कोशिश कर रहे हैं, जिनके दौरान बच्चे अध्यापकों के मार्गदर्शन में खेतों में कार्य में भाग लेंगे और साथ ही साथ प्राकृतिक

विज्ञान तथा कृषि में पाठ प्राप्त करेंगे। हमें ऐसे लघु कोर्सों के लिए अध्यापकों को जमा करना आवश्यक है, जिनमें कृषिविज्ञानी व्याख्यान देंगे। बेशक, पहले वर्ष में हम बहुत अधिक नहीं कर सकते, लेकिन कुछ वर्षों में हम ग्रामीण क्षेत्र के हर अध्यापक को कृषि-विज्ञान का मूलभूत ज्ञान प्रदान करने, उसे कृषि संबंधी पत्र-पत्रिकाएं उपलब्ध कराने तथा पुस्तकालय बनाने में सफल होंगे और वे किसानों को नयी क़िस्म के कृषि-उपकरणों, उनकी मरम्मत के बारे में बताने तथा उर्वरकों के युक्तिसंगत प्रयोग पर सलाह-मशविरा देने में वास्तव में समर्थ होंगे। संपूर्ण कृषक अर्थव्यवस्था को बदलना, इसे एक नये स्तर पर उठाना – यही तो कृषि जन-कमिसारियत का कार्य है; पर यदि स्कूल अयुक्ति-संगत कृषि अर्थव्यवस्था में इस प्रकार के ज्ञान को प्रयोग में ला सकें, तो किसानों में स्कूल के प्रति सम्मान-भावना जगेगी। हमने इस आशय के आदेश जारी किये हैं कि प्रत्येक स्कूल के पास ज़मीन का एक टुकड़ा होना चाहिए। यह आवश्यक है कि अध्यापक इस ज़मीन के टुकड़े पर धीरे-धीरे एक आदर्श फलोद्यान, आदर्श मधुवाटिका और संभव हो तो, एक आदर्श खेत विकसित करे।

यहां राजनीतिक प्रश्न का ज़िक्र भी उचित है। जैसा कि आठवीं पार्टी कांग्रेस के प्रस्ताव में कहा गया है, स्कूल को ज्ञान, श्रम शिक्षा और नागरिक शिक्षा का स्रोत होना चाहिए।[22]

प्रत्येक गांव स्कूल को न केवल बच्चों, बल्कि वयस्कों के लिए भी शिक्षा का केन्द्र होना चाहिए अर्थात प्रत्येक स्कूल के पास – यह हमारा उद्देश्य है – एक छोटी पुस्तक-दुकान, एक पुस्तकालय-वाचनालय और एक छोटा बहिस्कूली केन्द्र होना चाहिए, जहां वयस्कों के लिए व्याख्यान दिये जा सकें।

स्कूल को प्रचार का केन्द्र, आंदोलन का केन्द्र होना चाहिए। स्कूल प्रणाली तथा बहिस्कूली शिक्षा के एक अंग के रूप में इसे पुरोहितों के काम को नाकाम करने, धार्मिक पूर्वाग्रहों को नष्ट करने, कुलकों की शक्ति से संघर्ष करने, सामाजिक-क्रांतिकारियों सहित सभी तरह के पूर्वाग्रहों से लड़ने; कम्युनिस्ट प्रणाली क्या है, सोवियत जनतंत्र क्या है, क्रांति क्या है, यह कैसे हुई, इसके उद्देश्य क्या हैं – इस सबकी किसानों के समक्ष सही समझ पेश करने; अख़बारों का प्रयोग करने, इस प्रचार को निरंतर चलाने के लिए बच्चों से

माता-पिताओं और सीधे माता-पिताओं तक दैनिक सूचनाओं का प्रयोग करने की कोशिश करनी चाहिए।

और तब हमारे अध्यापक, जिनके अंतर्गत बेशक ५०–६० बच्चे नहीं, बल्कि अधिक से अधिक २५ बच्चे होने चाहिए, ग्रामीण क्षेत्रों में प्रबोधन के वाहक बन जायेंगे। और हमें यह संदेह के साथ नहीं कहना चाहिए: यह एक दिन ऐसा होकर रहेगा। अब समय आ गया है कि हमें इसे कर डालना चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण बात हमारे उद्देश्यों को सही ढंग से निश्चित करना है।

राज्य हमारे हाथों में है। जी हां, हम अपने दुश्मनों को पराजित कर रहे हैं, हम तुरंत ही तो नहीं, लेकिन धीरे-धीरे अपनी आर्थिक समस्याओं को निपटा लेंगे। वह समय आयेगा, जब शिक्षा का मोर्चा सबसे महत्वपूर्ण मोर्चा बन जायेगा, जब नारा होगा – सब कुछ शिक्षा के लिए, – तब हम आगे बढ़ेंगे और जो कुछ मैंने कहा है, वह यथार्थ बन जायेगा।

कुछ लोग ऐसे हैं, जो कहते हैं कि ढाई साल से हम पागलों की तरह संघर्ष करते रहे हैं, लेकिन अब तक कुछ नहीं किया गया है। पर सब कुछ तुरंत ही नहीं किया जा सकता, यहां कई चरणों से हो कर गुज़रना आवश्यक है। और अब यह कहना कि यथार्थवादी होना तथा पुराने स्कूल की ओर वापस लौट चलना बेहतर होगा – यह तो सबसे बड़ी भूल है।

हम अपने कम्युनिस्ट आदर्शों से मुंह नहीं मोड़ सकते, भले ही उनकी सिद्धि बहुत कठिन क्यों न हो। किसान तथा मज़दूर भली-भांति जानते हैं कि चुटकियों में कुछ नहीं हो सकता। जब काम बड़ा हो – विशाल भवन बनाना – तो बड़े श्रम और धैर्य की आवश्यकता होती है और यह शिकायत नहीं करनी चाहिए कि छत तो बनी ही नहीं, जबकि हम अभी आधारशिला रखनी ही शुरू कर रहे हैं।

एकीकृत श्रम स्कूल पश्चिमी यूरोप के अच्छे से अच्छे स्कूलों से भी भिन्न है। जब हमारी 'एकीकृत श्रम स्कूल पर घोषणा' को विदेशी भाषाओं में अनूदित किया गया, तो एक घोर बुर्जुआ अखबार *Norddeutscher Allgemeine Zeitung* ने लिखा: 'पहली बार सरकार वास्तव में जन-स्कूल के लिए कार्यक्रम बना रही है। यदि बोल्शेविक इसे प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं, तो बेशक उनके पास

किसी भी अन्य देश से अतुलनीय रूप से ऊंचा स्कूल होगा ... पर यह, बेशक, कपोल-कल्पना, बेशक, यूटोपिया है – वे इसे नहीं कर सकते ... ''

उस समय बुर्जुआ लोगों ने सोचा कि सामान्यतया रूसी क्रांति मात्र एक घटना, एक प्रयोग है। केवल अब ही वे बोल्शेविक ख़तरे के बारे में शोरगुल मचाने लगे हैं, अब वे सोचते हैं कि यह एक प्रयोग नहीं, बल्कि एक ऐसा विश्वव्यापी तूफ़ान है, जो उन्हें नष्ट कर सकता है।

सर्वहारा राज्य को कैसे स्कूल की ज़रूरत है?

जब इस वाद-विवाद के विषय की घोषणा की गयी, तो कुछ साथियों ने मुझसे कहा: "क्या 'सर्वहारा को कैसे स्कूल की ज़रूरत है?' विषय पर वाद-विवाद होने जा रहा है?" यहां निरूपण में थोड़ा-सा अंतर प्रतीत होता है यानी सर्वहारा राज्य की जगह सर्वहारा। मैं इन्हें विचार की दो भिन्न धारणाएं नहीं कह सकता, लेकिन फिर भी, हाल में कुछ विचलन जैसी ऐसी ग़लती शुरू हो गयी, जिस पर हमें शुरू से ही ध्यान देना चाहिए, ताकि उन कुछ परंतु मूल थीसिसों को स्पष्ट किया जा सके, जिनका विवेचन मैं आपके समक्ष करने जा रहा हूं।

हाल में कुछ व्याख्यानों में, इन व्याख्यानों की कुछ व्याख्याओं में, कुछ प्रस्तावों तथा रिपोर्टों में, उदाहरणार्थ कोम्सोमोल की कांग्रेस[1] में, इस विचार की झलक देखने को मिली है कि सबसे पहले और संभवतः **अनन्य रूप से** (प्राप्त सीमित संसाधनों को ध्यान में रखते हुए) सर्वहाराओं के लिए स्कूलों पर ध्यान दिया जाना चाहिए और कि उस वर्ग के हाथों में शिक्षा के एकाधिकार का विचार, जो अब मार्ग-दर्शक और अधिनायक है, शायद हमारे देश के लिए सबसे किफ़ा-यती और बुद्धिसंगत शिक्षा नीति हो सकती है।

मैं दुहराता हूं कि मैं ऐसा एक भी नाम नहीं ले सकता, ऐसे एक भी ग्रुप को इंगित नहीं कर सकता, जो इस दृष्टिकोण का समर्थक हो। इस व्याख्या पर, इस निरूपण पर सिर्फ़ थोड़ा-सा विचलन, एक संकेत है, जिसकी शुरू से ही एक अपधर्म के रूप में निन्दा की जानी चाहिए, एक ऐसा अपधर्म, जो, हो सकता है, बहुत सम्मान्य भावनाओं और बुद्धिसंगत विचारों से उत्पन्न हुआ हो, पर ती भी, यह एक असंदिग्ध अपधर्म तथा शिक्षा समस्या के सही वक्तव्य से विचलन ही है।

यदि अब कोई यह दृष्टिकोण, यह सिद्धांत विकसित करे और

कहे : आपके पास मुट्ठी भर अच्छे अध्यापक हैं, आपके पास स्कूल के लिए बहुत कम सच्चे साधन हैं, आप जानते हैं कि आप जिस श्रम स्कूल का सपना देखते हैं, उसका निर्माण फ़ैक्टरियों और मिलों के साथ गहन आंगिक संपर्कों में ही किया जा सकता है, और आपके पास लाखों-लाख सर्वहारा बच्चे तथा नौजवान हैं, जिनमें से सभी के लिए अभी सामान्य शिक्षा की व्यवस्था नहीं है – आप अपनी सारी शक्तियों को इस हरावल पर संकेन्द्रित क्यों नहीं करते, हमारा स्थान ग्रहण करने आ रही युवा पीढ़ी आपका संपूर्ण ध्यान तथा आप द्वारा उपलब्ध किये जा रहे संपूर्ण साधनों को क्यों न प्राप्त करे? यदि कोई अब इन रूपों में समस्या का निरूपण करे, तो वह ऐसी भूल कर रहा होगा, जिसे शायद युद्ध के दौरान हमारी स्थिति के विशेष लक्षणों द्वारा उचित ठहराया जा सकता था, पर जो आज हमारे राजनीतिक विचार की मूल धारा के विरुद्ध होगी।

अगर आप उस नारे पर ग़ौर करें, जिसे व्लादीमिर इल्यीच ने एक साल पहले पार्टी कांग्रेस में एक समस्या के रूप में पेश किया था और जिसे एक साल से अधिक समय के बाद लेनिन ने तीसरे इंटर-नेशनल की चौथी कांग्रेस में पुनः उल्लेख किया था[2] (परंतु इस बार पूर्ववर्ती असवर पर निर्धारित नीति द्वारा प्राप्त महत्वपूर्ण सफलता के एक बयान के रूप में), तो आप देखेंगे कि उस नीति का आंतरिक अर्थ निम्नलिखित में है।

बाह्यतः और संक्षिप्त रूप में निरूपित यह किसानों के साथ सहबंध, ऐसी अग्रगति है, जो हो सकता है धीमी हो, पर जो उतनी ही अधिक अजेय होगी, जितना अधिक आबादी का मुख्य मेहनतकश हिस्सा – किसान – रूसी जनता के हरावल – सर्वहारा – का अनुसरण करेगा। और अगर हम इस निरूपण को आगे विकसित तथा प्रतिपादित करें, तो सर्वहारा का कार्यभार इसमें है कि वह देश में विद्यमान तत्वों मे ही अपना सर्वहारा राज्य बनाये, उनमें से प्रत्येक को अपना उचित स्थान प्रदान करे, उनमें से प्रत्येक का सामान्य उद्देश्य के लिए उपयोग करे। शेष जनता से सर्वहारा का अलगाव, शेष आबादी से उसका अलगाव, सर्वहारा का एक विशेष शिविर में रूपांतरण, भले ही संगठन के स्तर तथा अपने उद्देश्यों की स्पष्टता की दृष्टि से यह शेष आबादी से विकसित शिविर क्यों न हो, – ऐसा अलगाव एक घोर अनर्थपूर्ण नीति

होगा। केवल सर्वहारा सरकार द्वारा संपूर्ण देश, संपूर्ण अर्थव्यवस्था, बेशक सबसे पहले, रूसी आर्थिक जीवन तथा हमारी जनता के आगे विकास के मूलाधार – किसान – के प्रति चहुंमुखी देखभाल – केवल यही वास्तव में सही तथा गहन सर्वहारा नीति होगी।

इसलिए, बेशक, आज़ जिस विषय पर बहस हो रही है, उसे हमें सही रूप में सर्वहारा **राज्य** के लिए, अर्थात उस सर्वहारा विचार-धारा की भावना में सर्वहारा द्वारा मार्गदर्शित राज्य के लिए सर्वोत्तम स्कूल की समस्या के रूप में रखना चाहिए, जिसका उद्देश्य वर्गों का पूर्ण विनाश है और जो शोषकों तथा प्रतिक्रियावादियों को छोड़ कर सबको लाभ पहुंचाती है।

आज, क्रांति के पांचवें वर्ष में, मैं शिक्षा के क्षेत्र में कमोबेश क्रांतिकारी, मार्क्सवादी आदर्शों के अनुरूप उचित शैली में बोल सका। सर्वहारा राज्य को कैसे स्कूल की ज़रूरत है?.. चूंकि हम सर्वहारा **राज्य** के स्कूल के बारे में चर्चा कर रहे हैं, इसलिए हम संक्रमणकालीन अवधि के स्कूल की चर्चा कर रहे हैं।

परंतु क्रांति के शुरू में जारी की गयी घोषणा में भी हमने क्रांति-कारी यूटोपिया को इन्कार किया। सामान्य आदर्श पथप्रदर्शक तारा की तरह होते हैं; सर्वोत्तम स्कूल के बारे में वे विचार, जिनकी हम हमारे सर्वश्रेष्ठ शिक्षाशास्त्रीय सिद्धांतों के पूर्ण कार्यान्वयन के तहत कल्पना कर सकते हैं, कुछ महत्व रख सकते हैं। बहरहाल, हम उस समय घोषणा में एक ऐसे स्कूल की कल्पना कर रहे थे, जो हमारे सर्वश्रेष्ठ, आदर्श संस्थानों में व्यवहार में कार्यान्वित हो सके या जो निकट आगामी वर्षों में प्राप्त करने योग्य प्रतीत हुआ। आज इस दृष्टिकोण से भी प्रश्न को पेश करना मुश्किल से ही व्यावहारिक होगा। शिक्षा की हमारी आदर्श योजना की मूल भावनाओं को दुहराना कठिन नहीं है, लेकिन यह मुश्किल से ही उपयोगी होगा।

जब हम कहते हैं कि "सर्वहारा राज्य को कैसे स्कूल की ज़रूरत है?" तो हम तुरंत ही इसके मुक़ाबले में एक और निरूपण रख सकते हैं – "सर्वहारा रूस में कैसा स्कूल संभव है?" और हमें इन दो प्रश्नों के बीच किसी तरह के समन्वय, किसी तरह के मध्यस्थ की तलाश करनी चाहिए। क्योंकि अगर हमारा झुकाव बहुत ज़्यादा अवसरवादी होने की ओर हुआ, अगर हमने संभावनाओं यानी आसानी से अमल में

लाये जानेवाले कार्यों पर बहुत ज़्यादा ध्यान दिया, तो हम अपने आदर्शों के व्यावहारिक कार्यान्वयन के उन तरीक़ों को भी त्याग करते हुए पा सकेंगे, जो सामान्यतः अधिकतम क्रांतिकारी जोश के तहत अप्राप्य नहीं हैं।

इसके साथ ही, उस अधिकतम क्रांतिकारी जोश पर भरोसा करते हुए, जो वास्तव में सामान्य परिमाण में हमारे पास है, पर जो, सही ही, केवल छोटे अंश में स्कूल के हिस्से में आ रहा है (हालांकि हम इस संबंध में बेहतर चीज़ों की आशा कर रहे हैं), इस पर भरोसा करते हुए हमें अपने समक्ष कार्यभार को इस रूप में नहीं रखना चाहिए: अगर कम्युनिज़्म में संक्रमण के रूप में कहीं एक कमोबेश पूर्ण सर्वहारा राज्य हो, तो इसके लिए कैसा स्कूल सबसे उपयुक्त होगा? हमें अब अपने समक्ष यह सीधा कार्यभार रखना चाहिए: हम अपने निर्धन, अपने उपेक्षित शैक्षिक मामले में जिस पथ पर और जिस ओर चलते हैं, उस पथ पर हमें कौन-सा मील का पत्थर, कौन-सा **निकटवर्ती** मील का पत्थर रखना चाहिए, ताकि उस पर अग्रसर होते हुए हम कम्युनिस्ट शिक्षाशास्त्र के उन आदर्शों तक पहुंच सकें, जो अब भी हमारे लिए अडिग, पहले जैसे प्रिय और असंदिग्ध हैं?

यदि हम इस पर राजकीय पैमाने पर, न कि विशुद्धतः वर्ग पैमाने पर बहस करने जा रहे हैं, तो सबसे पहले हमारे मन में यह बात साफ़ हो जानी चाहिए कि सर्वहारा राज्य को कैसी स्कूल प्रणाली को अंगीकार करना चाहिए तथा उसके लिए संघर्ष करना चाहिए। इस संबंध में क्या हम अपनी पूर्व-निर्धारित योजना में कोई मूलभूत परिवर्तन कर सकते हैं, उस योजना के कौन-से पहलू अमल आने में असंभव सिद्ध हुए हैं, किन मुद्दों पर संदेह उठे हैं?

आप याद करें कि यह योजना क्या थी। यह एकीकृत श्रम पाली-तकनीकी स्कूल की स्थापना की योजना थी। अपनी धारणा में स्कूल का एकीकरण, जैसा कि कम्युनिस्ट इसे समझते हैं, इसमें है कि निम्न वर्गों के मेहनतकशों के लिए वर्ग स्कूल और मध्यम तथा उच्च वर्गों के लिए विशेषाधिकार-प्राप्त स्कूल के बीच अलगाव का ख़ात्मा कर दिया जाना चाहिए। क़ानूनी अर्थ में, शिक्षा के उस स्तर के अर्थ में, जिसका प्रत्येक बच्चे को अधिकार है, समूची आबादी के लिए स्कूल एक ही होना चाहिए।

गड्डमड्ड न करें, जैसाकि शिक्षाशास्त्र से थोड़ा-बहुत परिचित कतिपय कम्युनिस्टों ने भी सम्मानित सोवियत अख़बारों के पृष्ठों पर किया है – "एकीकृत" शब्द को "एकरूप" शब्द से गड्डमड्ड न करें, क्योंकि एकीकरण उस क्षेत्र की विशिष्ट परिस्थितियों के प्रति स्कूल के समायोजन के अभाव की तनिक भी कल्पना नहीं करता, जिसमें वह विकसित हो रहा होता है। स्कूल विभिन्न शिक्षाशास्त्रीय प्रयोगों तथा विशेष प्रतिभाशाली बच्चों के समूहों के प्रति दिये जानेवाले अलग-अलग ज़ोरों के संबंध में परिवर्तनशील है और बच्चों के विकास के विशिष्टीकरण की भी अनुमति देता है। विभिन्न स्कूलों के भीतर, क्षेत्र-विशेष की स्कूल-प्रणाली के भीतर तथा संपूर्ण देश के स्कूलों के भीतर एक-दूसरे से भिन्न इन सभी रूपों को हम न केवल अंगीकार करते हैं, बल्कि अधिकतम उपयोगी भी मानते हैं।

लेकिन अब मैं इंगित करूंगा कि इस संबंध में शिक्षा जन-कमिसारियत ने लंबे समय तक उलटी दिशा में एक भूल की। उसने लंबे समय तक विश्वास किया कि प्रांतों और ज़िलों में अध्यापक तथा स्कूलों के प्रबंध-कर्ता अपनी विद्यमान परिस्थितियों से निर्धारित सामान्य विचारों का ताल-मेल बैठाने में **स्वयं** समर्थ होंगे। और हमारे सरकारी पाठ्य-क्रमों में शायद जानबूझकर हमने तफ़सील में तैयार की गयी काफ़ी सामग्री नहीं दी। यह सच है कि इलाक़ों में इस संबंध में कुछ रचनात्मक कार्य, पाठ्यक्रम संबंधी कार्य हुआ और हमारे पास रूस के विभिन्न स्थानों से आये ऐसे अनेक पाठ्यक्रम थे, जो संतोषजनक थे तथा शायद कुछ बहुत अच्छे भी थे। पर अब हम स्पष्टत: देखते हैं कि यहां हमने संभवत: अत्यधिक विकेन्द्रीयकरण की दिशा में ज़रूरत से ज़्यादा आगे बढ़ गये। अब हम इस विचार पर आ रहे हैं कि हमें अपने विभागीय पाठ्यक्रमों को और दृढ़ बनाना चाहिए तथा उनके वास्तविक अमल पर अधिक मज़बूती से ज़ोर देना चाहिए यानी हमें दृढ़तापूर्वक और स्पष्ट रूप से एक निश्चित न्यूनतम कार्यक्रम, बच्चों की शिक्षा में राज्य की मूलभूत मांगों का एक निश्चित ढांचा निर्धारित करना चाहिए।[3]

स्कूल का यह एकीकरण, जिसके बारे में मैंने अभी-अभी चर्चा की, रूस में किस सीमा तक a priori* प्राप्त किया जा सकता

---

* प्रागनुभविक ढंग से। – **सं०**

है? हम बेशक, माध्यमिक स्कूल की निचली कक्षाओं को पहले चरण के सोवियत स्कूल घोषित कर सकते थे और उन्हें गांव स्कूलों के साथ एक वैध स्तर पर रख सकते थे। हम उनसे माध्यमिक स्कूलों की ऊपरी कक्षाओं को अलग कर सकते थे और उन्हें दूसरे चरण के ऐसे स्कूल घोषित कर सकते थे, जो पहले चरण के स्कूल को पूरा करनेवाले सभी लोगों के लिए सुलभ हों। लेकिन निस्संदेह, हमने अपनी आंखें इतनी नहीं मूंद ली थीं कि यह न देख पायें कि यह परिवर्तन अब भी एकीकरण नहीं है।

यहां तक कि एकीकरण की थोड़ी-बहुत सफल स्थापना ने भी (देश में प्रारंभिक स्कूलों की संख्या और दूसरे चरण के उन स्कूलों की संख्या के बीच बड़े अंतर के तहत, जिनका निर्माण उपर्युक्त तरीक़े से किया जा सकता था) मांग की कि दूसरे चरण के स्कूलों में प्रवेश के संबंध में भौतिक सुअवसरों की समानता की कुछ गारंटी होनी चाहिए, ताकि उनमें सिर्फ़ ऐसे अत्यधिक प्रतिभाशाली बच्चे ही प्रवेश पा सकें, जिनकी शिक्षा का जारी रहना बेशक उनसे कहीं अधिक मूल्यवान होगा, जिनकी शिक्षा को हमें विवशतः प्रारंभिक स्कूल पर ही रोक देना चाहिए।

आप जानते हैं कि यदि हम मोटे आंकड़े लें, तो हमारे पास पहले चरण के स्कूल केवल आधे बच्चों के लिए ही काफ़ी हैं तथा दूसरे चरण के स्कूलों की संख्या ५–६ प्रतिशत बच्चों के लिए मुश्किल से ही पर्याप्त होगी। अतः यह स्पष्ट है कि मोटे तौर पर पहले चरण के स्कूल को पूरा करनेवाले १० में से ९ बच्चे दूसरे चरण के स्कूल में स्थान नहीं पा सकते। और यह चीज़ शहरी आबादी की अपेक्षा देहाती आबादी के लिए अत्यधिक अलाभकर है, जो स्कूल-प्रणाली के थोड़े-बहुत सफल एकीकरण को भी नष्ट कर देती है। बात साफ़ है कि किसान परिवार के बच्चे को अधिकांश मामलों में अपनी प्रतिभाओं के बावजूद सोवियत रूस में स्कूलों में यथासंभव बेहतर परिस्थितियों के तहत भी क्रांति के बाद कुछ दशकों के दौरान शहरी बच्चे की तुलना में दूसरे चरण के स्कूल में जाने का बहुत कम सुअवसर मिलेगा। [4]

जहां तक एकीकृत स्कूल के आदर्श के कार्यान्वयन की असफलता के संबंध में अक्सर लगाये जानेवाले इस आरोप का सवाल है कि अब भी हमारे दूसरे चरण के स्कूल मेहनतकश आबादी के बच्चों की अपेक्षा विशेषाधिकार-प्राप्त परिवारों के बच्चों का बहुत बड़ा प्रतिशत लेते

हैं, तो यह आरोप बिल्कुल उचित नहीं है। इसका एक आंशिक स्पष्टीकरण यह है कि हम बेशक स्कूल पूरा करनेवालों को स्कूल से बाहर निकालने और उनके स्थान पर जैसे-तैसे ऐसे अतैयार बालकों को भर्ती करने में बिल्कुल ग़लत होंगे, जिन्हें हमने जैसे-तैसे कहीं से इकट्ठा कर लिया है। निस्संदेह, यह असंभव होगा। मगर पिछले पांच सालों में दूसरे चरण के स्कूलों का जनवादीकरण और नगरों में उन स्कूलों के सर्वहाराकरण की प्रक्रिया काफ़ी आगे बढ़ी है। बेशक, यह अभी तक उतनी आगे नहीं बढ़ी है, जितनी कि इसे बढ़ना चाहिए। हमारे पास अभी सुनिश्चित आंकड़े नहीं हैं, लेकिन यदि हम सामाजिक स्रोतों पर विस्तृत प्रश्नावली तैयार कर सकें (जिसे मैं शिक्षाशास्त्रीय दृष्टिकोण से विशेष उपयोगी नहीं मानता और जिससे मैं परहेज़ ही करूंगा), यदि हम यह तैयार कर सकें, तो शायद यह मालूम होगा कि दूसरे चरण के स्कूलों में आबादी के विभिन्न संस्तरों का प्रतिशत शहरी आबादी के भीतर विशेष सामाजिक समूहों के सामान्य प्रतिशत के बिल्कुल अनुरूप नहीं है। पर तो भी, यहां वर्तमान स्थिति तथा क्रांति-पूर्व स्थिति के बीच बड़ा अंतर है।

इस तरह, इस संबंध में एकीकृत स्कूल क़ानूनी बाधाओं को तोड़ने तथा दूसरे चरण के स्कूलों के जनवादीकरण की दिशा में आगे बढ़ने के अर्थ में एक सुनिश्चित प्रगति है। पर अब भी यह एक चालू प्रक्रिया है, और बेशक इसे कुछ प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है।

इस बाहरी क़ानूनी सुधार और उन सुधारों या उस क्रांति के बीच में, जो स्वयं स्कूलों की आंतरिक गतिविधियों में घटनी चाहिए थी और जो पालीतकनीकी श्रम शिक्षा के सिद्धांत से उत्पन्न होती है, ऐसे सुधारों का एक क्षेत्र पड़ा है, जिन्हें स्कूल के मौलिक रूपांतरण के बिना पूरा करना कठिन नहीं होगा। जैसे, प्रत्यक्षतः पंडिताऊ विषयों से स्कूलों को मुक्त करना, जो अधिकांश नौजवानों के लिए मृत भाषाएं रही हैं और हैं। इसके बाद लड़कों और लड़कियों की अलग-अलग शिक्षा-प्रणाली को तोड़ना, जो मूर्खतापूर्ण, शिक्षाशास्त्रीय रूप से नुक़्सानदेह तथा विगत की एक विरासत है; प्रत्यक्षतः विद्यार्थियों द्वारा बुद्धिसंगत स्कूली स्वशासन की दिशा में भी कुछ प्रगति प्राप्त की गयी है। लगभग समूचे रूस में प्रत्यक्षतः पंडिताऊ विषयों से मुक्ति

हुई है और कुछ अपवादों को छोड़कर लगभग सर्वत्र (हालांकि इस वर्ष मैं एक ऐसे नगर और बहुत बड़े नगर में पहुंचा, जहां सह-शिक्षा नहीं लागू की गयी है), **लगभग** सर्वत्र सह-शिक्षा लागू कर दी गयी है। लगभग सर्वत्र ही सफल स्कूली स्वशासन की शुरूआत हुई है और यह एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें अभी बहुत कम काम हुआ है, जिसमें बहुत-सी खोजें हो रही हैं, जिनमें से कुछ तो अत्यंत दिलचस्प हैं।

ये सभी चीज़ें बड़े व्यय की मांग नहीं करतीं, ये ऐसी चीज़ें हैं, जो सीधे एक आज्ञप्ति के रूप में काग़ज़ पर कुछ तर्कसंगत आशा के साथ निर्दिष्ट की जा सकती हैं कि उन्हें जीवन में अंगीकार और कार्यान्वित किया जायेगा, कि केवल दुर्भावना और जड़ता ही उनके कार्यान्वयन को अस्त-व्यस्त कर सकती है। यह बिल्कुल और बात है, जब हम स्वयं शिक्षा की भावना के सुधार यानी पालीतकनीकी श्रम स्कूल के सिद्धांतों पर आते हैं। और यहां अनेकानेक संदेह उठते हैं।

क्या वास्तव में सर्वहारा राज्य के लिए श्रम स्कूल और पालीतकनीकी स्कूल आवश्यक हैं? आइए हम पहली चीज़ से शुरू करें–क्या सर्वहारा राज्य के लिए श्रम स्कूल आवश्यक है? यहां स्पष्टतः हमारे पक्ष में मतों–कम से कम कम्युनिस्ट पार्टी में हमारे प्रत्यक्ष साथियों और उनसे निकट रूप से जुड़े शिक्षाशास्त्रियों के मतों–की असाधारण रूप से बड़ी संख्या होगी। शिक्षा के क्षेत्र में काम करनेवाले लोग, जो पालीतकनीकी स्कूल के बारे में प्रश्न पर जाने पर हमसे कुछ अलग हो जायेंगे, श्रम स्कूल के संबंध में हमारे पूर्ण समर्थक हैं अर्थात वे हमारी तरह ही आश्वस्त हैं कि स्कूल श्रम पर आधारित होना चाहिए, लेकिन उनके बीच **वामपंथियों** का ख़्याल है कि इसे शुरू से ही व्यावसायिक स्कूल भी होना चाहिए।

शुरू में ज़रा श्रम स्कूल के सिद्धांत पर ग़ौर कर लें। इस चीज़ के बारे में कि स्कूल श्रम पर आधारित होना चाहिए, सर्वहारा तत्वों और उनसे जुड़े शिक्षाशास्त्रियों के मन में कोई संदेह नहीं है। स्वयं सर्वहारा एक मेहनतकश वर्ग, एक व्यावहारिक वर्ग है, जो वैज्ञानिक रूप से संगठित श्रम यानी प्रयुक्त विज्ञान तथा इसके ज़रिये सामान्यतः विज्ञान पर आधारित श्रम के शैक्षिक और सामाजिक महत्व का बहुत बढ़िया मूल्यांकन कर सकता है। वह इसका बहुत बढ़िया मूल्यांकन कर सकता है और इसलिए इस आधार पर स्कूलों को संगठित करना

सही होने में उसे कोई संदेह नहीं है। पर यहां वर्गीकरण हो सकते हैं और अगर हम श्रम स्कूल को उसी रूप में समझते, जिस रूप में यह जर्मनी और ख़ास तौर से अमरीका में शिक्षाशास्त्रियों द्वारा समझा जाता है, तो हमारे पास हमारे विचारों से सहमत लोगों का एक और भी बड़ा हलक़ा होगा।

वास्तव में, वर्तमान समय में मुश्किल से ही कोई प्रगतिशील या मात्र प्रबुद्ध शिक्षाशास्त्री इस चीज़ के बारे में संदेह कर सकता है कि अध्ययन सामग्री को किताबी शिक्षा के माध्यम से नहीं, बल्कि दृश्य और सक्रिय साधनों के माध्यम से, सैर-सपाटों, यात्राओं, प्रयोगशाला कार्यों, ड्राइंग, माडलिंग, निर्माण, आदि के माध्यम से, प्राप्त सामग्री को स्वतंत्रतापूर्वक उद्धृत करते हुए, ग्रुप कार्य तथा बहसों के ज़रिये प्रदत्त विषय-वस्तुओं को सक्रिय ढंग से तैयार करने के माध्यम से, सूचनाओं के सामूहिक संग्रह, आदि के माध्यम से ग्रहण करना चाहिए। आज यह सब संदेह का विषय नहीं है। पर स्कूल का यह पहलू अब तक केवल हमारे लिए ही नहीं, बल्कि बहुत पहले ही कमोबेश इस मार्ग को अपनानेवाले देशों तथा प्रगतिशील स्कूलों के लिए भी शिक्षा प्रणाली की अपेक्षा शिक्षा प्रयोग का मामला ही रहा है।

आज सिर्फ़ किताबों से ज्ञान प्राप्त करने की रक्षा करना वैसे ही हास्यास्पद होगा, जैसे कि पुरानी वर्णमाला की मदद से पढ़ना और लिखना सीखने की रक्षा करना। यह एक बिल्कुल पुरानी पद्धति है और कोई भी शिक्षाशास्त्री, जिसने अभी तक इस चीज़ को नहीं समझा है, वास्तव में असभ्य आदमी है। लेकिन यह सर्वहारा शिक्षाशास्त्र की दृष्टि से क़तई काफ़ी नहीं है, भले ही यह पहले चरण के स्कूलों में बच्चों के लिए बड़ी प्रगति ही क्यों न हो। मेरे ख़्याल में, यह पहले चरण के स्कूल में सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है और शायद शिक्षा कमिसारियत में काम करनेवालों ने यहां एक बड़ी भूल की।

बात यह है कि श्रम स्कूल का अगला, गहरा क़दम सिर्फ़ सामाजिक श्रम की सदृश प्रक्रियाओं, सक्रिय प्रक्रियाओं (जिनमें न केवल स्मृति, न केवल मस्तिष्क, बल्कि संपूर्ण मानव शरीर भाग लेता है) के **ज़रिये** शिक्षा नहीं, अपितु, एक सामाजिक तकनीक के रूप में और तिस पर भी **व्यावहारिक** ढंग से ख़ुद **श्रम** की शिक्षा है। अत्यधिक स्वीकार्य श्रम प्रक्रियाएं वे हैं, जो बच्चे को एक शोषित कर्मी में कभी

नहीं परिवर्तित करेंगी, जिन्हें बच्चा हमेशा अपने शारीरिक तथा मानसिक विकास की ख़ातिर ही संपन्न करेगा। इस ढंग से विद्यार्थियों पर पड़नेवाले श्रम के शैक्षिक प्रभाव को कार्ल मार्क्स ने भी समझा। और यह सर्वहारा शैक्षिक चिंतन के क्षेत्र में सबसे आशाप्रद, महत्वपूर्ण, मूलभूत विचार है। और चूंकि उद्योग के संबंध में इस विचार को पूर्णतः अंगीकार किया जा सकता है, इसलिए कतिपय शिक्षाशास्त्रियों की नज़रों में "स्वयंसेवा" (यानी घरेलू कामकाज – लकड़ी फाड़ना, जल लाना, खाना पकाना, कमरों की सफ़ाई करना) ने इस भावी श्रम के संबंध में एक तैयारी चरण और पहले चरण के स्कूल के लिए बहुत ही उपयुक्त चरण के रूप में श्रेय प्राप्त कर लिया है।

मैं इस बात से इन्कार नहीं करता कि स्कूल में बच्चों के कार्यकलापों में इस "स्वयंसेवा" को एक निश्चित स्थान दिया जा सकता है, पर इस दिशा में बड़ी सावधानी से क़दम बढ़ाया जाना चाहिए। और बेशक, शुरू के दिनों में, ख़ास तौर से स्कूलों की निर्धनता तथा सहायक तकनीकी कर्मचारियों को मेहनताने पर रखने की असंभावना को देखते हुए इस संबंध में बड़ी भूलें की गयीं। इस चीज़ को नज़रअंदाज़ कर दिया गया कि शैक्षिक महत्व सिर्फ़ विशेष प्रकार के श्रम से ही जुड़ा है, ऐसा श्रम, जिसके ज़रिये अधिकाधिक कौशल सीखे और प्राप्त किये जाते तथा मज़बूत बनाये जाते हैं और जो साथ ही, वस्तुतः इस वजह से कि बच्चा श्रम कर रहा होता है, ज्ञान की एक बड़ी मात्रा भी प्रदान करता है।

जब जॉन ड्यूई यह वर्णन करते हैं कि कैसे खाना पकाना चाहिए और कैसे खाना पकाते समय रसायनविज्ञान, भौतिकविज्ञान, वनस्पतिविज्ञान, प्राणिविज्ञान, स्वास्थ्य-रक्षा और शरीरक्रियाविज्ञान में पाठ देना चाहिए, तो वह पूर्णतः सही हैं।[5] यद्यपि कि मुझसे कुछ आपत्तियां प्रकट की गयी हैं कि यदि खाना पकाते समय कोई इतनी बात करने लगे तो कोई चीज़ उफ़नने लगेगी और कोई चीज़ जलने लगेगी, आदि – तो भी, मेरे ख़्याल में, यह दृष्टिकोण कमोबेश सही है। अगर **इस ढंग से** काम की ओर बढ़ा जाये, तो बेशक इसका शैक्षिक महत्व है। लेकिन यदि बच्चे आज लकड़ी फाड़ रहे हैं, भोजन तैयार कर रहे हैं, जल ला रहे हैं और कल तथा परसों भी यही प्रक्रिया दुहरा रहे हैं, तो इससे न तो बड़ा मानसिक, न ही शारीरिक विकास प्राप्त होता

है। यह काफ़ी कुंठाकारी कार्य है। हम कम्युनिस्ट इस तरह के श्रम का ख़ात्मा करने के लिए एड़ी-चोटी का पसीना एक कर रहे हैं। हमारा आदर्श नारी की, जो ऐसे कामों में अपना जीवन खपा देती है, और बच्चे की, जो ऐसे कामों में खींच लाया जाता है, रक्षा करना है, विशाल, सामूहिक पैमाने पर घरेलू कार्यों को औद्योगिक साधनों से संपन्न करते हुए कपड़े धोने, खाना पकाने, बर्तन मांजने से उनकी रक्षा करना है।

हमारी समाजवादी आत्मा इन निकृष्ट छोटे-मोटे कार्यों से बच निकलना चाहती है, जो हममें से कइयों, विशेष रूप से स्त्रियों, को अपना शिकार बना डालते हैं। इसे शिक्षाशास्त्रीय तत्व के रूप में अत्यंत सावधानी से स्वीकार किया जाना चाहिए। पहले चरण के श्रम स्कूल में "स्वयंसेवा" का स्वरूप इस हद तक प्राप्त कर लिया गया है कि स्कूली कार्यों के बारे में पूछे जाने पर बच्चों के मुंह से ऐसी फबतियां सुनने को मिलीं: "जी हां, हम कहां पढ़ें – 'स्वयंसेवा' के बाद कोई समय ही नहीं बच पाता!" अक्सर यह ख़ुद स्कूल की कठिनाइयों की वजह से था। स्कूल प्राय: अपने अस्तित्व के लिए बच्चों की क्षीण शक्ति से लड़ते रहे हैं और बहुधा यह अध्यापकों का दोष नहीं, बल्कि उनका दुर्भाग्य रहा है।

पहले चरण के स्कूल में खेल, ऐसे सक्रिय कार्यकलापों के माध्यम से प्रांरभिक ज्ञान अर्जन होना चाहिए, जो अगोचर रूप से खेल से कोई अधिकाधिक गंभीर चीज़ में बदल जाते हैं। केवल बड़े बच्चे ही सीधे और निश्चित रूप से श्रम स्कूल के दूसरे चरण, यानी स्वयं श्रम प्रशिक्षण के मार्ग पर प्रवेश कर सकते हैं।

यहां मुझे एक छोटा अपवाद करना, एक शर्त रखनी चाहिए, जो रूस में ख़ास तौर से महत्वपूर्ण है, वस्तुत: इतनी महत्वपूर्ण है कि यह अपने को एक छोटी शर्त या अपवाद से हमारी स्कूली नीति के एक मूल नियम में बदल देती है। कृषि संबंधी श्रम, जिसके अंतर्गत हम सरलतम कार्यों से, मिट्टी और जल के साथ बच्चों के खेलों के रूप में कार्यों से, बागबानी से जिसमें चार-पांच साल के बच्चों को भी भाग लेने दिया जा सकता है, ख़रगोश और बकरियां जैसे जानवरों की देखभाल से लेकर वैज्ञानिक कृषि टेक्नोलॉजी की विशाल संभावनाओं तक विभिन्न कार्यों की कल्पना कर सकते हैं, यह श्रम (जो उपयुक्त

मंगठन के अंतर्गत एक अत्यंत स्वास्थ्यप्रद है और जो मनुष्य को प्रकृति की शक्ति तथा सौंदर्य के आमने-सामने ला खड़ा करता है) ऐसी चीज़ है, जिस पर हमारे यहां, रूस में, विशेष ज़ोर दिया जाना चाहिए, क्योंकि यह उतने व्यापक रूप से और कहीं नहीं अमल में लाया जा सकता या लाया जाना चाहिए, जितने कि हमारे देश में।

प्रारंभिक, पहले चरण के स्कूल (प्रायः एकमात्र स्कूल, जो ग्रामीण क्षेत्रों में हमारे पास हैं, क्योंकि वहां दूसरे चरण के स्कूल इने-गिने ही हैं) को अपने को शाक-सब्ज़ी वाटिकाओं, फलोद्यानों, स्कूल में पाले जानेवालों जानवरों, आदि पर पूर्णतया आधारित करना चाहिए, क्योंकि यह श्रम, अगर सही ढंग से शिक्षा दी जाये तो, अपने से वैसे ही विविध निष्कर्ष निकालने देता है, जैसे कि फ़ैक्टरियों तथा मिलों से, बशर्ते कि हम अपने को कृषक दृष्टिकोणों द्वारा सीमित न करें, बशर्ते कि अध्यापक इस छोटी-सी स्कूली कुटीर अर्थव्यवस्था का व्यावहारिक साधनों से उपयोग अपने छोटे सहकर्मियों की तरुण बुद्धि का भरोसा करते हुए खुल रहे क्षितिजों के बारे में निष्कर्ष निकालने में करें। इस संबंध में, श्रम स्कूल सिद्धांत की प्रयोजनीयता हमारे औद्योगिक रूप से पिछड़े देश में भी निर्विवाद है। इस कार्यक्रम का बहुत कुछ बिना किसी ख़ास जटिल उपकरणों के, बिना ख़ास वर्कशापों के पूरा किया जा सकता है। सही दृष्टिकोण अपनाया जाये तो अपेक्षाकृत नगण्य साधनों से पहले चरण के शहरी स्कूलों तथा ख़ास तौर से ग्रामीण स्कूलों को भी इस बुनियाद पर छोटे भूखंडों, छोटी स्कूली "कृषि अर्थव्यस्था" (चाहे शहरों के भीतर ही सही), का उपयोग करते हुए अथवा ग्रीष्मकालीन स्कूलों का व्यापक उपयोग करते हुए खड़ा किया जा सकता है। यह कमोबेश संभव चीज़ है।

यह और बात है, जब हम दूसरे चरण के स्कूल पर आते हैं, जब हम स्वयं श्रम की शिक्षा पर आते हैं। यहां हमारे समक्ष यह प्रश्न पैदा होता है: तकनीकी के बजाय पालीतकनीकी स्कूल ही क्यों हो?

मतभेदों का, जो रहे हैं और जो शायद आज भी हो सकते हैं, अपना इतिहास है। दृष्टिकोण बदल गये हैं। उदाहरणार्थ, कुछ लोग हमारे मूल सिद्धांत से सहमत हुआ करते थे। सही तौर से चालू स्कूल में बात यह नहीं है कि बालकों को एक ख़ास शिल्प या चाहे आद्यो-

गिक विशेषज्ञता की भी शिक्षा दी जाये। उद्देश्य यह नहीं है। उद्देश्य बालकों को **वैज्ञानिक रूप से संगठित श्रम के स्वरूप** से परिचित कराना है। अब व्यावसायिक शिक्षा के कुछ समर्थकों ने यह दृष्टिकोण अपनाया है और कहा है: यदि आप बालकों को एक **गंभीर** चीज़ के रूप में श्रम का **सच्चा** विचार देना चाहते हैं, तो यह असंभव है कि वे श्रम की एक विधि से दूसरी विधि पर उड़ते रहें, कि उद्योग की विभिन्न शाखाओं पर पंख फड़फड़ाते रहें, यहां-वहां मंडराते रहें, उन्हें किसी एक वर्कशाप या विभाग में वास्तव में काम करने दें, ताकि वे गहराई में पहुंच सकें, ताकि वे इसे उचित ढंग से समझ सकें।

हमारा भी ख़्याल है कि उदाहरण के तौर पर उत्पादन के एक क्षेत्र का अच्छा इस्तेमाल किया जा सकता है, बशर्ते कि इसे वैज्ञानिक ढंग से संगठित किया जाये। यह मध्यवर्ती दृष्टिकोण है, यह विवादास्पद मुद्दा है। और मैं साफ़-साफ़ कहता हूं कि यहां एक या दूसरे पलड़े को बहुत ज़्यादा झुकाया जा सकता है। उत्पादन की एक धारा में हद से ज़्यादा बहा जा सकता है और पालीतकनीकी शिक्षा का अर्थ बच्चों को प्रायः सभी विद्यमान तकनीकों से परिचित कराने या उसे एक प्रकार से पालीतकनीकी बनाने से भी लिया जा सकता है। हमारा उद्देश्य यह क़तई नहीं है।

अगर हमारे पास पालीतकनीकी श्रम स्कूल संगठित करने की संभावना होती – और मैं यहां कहूंगा कि कभी-कभी हमारे पास संभावना अवश्य होती है – तो हमें उद्योग की दो-तीन शाखाओं, उदाहरणार्थ, संचार, सूती और खनन की आवश्यकता होगी। इन चार-पांच सालों की अवधि में पालीतकनीकी दृष्टि से उनमें से प्रत्येक शाखा में काफ़ी गहरे पैठा जा सकता है, बच्चा उनके आधार पर अपने विश्व-दृष्टिकोण का निर्माण करेगा तथा विज्ञान के सभी पहलुओं से परिचित होगा। पर यदि हम मामले पर विस्तारपूर्वक ग़ौर करें, तो एक फ़ैक्टरी के भीतर भी विविधतापूर्ण उत्पादन का अध्ययन करना संभव है, क्योंकि प्रत्येक फ़ैक्टरी के पास मुख्य उत्पादन प्रक्रिया होती है, मरम्मत-ख़ाना और वाणिज्यिक विभाग (दफ़्तर, लेखा, पैकिंग, डिस्पैचिंग, आदि) और अंत में, स्वास्थ्य-सुरक्षा विभाग, आदि होते हैं, जो प्रत्येक फ़ैक्टरी को एक सघन दीवार से घेरे हुए हैं तथा जो अत्यंत दिलचस्प अध्ययनों के लिए आधार भी प्रस्तुत करते हैं। अतः प्रत्येक कमोबेश

गंभीर फ़ैक्टरी में हम हमेशा कई बड़े उप-विभाग पाते हैं, जो पालीतकनीकी शिक्षा संगठित करने की संभावना प्रदान करते हैं।

पालीतकनीकी शिक्षा के प्रति विद्वेषपूर्ण रुख़ रखनेवाले दूसरे विरोधियों ने कहा: बात यह नहीं, बल्कि यह है कि हमारे कंगाल देश में ऐसे नाज़ुक विचार हमारे साधनों की पहुंच से बाहर हैं; पालीतकनीकी शिक्षा एक बहुत अच्छी चीज़ हो सकती है, लेकिन आप ख़्याली पुलाव पका रहे हैं, जबकि कठोर यथार्थ हमारे सामने खड़ा है और कह रहा है, "हमें १४–१५–१६ का एक ऐसा लड़का दीजिये, जो इतना प्रशिक्षित हो कि तुरंत काम पर भेजा जा सके, क्योंकि हमें प्रशिक्षित हाथों की ज़रूरत है, अन्यथा देश रसातल को पहुंच जायेगा।"

पुनः यह एक ऐसा दृष्टिकोण है, जिससे कुछ मुद्दों में असहमत होना असंभव है। यह संभव है कि सामान्य आर्थिक स्थिति की दृष्टि से हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचना पड़े कि हम इसके अलावा और कुछ नहीं कर सकते, कि हमें अपने आदर्शों से अस्थायी रूप से पीछे हटना चाहिए। ऐसी स्थिति भी आती है, जब लोगों को राशन कार्डों पर ऐसी न्यूनतम मात्रा प्रदान की जाती है, जो स्वास्थ्य तथा पोषण की दृष्टि से न्यूनतम से भी कम होती है। इसका मतलब है कि देश में अकाल है। और हमारे देश में ज्ञान के संबंध में इस समय ऐसा अकाल पड़ा है कि किसी को आश्चर्य नहीं होगा यदि हमें निश्चित मामले में पीछे हटना पड़े। परंतु इसका तात्पर्य यह नहीं कि विचारधारात्मक रूप से पीछे हटना है, कि हमें उन स्थानों में भी पालीतकनीकी स्कूल के विचार को छोड़ देना चाहिए, जहां यह कमोबेश संभव है।

वर्तमान समय में इस वैचारिक संघर्ष के फलस्वरूप हमारी स्कूल प्रणाली का कुछ विखंडन हुआ है। मसलन, उक्राइना ने माध्यमिक शिक्षा संस्थानों की वरिष्ठ कक्षाओं को पूर्णतः समाप्त कर दिया है और उनकी निचली कक्षाओं को पहले चरण के स्कूलों की कक्षाओं के अनुरूप कर मिला दिया है और इस तरह, एक ओर खंडित स्कूलों (हमारे यहां भी बेशक ये हैं), यानी चार-वर्षीय स्कूलों का जाल है और दूसरी ओर, कुछ सात-वर्षीय स्कूल हैं, जो स्वयं उक्राइना में बहुत कम संख्या में संभव हैं। शेष स्कूलों को समाप्त कर दिया गया; इसके साथ ही यह घोषणा की गयी कि १५ साल की आयु

में सात-वर्षीय स्कूल को पूरा करनेवाले बालकों को तकनीकी कालेजों में दाखिला लेने का अधिकार है।

उस समय हमने इस प्रणाली को तेज़ी से अमल में लाने के संबंध में कुछ संदेह व्यक्त किया था। लेकिन हम पालीतकनीकी शिक्षा न कि तकनीकी शिक्षा के पक्ष में हैं, इसीलिए हमने एतराज़ किया, ऐसी बात नहीं। हम अपने पाठ्यक्रम को सीमित करने के लिए बाध्य थे और कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति ने पार्टी की ओर से सार्वजनिक रूप से पुष्ट किया कि कम्युनिस्टों को कठिन समय को देखते हुए अपने कार्यक्रम से हटने तथा अस्थायी रूप से सात-वर्षीय स्कूल को अंगीकार करने का अधिकार है। अतः हमने उसके ख़िलाफ़ बहस नहीं की, शायद हमारी अखिल-रूसी निर्धनता की स्थिति में सात-वर्षीय स्कूल को भी एक अत्यंत ऐशोआराम की चीज़ माना जाना चाहिए था। पर हमने इसके ख़िलाफ़ तो बहस की ही कि वरिष्ठ कक्षाओं के पृथक्करण को अधिकृत करने हेतु एक आज्ञप्ति तथा पोम्पे द्वारा पैर पटकने[6] से ज़मीन से पैदा होनेवाले अनेकानेक तकनीकी कालेजों को क़ायम करने हेतु एक दूसरी आज्ञप्ति जारी करने के ज़रिये हमारी स्कूल प्रणाली में बड़ा सुधार आ जायेगा।

निस्संदेह, उक्राइना में उतने तकनीकी कालेज नहीं क़ायम किये गये हैं, जितने कि सात-वर्षीय स्कूल पूरा करनेवाले सभी बच्चों को उनमें जगह देने के लिए आवश्यक हैं। और वास्तव में, जैसा कि मैंने शिक्षा-कर्मियों की कांग्रेस[7] के बाद पाया, जहां मैंने उक्राइना के विभिन्न भागों से आये अध्यापकों से बड़े ध्यानपूर्वक पूछताछ की, सात-वर्षीय स्कूल पूरा करनेवाले अधिकांश बच्चे किसी भी व्यावहारिक कार्य के योग्य नहीं सिद्ध हुए, न ही वे किसी दूसरे शिक्षा संस्थान में प्रवेश के योग्य थे, क्योंकि प्रस्तावित तकनीकी कालेज वस्तुतः अस्तित्व में थे ही नहीं। उनके यहां "कोचिंग" के रूप में विदित एक परिघटना अभूतपूर्व पैमाने पर विकसित हो गयी। इस "कोचिंग" ने बड़ी हद तक स्कूलों की पुरानी, दो उच्चतम कक्षाओं का स्थान ग्रहण किया। कहने की आवश्यकता नहीं कि हमने अपने को अवश्यंभावी रूप से बिल्कुल उसी स्थिति में पाया होता – दरअसल हमारे यहां वैसी "कोचिंग" का काफ़ी विकास हो रहा है, क्योंकि दूसरे चरण के हमारे स्कूल ख़राब अवस्था में हैं – पर हमने अपने को पूर्णतः उसी स्थिति

में पाया होता यदि हमने उनकी भांति वही रास्ता अपनाया होता। तब यह मानते हुए कि वर्तमान समय में सात-वर्षीय स्कूलों को पूरा करनेवाले बच्चों को लेने के लिए बड़ी संख्या में तकनीकी कालेजों के संगठन की दिशा में आगे बढ़ना असंभव है – चाहे कोई दूसरे चरण के स्कूलों और उनकी वरिष्ठ कक्षाओं का त्याग ही क्यों न करे – हमारा ख़्याल है कि यहां अत्यंत सावधानी की ज़रूरत है, कि स्कूलों को नष्ट नहीं किया जाना चाहिए जबकि इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि सभी नौजवानों को वस्तुतः तकनीकी कालेजों में जगह मिल जायेगी।

युवा कम्युनिस्ट लीग (कोम्सोमोल) की पिछली कांग्रेस में प्रतिनिधियों ने बड़े ज़ोर-शोर से मांग की कि दूसरे चरण के स्कूल को तेज़ी से समाप्त कर दिया जाना चाहिए, वे हमसे सात-वर्षीय स्कूल को अविलंब अपनाने की मांग कर रहे थे, इस प्रक्रिया को तेज़ करने की प्रतिज्ञा से भी संतुष्ट नहीं थे। लेकिन मैं साफ़-साफ़ कहता हूं कि मैं इस प्रणाली में तुरंत संक्रमण को ही नहीं, जो हमारे दृष्टिकोण से एक अवसरवादी प्रणाली है, बल्कि अब तक आगे बढ़ रही इस प्रक्रिया की गति को किसी सीमा तक तेज़ करने को भी एक गहन भूल मानता हूं। और प्रांतीय शिक्षा विभागों (गुबोनो) के प्रधानों की कांग्रेस[8] ने तो इस गति को धीमी करने के पक्ष में राय दी – क्या हम नौ-वर्षीय स्कूल के प्रति वफ़ादार नहीं बने रह सकते!

बेशक, आप समझते हैं कि जब हम इस बहस में बिल्कुल व्यावहारिक यथार्थ पर उतर आते हैं, तो हमें मानना पड़ता है कि सात-वर्षीय स्कूल रखना भी एक बड़ा सौभाग्य है। यहां हमारे बच्चों के स्कूलों के "ऊपरी भाग" के बारे में प्रश्न आता है। हर कोई ही उधर नहीं पहुंचता। कहना न होगा कि इस समस्या के प्रति सही दृष्टिकोण इस "ऊपरी भाग" के लिए सर्वाधिक योग्य विद्यार्थियों के चुनाव को आवश्यक बनाता है, भले ही यह चुनाव नहीं किया जाता, भले ही हमारे पास इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि दूसरे चरण के स्कूल में प्रवेश लेनेवाले दस प्रतिशत विद्यार्थी वस्तुतः उच्चतम योग्यतावाले विद्यार्थी ही हैं – यदि आप हमारी वर्तमान नीति में उस मुद्दे पर ध्यान दें, जो घोषणा करता है कि आज हमारा पहला और अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य सर्वहारा-किसान बुद्धिजीवियों का निर्माण करना है, तो आप समझ जायेंगे कि दूसरे चरण का स्कूल एक ऐसा मार्ग है,

जिसे नये बुद्धिजीवियों के निर्माण के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण मार्ग होना चाहिए।

अगर तकनीकी शिक्षा की मुख्य समिति कहती है कि अपनी प्रवेश मांगों के संबंध में उच्च शिक्षा संस्थानों तथा दूसरे चरण के स्कूलों द्वारा प्रदान की जा रही मानव सामग्री के बीच एक कष्टकर अंतर – मात्रा और ख़ास तौर से गुण के बीच अंतर – है, तो हमें इस पर बहुत गंभीरतापूर्वक ध्यान देना चाहिए और यह याद रखना चाहिए कि जब हम दूसरे चरण के स्कूल की रक्षा करते हैं तो ऐसा नहीं कहना चाहिए कि मानो पहले चरण का स्कूल एक जनवादी संस्थान है और दूसरे चरण का स्कूल टुटपुंजिया बुर्जुआ संस्थान, एक अधिक अभिजातवर्गीय संस्थान है। ऐसी बात नहीं की जानी चाहिए और ऐसी बात करके मूलतः नरोदवादी, टुटपुंजिया बुर्जुआ दृष्टिकोण नहीं अपनाया जाना चाहिए। राज्य के लिए आम जनता को ऊपर उठाना भयंकर रूप से आवश्यक है और प्रारंभिक स्कूल इस सामान्य उन्नयन से निकट रूप से जुड़ा हुआ है, जिसे सार्विक बनाने के लिए दुगुना किया जाना चाहिए। लेकिन हम यह परिणाम तब तक प्राप्त नहीं कर पायेंगें, जब तक हम विज्ञान को ऊपर से नहीं जीत लेते, जब तक उसी जनता से भर्ती की गयी अग्रणी टुकड़ियों को क़ायम नहीं कर लेते, ऐसी टुकड़ियां, जो संख्या में बहुत हों, जो न केवल जीवन के व्यावहारिक अनुभव में प्रशिक्षित हों, जैसा कि संपूर्ण सर्वहारा है, जिसके हाथों में अब सत्ता है, बल्कि स्कूलों में सुव्यवस्थित ढंग से शिक्षित भी हों। यह दूसरे चरण के स्कूल अथवा इसके कुछ ऐसे अनुकल्पों द्वारा किया जा सकता है, जिनका कुछ मूल्य हो, लेकिन जो इसका स्थान नहीं ले सकते और जो दूसरे चरण के स्कूल के अपने उचित स्थान पर आते जाने के साथ धीरे-धीरे ख़त्म हो जायेंगे।

इस तरह, दूसरे चरण के स्कूल को विशेष ध्यान देना आवश्यक है; इसे श्रम स्कूल में रूपांतरित करने के लिए प्रयास किये जाने चाहिए। चाहे यह सात-वर्षीय स्कूल यानी दो अंतिम स्कूली कक्षाएं और फिर तकनीकी कालेज हों अथवा नौ-वर्षीय स्कूल और फिर उच्च शिक्षा संस्थान में प्रवेश, यह अपेक्षाकृत अमहत्वपूर्ण है। लेकिन इसी स्थान को, उच्च शिक्षा या अर्ध-योग्यताप्राप्त विशेषज्ञों के रूप में कार्यकारी जीवन में संक्रमण के सेतु को हमें अपनी पूरी शक्ति से मज़बूत

बनाने की आवश्यकता है। तात्पर्य यह कि फिलहाल इस प्रश्न को एक किनारे रखते हुए कि स्कूल पालीतकनीकी या केवल १५ साल की आयु तक पालीतकनीकी होगा या हमारे यहां अभी तकनीकी स्कूल ही होगा – इस प्रश्न को एक किनारे रखते हुए हम पूछते हैं : क्या सामान्यतः श्रम शिक्षा, चाहे यह पालीतकनीकी या तकनीकी हो, गहन मार्क्सवादी अर्थ में वह श्रम शिक्षा, जिसके बारे में मैं बोलता रहा हूं, अर्थात मूलतः उद्योग के साथ जुड़े मनुष्य को विकसित और शिक्षित करनेवाले श्रम पर आधारित शिक्षा – क्या यह रूस में सामान्यतः संभव है या नहीं ? साफ़ है कि अधिकतम प्रयास किया जाये तो यह संभव है।

पहला कार्य – उद्योग से प्रत्यक्ष संबंध है। रूस औद्योगिक रूप से कम विकसित है, उसके पास बड़े औद्योगिक केन्द्र कम हैं और वर्तमान समय में हमारा उद्योग पूरी क्षमता से काम नहीं कर रहा है। बेशक, इसका अर्थ यह है कि उसका औद्योगिक क्षेत्र इतना विस्तृत नहीं है कि उसमें सभी स्कूल आ सकें, सामान्यतः उसके इर्द-गिर्द रूसी स्कूलों को संगठित करना संभव नहीं है, यहां तक कि दूसरे चरण के स्कूलों को भी नहीं। यह पहली बात है।

दूसरी बात, यह एक अत्यंत कष्टपूर्ण प्रक्रिया है। आख़िरकार, हमने इस चीज़ के बारे में बात नहीं की कि दूसरे चरण के स्कूल के छात्र और छात्राएं इस या उस फ़ैक्टरी अथवा मिल में मात्र इस या उस कार्य-विधि से परिचित होने के लिए आयें। बेशक, हमारा ध्येय यह नहीं है। जिस चीज़ की आवश्यकता है वह यह है कि उन्हें वास्तव में, गंभीरतापूर्वक काम करना चाहिए। अभी तो इसे बड़े प्रयास से ही संगठित किया जा सकता है, जब कि स्कूल फ़ैक्टरियों और मिलों से दूर हैं, जबकि वहां आने-जाने में काफ़ी समय लगाना पड़ता है और इसके अलावा जब कि फ़ैक्टरियां या मिलें इसे किसी आवश्यक, महत्व-पूर्ण काम के रूप में नहीं, बल्कि इस तरह की किसी चीज़ के रूप में देखती हैं : "कोई अध्यापिका दूसरे चरण के स्कूल के बच्चों के साथ आती है और वे सभी आकर हमें उलझन में डाल देते हैं। हम गंभीर लोग हैं, हम काम कर रहे हैं, आप अपने श्रम स्कूल के साथ भाड़ में जायें। आप केवल बाधा डाल रहे हैं।"

बहुत अक्सर ऐसा होता है। यह सही है कि कभी-कभी यह भिन्न होता है। कभी-कभी फ़ैक्टरी समिति हमसे सहृदयतापूर्वक मिलने

आती है, लेकिन विरले ही। मैं तो यह तक कहूंगा कि यह कहीं भी देखने में नहीं आया कि दूसरे चरण के सामान्य स्कूल ने इस या उस फ़ैक्टरी या मिल से अपने संबंधों को सही आधार पर क़ायम किया हो। अधिक से अधिक हमारे पास पर्यटन विधि का कमोबेश सही संगठन है। यह रही पहली बात। वास्तव में निकट भविष्य के लिए जब हम दूसरे चरण के सामान्य स्कूल की बात करते हैं, तो हमारे दिमाग़ों में वे स्कूल होते हैं, जो प्रायः उद्योगों से रहित प्रांतीय नगरों में अथवा बड़े नगरों के उन इलाक़ों में हैं, जिनके आस-पास कोई फ़ैक्टरी नहीं है, ऐसे स्कूल, जिनकी क़िस्मत में अपनी औद्योगिक शिक्षा के लिए अधिक से अधिक पर्यटन विधि का उपयोग करना ही बदा है। संभवतः इस संबंध में निकट भविष्य के लिए हमारा कार्य बाल आबादी के इस हिस्से के लिए, दूसरे चरण के सामान्य स्कूल में पढ़ने-वाले मेहनतकश परिवारों के बच्चों के लिए औद्योगिक संस्थानों की यात्राओं के व्यापक उपयोग के आधार पर अपना पाठ्यक्रम बनाना है।

दूसरी विधि अलग-अलग स्कूलों में छोटी स्कूली वर्कशापों तथा एक संपूर्ण ज़िले के स्कूलों की सेवा करने के प्रयोजन से बड़ी स्कूली वर्कशापों को संगठित करना है। मिसाल के लिए, न० को० क्रूप्स्काया ने कहा कि फ़्रांस में श्रम, तकनीकी स्कूल प्रायः अपने कार्यकलाप ऐसी ही स्कूली वर्कशापों पर आधारित करते हैं और इन्हें तरजीह भी देते हैं, क्योंकि वे शिक्षाशास्त्रीय साधनों से लैस हैं। लेकिन उन्होंने तब ठीक ही कहा कि यह बेशक एक एवज़ी विधि है, न कि मार्क्स-वादी दृष्टिकोण। यह मात्र व्यावसायिक स्कूल से ली गयी विधि है, जिसके पास अपनी प्रयोगशालाएं और वर्कशापें होती हैं। मगर जहां यह संभव है, हमें इसका इस्तेमाल करना चाहिए और इसके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए। जहां कुछेक स्कूलों के उपयोग हेतु सुसज्जित वर्कशाप को अनुकूल बनाना अथवा छोटी प्रयोगशाला या वर्कशाप क़ायम करना संभव है, वहां यह दूसरे चरण के स्कूल के सही निर्माण की दिशा में आगे का क़दम होगा।

हमें प्रगति के इन दो मार्गों या चाहें तो तीन मार्गों का स्वागत करना चाहिए: नये से नये प्रयास – वास्तविक उद्योग से निरंतर संपर्कों को निर्मित करने के प्रयास – यह पहला क़दम है; दूसरा पर्यटन विधि से स्थानीय औद्योगिक संस्थानों का उपयोग है; और तीसरा स्कूली

वर्कशापों को क़ायम करना है। यह बिल्कुल साफ़ है कि ये ऐसे मार्ग हैं, जिन पर हमें अपने स्कूलों को श्रम स्कूल बनाने की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए और अब हम वास्तव में उन मार्गों पर आगे बढ़ भी रहे हैं। कुल मिला कर, पेत्रोग्राद, मास्को तथा प्रांतों के अनुभव इस क्षेत्र में विभिन्न सफलताओं की पूरी की पूरी शृंखला दिखाते हैं। यह कहना बहुत ज़्यादा आशावादी होना होगा कि सभी स्कूलों ने यह मार्ग अपना लिया है, फिर भी, यह मामला दो-एक उदाहरणों तक ही सीमित नहीं है। आप चाहे जिस शहर में जायें, आप बड़ी तादाद में ऐसे स्कूल पा सकते हैं, जो कुछ मामलों में एक विधि पर और अन्य मामलों में दूसरी विधि पर निर्भर करते हुए इन विधियों को समन्वित कर रहे हैं।

लेकिन यहां एक और कठिनाई पैदा होती है यानी इस तरह के कार्य के लिए अध्यापकों के बीच प्रशिक्षण का अभाव। श्रम स्कूल (कृषि स्कूल, जो हमारे यहां, रूस में, प्रमुख क़िस्म का स्कूल है, तथा औद्योगिक स्कूल) नयी शिक्षाशास्त्रीय निपुणताओं – केवल स्वयं टेक्नोलॉजी से कुछ परिचय की ही नहीं, वरन् टेक्नोलॉजी का उपयोग करने, फ़ैक्टरी का शैक्षिक इस्तेमाल करने की योग्यता की भी – की कल्पना करता है। अध्यापक को श्रम प्रक्रिया के दौरान शैक्षिक रूप से उपयोगी अनेक लक्षणों तथा परिघटनाओं को स्पष्ट करने में समर्थ होना चाहिए। बेशक, यह एक ऐसा कठिन कार्य है कि दुनिया में सच्ची पारंगति अथवा इसे बुद्धिसंगत निपुणता से पूरा करने की योग्यता से संपन्न शिक्षाशास्त्री कुछेक ही हैं और हमारे "निर्धन उत्तरी रूसी क्षेत्र" में तो वे और भी कम हैं। ऐसे लोगों की गिनती उंगलियों पर की जा सकती है और उनका उपयोग स्कूल की कक्षाओं में मामूली अध्यापकों के रूप में उतना नहीं किया जाना चाहिए, जितना कि शिक्षाशास्त्रीय अध्यापन संस्थानों के निदेशकों की हैसियत से ऐसे अध्यापकों के पालन-पोषण की "नर्सरियों" के रूप में। इस उद्देश्य के लिए भी हमारे पास उपयुक्त लोगों की अपेक्षाकृत कम संख्या है।

जब सम्मानित सोवियत अख़बारों में हमारे कुछ साथियों ने होहल्ला मचाया कि शिक्षा कमिसारियत इस चीज़ पर ध्यान देने से चूक गयी है कि अध्यापक को भी प्रशिक्षित किया जाना चाहिए, तो ठीक-ठीक कहें तो यह होहल्ला एक बिल्कुल व्यर्थ का प्रयास है, क्योंकि

अध्यापकों को तैयार करने के लिए किन चीज़ों की आवश्यकता होती है? दो चीज़ें ज़रूरी हैं: १) कि लोग अध्यापन संस्थानों में प्रवेश लेने के इच्छुक हों; २) कि उधर आनेवाले लोग ऐसे लोग नहीं हों, जिनके पास कोई और ठौर न हो, बल्कि हमारे ऐसे युवजनों का सच्चा हरावल हों, जो यह समझते हों कि जीवन में अध्यापकों का पवित्र स्थान, महानतम सम्मान का स्थान है!

मगर हम जानते हैं कि अध्यापकों की हालत ख़स्ता है। अब भी वह उस सम्मान से वंचित है, जो उसे मिलना चाहिए, जीवन की उन सामान्य परिस्थितियों से वंचित है, जो उसके काम को कुछ संतोषजनक बनाती हैं। और वास्तव में, नये अध्यापकों का अंतर्वाह बहुत क्षीण है। अभी आवश्यक अध्यापकों की संख्या के संबंध में केन्द्रीय सामाजिक शिक्षा बोर्ड (सोत्स्वोस)[9] द्वारा दिये गये आश्चर्यजनक, पूर्णतः अतिरंजित आंकड़े (दो लाख ५० हज़ार – यह कल्पना का पागलपन ही है) के जवाब में हम यह कहते हैं कि हम साल में समूचे रूस के लिए, जिसके पास इस बड़े संकट के दिनों में भी केवल पहले चरण के ही ४५ हज़ार स्कूल हैं, एक हज़ार अध्यापक दे सकते हैं। यह संख्या सामान्य मृत्यु से होनेवाली क्षतियों को पूरा करने में भी मुश्किल से ही पर्याप्त है। तात्पर्य कि हमारे पास बहुत क्षीण पूर्ति है; इसके अलावा हम यहां घोषणा करते हैं कि यह गुणात्मक रूप से भी क्षीण है।

युवा कम्युनिस्ट लीग कांग्रेस में कहा गया कि स्कूलों में बहुत ज़्यादा स्त्रियां हैं। मैं इसे बहुत हानिकारक नहीं मानता, क्योंकि स्त्री भी कोई कम अच्छी शिक्षाशास्त्री नहीं है, लेकिन किस तरह की स्त्रियां हैं – यही असली प्रश्न है। अध्यापकों के स्तर को आम तौर पर ऊंचा उठाये जाने की आवश्यकता है। हमने उसे नीचा गिरा दिया है। शिक्षाशास्त्र के विचारों में संपूर्ण आकर्षण-शक्ति के बावजूद, अध्यापक की भूमिका को विशाल महत्व प्रदान किये जाने के बावजूद हमने अध्यापकों की स्थिति को कमज़ोर बना दिया है और इसका दोष अंशतः स्वयं अध्यापक-समुदाय को ही है (और मास्को के अध्यापक-समुदाय का किन्हीं दूसरे स्थानों के अध्यापक-समुदाय से कम दोष नहीं है), जिसने एक लंबे अर्से तक ख़ुद अपने और सर्वहारा के बीच ग़लतफ़हमी पैदा करने में मदद की। यह भी एक ऐसा तथ्य है, जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

इस तरह अध्यापकों का प्रशिक्षण भी एक बड़ा कार्य है और हमें स्वयं प्रशिक्षकों को भी खोजना तथा जमा करना है। वे हैं, पर मुट्ठी भर ही। और चूंकि वे "उत्कृष्ट लोग" हैं, इसलिए उन्हें अपने प्रकाश को छिपाने के लिए नहीं छोड़ दिया जाना चाहिए, बल्कि उच्च स्थान प्रदान किया जाना चाहिए। अगर ये "उत्कृष्ट लोग" बहुत उच्च कोटि के नहीं हैं, तो हम ख़तरे में हैं। हमें निराशा के स्वर के साथ यह ज़ोर से चिल्लाना चाहिए: "श्रम स्कूल को समझनेवालो आगे आइये, इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए आप अपने दोनों हाथों तथा मस्तिष्क के साथ आइये और विश्वास कीजिये कि सोवियत सरकार व ख़ास तौर से शिक्षा कमिसारियत आपको सोने में तौलेंगी।" यह मैं गंभीर रूप से प्रतिज्ञा करता हूं।

जैसा कि हम सोवियतों की कांग्रेस में रिपोर्ट पेश करनेवाले हैं, वहां हम अध्यापकों के लिए लड़ाई करेंगे और यह एक ज़बर्दस्त लड़ाई होगी।[10] इस बात को कि राज्य बड़े पैमाने पर उजरती भुगतानों के लिए संसाधन बड़ी कठिनाई से पा सकता है, हम समझते हैं, पर यह बात कि राज्य के लिए ऐसे कुछ दसियों लोगों या शायद कुछ सैकड़ों लोगों को, जिन्हें हमें अभी अत्युच्च योग्यताप्राप्त शिक्षाशास्त्रीय कार्य पूरा करने हेतु बुलाना चाहिए, विशेष उच्च दरें देना असंभव है, – यह सही नहीं है। यह किया जा सकता है, यहां सिर्फ़ प्रगतिशील सामाजिक शिक्षाशास्त्री और ख़ास तौर से सोवियत शिक्षाशास्त्री के बीच संबंधों को मज़बूत बनाये जाने की आवश्यकता है – ऐसे संबंध, जो निर्मित हो रहे हैं और जो, मैं कह सकता हूं, दिन प्रतिदिन अधिकाधिक मज़बूत तथा विविध बनते जा रहे हैं।

इसका संबंध सामान्य एकीकृत स्कूल से है। किंतु "अधिसामान्य" स्कूल भी है, हालांकि इसके भी अपने दोष हैं। यदि सर्वहारा के लिए शिक्षा का एकाधिकार जैसा कोई सवाल उठाना ग़लत है, तो यह तो और भी अधिक ग़लत, विकट रूप से ग़लत है कि सर्वहारा युवजन सामाजिक शिक्षा बोर्ड तथा तकनीकी शिक्षा समिति की दृष्टि से लगभग परे रहें, उनकी देखरेख से लगभग परे रहें। यहां हमें युवा कम्युनिस्ट लीग की बड़ी सेवा का उल्लेख करना चाहिए, जिसने हमें न केवल सैद्धांतिक रूप से फ़ैक्टरी कर्मियों के बच्चों पर ध्यान संकेन्द्रित करने और उनके लिए किये गये प्रावधान को बढ़ाने के लिए बाध्य

10*

किया, बल्कि स्वयं इस कार्य में भी मदद की तथा ऐसे नतीजे प्राप्त किये, जो गुणात्मक रूप से भी हाल की अवधि की सबसे हर्षप्रद जीत हैं।

हाल के समय में, उक्राइना और काकेशस को छोड़कर, अकेले रूसी संघ में ही हमारे पास ५०० फ़ैक्टरी प्रशिक्षण स्कूल (फ़ाब्ज़ा-वुच)[11] हैं, जिनमें ५० हज़ार विद्यार्थियों के लिए जगह है और यह संख्या बढ़ती ही जा रही है। हालांकि यह सांगठनिक रूप से पूरी तरह संतोषप्रद नहीं है, तो भी ट्रेड-यूनियनों तथा सर्वोच्च राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था परिषद के समर्थन की बदौलत यह संगठन अपेक्षाकृत अच्छा है। यहां भी काफ़ी अध्यापक नहीं हैं। पर यहां फ़ैक्टरियों तथा मिलों में तकनीकी कर्मी ही प्रायः अध्यापकों के रूप में काम करते हैं, भले ही उनके पास कोई ख़ास शैक्षिक कौशल न हों। और यहां हमारी आंखों को जो एक सबसे शुभ लक्षण दिखायी देता है, वह प्रशिक्षक कोर्स हैं, जिनके अंतर्गत भूतपूर्व रानी कैथरीन संस्थान में इन नये अध्यापकों को प्रशिक्षित किया जा रहा है।[12] वहां हमारे पास एक ऐसा केन्द्र है, जहां से श्रम शिक्षा के लिए यह उदात्त कार्य सभी दूसरे स्कूलों में फैल जायेगा।

श्रम शिक्षा के उद्देश्य इसलिए यहां प्रस्तुत हुए बिना नहीं रह सकते कि फ़ैक्टरी इन नौजवानों को अपनी परिधि में, अपनी पकड़ में ले रही है और उनका शोषण करने की कोशिश कर रही है। उल्टे, शैक्षिक समुदाय, कम्युनिस्ट पार्टी तथा युवा कम्युनिस्ट लीग इन स्कूलों में अधिकतम श्रम रक्षा लागू करने और श्रम शिक्षा पर ध्यान देने के लिए प्रयास कर रहे हैं। यहां उस पक्ष में झुकना असंभव है, जिसे शिक्षा के प्रति साहित्यिक दृष्टिकोण की संज्ञा दी गयी है। बल्कि उल्टे, कार्य कराने के पक्ष में अत्यधिक छूटें संभव हैं और इनका प्रतिरोध किया जाना चाहिए। प्रतीत होगा कि एकीकृत श्रम स्कूल में जिस चीज़ का – यानी फ़ैक्टरी के साथ संगठित संपर्क का – अभाव है, वह यहां मज़बूती से क़ायम है। इसीलिए फ़ैक्टरी प्रशिक्षण स्कूल पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए, ताकि हम वहां निर्मित किये जा रहे अनुभव को दृष्टि में रख सकें, क्योंकि जहां तक श्रम स्कूल का संबंध है, यह बेशक हमारा हरावल है।

अब मुझे उच्च शिक्षा, सर्वहारा राज्य की शिक्षा योजना में इसके

महत्व और आम तौर से उस चीज़ के बारे में कुछ चर्चा करनी चाहिए, जिसे प्रायः सांस्कृतिक विलासिता कहा जाता है। मैं एक बार और दुहराता हूं कि यह न तो सर्वहारा, न ही मार्क्सवादी दृष्टिकोण है; यह पापुलिज़्म के नुक़्सानदेह विचारों की डकार है, जब लोग यह कहते हैं: "पहले सबसे नीचेवालों की देखभाल कीजिये।" क्योंकि, यदि हमारे पास मज़बूत शीर्ष न हो, तो हम नीचेवालों की देखभाल नहीं कर सकते।

अध्यापकों की देखभाल किये बिना विद्यार्थियों की देखभाल नहीं की जा सकती। यह तो सेना का गठन करते समय यह कहने जैसा है कि "हम कमांडरों की चिंता क्यों करें, हमें सिपाहियों को उठाने की चिंता करनी चाहिए।" यह बकवास है। हम चाहे कितना भी जनवादी क्यों न हों, हम यह भली-भांति जानते हैं कि लड़ाई में कमांडरों की आवश्यकता होगी, उनके प्रशिक्षण की आवश्यकता होगी, कि सेना के शीर्ष पर विचार और संकल्प का एक ऐसा केन्द्रीयभूत, शक्तिशाली अंग होना चाहिए, जहां से पूरे के पूरे संचार-सूत्र कार्यकारी तंत्र, सिपाहियों के विशाल समूह तक फैले हों। एक ऐसा समय आयेगा, जब देश के बुद्धिजीवियों और मेहनतकश जनता के बीच कोई अंतर नहीं रह जायेगा, पर यह सिर्फ़ घोर कल्पना ही होती यदि व्ला० इ० लेनिन ने यह कहने के बजाय कि हमें अधिकांश पुराने नौकरशाहों को बदल डालना चाहिए, यह कहा होता कि हमें नौकरशाहों की कोई ज़रूरत नहीं है – किस लिए? हम सभी ख़ुद ही काफ़ी शिक्षित हैं। पर हम अब भी शिक्षा की ओर आगे बढ़ने के लिए केवल हाथ-पांव ही मार रहे हैं।

इसमें अच्छे से अच्छे अराजकतावादियों की भी अव्यावहारिकता इस बात में अंतर्निहित है कि वे कम्युनिज़्म की ओर संक्रमणकालीन अवधि को नहीं मानते। कम्युनिस्ट पार्टी ग़लत "जनवादी" विचारों के साथ लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए कभी स्वांग नहीं रचती। वह यह नहीं कहती कि हमें जनता में घुल-मिल जाना चाहिए, बल्कि वह तो जनता की अगुआई करती है। उन परिस्थितियों में, जब जनता असंगठित होती है, तब हम उसे सही दिशा में आगे बढ़ने हेतु बाध्य करने के लिए जोशपूर्ण कार्यकलापों की सभी विधियों का सहारा लेते हुए उसकी धारा के विरुद्ध चले जाते हैं। लेकिन इस संबंध में

कम्युनिस्ट पार्टी चाहे किसी भी तरह के अभिजातवर्गवाद को समाप्त करने की कोशिश करते हुए व्यवहार में तथा लेनिन के सिद्धांत के अनुसार सभी मज़दूर पार्टियों के बीच सबसे अनुशासित पार्टी है।[13]

बिल्कुल उसी तरह हमें अपने लिए राज्य के सांचे में ऐसे फ़ौलादी बुद्धिजीवी ढालने चाहिए जो रूदिनों तथा ओब्लोमोवों* के सभी पिलपिलेपन को पूर्णतः त्याग देंगे, जो राजकीय मार्गदर्शक संस्तर के रूप में काम करने में समर्थ होंगे। हमें इसकी आवश्यकता है और हम निरक्षरता को प्रस्थान-बिंदु के रूप में नहीं स्वीकार कर सकते। यह सब गहन रूप से, विराट रूप से महत्वपूर्ण है और "इसे भूलने न दें, बल्कि अमल में लायें।"[14]

हम एक-दूसरे को अलग नहीं कर सकते: या तो हमें नीचे से आम जनता के बीच से सच्चे लोगों के प्रवाह को ऊपर की ओर बढ़ाना चाहिए या निचले लोगों को कोई सहायता नहीं मिलेगी और वे वहीं के वहीं रुके रहेंगे। इसीलिए उच्च शिक्षा का सवाल एक जनवादी सवाल भी है। गहन हर्ष के साथ मैं इस चीज़ का स्वागत करता हूं कि अब जनता के अंतरतम से आंदोलन के जवाब में कम्युनिस्ट पार्टी भी इस बात को अंगीकार करते हुए बड़ा क़दम ले रही है कि उसका मुख्य कार्य इन युवजनों के बीच पैठना, उन्हें निराश न होने देना, समय रहते उनकी मदद करना, उन्हें संगठित करना, शिक्षा देना है; वास्तव में, राजनीतिक शिक्षा के उपयोग के इस तरीक़े से अधिक महत्वपूर्ण और फलप्रद और कोई तरीक़ा नहीं हो सकता।

किसान जन-समुदाय के बीच राजनीतिक शिक्षा साक्षरता की प्राप्ति की भांति ही अत्यंत महत्वपूर्ण है। ये चीज़ें इस विशाल जन-समुदाय में फैली हुई हैं, हमें उनकी ज़रूरत है, लेकिन वे काफ़ी नहीं हैं। वे यहां, इन लोगों में संकेन्द्रित हैं, जो नीचे से, गांवों और फ़ैक्टरियों से विराट ज्ञान-पिपासा के साथ आ रहे हैं; वे वास्तव में बाद में आम जनता को शिक्षित करने के लिए सेवा कर सकते हैं, जिसे हम इस अग्रणी कड़ी की सहायता के बिना शिक्षित नहीं कर सकते। अतः जनता के बीच से आनेवाले इन नौजवानों का समर्थन

---

* क्लासिकीय रूसी साहित्य के पात्र, जो अनिर्णय तथा पिल-पिलेपन के प्रतीक हैं। – **अनु०**

करना, उन्हें विश्वविद्यालयों में अध्ययन करने में समर्थ युवजनों में बदलना हमारे लिए महत्वपूर्ण है।

हमारे पास ऐसे उदाहरण हैं। निस्संदेह रूप से, मज़दूर संकाय अपना औचित्य सिद्ध कर देंगे। कुछ समय पहले मुझे प्रोफ़ेसर ज़ेर्नोव की मृत्यु का समाचार पढ़ कर गहरा शोक हुआ। प्रोफ़ेसर ज़ेर्नोव हमारे राजनीतिक शत्रु थे न कि मित्र, लेकिन वह ऐसे शत्रु थे जिनसे मिलना भाता था: वह बड़े ही बुद्धिमान और अत्यंत विनम्र थे, हमारे काम में सभी अच्छाइयों को सराहने में समर्थ थे, उन्होंने हमारे साथ अपने सभी व्यवहारों में न केवल निष्ठापूर्वक, बल्कि अत्यधिक फलप्रद ढंग से सहयोग किया, हालांकि वह हमेशा संदेहवादी विरोधी रुख़ पर डटे रहे, बहुत कुछ की निन्दा की, असहमति में अपना सिर हिलाया और अपनी पूर्ण आत्मनिर्भरता को कभी **नहीं छोड़ा।** अपनी मृत्यु के कुछ दिन पहले लेनिनग्राद मज़दूर संकाय के स्नातकों की, जो तकनीकी कालेज में प्रवेश करने की आशा कर रहे थे, जांच करनेवाले परीक्षा आयोग की बैठक में उन्होंने घोषणा की कि वे न केवल अन्य सभी आवेदनकर्ताओं से अधिक योग्य हैं बल्कि आम तौर से बहुत योग्य हैं। उन्होंने कहा कि परीक्षार्थियों ने जो सहनशक्ति, धैर्य और प्रतिभा प्रदर्शित की उसे देख कर आश्चर्य ही हो सकता है।

यद्यपि यह सर्वत्र नहीं हो सकता कि शिक्षार्थियों का स्तर इतना ऊंचा है कि एक श्वेतकेशी शिक्षक क़ब्र में जाने से पहले युवजनों को आशीर्वाद दे और कहे कि वे इतना प्रशिक्षित हो गये हैं कि कार्य को अपने हाथों में ले सकते हैं, फिर भी, यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि प्राप्त प्रशिक्षण का स्तर अप्रत्याशित रूप से ऊंचा है। वर्तमान समय में हमारे उच्च शिक्षा संस्थानों में मज़दूर संकायों के साढ़े तीन हज़ार विद्यार्थी आते हैं और अगले वर्ष यह संख्या आठ हज़ार हो जायेगी, जबकि उच्च शिक्षा संस्थानों में कुल ३० हज़ार जगहें हैं। जैसा कि आप देखते हैं, यह कुल संख्या का लगभग एक तिहाई है।

दूसरा स्रोत, जिससे उच्च शिक्षा संस्थानों में सीधे भर्ती होती है, पार्टी स्कूल हैं। यहां हमारे पास ३० हज़ार नौजवान कम्युनिस्ट हैं, जो अपने को हमारी राजकीय प्रणाली के मध्यम पदों और आगे चल कर उच्च पदों के उपयुक्त बनाने के लिए अत्यंत गहनतापूर्वक तथा अधिकाधिक सफलता के साथ अध्ययन कर रहे हैं। यहां प्रेक्षण-

योग्य ऐसी अनेकानेक चीज़ें हैं, जो हमारे मनों को ख़ुशी से ही भर सकती हैं, जो स्कूली प्रणाली में विघटन की सामान्य पृष्ठभूमि में (मैं यहां आवश्यक भौतिक वस्तुओं के बारे में, उस चीज़ के बारे में नहीं बोल रहा हूं, जो भौतिक आधार कहलाता है) हमें बड़ी ख़ुशी प्रदान किये बिना नहीं रह सकतीं। यह उच्च शिक्षा की ओर आगे बढ़ती हुई पंक्तियां हैं।

इस संबंध में स्वेर्दलोव विश्वविद्यालय के रेक्टर ने मुझे बताया कि इस वर्ष प्रवेशार्थ परीक्षा आयोग ने पहले से भी अच्छे नतीजे दर्ज किये और ये इतने बुरे कभी नहीं थे कि चिंता के कारण बनें। उनका कहना है कि इन नौजवानों ने पता नहीं कब इन सभी चीज़ों को पढ़ने का समय पाया। वे बहुत अच्छे, विचारशील मार्क्सवादी हैं। और क्या आप जानते हैं कि एक कम्युनिस्ट के लिए यह कहने का क्या अर्थ है कि वे बहुत अच्छे मार्क्सवादी हैं? इसका अर्थ बहुत कुछ है। यह संपूर्ण विश्वदृष्टिकोण का मामला है। और वे कब पढ़ने का समय पा सके? जी हां, लाल सेना में लड़ते हुए, खाइयों में, विभिन्न काम लेकर दर्जनों विभिन्न प्रांतों के दौरे करते हुए सार्वजनिक कार्य निभाते हुए उन्होंने यह सब पढ़ने का समय पाया। और जब आज हम यह परिघटना देखते हैं कि लेनिन की कृति जैसी एक पुस्तक की ३० हज़ार प्रतियां कुछेक हफ़्तों में ही बिक जाती हैं तथा उसे और प्रकाशित करने की आवश्यकता होती है, तब प्रश्न उठता है कि ऐसी पुस्तकें कौन पढ़ रहा है? क्या पुराने बुद्धिजीवी? सदा-सर्वदा के लिए छुट्टी ले चुके सामाजिक क्रांतिकारी और मेंशेविक, जिनके पास अब समय ही समय है? ऐसा मेरा ख़्याल नहीं है! ये तो नौजवान लोग ही पढ़ रहे हैं। और वे मार्क्सवादी साहित्य की लाखों प्रतियां तब तक पढ़ते हैं, जब तक कि उनके पन्नों में छेद ही छेद नहीं बन जाते।

अब उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रवेश के लिए विद्यमान व्यवस्थाओं के संबंध में। मुझे मालूम है कि यहां कई भूलें की गयीं हैं। मैं यह इंगित करने के लिए एक मिसाल दूंगा कि यहां किस तरह की भूल की आशा की जा सकती है।

उदाहरणार्थ, उच्च कला विद्यालयों को ही लें। मेरे ख़्याल में इस मिसाल को लेना इस वजह से आवश्यक है कि यह बात को विशेष रूप से स्पष्ट कर देती है। मुझसे यह बात कही जाती है कि मास्को

संगीतविद्यालय के लिए ऐसे अनेकानेक विद्यार्थी लिये गये हैं, जिनकी प्रतिभा और योग्यता ढाई * से ऊपर नहीं रखी जा सकती। और यह क्यों? क्योंकि संगठनों ने उनके लिए सिफ़ारिश की थी। अगर यह चीज़ जारी रही, तो यह राज्य के ख़िलाफ़ अपराध है। उसे बुरा गायक बनाना? ऐसे आदमी को तो एक बग़ल ले जाकर कहना चाहिए, "आपके पास न कोई प्रशिक्षण है न प्रतिभा, इन कठिन क्रांतिकारी दिनों में आपको लोगों की सेवा करनी चाहिए और इसके बजाय क्या आप मिमियाती आवाज़ में गाने जा रहे हैं?" मैं तो एक प्रतिक्रांतिकारी को संगीत-विद्यालय में प्रवेश की अनुमति दूंगा, बशर्ते कि उसकी अच्छी आवाज़ हो।

और छात्रवृत्ति के आवंटन में भी ऐसी ही चीज़ होती है। किसी के पास काफ़ी योग्यता नहीं है, पर उसकी सामाजिक पृष्ठभूमि अच्छी है। ऐसी घटना अक्सर होती है।

स्पष्टतः यह गहन भूल है। पहला स्थान उन्हें मिलना चाहिए, जो वैचारिक रूप से और अपने स्वभाव से सर्वहारा मूल के हैं, और जो प्रतिभाशाली हैं; दूसरा स्थान उन्हें मिलना चाहिए, जो मात्र प्रतिभाशाली हैं; और इन शिक्षा संस्थानों में कोई तीसरा स्थान नहीं होना चाहिए।

आइये, अब देखें कि कैसे यह दृष्टिकोण अन्य शिक्षा संस्थानों पर लागू होता है। बेशक, यदि हम इसे दूसरे शिक्षा संस्थानों पर अत्यधिक व्यापक ढंग से लागू करें, तो हम एक बड़ी भूल करेंगे: एक अच्छा विशेषज्ञ सीधे यह तय कर सकता है कि आप में संगीत-प्रतिभा है या नहीं, वहां ग़लतियां व्यावहारिक रूप से असंभव हैं, पर यहां स्थिति बिल्कुल भिन्न है, यहां न केवल प्राप्त प्रशिक्षण को, बल्कि इस चीज़ को भी ध्यान में रखना पड़ता है कि इनमें से अधिकांश युवजनों को अपने को प्रशिक्षित करने का कोई मौक़ा ही नहीं मिला। अगर हम बहुत भारी और कड़ा फ़िल्टर क़ायम करें, तो हम उच्च शिक्षा संस्थानों में सर्वहारा तत्वों के प्रवेश को पूर्णतः बंद कर देंगे। यहां हमें उनकी बड़ी ऊर्जस्विता, अध्यवसाय, आगे बढ़ने की योग्यता को ध्यान में रखना चाहिए। वे बौद्धिक स्तर पर नाकाफ़ी ढंग से

---

* रूस में विद्यार्थियों को पांच में से नंबर दिये जाते हैं। – **अनु०**

प्रशिक्षित हो सकते हैं, परंतु उनका सामाजिक अनुभव तथा जोश इतने विशाल हैं कि वे अपनी कमियों को आसानी से पूरा कर लेंगे। इसलिए यहां सामाजिक कसौटी को पूर्णतः लागू किया जाना चाहिए।

कुल मिलाकर, इस साल से हम लड़ाई के मोर्चों पर अपनी विजयों के साथ, जहां हमने युद्ध समाप्त कर दिया है, विभिन्न राजनयिक जीतों तथा उद्योग और कृषि के क्षेत्रों में कुछ विजयों के साथ शैक्षिक मोर्चे पर भी बड़ी विजय का स्वागत कर सकते हैं। हमारे पास अब क्रांति के प्रति असाधारण रूप से समर्पित विद्यार्थी हैं, जो उत्साही, योग्य, ज्ञान-पिपासु हैं – यह विद्यार्थियों का एक नया, असामान्य रूप से मोहक प्रकार है। उनके साथ मेरा इतना संपर्क रहा है कि मैं इसके बारे में पूरे विश्वास के साथ बोल सकता हूं। हमें इस विजय को मज़बूत करना चाहिए और यहां भौतिक आधार के प्रश्न पुनः सबसे आगे आते हैं। इन नौजवानों की ऐसी कड़ी परीक्षाएं ली जा सकती हैं कि वे निराश हो जायें। हम लोगों को उनके कामों से ले रहे हैं (क्योंकि वे सभी यह या वह सोवियत कार्य पूरा कर रहे हैं) – हम उन्हें उनके कामों से इसलिए लेते हैं कि वे अध्ययन कर सकें और हमें उन्हें अध्ययन करने का मौक़ा देना चाहिए। यह काफ़ी बड़े व्यय की मांग करता है और यह एक ऐसा कार्य है, जिसे हमें पूरी गंभीरता से पूरा करना चाहिए।

स्कूल का दर्शन और क्रांति *

मैं यहां श्रोताओं के ध्यान के लिए हमारी शिक्षा नीति के सिद्धांत के कुछ सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचारों को पेश करना चाहता हूं।

साल भर पहले मैं शायद कुछ हद तक स्कूल के दर्शन को समर्पित सामान्य सिद्धांतों के संबंध में भाषण करने का साहस नहीं कर सका होता, क्योंकि केवल हाल में ही "तीसरे मोर्चे" पर, जैसा कि यह कहलाता है, वह उल्लेखनीय सुधार शुरू हुआ, जिसने हममें उन बड़ी महत्वपूर्ण समस्याओं की ओर लौटने की संभावना में विश्वास प्रेरित किया, जिन्हें रूसी जनता ने अपनी शिक्षा जन-कमिसारियत के माध्यम से हल करने के लिए अपने समक्ष रखा है। जब तक हमने उस ख़तरे से संघर्ष – और यह काफ़ी निष्फल संघर्ष रहा है – किया, जिसने स्कूलों के अस्तित्व को ही संकट में डाल दिया था, तब तक स्कूल के किन्हीं आदर्श रूपों के बारे में या आदर्श स्कूल के संक्रमणात्मक रूपों के बारे में भी चर्चा करना अत्यंत मूर्खतापूर्ण प्रतीत होता था। लेकिन आज वैसी बात नहीं है : वर्तमान समय में कमिसारियत (वस्तुतः राजकीय वैज्ञानिक परिषद – "गूस")[1] पाठ्यक्रमों और अध्यापन विधियों संबंधी प्रश्नों पर कार्य, यानी उस अस्थायी सेतु के निर्माण में व्यस्त है, जो हमें अगले कुछ वर्षों में एकीकृत श्रम पालीतकनीकी स्कूल तथा इस आदर्श स्कूल की मुख्य विशेषताओं द्वारा निर्धारित संपूर्ण स्कूली प्रणाली की दिशा में आगे बढ़ने की अनुमति देगा।

हम जानते हैं कि इलाक़ों में, निरपवाद रूप से लगभग सर्वत्र, अध्यापन विधियों के प्रश्नों तथा बच्चों की शिक्षा में अनुसरण किये जानेवाले सिद्धांतों के प्रश्नों ने फिर से कमोबेश पहला स्थान ग्रहण कर लिया है।

---

* संक्षिप्त रूप में प्रकाशित। – **सं०**

इन तथ्यों ने ही, शिक्षाशास्त्र तथा स्कूली नीति के क्षेत्रों में सक्रिय कार्यकलापों के समारंभ के इन स्पष्ट संकेतों ने ही मुझे हमारी स्कूली नीति के मूलभूत सिद्धांतों के संबंध में यह भाषण देने के लिए प्रेरित किया है।

क्रांति के बाद के पहले वर्षों में अक्सर दूसरे चरण के स्कूलों के अध्यापकों तथा उच्च शिक्षा संस्थानों के प्रोफ़ेसरों ने हम पर ये आरोप लगाये: आप स्कूलों को वर्ग-भावना से ओत-प्रोत करना चाहते हैं, आप यहां तक कि छोटे बच्चों को भी अपने प्रचार और आंदोलन में खींचना चाहते हैं, आप युवा आयु-समूहों के संबंध वस्तुगत वर्गहीन शिक्षाशास्त्र तथा तकनीकी कालेजों और विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों के मामले में "महान, वस्तुगत विज्ञान" के साथ छेड़छाड़ कर रहे हैं; आप प्रयोजनवादी लोग हैं, आप ख़ास पार्टी पक्षधरता वाले लोग हैं और आप उस भयानक चीज़ – पार्टी पक्षधरता – को बच्चों की उस शिक्षा के पवित्र मामले में लागू करना चाहते हैं, जिसे पूर्णतः वस्तुगत होना चाहिए और जिसके लिए पार्टी पक्षधरता बिल्कुल परायी चीज़ होनी चाहिए।

शायद बहुत-से लोग आज भी इस दृष्टिकोण से सहमत हों; यह इस बात का प्रमाण है कि हमारे अध्यापक को कितनी कम वैज्ञानिक शिक्षा प्राप्त है, यदि वह ऐसी भाषा में बोल सकता है। इसका यह तनिक भी अर्थ नहीं कि मैं उसे बुरा-भला कहना चाहता हूं: मैं जानता हूं कि यदि रूसी अध्यापक उतनी अच्छी तरह प्रशिक्षित नहीं है, तो यह उसका दोष नहीं है। यहां तक कि प्रोफ़ेसर भी इस अर्थ में जैसे-तैसे प्रशिक्षित प्रतीत होते हैं और केवल कोई ऊतक-विज्ञानी ही नहीं (वे समाजवैज्ञानिक प्रश्नों का अध्ययन नहीं करते, यहां उनसे अत्यधिक अपेक्षा नहीं की जा सकती), बल्कि समाजविज्ञान के प्रोफ़ेसर, जूरिस्ट, शिक्षाशास्त्री भी ऐसी हास्यास्पद एवं अज्ञानताभरी बातें कह सकते हैं। और इसका अर्थ यह है कि अगर स्वयं अध्यापक, स्वयं प्रोफ़ेसर ने, जो शायद किसी नर्सरी स्कूल से विश्वविद्यालय में अध्यापन-पीठ तक समूची शैक्षिक प्रक्रिया से गुज़र चुका है और अब भी इस सरल सच्चाई को नहीं सीखा है कि स्कूल हमेशा एक राजनीतिक, वर्ग-अस्त्र रहा है और हुए बिना नहीं रह सकता, अगर स्वयं अध्यापक होते हुए तथा कुछ निश्चित प्रवृत्तियों को जीवन में

कार्यान्वित करते हुए उसे इस बात का वैसे ही बहुत कम संदेह है कि वह कुछ निश्चित प्रवृत्तियों का वाहक रहा है जैसे कि मोलियेर के नायक को नहीं था कि वह हमेशा गद्य में बोलता रहा था[2] – तब यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि कितने ग़लत ढंग से स्कूल संगठित किये गये हैं, यदि आदमी न तो अपने, न अपने कार्यों और न ही उन सचाइयों के बारे में कुछ जानता हो, जिनके द्वारा वह जीता है।

शिक्षा मूलतः क्या है और सांस्कृतिक इतिहास में यह कौन-सा रूप ग्रहण करती तथा कौन-सी भूमिका अदा करती है? इसके बारे में ऐसे शब्दों में बात की जाती है कि परिणाम सत्य का एकदम विरूपण होता है, जो धुंध के बीच में से धंधुले ढंग से दिखायी देता है। विशेषीकृत प्रशिक्षण संस्थान में अपना कोर्स पूरा करनेवाले किसी विद्यार्थी-अध्यापक को शिक्षा के इतिहास और उस इतिहास के आंतरिक अर्थ की जानकारी नहीं होती, उसके लिए चीज़ों का मूलतत्व ही सचेत या अचेत ढंग से गढ़े गये झूठों से छिपा रहता है। इन्हीं झूठों को मैं अपने व्याख्यान के पहले भाग में यथाशक्ति प्रकट करने का प्रयास करूंगा।

सामान्यतः शिक्षा के उद्देश्य क्या हैं?

मानव अपने इतिहास के प्रारंभिक काल से ही, अपने विकास के प्रथम चरणों से ही, उस समय से ही, जबसे हम उसे ऐतिहासिक और नृजातिवैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा पहली बार प्रेक्षणीय पाते हैं, हमें शिक्षा द्वारा अदा की गयी विशाल भूमिका का ध्यान दिलाता है। जीव जगत् में हम प्रायः ऐसे आश्चर्यजनक तथ्य देखते हैं: एक ऐसा जीव, जिसे पृथक करके कृत्रिम ढंग से पाला गया है, जिसने अपने मां-बाप को कभी नहीं देखा है, जब बड़ा होता है, तो घोंसला बनाने या जाला बुनने लगता है और सो भी ऐसे हुनर के साथ कि यह जानना मुश्किल है कि कैसे यह हुनर उसमें आया। पर हम जानते हैं कि उसमें यह हुनर कहां से आया: यह किसी चिड़िया, मकड़े या गुबरैले में वैसे ही अंतर्जात होता है जैसे कि घड़ी के कल-पुर्ज़ों के लिए निरंतर चलते जाना और सही समय बताना स्वाभाविक है, बेशक बशर्ते कि उसके कल-पुर्ज़े बिगड़ न जायें। हम जानते हैं कि मूलतः अवयव तथा तंत्रिका-तंत्र की संरचना में संचित "मूर्तित अनुभव" निहित होता है, जो एक निश्चित प्राकृतिक उद्दीपन के जवाब में किसी छोटे-से

जीव को अचूक रूप से और हमेशा उसी यथातथ्य तथा जटिल ढंग से कार्य करने के लिए विवश करता है। असंख्य वर्षों के दौरान यह अनुभव अनानुकूलित जीवों की मृत्यु के ज़रिये, सही अनुकूलन स्थायी बनने के ज़रिये, कार्य-विशेष के परिणामस्वरूप अवयवों तथा ऊतकों के शारीरिक या शरीरक्रियावैज्ञानिक परिवर्तन के ज़रिये संचित होता रहता है। इस तरह, प्रतीत होता है कि एक गुबरैला या केटरपिलर यह जानता है कि उसे क्या करना चाहिए ताकि लार्वा या तितली अपने को अनुकूल वातावरण में पा सकें, वह जानता है कि उससे मूलतः भिन्न जीव के अस्तित्व के लिए क्या आवश्यक होगा। जिस तरह हमें इस बात पर आश्चर्य नहीं होता कि शिशु को अपना हृदय स्पंदित करने तथा दूध पचाने के लिए कुछ सीखने की आवश्यकता नहीं होती, उसी तरह हमें इस बात पर भी आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि जानवर अपने लगभग संपूर्ण जीवन में विरासत में प्राप्त ऐसे अनुभव के आधार पर काम करता है, जिसके बारे में यह कल्पना नहीं की जा सकती या बहुत कम की जा सकती है कि यह सचेत प्रक्रिया है।

मनुष्य इससे गहन रूप से भिन्न है। हम मध्य अफ़्रीका में नीग्रो के बच्चे तथा लंदन में एक प्रोफ़ेसर के बच्चे में बड़ा अंतर देखते हैं: भाषा और विचार का विकास बिल्कुल अलग-अलग है, जीवन की आचार संहिताएं अलग-अलग हैं; एक अंग्रेज़ के लिए जीवन से अनुकूलन की विशाल नयी प्रक्रिया है, एक असाधारण तौर से जटिल समाज में सामाजिक संबंधों की विराट मात्रा है, जबकि मध्य अफ़्रीका के बर्बर के लिए यह सब भोंडा; मामूली और अर्ध-पाशविक है। फिर भी, हम यह भली-भांति जानते हैं कि यदि अंग्रेज़ प्रोफ़ेसरों और सांस्कृतिक व्यक्तियों के पूरे वंश से विरासत में प्राप्त अपनी समूची सहजबुद्धि से संपन्न इस अंग्रेज़ बच्चे को अफ़्रीका भेज दिया जाये तथा वहां शुरू से ही उसका पालन-पोषण किया जाये, तो वह संभवतः नीग्रो बच्चे से लगभग या बिल्कुल ही भिन्न नहीं होगा या, हो सकता है, ज़रा-सा भिन्न होगा – शायद वहां का वातावरण शारीरिक रूप से उसके कम उपयुक्त हो। उल्टे, इन सारे द्वेषपूर्ण दावों के बावजूद कि मानवजाति की "निम्न" नस्लें शिक्षा के माध्यम से विकास के उच्च स्तर पर नहीं उठायी जा सकतीं, हम जानते हैं कि यह सफ़ेद झूठ है, कि किसी पिछड़ी ख़ानाबदोश जाति के बच्चे की औसत योग्यता

तथा किसी अभिजात के लड़के की योग्यता के बीच अंतर कुछ भी नहीं है। यदि दोनों का एक ही घर में पालन-पोषण किया जाये, एक ही स्कूल में शिक्षित किया जाये, तो केवल व्यक्तिगत योग्यताएं ही यह तय करेंगी कि कौन आगे बढ़ेगा।

मनुष्य , जिस रूप में हम उसे ले रहे हैं तथा उस पर विचार कर रहे हैं, लगभग पूर्णतः शिक्षा द्वारा निर्मित होता है। मां-बाप से उसने विरासत में वह चीज़ प्राप्त की है, जो (पुनः, बेशक, भूल से) tabula rasa – खाली पृष्ठ – कहलाती है: इस पर सब कुछ लिखा होता है, जो संपूर्ण मानवजाति के लिए सामान्य है, यानी जानवरों के एक जीनस के रूप में मनुष्य के लिए विशिष्ट सभी शारीरिक कार्य; पर वह किस चीज़ में विश्वास करेगा, क्या जानेगा, क्या रखेगा – उसके व्यक्तित्व की अन्तर्वस्तु का ६० प्रतिशत – शिक्षा पर निर्भर होगा। और हरेक जाति का सांस्कृतिक स्तर वस्तुतः इसमें निहित है कि पीढ़ी दर पीढ़ी संचित वह सामूहिक अनुभव कितना विशाल है, उसे कितना विस्तारित किया तथा जीवन परिस्थितियों के अनुकूल बनाया गया है, जिसे आगे चल कर नयी पीढ़ियां शिक्षा के माध्यम से ग्रहण करेंगी।

जानवरों में शरीर-रचना स्वयं बदल और विकसित हो जाती है और प्रत्यक्ष आनुवंशिकता के ज़रिये उनके बच्चों के भाग्य को निर्धारित करती है, मनुष्य में विकास की उच्चतम अवस्था में विश्वविद्यालयों, प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों, विराट टेक्नोलॉजिकल संस्थानों में संचित विशाल अनुभव–यही तो वह चीज़ है, जो एक छोटे बच्चे या बच्ची के विकास की सीमा को निर्धारित करती है। और वह छोटा बच्चा या बच्ची (जो उच्च विकसित जगत् के लिए ऐसा ही एक तुच्छ प्राणी है, जैसा कि कम विकसित जगत् के लिए एक छोटा लार्वा) बिल्कुल भिन्न बाह्य प्रभावों के अंतर्गत आने लगता है और कृत्रिम ढंग से, शिक्षा के माध्यम से वह सामूहिक अनुभव प्राप्त करता है, जो तंत्रिकाओं, मांस-पेशियों और हड्डियों में नहीं निहित होता, वरन पुस्तकों, ज्ञान, औज़ारों और आधुनिक सामाजिक संपदा में पाया जाता है। मानव-समाज की यह विशेषता, जो सुझावों के ज़रिये, अपनी प्रथाओं, अपने ज्ञान, अपने आदर्शों के संप्रेषण के ज़रिये छोटे मानव को अपने ही सांचे में अपने सहनागरिकों के रूप से ढालती है–

यह विशेषता शिक्षा है और यह अकेले मनुष्य के लिए इतने मौलिक ढंग से स्वाभाविक है कि homo sapiens (विचारशील मानव) या homo faber (औज़ार निर्माता मानव) परिभाषाओं के साथ homo educatus (शिक्षित मानव) जोड़ा जा सका।

जिस तरह स्तनपायी जानवरों के लिए एक विशेषता को – यह तथ्य कि अपने विकास की प्रारंभिक अवस्था में उनके बच्चे अपनी मां के दूध पर जीवित रहते हैं – लिया जाता है, उसी तरह मनुष्य की विशेषता यह है कि भाषा के द्वारा, संकेतों की जटिल प्रणाली के द्वारा समाज एक पूर्णतः निस्सहाय प्राणी को शिक्षित करता और उसे अपने स्तर पर ऊंचा उठाता है। लेकिन चूंकि शिक्षा या पालन-पोषण की प्रक्रिया में दो तत्व निहित हैं – प्रगति के रूप में विदित मानव अनुभव के संगठन में निरंतर विकास का तत्व तथा हज़ारों वर्षों के दौरान निर्मित अनुभव के आत्मसात्करण द्वारा बच्चों को इस प्रगति के प्रत्येक चरण में लाने का कौशल – वस्तुतः शिक्षा की यह विशेषता ही हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचने को विवश करती है कि यह न तो कभी वस्तुगत थी और न हो सकती थी, यह हमेशा वर्ग-पूर्वाग्रहों और वर्ग-प्रवृत्तियों द्वारा विरूपित थी और अवश्य ही विरूपित की जाती थी।

क्यों? क्योंकि मानवजाति के संपूर्ण इतिहास में हम कोई भी स्वस्थ समाज नहीं देखते। कतिपय मामलों में हम कमोबेश स्वस्थ समाज से कुछ मिलती-जुलती किसी चीज़ की कल्पना कर सकते हैं, लेकिन अधिकांश मामलों में हम ऐसी कोई चीज़ नहीं देखते। हम कमोबेश आदिम क़बायली कम्यूनों के बारे में कम ही जानते हैं। और विकास के अगले चरणों में हम देखते हैं कि युद्ध, शिकार और ग़रीब खेतिहरों पर धनी खेतिहरों का प्रभुत्व समाज को स्वत्वाधिकारियों और स्वत्वहीनों, अमीरों और ग़रीबों, कुलीनों और अकुलीनों, ज्ञानियों और अज्ञानियों में विभाजित कर देते हैं। और यह न सोचें कि इसका अर्थ यह है कि तब से सामाजिक अनुभव ग़रीबों में नहीं संचित होगा, कि इसका मात्र ऊपरी वर्गों द्वारा ही इस्तेमाल किया जायेगा। मगर अनुभव, ज्ञान, शिक्षा शासक वर्गों के विशेषाधिकार अवश्य बनते हैं और यह इस तरह की शिक्षा में निहित बुराई का सिर्फ़ एक छोटा-सा ही अंश है।

केवल यही नहीं किया जाता है : छोटा अभिजात, छोटा विशेषाधिकार-प्राप्त व्यक्ति अपनी इस चेतना से विषाक्त होता है कि वह कोई ख़ास चीज़ है, कि वह ईश्वरों के यहां से उतरा है, कि वह उच्च वंश का है, कि वह अभिजात, योद्धा है, कि दूसरों को उसकी सेवा करनी चाहिए, कि उसके हितों या मौजों के सामने अन्य लोगों का जीवन कुछ नहीं है। शुरू में ही ऐसे बच्चे को दूसरों के प्रति अहंकार बरतने, हिंस्र बनने की शिक्षा दी जाती है। शुरू से ही उसे विश्वास दिलाया जाता है कि तलवार धारण करना उसका अधिकार है, कि वह अभिजात है, कि वह एक सिपाही, पेशेवर हत्यारा है – यह एक विशेष सम्मान है, क्योंकि ऐसे ही ईश्वर हैं, ऐसे ही उसके असामान्य अभिजात पूर्वज थे ; ईश्वर भी हत्यारे थे और तुम भी हत्यारे हो, दूसरों के सिरों को पावों से रौंदना तुम्हारा अधिकार है।

ऐसे अभिजात के लिए संपूर्ण शिक्षा को इसके अनुरूप बनाया जायेगा, सभी विज्ञान उसे इसी भावना से पढ़ाये जायेंगे। वे सभी सत्य, जो छोटे अभिजात को ऐसा करने के अपने अधिकार के बारे में संदेह पैदा कर सकते हैं, अशिक्षाशास्त्रीय चीज़ के रूप में, "अभिजात" बच्चे के लिए अनुपयुक्त चीज़ के रूप में प्रयोग से हटा दिये जायेंगे अथवा उन्हें तोड़-मरोड़ दिया जायेगा, जैसा कि हम जानते हैं कि ईसाई धर्म को अत्यंत उच्च अवस्थाओं में प्रायः तोड़ा-मरोड़ा जाता है। आख़िरकार, ईसाई धर्म मूलतः सभी अभिजात वर्गों, कुलीनताओं, युद्धों, प्रतिशोधपूर्ण भावनाओं की पूर्ण अस्वीकृति है। पर हम सभी जानते हैं कि हमारे भूतपूर्व अफ़सरों और अभिजातों को ईसाई धर्म पढ़ाया जाता था, उन्हें बताया जाता था कि ईश्वर के पुत्र ने स्वयं कहा है : "यदि कोई तुम्हारे एक गाल पर चांटा मारे, तो तुम दूसरा गाल भी उसके सामने कर दो।" लेकिन अगर अफ़सरों ने ऐसा किया होता, तो उन्हें अपने रेजिमेंटों से भगा दिया गया होता। उल्टे, ऐसे अपमानकर्ताओं को द्वंद्वयुद्ध के लिए ललकारा और मार दिया जाना चाहिए – यह उनके सम्मान-संहिता का एक अंग था। और पुरोहित, जेसुइट या दूसरे पादरी का काम कोई बचाव का रास्ता ढूंढ़ना तथा यह कहना था कि ईश्वर के पुत्र को आत्मिक अर्थ में समझना चाहिए, कि इसे दैनंदिन जीवन में नहीं लागू किया जाना चाहिए।

इंजील का संदेश, जो निम्न वर्गों के बीच से प्रकट हुआ, भाईचारे

और समानता की भावना से ओत-प्रोत है। यह सही है कि यह संघर्ष की सभी भावना से रहित है, यह रहस्यमय ढंग से हमसे ऊपर से सहायता की प्रतीक्षा करने का आह्वान करता है, यह निम्न वर्गों के बीच निष्क्रियता और सहिष्णुता को प्रोत्साहित करता है – यह भयंकर कमी है – लेकिन तो भी यह एक ऐसा सिद्धांत है, जो निम्नवर्गीय लोगों के बीच उत्पन्न हुआ, इस पर उनकी छाप है। निम्नवर्गीय लोगों को छलने तथा उन्हें सदा-सर्वदा के लिए सहिष्णु बनाये रखने के लिए शासक वर्गों ने इसे, ईसाई धर्म को, प्रधान धर्म घोषित किया और अपने को ईसा-प्रेमी सिपाही तथा राजाओं को ईश्वरीय अधिकार-प्राप्त सम्राट घोषित किया। क्या इसका यह अर्थ है कि इस तरह उन्होंने शिक्षा की भावना को बदल दिया? उन्होंने यह सब केवल शुद्ध शब्दों के एक मामले के रूप में छोड़ दिया और यह मेरी उक्ति का एक और प्रमाण है।

शिक्षा को इस ढंग से चुन कर अनुकूल बनाया जाता है कि अभिजात (और यह बुर्जुआ पर भी लागू होता है) अपनी वर्ग भावना, सम्मान-भावना, रक्त-पिपासा, दास-स्वामी के रूप में अपनी प्रशासनिक प्रतिभा को विकसित कर सके। और इस दृष्टि से उसी शिक्षक को अच्छा माना जाता है, जो उसमें यह सब विकसित कर सके।

सामाजिक सोपान से हम जितना ही अधिक नीचे जाते हैं, स्कूल उतना ही अधिक बदलता जाता है। शासक वर्ग मांग करते हैं कि निम्नवर्गीय लोगों के स्कूलों में पहुंचनेवालों को अधीनता की भावना में, उस समाज के प्रति आलोचना-रहित भावना में शिक्षित किया जाना चाहिए, जिसमें वे रहते हैं। इसमें इतिहास की छद्म-देशभक्तिपूर्ण, सरकार द्वारा स्वीकृत शिक्षा सहायता पहुंचाती है, इसमें तथाकथित धर्मग्रंथ की शिक्षा सहायता पहुंचाती है, जो संपूर्ण प्रकृति का एक विकृत चित्रण प्रस्तुत करती है और जिसके द्वारा कुछ अतिकाल्पनिक विचारों की आड़ में उन हास्यास्पद बातों के साथ बच निकला जा सकता है, जो अन्यथा दीन-हीनों, शोषितों को साफ़-साफ़ दिखायी दे देंगी। स्कूल में ऐसा अनुशासन लाया जाता है, जो बच्चे को प्रारंभिक वर्षों से ही यह सोचने की शिक्षा देता है कि वह एक अधीन प्राणी है, कि उसे ऐसी कोई भी चीज़ नहीं करने दी जाती, जो वह करना चाहता है, कि वह अनायुक्त अफ़्सर के मातहत क़वायद करनेवाला

मात्र एक सिपाही है, कि वह एक ऐसी मानव-सामग्री बनेगा, जिसकी सहायता से राज्य अपने कार्य पूरा करता है और उसे लूटेगा।

यदि आप किसी भी देश के स्कूलों को भ्रांतियों के धुंधले चश्मे से नहीं, वरन अपनी वास्तविक आंखों से देखें, तो यह तुरंत बिल्कुल स्पष्ट हो जायेगा कि ये स्कूल ऐसी संस्थाएं हैं, जिनमें एक निश्चित राजकीय सत्ता प्रत्येक सामाजिक वर्ग को उन कामों को करने के लिए तैयार करती है, जो राजनीतिक रूप से उसके लिए आवश्यक होते हैं। ऊपरी वर्गों के बच्चों को अपने काम सिखाये जाते हैं, मध्यम और निचले वर्गों को अपने काम सिखाये जाते हैं तथा विज्ञान, ज्ञान और कौशल प्रत्येक वर्ग को उस अनुपात में पढ़ाये जाते हैं, जो राज्य के लिए आवश्यक होता है, ताकि अपने काम के जानकार और कुशल कर्मी मिल जायें, पर हमेशा अत्यधिक आगे न बढ़ जाने की सावधानी बरतते हुए ही, क्योंकि यह अवांछनीय है कि लुसिफ़र के गर्व तथा हठीली, आलोचनात्मक भावना से भरा वह विज्ञान बच्चों को अत्यधिक बुद्धिमान बनाये और उन्हें मोल्चालिन* की उस भावना से मुक्त करे, जो वर्ग समाज के लिए इतना मोहक और आवश्यक है।

ऐसे ही स्कूल सर्वत्र हैं। बेशक आप मुझसे एतराज़ कर सकते हैं: "नहीं, सर्वत्र नहीं हैं। हम ज़ारों के निरंकुश शासन के अंधेरे में अपने रूसी विश्वविद्यालयों की याद करते हैं। मास्को विश्वविद्यालय ने ऐसे स्कूलों के विरुद्ध प्रतिवाद किया था। उच्च स्कूलों में, कैडेट कोर में ऐसे कुछ अच्छे अध्यापक थे, जिन्होंने अन्य विचार पेश किये। ऐसे कुछ अच्छे गांव स्कूल अध्यापक थे, जो बच्चे के पंख काटने तथा उसे मनुष्य के बजाय घरेलू मुर्ग़ा बनाने के कर्त्तव्य के साथ स्कूल में जेन्दार्म नहीं बनना चाहते थे।"

बेशक, ऐसे कुछ लोग थे, जो भिन्न थे, मैं भी कहूंगा, जी हां, थे। लेकिन यह कोई खंडन नहीं है। एक अत्यंत ज्वलंत उदाहरण यह लें कि विश्वविद्यालयों में शिक्षा कर्मियों का एक बड़ा भाग तथा छात्रों का और भी बड़ा भाग कई दशकों के दौरान निरंकुशतावाद के विरुद्ध संघर्ष के दुर्ग थे। यह ऐसा क्यों था? क्योंकि उस अवधि

---

* क्लासिकीय रूसी साहित्य का एक पात्र, जो चापलूसीभरी आज्ञाकारिता का प्रतीक है। – **अनु०**

11*

में दो वर्गों – एक ओर, उच्च पुरोहित वर्ग, फ़ौजी अफ़सरों की शक्ति तथा सरकारी नौकरशाही तंत्र द्वारा समर्थित भूस्वामी वर्ग, जो रूस को हर क़ीमत पर अंधकार, पिछड़ेपन और जाड़े की स्थिति में बनाये रखना चाहता था और दूसरी ओर, बुर्जुआ वर्ग, जो बड़े संसाधन जमा करने लगा था, जिसे रेलवे, वाष्पचालित जलपोतों, तार-संचार, सुसंगठित डाक्टरी सेवा, प्राकृतिक संपदा के दोहन, इंजीनियरों, डाक्टरों, आदि की, उस संपूर्ण सांस्कृतिक वातावण की आवश्यकता थी, जिसके बाहर पूंजीवाद नहीं विकसित हो सकता, जिसके बाहर मुनाफ़ा नहीं कमाया जा सकता – के बीच संघर्ष शुरू हो रहा था। इस संबंध में नये और पुराने के बीच संघर्ष तुरंत शुरू हो गया।

पीटर महान भी अंशतः वहां तक एक बुर्जुआ क्रांतिकारी था, जहां तक उसने विश्वास किया कि अकेले अभिजात वर्ग पर निर्भर करना असंभव है, जहां तक उसने व्यापक सामाजिक संस्तरों को शिक्षित करने की आवश्यकता को समझा: वह एक खुदराफ़रोश लड़के को मंत्री बना सकता था, वह बुर्जुआ मूल के यायावर विदेशियों के प्रति कृपा-दृष्टि रखता था – उसने डच कप्तानों और स्विस दस्तकारों को उच्च पदों पर नियुक्त किया। जहां तक यह रूस के यूरोपीयकरण के अनुरूप था, पीटर ने वाणिज्य, वाणिज्यिक पूंजी और उदीयमान औद्योगिक पूंजी को विस्तार प्रदान करने का प्रयास किया। पुराने अभिजातों ने कहा: "यह कैसा ज़ार है, यह पुछकटा ज़ार है, जो हमारी दाढ़ियां कटवा देता है – यह पराया है।" यह इस वजह से हुआ कि सरकार ने बुर्जुआ वर्ग का दृष्टिकोण अपनाने और उस बुर्जुआ दृष्टिकोण से उस वर्ग की दकियानूसी से लड़ना शुरू किया, जिस पर उसने तब तक भरोसा किया था।

और यही रूसी विश्वविद्यालयों का उद्गम-स्रोत था। मध्यम-वर्गीय तत्वों को खींचना, उनके बच्चों को उस राज्य के लिए ज़रूरी सभी चीज़ें पढ़ाना आवश्यकता का मामला था, जिसके पड़ोसी देश अत्यधिक विकसित पूंजीवादी देश थे। इसका परिणाम समाज के अंदर लंबा संघर्ष था। स्वयं बुर्जुआ वर्ग द्वारा अस्तित्व में लाये गये बुद्धिजीवियों – वकीलों, इंजीनियरों, आदि – के साथ बुर्जुआ वर्ग ने एक और ही ढंग की शिक्षा – अधिक वस्तुगत विज्ञान, अधिक प्राकृतिक विज्ञान, टेक्नोलॉजी और कम बैरक मार्का दृष्टिकोण – की मांग की।

यह एक बिल्कुल स्वाभाविक संघर्ष है। अच्छा व्यापारी, कारख़ानेदार, बैंकर, रेल-निर्माता साफ़-साफ़ दिखायी देता है। वह दो-टूक ढंग से कहता है: "भाड़ में जाये, यह किस काम का कि मेरा लड़का या लड़की मृत लैटिन में जीवित ही दफ़्न हो जाये, उसका उस निरर्थक धर्मग्रंथ से गला क्यों घोटें, जो विगत का विश्वास है, जो दुनिया के आधुनिक विचार से मेल नहीं खाता। आप उसे वास्तविक, आधुनिक स्कूल में पढ़ाइये और आदमी बनाइये।" (इसी वजह से जर्मनी में उन स्कूलों को, जहां बुर्जुआ भावना अधिक बलवान थी, "वास्तविक स्कूल" का नाम दिया गया और आगे चल कर यहां भी इस नाम का इस्तेमाल किया जाने लगा।) "उसे वास्तविक ज्ञान पढ़ाइये, उसे वह प्रशिक्षण, वह ज्ञान प्रदान कीजिये, जो उसे व्यवसायी, नाविक या निर्माता बनने के लिए ज़रूरी है, ऐसे ही आदमी की मुझे ज़रूरत है।" पर निरंकुशता ने कहा: "मुझे एक ऐसे नौकरशाह की ज़रूरत है, जो यह कहेगा, 'जी हां, साहब', 'कृपा करके साहब', मुझे ऐसे आदमी की ज़रूरत है जो वर्दी पहनेगा; मैं आपको उतनी आसानी से नहीं निकलने दूंगा; आप उन छात्रों के बीच डोलते-फिरते हैं और छात्र हैं कि क्रांतिकारी बन जाते हैं।"

आपको इस चीज़ को समझाने के लिए मैं एक छोटा-सा दृष्टांत दूंगा कि भूस्वामी और नौकरशाही हितों तथा बुर्जुआ हितों के बीच ऐसा टकराव क्यों हो सकता है। फ़ौज को लें। साम्राज्यवादी युद्ध के समय तक यह माना जाता था कि सिपाही को दो या तीन साल की अवधि में प्रशिक्षित किया जा सकता है; फ़्रांस ने दो साल से तीन साल की अवधि अपनायी (अन्यथा, उनका कहना है, कि अच्छा सिपाही नहीं पा सकते)। युद्ध के बाद इस प्रश्न से संबंध रखनेवाले सभी फ़्रांसीसी, अमरीकी और जर्मन जनरलों ने यह माना कि उत्तम सिपाही चार महीनों में ही तैयार किया जा सकता है। क़वायद आवश्यक नहीं है। बैरक-चौक के युद्धाभ्यास, गूज़-स्टेप मार्च पद्धति के साथ सभी क़वायद, जो इस हद तक चला करते थे कि अभी भी प्रशा के फ़्रेडरिक महान की प्रेतात्मा से पिंड नहीं छुड़ा पाये थे – यह सब बकवास, व्यर्थ की बात है। ज़हरीली गैस और तोपख़ाने से लोगों की हत्या करने के कार्य का इस क़वायद से कोई संबंध नहीं है।

तो क्या आप यह सोचते हैं कि ये जनरल पागल थे कि उन्होंने

इस चीज़ को पहले नहीं समझा? वे भली-भांति समझते थे कि इस ढंग से बड़ी संख्या में लोगों के समय को बर्बाद करना तकनीकी दृष्टि से मूर्खतापूर्ण था, उन्हें वह चीज़ नहीं पढ़ायी जा रही थी, जिसकी दरअसल युद्ध-काल में आवश्यकता होगी और न ही उन्हें सही ढंग से पढ़ाया जा रहा था। सो, उन्हें किस लिए पढ़ाया जा रहा था? ताकि सिपाही को डराया और सम्मोहित किया जा सके। बैरकें वह स्थान हैं, जहां आदमी में ऐसी आंतरिक भावना प्रेरित की जाती है कि सिपाही ज़रूरत पड़ने पर अपने मां-बाप पर भी गोली चलाने में नहीं हिचकिचाये। लोगों को जड़ बना दिया जाना चाहिए, उन्हें मशीन, बुद्धू बना दिया जाना चाहिए – और तब वे जैसा कहा जायेगा, वैसा करने लगेंगे और ऐसा करने में उनके अंतःकरण को कोई क्षोभ नहीं पहुंचेगा। आदमी को ऐसी अवस्था में लाने के लिए बैरक-चौक के तीन साल के क़वायद की ही आवश्यकता थी।

ठीक यही चीज़ क्लासिकीय उच्च स्कूल के बारे में भी सही है: आठ साल के क़वायद की आवश्यकता थी, ताकि यूरोपीय – और चीनी – जीवन की एक सबसे आश्चर्यजनक परिघटना – नौकरशाह – को पैदा किया जा सके। और जीवित लोगों की बड़ी या छोटी संख्या को मशीनों में बदल दिया जाता था, उनकी जीवित आत्माओं की हत्या कर दी जाती थी, सिर्फ़ उनका शरीर ही बचा रह जाता था। यह पूर्णतः नीतिनिर्धारित प्रवृत्ति थी।

बुर्जुआ वर्ग ने शिक्षा को दूसरे ही ढंग से देखा। इसने "वास्तविक" या आधुनिक स्कूल के लिए संघर्ष किया। और यह भी एक ऐसे समय में, जब बुर्जुआ वर्ग और बुर्जुआ बुद्धिजीवी बेड़ियों में जकड़े हुए थे, जब रूसी निरंकुशता ने उन्हें बड़े संदेह से देखा, जब शिक्षा मंत्रालय एक अशिक्षा मंत्रालय था, जब उसे यह आदेश दिया गया था, "अब तुम इस बात पर सावधानी से निगरानी रखो कि आम लोग बहुत ज़्यादा शिक्षित न होने पायें," जब मुख्य उद्देश्य था, "प्रांतीय परिषदें शिक्षा प्रदान करना चाहती हैं? – इसे मना कर दो!" और "स्वतंत्र विचार प्रेरणाप्रद हैं?" – पादरियों को भेजो ताकि वे स्कूलों में कार्रवाइयों पर नज़र रखें!"

जब इस तरह की चीज़ चल रही थी, तो उदारतावादी बुर्जुआ स्कूल विरोध-भावना से भर गये और इसी वजह से प्रतीत होता है

कि ये विरोधी उदारतावादी स्कूल सभी लोगों के लिए महत्वपूर्ण किसी ऐसी चीज़ की रक्षा कर रहे हैं, जिसे सभी अध्यापकों को जानना आवश्यक है। आप मुझसे कहेंगे, "बेशक, मैं समझता हूं कि शिक्षा मंत्रालय लोगों से क़वायद करवाना चाहता था, लेकिन आख़िरकार दूसरी तरह के स्कूल – निजी स्कूल, ज़ेम्स्त्वो स्कूल[3] भी थे, जो यह नहीं चाहते थे, वे सच्चे लोगों, स्वतंत्र लोगों को शिक्षित करना चाहते थे।" आइये, ज़रा ग़ौर से देखें।

अभी ही मैं आपको चेता देता हूं कि मैं जन-स्कूलों के बारे में बोल रहा हूं, मैं अपवादों के बारे में नहीं बोल रहा हूं, जिनके बारे में मैं बाद में कुछ कहूंगा। आइये देखें कि कैसे बुर्जुआ वर्ग ने अपने स्कूलों को संगठित किया है। सिर्फ़ एक ही देश है, जहां बुर्जुआ वर्ग ने शुरू से अंत तक कमोबेश स्वतंत्र आधार पर अपने स्कूल – असल में बुर्जुआ स्कूल – संगठित किये हैं और यह अमरीका है। मैं अभी ही आपको बताऊंगा कि एक और दिलचस्प क़िस्म का स्कूल – अंशतः स्विस माडल और उससे भी आगे नार्वेजियाई स्कूल है; नार्वेजियाई स्कूल टुटपुंजिया-बुर्जुआ किसान स्कूल है, इसकी अपनी ही विशेषताएं हैं, जो अपने ही ढंग की वर्ग विशेषताएं हैं।

लेकिन हम बुर्जुआ स्कूल के बारे में जिस रूप में वह है उसी रूप में बात करेंगे। फ़्रांस तथा जर्मनी में बुर्जुआ वर्ग अपने ही ढंग के स्कूल संगठित करने में असमर्थ रहे हैं। जिस हद तक उन्होंने ऐसा संगठित करने का साहस नहीं किया, उस हद को पुष्ट करने के लिए मैं दो उदाहरण उद्धृत करूंगा।

बुर्जुआ वर्ग ने यथार्थवादी दृष्टिकोण लिया, उसने कहा: बच्चों के दिमागों में अंधविश्वास नहीं भरने चाहिए, उन्हें ऐसी चीज़ें नहीं पढ़ायी जानी चाहिए, जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सफ़ेद झूठ हैं; उन्हें प्रकृति के बारे में वास्तविक सचाई जानना पढ़ाया जाना चाहिए, ताकि मोटे तौर पर कहें तो वह अच्छा इंजीनियर बन सके, एक ऐसा आदमी बन सके, जो अपने कार्य के क्षेत्र में प्रकृति से निबटने में समर्थ हो। हमें प्रकृति के साथ वास्तविक संघर्ष, उद्योग, व्यापार तथा कृषि के विकास की आवश्यकता है। अतः बुर्जुआ शिक्षाशास्त्री ने पादरी को स्कूल से निकाल दिया, बुर्जुआ शिक्षाशास्त्रियों ने कहा: "हमें पादरियों की ज़रूरत नहीं है, आप धर्म वैसे ही पढ़ा सकते हैं जैसे

कि मिथक और साहित्य, कि ये विकास की विशेष अवस्था में प्रकट होनेवाले मिथक हैं, मगर आप इसे इस तौर पर नहीं पढ़ा सकते कि यह सचाई है।"

हाल ही मैं, कुछ साल पहले एक महानतम जर्मन शिक्षाशास्त्री पाउल्सेन ने इस विचार को बड़ी स्पष्टता के साथ व्यक्त किया, जो एक ऐसा अत्यंत लाक्षणिक तर्क पेश करते हैं, जो मामले को इतना उभार देता है कि बुर्जुआ स्कूल की प्रकृति बेहतर ढंग से प्रकट हो जाती है: "स्कूलों में धर्मग्रंथ पढ़ाने की अनुमति नहीं दी जा सकती क्योंकि बाइबिल का इतिहास तथा एक बड़ी सीमा तक इंजील के वर्णन स्कूल की सभी शेष चीज़ों की भावना का पूर्णतः खंडन करते हैं। स्कूल को बच्चे में सभी परिघटनाओं के वस्तुगत नियमों की चेतना विकसित करनी चाहिए। वह स्कूल किस काम का, जिसने लगभग १२ साल के बच्चों को यह समझ न दी हो कि चमत्कार नहीं घटित होते? उसे बिल्कुल स्पष्ट ढंग से उन नियमों को समझना चाहिए, जो कहते हैं कि पदार्थ अनश्वर है, कि ऊर्जा एक रूप से दूसरे में परिवर्तित हो जाती है, कि 'कुछ नहीं' से 'कुछ नहीं' हाथ लगता – और दूसरी कक्षा में Herr Pjarrer (श्री पादरी) उसे चमत्कारों के बारे में बतायेंगे। बच्चा किसका विश्वास करेगा? यह कहेगा: 'कृपया बताइये कि भौतिकविज्ञान की दृष्टि से यह या वह चमत्कार कैसे घटित हो सका?' वह कहेगा: 'आप कुछ अजीबोगरीब बकवास कर रहे हैं! आप मुझे क्यों बता रहे हैं कि जोन ह्वेल के पेट में तीन दिन रहे? – यह उस चीज़ से बिल्कुल मेल नहीं खाता, जो प्राकृतिक विज्ञान की कक्षा में अध्यापक ने हमें बताया!'

"यह इस वजह से ही कि एक अध्यापक वह विज्ञान पढ़ा रहा होता है, जो दो हज़ार साल पहले, या हज़ार साल पहले या ५०० साल पहले प्रचलित था, जबकि दूसरा आधुनिक विज्ञान पढ़ा रहा होता है: इसकी जड़ समाज में सबसे पिछड़े संस्तरों, देहाती जन-समुदायों के बीच विद्यमान विचारों में पड़ी होती है, जो अपनी मान-सिक ख़ुराक कालातीत विचारों से प्राप्त करते हैं। लेकिन स्कूल कालातीत विचारों का पक्षधर नहीं हो सकता, उसे बच्चों को पुराने विचारों के दायरे से बाहर निकालना चाहिए – तात्पर्य यह कि उसमें पादरियों के लिए कोई स्थान नहीं है। यदि मां-बाप चाहें तो यह सब कुछ स्कूल

के बाहर चलने दें, पर स्कूल में जो कुछ पढ़ाया जाता है वह आधुनिक विज्ञान द्वारा पुष्ट केवल सत्य होना चाहिए – इसके अलावा और कुछ नहीं।"

पाउल्सेन और भी आगे जाते हैं तथा इसके वर्ग तत्व पर ज़ोर देते हैं। वह कहते हैं : "क्या आप यह नहीं सोचते कि एक सर्वहारा का बेटा, जब यह विश्वास करना बंद कर देगा कि संसार की सृष्टि सात दिनों में हुई थी और इसी तरह अन्य बकवासों में भी विश्वास करना बंद कर देगा तो वह स्कूल में कहेगा : 'आप मुझे ऐसी बकवास क्यों बता रहे हैं – भूगोल के अध्यापक ने इसे ग़लत सिद्ध कर दिया है' और अगर वह यह नहीं कहता तो इसका मतलब यह नहीं कि वह इस पर विश्वास करता है। और यदि वह सामान्यतः संपत्ति के क़ानूनों, राज्य व्यवस्था के बारे में, उन सब चीज़ों के बारे में, जो हमारे समाज के नियम तथा आधार हैं, उसे जो कुछ पढ़ाया जाता है उस पर विश्वास करना बंद कर देता है तो क्या होता है? आप उसे आलोचना से आसानी से नष्ट हो जानेवाली कोई नाज़ुक चीज़ पढ़ा रहे हैं और इसके बाद वह आप द्वारा पढ़ायी जानेवाली किसी भी चीज़ पर विश्वास नहीं करेगा।"

और सर्वहाराओं तथा किसानों के बच्चों की आत्माओं में शिक्षा के माध्यम से विश्व और इतिहास पर बुर्जुआ वर्ग के विचारों को भरने की संभावना को बनाये रखने के लिए बुर्जुआ वर्ग ने धर्मग्रंथ को वैसे ही बाहर फेंक दिया, जैसे कि स्लेज के पीछे दौड़ते भेड़ियों के सामने सूअर का छौना फेंक दिया जाता है। अलविदा धर्मग्रंथ – यह हमारा कमज़ोर पक्ष था। तब यह लो, प्रगति, इसे फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर डालो, शायद हम शेष चीज़ों की रक्षा करने में सफल हों!

लेकिन मैंने पहले ही कहा है कि बुर्जुआ वर्ग ने अपने स्कूल को अंत तक निर्मित करने का साहस नहीं किया। इस संबंध में आस्ट्रियाई शिक्षाशास्त्री, मेधावी फ़ेर्स्टर, जिन्होंने स्कूलों के प्रश्न पर चर्चा की है, कहते हैं : "युद्ध के पूर्व हमारे स्कूल कई तरह से ग़लत ढंग से बने थे। हम उदारतावादी व्यक्तिवाद की भावना से ओत-प्रोत थे, हमने सोचा कि राज्य रात के पहरेदार जैसी कोई चीज़ है, जबकि महत्वपूर्ण चीज़ मनुष्य को जीवन के लिए तैयार करना था।

इसका मतलब यह कि उसे अपनी संस्कृति के लिए संघर्ष करने हेतु तेज़ दांत और लंबे पंजे प्रदान करना था।"[5]

यह एक बड़े शिक्षाशास्त्री के मुंह से एक भव्य आलोचना है। आप १३-१४ साल के लड़के से मिल सकते हैं और पूछ सकते हैं कि उसे भौतिकविज्ञान की परीक्षा पास करने की आवश्यकता क्यों हुई? "ताकि मैं विश्वविद्यालय में दाख़िला ले सकूं।" "और विश्वविद्यालय में दाख़िला किस लिए?" "ताकि आवश्यक पद पा सकूं।" "और पद किस लिए पाना चाहते हो?" "ताकि पैसेवाला बन सकूं, जीवन का आनंद उठा सकूं, एक विशेषाधिकार-प्राप्त व्यक्ति बन सकूं।" इस तरह, समूचा ज्ञान दांत और पंजे बन जाता है। वह लड़का जीवन संघर्ष के लिए सुसमंजित है। आसानी से पद पाने का अर्थ यह है कि स्कूल को मुझे कम से कम परिश्रम से वह ज्ञान प्राप्त करने में मदद करनी चाहिए, जिसकी मुझे ज़रूरत होगी। क्योंकि मैंने व्यक्तिगत रूप से इस या उस कोटि का पद पाने का ध्येय बना रखा है, ठीक उसी तरह, जिस तरह चीनी मंदरिनों के स्कूल में होता है, जहां जब आप एक नये विज्ञान पर अधिकार प्राप्त कर लेते हैं तो आपकी टोपी पर कोई नया बटन या फ़ीती लग जाती है और आप बड़ा सम्मान और पुरस्कार प्राप्त कर लेते हैं। यही "बटन और फ़ीतियां" बुर्जुआ अध्ययन का उद्देश्य हैं।

और फ़ेर्स्टर पूछते हैं: "नतीजा क्या निकला?" नतीजा बुरे नागरिक था। मालूम हुआ कि हम अंतिम युद्ध से जीवित या अर्ध-जीवित बच निकले। मालूम हुआ कि जनता की सहज-प्रवृत्ति ने अब भी दृढ़तापूर्वक कहा कि सब को विल्हेल्म द्वितीय के लिए, "महान जर्मनी" के लिए मर-मिटना चाहिए। लेकिन हालत और भी ख़राब हो सकती थी और हमें ध्यानपूर्वक सोच-विचार करना चाहिए। इसमें साम्राज्यवादी काल की बुर्जुआ सहज-प्रवृत्ति व्यक्त है, जब राष्ट्र अब शांतिपूर्ण ढंग से समझौते पर बिल्कुल नहीं पहुंच सकते, बल्कि हर क़दम पर एक-दूसरे के गले पर चढ़े रह सकते हैं, जब नारा है: "सभी एक के लिए!" हर फ़र्म – "महान जर्मनी" या "महान रूस" – को ऊपर से नीचे तक एक होना चाहिए, हरेक को अपने निजी हितों पर फ़र्म के हितों को वरीयता देनी चाहिए। "देशभक्ति" वह भावना है, जो आदमी को एक ऐसी फ़र्म के प्रति समर्पित बनाती है, जो अपने

मुनाफ़े सिर्फ़ इने-गिने पूंजीपतियों और नौकरशाहों को देती है, एक ऐसी भावना, जो आदमी को अपने निजी हितों, अपने परिवार, स्वास्थ्य और जीवन को त्याग देने के लिए तत्पर बनाती है।

इस संबंध में "देशभक्तिपूर्ण शिक्षा" की एक ख़ास मानव-विरोधी प्रवृत्ति होती है, क्योंकि यहां "देशभक्ति" मात्र नागरिकों का उनके विश्वास या राष्ट्रीयता का ख़्याल किये बिना लुटेरों की उस फ़र्म का समर्थन करने का आह्वान है, जिसने यथासंभव अधिक लोगों को इकट्ठा कर लिया है।

फ़ेर्स्टर कहते हैं कि बच्चे को देशभक्ति की भावना में, आत्म-त्याग की भावना में, सामाजिक एकता की भावना में, सामूहिकता (बेशक देशभक्तिपूर्ण) की भावना में शिक्षित किया जाना चाहिए और अपने से पूछते हैं: यह बुर्जुआ स्कूल में कैसे किया जाये? हम कैसे किसानों या सर्वहाराओं के बेटे में यह भावना भरेंगे कि उसे समष्टि के लिए अपना बलिदान कर देना चाहिए? वह पूछेगा कि क्यों मैं संपूर्ण जीवन कमरतोड़ मेहनत करूं और दुःख उठाऊं तथा यों ही मर जाऊं और किसी कारण से देशभक्त बनूं, जबकि "मेरे देश" में मुट्ठी भर लोग ऐशोआराम में रहें?

फ़ेर्स्टर पूछते हैं कि क्या निम्नवर्गीय लोग आज के "अपने देश" से प्रेम कर सकते हैं? नहीं, वह कहते हैं, विज्ञान की दृष्टि से यह असंभव है। अगर निम्न संस्तरों के लड़के या लड़की को वैज्ञानिक विकास प्रदान किया जाये, तो वे अपने देश से प्रेम नहीं करेंगे, वे तो इसमें विद्यमान व्यवस्था से क्रुद्ध हो उठेंगे...

बुर्जुआ वर्ग अपने ढंग का स्कूल कभी पूरा नहीं कर सका, क्योंकि सच्चे स्कूल को अपने वैज्ञानिक अंश में पूर्णतः ईमानदार होना चाहिए। सभी तथ्यों को वे जिस रूप में हैं उसी रूप में बताना, बच्चे के समक्ष समस्याओं को वैसे ही पेश करना जैसे कि वे संपूर्ण जीवन में पेश होती रही हैं – इसका अर्थ बच्चे को बुर्जुआ वर्ग के विरुद्ध खड़ा करना होगा। बुर्जुआ प्रणाली टेक्नोलॉजिकल प्रगति, वैज्ञानिक प्रगति का प्रतिवाद करती है।

हमें शोषकों, बुर्जुआ लोगों की ज़रूरत नहीं है। हमें इंजीनियरों, टेक्नोलॉजिस्टों, मज़दूरों और किसानों की आवश्यकता है, हमें रचनात्मक कार्य करनेवाले समूचे लोगों की आवश्यकता है और अगर उनमें

से कोई मुनाफ़ा कमा रहा है तो वह उन्हें नुक़्सान पहुंचा रहा है। फ़ैक्टरी वह स्थान है, जहां प्रकृति के साथ संघर्ष आगे बढ़ता है, ताकि प्रकृति को मानवजाति की मांगों के अनुसार बदला जा सके – यह समाजवादी अवधारणा है। यहां मानव-शक्तियों का संगम, मशीनों का जमघट, कतिपय ऊर्जाओं की क्रियाशीलता, कतिपय लोगों का सहयोग, कच्चे मालों के आवागमन के ज़रिये, मनुष्य के उपयोग के लिए तैयार मालों की रवानगी के ज़रिये विश्वव्यापी संपर्क-सूत्र हैं। लेकिन प्रतीत होता है कि यह फ़ैक्टरी किसी एक अलग आदमी की है और इसके द्वारा उत्पादित बेशी मूल्य उसकी जेब में चला जाता है: यदि यह फ़ैक्टरी उसके लिए मुनाफ़ादेह नहीं होती, यदि यह जूते या कपड़े पैदा करते हुए मुनाफ़ा नहीं लाती, तो वह इसे बंद कर सकता है; यदि सस्ते मज़दूर उपलब्ध हैं, तो वह नयी मशीन लागू नहीं करेगा।

और यह तथ्य कि वे एक दूसरे के साथ प्रतिद्वंद्विता करते हैं, कि वे संसार को युद्ध के कगार पर लाते हैं, जिसमें सर्वनाश होता है और धरती ख़ून से लाल हो उठती है – ठीक इसी चीज़ को जड़ से नष्ट किया जाना चाहिए। टेक्नोलॉजी और विज्ञान की दृष्टि से यह सब कालातीत अस्थीभवन, विगत का अवशेष, मानवजाति तथा हमारे संपत्ति संबंधों का भयंकर विरूपण है। विज्ञान तथा श्रम अपने को इस जड़ भार से मुक्त करने का प्रयास करते हैं, मांग करते हैं कि मानव-जीवन को किन्हीं अधिकारों व विशेषाधिकारों का ख़्याल किये बिना वैज्ञानिक सत्य के आधार पर संगठित किया जाये। क्या बुर्जुआ सरकार स्कूलों को यह कहने की अनुमति दे सकती है? कभी नहीं, न फ़्रांस, न ही अमरीका में कोई अध्यापक यह कहेगा। ऐसे अध्यापक या प्रोफ़ेसर को तुरंत ही निकाल दिया जायेगा। अमरीका में व्याख्यान-कक्षा में समाजवाद पढ़ाने का साहस करनेवाले अध्यापक को २४ घंटे के भीतर निकाल दिया जायेगा और हम इसके अनेकानेक उदाहरण देखते हैं, अन्य देशों की तो बात ही जाने दें।

अतः स्कूल बुर्जुआ वर्ग के अंतर्गत ईमानदार नहीं हो सकता, यह बुर्जुआ वर्ग के अंतर्गत वैज्ञानिक नहीं हो सकता – यह शिक्षा के संबंध में एक निश्चित सीमा तक ही वैज्ञानिक हो सकता है। बुर्जुआ बच्चे को कैसे शिक्षित कर सकता है? उसको अनुशासन में उतनी ही दिलचस्पी होती है, जितनी कि उसके पहले अभिजात वर्ग को थी।

क्या उसे फ़ौज की आवश्यकता नहीं है, क्या उसे अपनी फ़ैक्टरी में कमरतोड़ मेहनत करनेवाले लोगों की आवश्यकता नहीं है?

वह स्कूल, जो कम्युनिज़्म अपने साथ लाता है, सबसे पहले एकीकृत स्कूल है, यानी अध्ययन की एक ही विधियां लागू करते हुए सभी वर्गों के लिए एक ही स्कूल है। आदर्श रूप में हम वह स्कूल रखना चाहते हैं, जो सभी बच्चों को उनके मूल का ख़्याल किये बिना आगे विकास की संभावना प्रदान करता है, जो "जन"-स्कूलों (जहां से आप चार साल के बाद निकल जाते हैं और आगे पढ़ाई जारी नहीं रखते) तथा धनी लोगों के लिए स्कूलों के बीच कोई भेद नहीं करता — यह सच्चा अवर्गीय स्कूल है: लड़के और लड़कियां तैयारी कक्षा में दाख़िला लेते हैं तथा विश्वविद्यालय में अंतिम सत्र के साथ अपनी शिक्षा पूरी करते हैं। सबके लिए अवसर समान हैं। और चूंकि देश अभी समूची आबादी को सभी चरणों से नहीं ले जा सकता, इसलिए अत्यधिक योग्य बच्चों को ही उच्च शिक्षा के लिए स्वीकार किया जाता है।

दूसरे, यह श्रम स्कूल है। श्रम स्कूल, यानी ऐसा स्कूल, जो रट-रट कर अध्ययन करने से यथासंभव मुक्त हो चुका है, जो बच्चे को अपनी योग्यताओं को खेल के ज़रिये विकसित करने, इस खेल को शनैः-शनैः सरल श्रम प्रक्रिया में और आगे चल कर व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करनेवाली जटिल तथा फलप्रद प्रक्रियाओं में बदलने में समर्थ बनाता है। यह बच्चे को व्यावहारिक ज्ञान तथा कौशल के क्षेत्र में उसकी मूल दिलचस्पियों के ज़रिये मानसिक आहार प्रदान करते हुए और भी अधिक निश्चित रूप से आकर्षित करता है, क्योंकि यह शिक्षा संपूर्ण अवयवों के सक्रिय कार्य की प्रक्रिया में बाह्य इंद्रियों द्वारा ग्रहण की जाती है।

इस संबंध में अमरीकियों ने वह सब कुछ किया है, जो वे कर सकते थे: उनके यहां कोई एकीकृत स्कूल नहीं हैं और हो भी नहीं सकते, लेकिन जहां तक श्रम स्कूल का संबंध है, आत्मसात्करण की सक्रिय विधियों को वरीयता देने के मामले में अमरीकियों ने बहुत कुछ किया है। उनसे बहुत कुछ सीखा जा सकता है और हम जानते हैं कि श्रम — सैर, रेखांकन, बच्चे या बच्चों के ग्रुप द्वारा प्रदत्त विषय पर स्वतंत्र रूप से काम करना, रिपोर्ट पेश करना, वाद-विवाद करना, माडल बनाना, नाट्य-रूपांतरण, आदि के माध्यम से शिक्षा की यह

विधि कैसे पढ़ायी गयी चीज़ को भूलने तथा अज्ञानता में, जो हमारे पुराने स्कूलों के लिए एक सामान्य परिघटना रही है, गिरने के ख़तरे से लगभग पूरी तरह बचाते हुए बच्चे के मन में प्राप्त ज्ञान की गहरी जड़ें जमाती है।

लेकिन श्रम स्कूल से हमारा आशय केवल यही नहीं है।

दूसरे चरण के स्कूल के लिए हमारे दिमाग़ में आत्मसात्करण की सक्रिय विधि के ज़रिये विभिन्न विषयों की शिक्षा और वार्ताओं तथा नोटों के द्वारा इसकी पुष्टि ही नहीं है। यहां हमारे दिमाग़ में स्वयं श्रम की शिक्षा भी है। श्रम की इस शिक्षा (तकनीकी शिक्षा से भिन्न, जहां उद्देश्य आदमी को सिर्फ़ एक अच्छा कर्मी बनाना होता है) को हम सामान्य शिक्षा का अंग समझते हैं। यानी यह केवल एक अच्छा ख़रादी या अच्छा सूती कर्मी तैयार करने का मामला ही नहीं, बल्कि इस चीज़ का भी मामला है कि मनुष्य यह जान सके कि श्रम क्या है।

वर्तमान वैज्ञानिक रूप से क़ायम कृषि और उद्योग विज्ञान का शुद्ध मूर्तीकरण है। यदि आप बच्चे को साथ लेकर फ़ैक्टरी का, उसके मरम्मतख़ाने, भंडार का, उसके आंतरिक अनुशासन, लेखा-प्रणाली का अध्ययन करने जायें, तो आप किन चीज़ों का अध्ययन कर रहे होंगे? आप साथ ही साथ प्रकृति के सभी नियमों का भी अध्ययन कर रहे होंगे। आपको भौतिक विज्ञान, रसायनविज्ञान, आदि के लाखों जीते-जागते उदाहरण मिलेंगे, आप जीवित प्राणियों के बारे में विज्ञानों से गुज़रेंगे, आप गणितशास्त्र, यांत्रिकी, उत्पादन-विशेष की व्यावहारिक प्रक्रियाओं के बारे में विशाल जानकारी प्राप्त करेंगे।

हम अपने स्कूल को "पालीतकनीकी" कहते हैं, क्योंकि हम चाहेंगे कि श्रम का अध्ययन केवल एक उदाहरण में ही न किया जाये। फ़ैक्टरी के इतिहास का अध्ययन करने में आप श्रम संबंधों के विकास का अध्ययन करते हैं, आप पता लगाते हैं कि व्यावसायिक बीमारियां क्या हैं, आप सार्वजनिक स्वास्थ्य, शरीररचनाविज्ञान, शरीरक्रिया-विज्ञान – चिकित्सा विज्ञान के एक पूरे के पूरे समूह से टकराते हैं। ज्ञान की कोई भी ऐसी शाखा नहीं है, जो मानव तथा प्रकृति के संबंधों के उस विराट समुच्चय में किसी न किसी रूप में न गुंथी हुई हो, जो कि एक मज़बूत औद्योगिक केन्द्र, फ़ैक्टरी या मिल वास्तव में है। लेकिन बेशक इस कार्य-क्षेत्र में और भी बड़ी कठिनाइयां हमारा इंतज़ार

कर रही हैं: बच्चों को शैक्षिक उद्देश्यों के लिए फ़ैक्टरियों या मिलों में लाना इस समय संभव नहीं है, हम अपने को यात्राओं तक और वह भी उन स्थानों की यात्राओं तक ही सीमित रखने के लिए बाध्य हैं, जहां पर्याप्त संख्या में फ़ैक्टरियां तथा मिलें हैं। संक्षेप में, दूसरे चरण के स्कूल को सच्चे श्रम स्कूल में बदलने का सवाल एक बहुत जटिल सवाल है और वह पाठ्यक्रम, जिसकी हम सिफ़ारिश कर रहे हैं, इस प्रश्न को इस दिशा में एवज़ी उपायों की ओर इशारा करके हल करता है। यह स्कूल, जिसकी मार्क्स ने इतनी अभिलाषा की, वस्तुत: आज केवल स्वयं सर्वहारा के बच्चों तथा फ़ैक्टरियों और मिलों में प्रशिक्षण लेनेवालों के लिए संभव है: दोनों ही श्रम शक्ति के अंग के रूप में अपनी स्थिति का लाभ उठा सकते हैं तथा इस श्रम को शैक्षिक स्वरूप भी प्रदान किया जा सकता है। यह कार्य फ़ैक्टरी प्रशिक्षण स्कूलों (फ़ाब्ज़ावुच) में अत्यंत सघनतापूर्वक विकसित किया जा रहा है।

पर हमारा स्कूल केवल एकीकृत स्कूल, केवल श्रम और पाली-तकनीकी स्कूल ही नहीं है; ये वे विशेषताएं हैं, जो इसे वैज्ञानिक या शुद्ध शिक्षात्मक संस्थान के रूप में परिभाषित करती हैं। हमारे पास **और भी शैक्षिक** कार्य है: यह इतिहास और समाजविज्ञान के सही अध्यापन तथा स्कूली जीवन के सही संगठन के द्वारा संपन्न किया जा सकता है।

इसके अंतर्गत हम किन उद्देश्यों का अनुसरण कर रहे हैं? हम आदमी को नैतिक और आत्मिक रूप से यथासंभव सामंजस्यपूर्ण ढंग से शिक्षित करना चाहते हैं, एक ऐसा आदमी, जिसने पूर्ण सामान्य शिक्षा प्राप्त की हो और किसी एक क्षेत्र में पूर्ण कौशल आसानी से प्राप्त कर सकता हो। इसी तरह हम अपने सह-नागरिकों के एक सच्चे, सहृदय सहकर्मी के निर्माण को भी दृष्टि में रखते हैं। हम सभी लोगों का एक साथी तथा, जब तक लड़ाई चले, समाजवादी आदर्श के लिए एक योद्धा निर्मित करना चाहते हैं। असल बात यह है कि ये उद्देश्य बहुत पहले ही या तो पूरे के पूरे युगों के दौरान या शिक्षाशास्त्रियों के रूप में मेधावी व्यक्तियों द्वारा शैक्षिक चिंतन की सुस्पष्टता के समयों में सूत्रित कर दिये गये थे।

'जन-शिक्षा की समस्याएं'[6] शीर्षक पुस्तक में मैंने इस चीज़ की रूपरेखा प्रस्तुत की थी कि कैसे यूनानी स्कूल ने (जहां तक यूनानी

राज्य अपने समक्ष पूर्णतः योग्य नागरिक के निर्माण का उद्देश्य रखने को विवश था) प्रत्येक नागरिक को ऐसे शिक्षित करने की समस्या पेश की कि योद्धा, कर्मी और विचारक के रूप में वह एक बर्बर के मुक़ाबले में योग्यता के काफ़ी उच्च स्तर पर हो। यही सब कुछ नहीं था, अब भी अपने बीच अधिक एकजुटता क़ायम करने की ज़रूरत थी और सभी यूनानी विधान, सभी संस्कृति तथा काव्य का एक शैक्षिक उद्देश्य था, यानी शारीरिक और मानसिक रूप से बलवान, प्रत्येक यूनानी के प्रति बड़ी दोस्ती व लगाव की भावना से भरा असामान्य पूर्णता के एक सह-नागरिक को शिक्षित करना। इस शिक्षा का महत्व यह था कि एक यूनानी को अन्य जातियों से तथा युद्ध में बर्बरों के बीच से पकड़े गये दासों से भिन्न होना चाहिए था। यहां तक कि इस उद्देश्य के लिए धर्म का इस्तेमाल किया गया।

हम यूनानी मूर्तिकला के शिक्षात्मक महत्व को लें। लड़का मूर्ति को देखता है। "इसका क्या अर्थ है?" वह पूछता है। उसे बताया जाता है कि अमुक-अमुक ने विशाल सार्वजनिक परीक्षाओं में दौड़, कुश्ती, रथ-दौड़, काव्य पाठ या किसी और प्रतियोगिता में विजय प्राप्त की है और इसलिए उसके सम्मान में स्मारक खड़ा किया गया है और विजयी खिलाड़ी की मूर्ति बिरले ही छवि-सदृश बनायी गयी; मूर्तिकार ने एक सामान्य माडल बनाने की कोशिश की ताकि कोई लड़का यह सोच सके: "तो इस तरह हमें अपनी देह बनानी चाहिए, यहां वह माडल है, जिसका लोग सम्मान करते हैं, वह मेरे नगर का गौरव है और मुझे भी वैसे ही होना चाहिए।"

पर यूनानी शिक्षाशास्त्र खिलाड़ी तक ही सीमित नहीं था, उसके आगे नायक-अर्धईश्वर, स्वयं ईश्वर, मानवरूपी ईश्वर, स्वयं मानव से भी अधिक मानव था। समूचा यूनानी धर्म अपनी मूर्तिकला के माध्यम से कह रहा था: बीमारी, कष्ट और मृत्यु मानव के सच्चा मानव होने में बाधक हैं; अगर हम मानव की कल्पना अमर मानव ("अमर" शब्द का प्रयोग मुख्यतः ईश्वर के लिए किया जाता था), काल द्वारा अप्रभावित मानव के रूप में करते हैं, तो वह इस तरह का होगा; उसके चेहरे से बुद्धिमानी, शांति, आत्म-विश्वासपूर्ण, बुद्धिसंगत तथा सुंदर मानव का सामंजस्य – सब कुछ साथ-साथ झलकेगा।

इस प्रकार, सोपान लगभग अप्राप्य ऊंचाई तक उठता गया और हर चीज़ इस बात का साफ़-साफ़ आह्वान थी कि किन ऊंचाइयों पर चढ़ना है, व्यायामों, नाट्य-अभिनयों, भावनात्मक समारोहों और अंततः स्वयं युद्धों के द्वारा किन लक्ष्यों पर पहुंचना है, जिनका भी एक शैक्षिक महत्व था, क्योंकि उन्होंने बर्बरों से दुनिया के केन्द्र – यूनान – की रक्षा करने के नागरिक उद्देश्य को आगे बढ़ाया। इसीलिए क्लासिकीय शिक्षाशास्त्र में उदाहरण पाये जा सकते हैं।

फ़्रांसीसी क्रांति के दौरान हम देखते हैं कि प्रगतिशील बुर्जुआ वर्ग भी अपने नेतृत्व का अनुसरण करने हेतु जनसाधारण को आकर्षित करने का प्रयास करते हुए स्कूल के कार्यों को यथासंभव पूर्ण मानव तथा नागरिक को शिक्षित करने के कार्यों के रूप में सूत्रित करने लगता है। फ़्रांस में तालेइरां, लेपेलेत्ये और कोंदोर्से की स्कूली योजनाएं प्रकट हुईं, जो आज भी क्लासिकीय बनी हुई हैं।[7]

परंतु हर सच्चा शिक्षाशास्त्री कह सकता है: "मैं एक ऐसे आदमी का सृजन करना चाहता हूं, जो स्वयं सुखी रहे तथा औरों को भी सुखी बनाये। लेकिन आप मुझसे यह करने की आशा कैसे कर सकते हैं, जबकि आपका समाज ही अपूर्ण है, जबकि यह आदमख़ोर है, जबकि यह अंतर्विरोधों से विदीर्ण है?" और यहां से समाजवादी या अर्ध-समाजवादी विचारों तक का फ़ासला बस एक क़दम का है, जिसे अधिकांश महान शिक्षाशास्त्रियों ने उठाया है।

वह शिक्षाशास्त्री, जो मामले को अपने ही दृष्टिकोण से देखता है, ऐसा कहता है: "यदि हम सभी लोगों को प्रेम, दोस्ती, एकता, शारीरिक तथा मानसिक सौंदर्य की भावना में शिक्षित करने में सफल हो जायें, तो समाज स्वयं बदल जायेगा।" लेकिन समाज इसे करने नहीं देता, यह अपना पशुवत रूप बनाये हुए है। यही कारण है कि क्रांतिकारी दूसरी तरफ़ से शुरू करता है तथा यूनानी शिक्षाशास्त्र की आदर्शवादी उड़ान अथवा रूसो, पेस्तालोज़्ज़ी, फ़्रेबेल, फ़िख़्ते और हेर्बार्त[8] के सपनों तथा व्यावहारिक कार्य के उत्तर में कहता है: "आप, शिक्षाशास्त्री, ठीक ही लोगों की महान दोस्ती के तहत सुंदर व्यक्ति, सहयोगी और दूसरों का साथी तैयार करने का कार्य प्रस्तुत करते हैं, लेकिन आपको यह नहीं करने दिया जायेगा। सबसे पहले, यह ज़रूरी है कि मुझ क्रांतिकारी को जनसाधारण के आंतरिक रोष

पर भरोसा करते हुए आपके लिए रास्ता साफ़ करना चाहिए। जब मैं सामंतशाही तथा बुर्जुआ क़िस्म के दास-स्वामी राज्य को चूर-चूर कर चुका हूंगा, लोगों के इन सभी अशिक्षा मंत्रालयों को चूर-चूर कर चुका हूंगा, चर्च की शक्ति से आपको मुक्त करा चुका हूंगा और आप जैसे उन लोगों को सचाई बता चुका हूंगा, जिनके पास सुनने के लिए कान हैं और जिन्हें मुक्त होने की ज़रूरत है, क्योंकि उनके अंदर एक जीवित शिक्षाशास्त्री प्रतीक्षा कर रहा है – तब जा कर ही आप कार्य शुरू कर सकते हैं। इस भूकंप में अनेकानेक इमारतें ढह जायेंगी, संघर्ष एक दूसरे की हत्या तथा क्रूरता लायेगा, फिर भी आप यह महसूस किये बिना नहीं रह सकते कि आपके लिए आज़ादी आ गयी है।"

शिक्षा दुर्गुणों, पूर्वाग्रहों और अहम्मन्यता से बेदाग़ नूतन, साफ़ मानव-पात्रों में – उन छोटे तथा मोहक प्राणियों में, जो बच्चे होते हैं – निषेचन है, शारीरिक व्यायामों और मानसिक अभ्यासों के द्वारा वास्तव में योजनानुसार विकसित मानव को जन्म देने के उद्देश्य से उनमें हमारे विशाल वैज्ञानिक ज्ञान के सभी आंकड़ों (उनकी आयु के उपयुक्त), हमारी विराट टेक्नोलॉजी के सभी कौशलों, हमारी विशाल कलात्मक संपदा के सभी सौंदर्यों का निषेचन है, ऐसा मानव, जिसके बारे में कभी हम शिक्षाशास्त्रियों ने सपना देखा था, ऐसा मानव, जो ख़ुद हम अपने ज़माने में नहीं बन सके, लेकिन जिसे अब आप शिक्षित कर सकते हैं, क्योंकि इसके लिए अब उपयुक्त सामाजिक ढांचा बन गया है।

आप खिड़की से बाहर झांक कर कह सकते हैं: "क्या अब भी घूसख़ोर, सत्ता के नशे में धुत्त लुटेरे, मक्कार, बीमार और अज्ञानी नहीं हैं?" वे सब हैं, क्योंकि जो लोग यह घोषणा करते हैं कि "लोगों को बेहतर बनाइये और समाज बेहतर बन जायेगा," वे आत्म-प्रवंचनापूर्ण या कुटिलतापूर्ण झूठ बोलते हैं। यह रास्ता नहीं अपनाया जा सकता, इसीलिए तो हमने समाज को लोगों से बेहतर बनाया है।

"हमारा संविधान, हमारे आदर्श भव्य हैं, लेकिन व्यवहार में," आप हमसे कहते हैं, "व्यवहार में हमारा जीवन पशु-जीवन से ज़रा ही भिन्न है।" यह सही है, क्योंकि मानव को अभी भी पुनर्शिक्षित नहीं किया गया है। कभी-कभी स्वयं अपने तथा अपने इर्दगिर्द औरों

के कड़े शुद्धीकरण द्वारा पुनर्शिक्षण आवश्यक है। हमें उस सारी गंदगी से मुक्त होना है, जो कभी हमारी नसों में चढ़ायी गयी थी, हमें अहम्मन्यता और पूर्वाग्रहों के उस मृत भार से मुक्त होना है, जो हममें से प्रत्येक के लिए बाधा बने हुए हैं। हमारी पीढ़ी को अपने को उस प्रारंभिक, तैयारी शिक्षा कार्य के स्तर तक शनैः शनैः लाने के लिए बड़े प्रयास करने चाहिए, जिसे हम अब पूरा कर रहे हैं। पर हम यह इस आशा में करते हैं कि हमारे छोटे भाई और बेटे, जो इस समय १५-१६ साल के हैं, चाहे पूर्ण ढंग से न सही, पर बेहतर ढंग से तैयार होंगे। हमारी आशाएं आप शिक्षाशास्त्रियों पर टिकी हुई हैं कि आप विद्यमान कठिन परिस्थितियों के बावजूद महान रास्ते को साफ़ करने अथवा कम से कम साफ़ करना शुरू करने में समर्थ होंगे, ताकि भविष्य में कम्युनिज़्म के अंतर्गत शिक्षा की धारा को वर्ग के कलंक से साफ़ किया जा सके, ताकि विज्ञान, कला और सत्य का शुद्ध जल बच्चों की आत्माओं में बह सके, ताकि **पहली बार** शिक्षा वर्गहीन बन सके, संपूर्ण मानवजाति की चीज़, वस्तुतः कम्युनिस्ट चीज़ बन सके।

लेकिन सभी शिक्षाशास्त्री ही इसे हृदयंगम करना नहीं चाहेंगे। कुछ ऐसे हैं, जो सुनना ही नहीं चाहते, जो अपने कानों में तेल भर लेते हैं... हमारे जैसे इतिहास के काल में बड़े उत्साह के बिना, त्याग के बिना नहीं रहा जा सकता। यह एक अत्यंत महान समय है और जिनके पैर छोटे हैं, उन्हें कम से कम पंजे के बल खड़ा होना चाहिए।

ऐसे कई पुराने लकीर के फ़क़ीर भी हैं, जो कहते हैं: "आप कहां मुझे पुनर्शिक्षित करेंगे? ईश्वर का धन्यवाद कि मेरे बाल सफ़ेद हो गये हैं। और वे मुझसे नये ढंग से पढ़वाना चाहते हैं... कौन-सा नया ढंग, जबकि कोई पाठ्यपुस्तकें ही नहीं हैं? मैं यह स्वयं कैसे हल करूं? मैं ऐसी चीज़ों का आदी नहीं हूं..." भोंडे और व्यंग्य रूप में वस्तुतः यही चीज़ कई लोग अपने से तथा औरों से कह रहे हैं।

और एक सहिष्णु-शिक्षाशास्त्री है, जो यह सब कुछ सुनता है, सब कुछ में दिलचस्पी दिखाता है और कहता है: "मैं इसे नहीं कर सकता, मेरे पास ज्ञान नहीं है, मेरे पास कौशल नहीं है... मैं पूरे जी-जान से समझता हूं कि मुझे कितना भयानक काम करने के लिए

12*

बुलाया गया है। मैं महसूस करता हूं कि मुझ, रूसी शिक्षाशास्त्री पर उन बच्चों की कई पीढ़ियों की ज़िम्मेदारी आ पड़ी है, जिनका सुखद और ख़तरनाक सौभाग्य ऐसे महान परिवर्तनों के समय में पैदा होना था, जब जिसकी लाठी उसकी भैंसवाला क़ानून समाप्त हो रहा है, मानव क़ानून शुरू हो रहा है, कष्टपूर्ण संघर्ष में घट रहे परिवर्तनों के दौरान – और इस वजह से तरह-तरह के ख़तरों से और भी भरे हुए... मेरी सहायता करें..."

और हम कम्युनिस्ट, जो उन्हें इस काम के लिए बुलाते हैं, कहते हैं कि इस विभाग में हमारी शक्तियां भी कमज़ोर हैं। हम दुर्बल रूस, टुटपुंजिया लोगों तथा किसानों को एकजुट करने में समर्थ हुए हैं, हम उसे सर्वहारा अधिनायकत्व के अंतर्गत लौह एकता में संगठित करने में सफल हुए हैं। उसने लड़कर अपना रास्ता बनाया है, वह स्वतंत्र है, वह अपने भाग्य का फ़ैसला ख़ुद कर रहा है, पर हम, पार्टी, अकेले आगे कुछ नहीं कर सकते: हमें सारी शक्तियों को जुटाना चाहिए, हमें सभी श्रम-शक्तियों का गहन सहयोग क़ायम करना चाहिए।

यह सभी ग़लतफ़हमियों, सभी पुराने झगड़ों, सभी संदेहों को एक ओर रख देने का समय है। यह यह महसूस करने का समय है कि भयानक उथल-पुथल हुई है, कि हम प्यूपा से बाहर निकले ही हैं, कि हम शीघ्र ही उड़ना सीख जायेंगे, लेकिन फ़िलहाल हमारी आंखें नयी दुनिया के आलोक से चौंधिया जा रही हैं और हम अनेकानेक दुश्मनों द्वारा घिरे हुए हैं: अंदर से बहुत-से स्वतःस्फूर्त ख़तरों द्वारा तथा बाहर से उन प्रतिद्वंद्वियों और कट्टर दुश्मनों द्वारा, जिन्होंने हमारी घेराबंदी कर रखी है। हमारी महान मुक्ति की घड़ी महान ख़तरे की घड़ी है और हमें इस बात को ध्यान में रखते हुए सभी सोवियत जनतंत्रों का एका क़ायम करना चाहिए कि यह श्रमिकों की समूची दुनिया को हमारी ओर खींच लायेगा और वह विराट बहुमत हमारी जीत को सुनिश्चित बनायेगा।

हमें अपनी पांतों को एकजुट कर देना चाहिए। जब कम्युनिस्ट पार्टी शिक्षाशास्त्रियों से आह्वान करती है तो वह यह भावना भरी कांपती आवाज़ में करती है, वह समझती है कि उसे उनकी कितने असीम रूप से आवश्यकता है, कैसे सामाजिक संस्कृति का निर्माण

करने का संपूर्ण निर्णायक कार्य, उस अज्ञानता से लड़ने का कार्य, जो हमारा नासूर है – यह सब इस पर निर्भर करता है कि क्या अध्यापक, जैसा कि हम कहते हैं, अपने को पुनर्व्यवस्थित यानी अपने को इस चेतना से तैयार कर सकते हैं कि उनसे इतिहास में पहली बार सच्चा मानवीय स्कूल संगठित करने तथा इसे पूरा करने के लिए कौशल पाने का आह्वान किया गया है।

हमारे आम संघर्ष के छठे वर्ष में हम इस तरह की एकजुटता, इस प्रश्न के संयुक्त समाधान के मार्ग पर काफ़ी आगे बढ़ चुके हैं। और अगर हमारे बीच तीसरे प्रकार के शिक्षाशास्त्री हैं – ऐसे शिक्षाशास्त्री, जो जानते हैं कि किधर जाना है, जो प्रगतिशील लोग हैं, जो ग़लती कर सकते हैं, पर जो क्लासिकीय शिक्षाशास्त्र की अच्छी समझ और श्रम स्कूल की अमरीकी विधियों की समझ के अर्थ में, रूसी स्कूल के बारे में प्रश्न की अद्वितीय स्थिति की आंतरिक समझ के अर्थ में मज़बूत आधार पर खड़े हैं, तो ऐसे शिक्षाशास्त्रियों का मूल्यांकन केवल सोने में ही नहीं, बल्कि न मालूम किस चीज़ में किया जाना चाहिए: वे वह यीस्ट हैं, जिसकी सहायता से हमारी लोइयों में ख़मीर उठेगा, क्योंकि ज्ञान प्लेग से भी संक्रामक चीज़ है।

यदि सुविज्ञ व्यक्ति का सही उपयोग किया जाये, तो वह दशकों में नहीं बल्कि कुछेक वर्षों में ही असाधारण तेज़ी से बड़ी तादाद में लोगों को ज्ञान – एक दूसरे को हस्तांतारित होते हुए ज्ञान – से समृद्ध बनाते हैं। हमारे पास ऐसे लोग हैं, चाहे वे कम ही हों। पढ़ने की विशाल तत्परता विद्यमान है। हमारे पास नये युवाजन हैं, जो सहायता करने के लिए लालायित हैं, जो ज्ञान में कमज़ोर पर भावना और उत्साह में मज़बूत हैं – ऐसे युवाजन, जो निर्धन प्रशिक्षण कालेजों में अध्ययन कर रहे हैं, जिन्हें अक्सर सही शिक्षा के अर्थ में बहुत कम प्रदान किया जाता है, पर जो सही दिशा में अध्ययन कर रहे हैं और अपने प्रतीक्षित लक्ष्य की उच्च चेतना तथा अध्ययन-काल में और अध्ययन के बाद अनेकानेक त्याग करने की तत्परता से भरे हैं, क्योंकि शिक्षाशास्त्रीय कार्य से प्राप्त नतीजों से सभी त्यागों की पूर्ति हो जाती है।

मैं इस भाषण को एक ऐसे व्यक्ति के कुछ उल्लेखनीय वाक्यों के साथ समाप्त करना चाहता हूं, जिसके साथ सामान्यतः मेरा कोई

लगाव नहीं है, बल्कि जो एक महान सुधारक था – मार्टिन लूथर[9]। जर्मन अध्यापकों को अपने एक संदेश में लूथर कहते हैं: "यदि मैं धर्मोपदेशक न होता, तो मैं अध्यापक बनना चाहता, क्योंकि धर्मोप-देशक के रूप में मैं ऐसे लोगों को संबोधित करता हूं, जिनकी कमरें झुक गयी हैं, जिनके हाथ सूख कर कठोर हो गये हैं, ऐसे लोग, जिन्हें जीवन ने अपाहिज और गंदा बना दिया है, लेकिन आप, अध्यापक-गण, आप पवित्र आत्माओं को संबोधित करते हैं। वह सत्य, जिसका मैं उपदेश देता हूं, भ्रष्ट आत्माओं में जा गिरता है और कभी-कभी वह स्वयं वहां भ्रष्ट हो जाता है या यों ही व्यर्थ पड़ा रहता है; जो सत्य आप बच्चों की ग्रहणशील और पवित्र आत्माओं को पेश करते हैं, वह देदीप्यमान लौ की भांति चमकता रहेगा।"

हम भी यही बात कह सकते हैं कि यदि हम वे प्रचारक नहीं होते, जिन्होंने अपाहिज वयस्क आत्माओं को सत्य की शिक्षा देना अंगीकार किया है, क्योंकि केवल वे अपाहिज पर शक्तिशाली लोग ही वह परिवर्तन ला सकते हैं, जो सभी की मुक्ति होगा, तो हममें से हर कोई उन पवित्र श्रोताओं, उन स्वच्छ छोटे हृदयों, उन प्रतिभा-शाली, खुले छोटे मस्तिष्कों को संबोधित करना चाहता, जिनसे इतने बेहद रूप से काफ़ी कुछ बनाया जा सकता है और जिनमें से प्रत्येक से सही शिक्षा के द्वारा सच्चा चमत्कार पैदा किया जा सकता है।

वे मानव को अपाहिज बना दिया करते थे, वे मानव को नौकर-शाह या कोई ऐसा ही दानव बना दिया करते थे। लेकिन अब हमें बच्चे को एक चमत्कार में, एक सच्चे मानव में ढालना है, ऐसा मानव, जो हमारे या हमारे पिताओं के बीच बिरले ही मिलता था, पर जिसे हमारे छोटे भाइयों और बहनों के बीच अक्सर पाया जाना चाहिए, जो हमारे बेटों और बेटियों के बीच और भी अक्सर पाया जायेगा तथा जो हमारे पोतों और पौत्रियों के बीच प्रमुख क़िस्म बन जायेगा। यह चमत्कार क्रांति द्वारा, जीवन द्वारा पैदा किया जा रहा है, पर शिक्षाशास्त्रियों के बिना यह नहीं पैदा किया जा सकता। यह एकमात्र चमत्कार है, जिसे विज्ञान स्वीकार कर सकता है – यह मानव का कायापलट है।

अपने ध्येय को सही ढंग से समझनेवाले प्रत्येक अध्यापक को कक्षा या किसी ऐसे कमरे में प्रवेश करते समय, जहां बच्चे खेल रहे

होते हैं, या बच्चों को बाहर प्रकृति की गोद में सैर कराते समय यह महसूस करना चाहिए कि कोई भव्य चीज़ घटित हो रही है, जिससे उसके दिल को ख़ुशी से भर जाना चाहिए, क्योंकि वह मानवजाति के चमत्कार से गुज़र रहा होता है। अगर वह समझ सकता है कि इस पवित्र पेशे में उसे कार्य और सृजन की कितनी व्यापक स्वतंत्रता होगी और कितने भावप्रवण ढंग से क्रांति उसे यह करने के लिए बुला रही है, अपनी सभी निर्धनता के बावजूद यह तेज़ी से उसकी सहायता में आने को कितनी तत्पर है, तो निश्चय ही वह सभी कठिनाइयों के बावजूद अपनी पूरी जी-जान से क्रांतिकारी सर्वहारा तथा उसकी नेता रूस की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रति गहन आभार प्रकट करेगा!

सोवियत निर्माण प्रणाली में शिक्षा के कार्यभार *

सेवियत सत्ता का मुख्य, मूलभूत और सर्वांगीण कार्यभार कम्युनिज़्म को अमल में लाना है। कमिन्टर्न के सदस्यों के रूप में, मज़दूर वर्ग के अंतर्राष्ट्रीय चिंतन तथा अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष के प्रतिनिधियों के रूप में हम, रूसी कम्युनिस्ट पार्टी, जिसके संकल्प और चिंतन सोवियत सरकार की नीति तय करते हैं, बेशक सारी दुनिया में कम्युनिज़्म की स्थापना का प्रयास करते हैं। परंतु ख़ास तौर से सोवियत सत्ता हमारे संघ के भीतर कम्युनिज़्म की स्थापना का, ठीक-ठीक कहें तो हमारे संघ के भीतर इस नीति का अनुसरण करने का प्रयास करती है, जो अत्यधिक बुद्धिसंगत तथा छोटे मार्ग से सारी दुनिया में मेहनतकश लोगों की विजय की ओर ले जायेगी।

हमारा देश पूर्णतः अद्वितीय परिस्थितियों में प्रतीत होता है। एक ओर, यह राजनीतिक विकास के मार्ग की दृष्टि से सभी देशों से आगे निकल गया है और इस अर्थ में यह सभी देशों से कम्युनिज़्म के निकट खड़ा है, क्योंकि इसके पास वास्तव में मज़दूरों तथा किसानों की सोवियत सरकार है, जिसके पीछे मूलतः मज़दूरों का कम्युनिस्ट अधिनायकत्व है। हमारे संघ के देशों के अलावा, संसार के किसी भी देश में इस तरह की कोई चीज़ नहीं है। लेकिन साथ ही, आर्थिक और सांस्कृतिक मामलों में हमारा देश एक सबसे पिछड़ा हुआ देश है और यह ऐसा अब तक बना हुआ है। इस प्रकार, यह अपने को एक शत्रुतापूर्ण दुनिया से घिरा हुआ तथा इसके अलावा यूरोप व अमरीका के सभ्य देशों से पिछड़ा हुआ पाता है। इससे एक दुःखद अंतर्विरोध उत्पन्न होता है, जिसे हमें हमेशा ध्यान में रखना चाहिए।

हम अपने को शेष दुनिया के देशों की सरकारों के साथ निरंतर भले ही कभी-कभी गुप्त संघर्ष में पाते हैं और हम यह भली-भांति

---

* संक्षिप्त रूप में प्रकाशित। – **सं०**

महसूस करते हैं कि हम जिस ज़मीन पर खड़े हैं वह बिल्कुल खस्ती है, जैसा कि लेनिन ने कहा, दलदली ज़मीन है, क्योंकि हमारे नीचे लघु किसान अर्थव्यवस्था का बड़ा संस्तर है, जिस पर फ़िलहाल हम मुख्यतः आर्थिक रूप से टिके हुए हैं, जो उस चरण पर पहुंचने से काफ़ी दूर है, जबकि वह कम्युनिज़्म की ओर संक्रमण के लिए प्रौढ़ होने में समर्थ हो सके। इसके साथ ही, देश का सांस्कृतिक स्तर उन विशाल कार्यभारों से किसी भी रूप में मेल नहीं खाता, जिन्हें अक्तूबर क्रांति ने पेश किया है।

कम्युनिज़्म की ओर अग्रसर होने के सामान्य लक्ष्य से होनेवाले तात्कालिक उद्देश्यों के संबंध में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला जा सकता है: हमें अपनी रक्षा करनी है, हमें देश की रक्षा संगठित करनी है। पहला मोर्चा देश की रक्षा है। इस पहले मोर्चे ने एक लंबे अर्से से, जैसा कि आप जानते हैं, सभी दूसरे मोर्चों को आच्छादित कर रखा है। दरअसल, यह एकमात्र मोर्चा था। अन्यथा हो भी नहीं सकता था, क्योंकि क्रांति के पश्चात पहले वर्षों में समूची दुनिया के बुर्जुआ वर्ग के साथ हमारा संघर्ष बेहद तीव्र बन गया तथा हमें हाथ में हथियारों के साथ सीधे व खुले युद्ध में अपनी रक्षा करनी थी।

फिर स्पष्टतः देश की अर्थव्यवस्था को सुव्यवस्थित करना आवश्यक था: ग़रीबी के उस स्तर पर रहना असंभव था, जिसमें हम १९१८–१९१९ में रहे। ऐसी ग़रीबी का बने रहना बेशक क्रांति के लिए प्राणघातक होता – यह पहली बात है; दूसरे, केवल अर्थव्यवस्था के विकास के अंतर्गत ही हम अपने को सामान्यतः इतना मज़बूत पा सकते हैं कि बुर्जुआ वर्ग के हमले का कुछ प्रतिरोध कर सकें; और तीसरे, अर्थव्यवस्था जितना ही ऊंचा उठेगी, हम न केवल विश्व सर्वहारा इंटरनेशनल के संघर्ष में अपने को मुख्य अस्त्र के रूप में उतना ही शक्तिशाली सिद्ध करेंगे, बल्कि उतना ही उज्ज्वल उदाहरण पेश करेंगे, उतने ही निश्चित रूप से अपने दुश्मनों के निन्दात्मक दावों को चूर-चूर करेंगे, ऐसे दावे, जो स्वयं सर्वहारा को आकुल बना देते हैं कि वह रास्ता, जो हमने अपनाया है, विनाश का रास्ता है। हमारा आर्थिक विकास न केवल हमें अपने को मनुष्य की भांति रहने में समर्थ बनायेगा, न केवल हमें अपने दुश्मनों के ख़िलाफ़ दृढ़तर योद्धा बनायेगा, बल्कि यह भी सिद्ध करेगा कि किसानों द्वारा समर्थित

मज़दूरों की सत्ता हमारे जैसे पिछड़े देश में भी, उसके प्रति सारी दुनिया की शत्रुता की परिस्थितियों में भी अत्यंत लाभप्रद परिणामों की ओर ले जाती है। और ऐसा निष्कर्ष संपूर्ण पश्चिम यूरोपीय सर्वहारा तथा सारे विश्व के किसानों के लिए किसी भी प्रचार व आंदोलन से शक्तिशाली है।

तीसरा मोर्चा वह है, जिसे हमने आम तौर से हमारा शिक्षा मोर्चा कहा है। और बेशक, साथियो, किसी ने प्रत्यक्षतः यह सिद्धांत नहीं पेश किया है कि पहले स्थान पर रक्षा, फिर अर्थव्यवस्था और तीसरे स्थान पर शिक्षा होनी चाहिए – किसी ने ऐसा सिद्धांत नहीं पेश किया है। पर स्वयं जीवन ने हमें चाहे-अनचाहे इन कार्यभारों को विभिन्न स्तरों पर रखने के लिए बाध्य किया है।

क्यों किसी ने ऐसा सिद्धांत नहीं पेश किया? यह समझ में आनेवाली बात है। क्या अर्थव्यवस्था के बिना लड़ाई चलाने की कल्पना की जा सकती है? यह एकदम साफ़ है कि फ़ौज के लिए खाद्य, कपड़े, जूते, हथियार की व्यवस्था केवल तभी की जा सकती है, जबकि अर्थव्यवस्था एक निश्चित स्तर पर काम कर रही हो। कंगाल देश तो कैसे भी सेना का भरण-पोषण नहीं कर सकते और ११ हज़ार किलोमीटर लंबे मोर्चे पर ७० लाख की फ़ौज का रख-रखाव करना एक विशाल आर्थिक कार्यभार है। इस तरह दूसरे मोर्चे के बिना पहले मोर्चे की कल्पना नहीं की जा सकती। परंतु बेशक गृह-युद्ध के वर्षों में दूसरे मोर्चे के स्वरूप को कुछ हद तक तोड़ा-मरोड़ा गया। अर्थव्यवस्था के बुद्धिसंगत, नियोजित विकास के बारे में बहुत कम सोचा-विचारा गया था, आकस्मिक कार्रवाईवाली अर्थव्यवस्था के बारे में, इस चीज़ के बारे में बहुत काफ़ी सोचा-विचारा गया कि मोर्चे के लिए वस्तुएं और खाद्य येनकेन प्रकारेण प्राप्त करें, कि रेलवे को चालू अवस्था में रखें, जो रणनीतिक महत्व की हो सकती थीं, आदि, आदि...

यह समझ में आनेवाली बात है कि तीसरा मोर्चा भी इसी हालत में था, पर शिक्षा के बिना लड़ाई कैसे चलायी जा सकती है? बेशक यह असंभव है। गृह-युद्ध में अर्थव्यवस्था की भांति ही शिक्षा ने भी बड़ी भूमिका अदा की। लेकिन यह शिक्षा कहां पायी गयी, यह किस रूप में व्यक्त हुई? इसने सेना में कार्य का रूप ग्रहण किया। यही

तो वह महत्वपूर्ण बिंदु था: प्रबोधन-कार्य, राजनीतिक विभागों के सांस्कृतिक अनुभाग, वह विशाल शक्ति, मुख्यत: कम्युनिस्ट शक्ति, जिसने ७० लाख की सेना के अंतरतम में अपना कार्य किया, ताकि कल के भगोड़े, कल के कमसीन किसान के लड़के को, जिसे इस बात की कोई समझ नहीं थी कि यह सब क्या है, जिसने यह कहा, "आपने शांति का वादा किया, पर हमें युद्ध दिया है," ऐसे लोगों को लाल सेना के सिपाहियों में बदला जा सके, जिन्होंने गृह-युद्ध के सभी मोर्चों पर विजय जीती है।

वस्तुत: सभी तीनों मोर्चे कार्यरत थे, लेकिन उन्होंने अपने को पहले मोर्चे से समंजित किया और हाल में गुज़रे वर्षों के बाद अब जाकर ही हम वस्तुगत और सामान्य ढंग से उनके अंतर्संबंधों को तय करने में समर्थ हो सके हैं। अब हम दुहरा सकते हैं – और एकमात्र हम, तीसरे मोर्चे के लोग ही नहीं, संपूर्ण सोवियत सरकार की ओर से दुहरा सकते हैं कि तीसरा मोर्चा पहले तथा दूसरे मोर्चे से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है, कि उन्हें अलग करना असंभव है, कि वर्तमान समय में हमारे समक्ष निम्नलिखित समस्या पेश है: तीसरे मोर्चे पर तेज़ी से बढ़ते कार्य के बिना न तो देश की रक्षा, न राज्य का शासन और न ही अर्थव्यवस्था का विकास कल्पनीय हैं...

रक्षा के लिए, आर्थिक कार्य के लिए, हमारे राज्य में नेतृत्वकारी पदों के लिए लोगों को तैयार करना – इसका अर्थ है सच्चे कम्युनिस्टों को **शिक्षित करना**, जो इस कार्य के प्रति पूरे मन से समर्पित होंगे। और यह भी एक शैक्षिक कार्यभार है।

सर्वप्रथम, स्वयं जीवन इसमें एक बड़ी भूमिका अदा करता है। जहां तक मज़दूर और किसान अपनी स्थिति को समझने लगते हैं, वहां तक उनके मन से पिता-ज़ार के प्रति दासता की भावना, पुरोहित में विश्वास या मात्र यह जड़ भावना निकलने लगती है कि बहरसूरत कुछ भी घटने से नहीं रोका जा सकता। इसकी जगह अपने हितों के प्रति वास्तविक, सच्ची, सक्रिय चेतना, जीवन को अपने प्रत्यक्ष हितों से जोड़ने की इच्छा उत्पन्न होती है।

हम मात्र जीवन में विश्वास रख कर यह नहीं कह सकते कि वह सब कुछ, जो विकसित और घटित हो रहा है, ठीक है। उल्टे, कम्युनिस्ट पार्टी के अस्तित्व का सारतत्व और उद्देश्य जिस दिशा में जीवन

अग्रसर हो रहा है उसे समझने तथा उस चीज़ से संघर्ष करने में निहित है, जो कम्युनिज़्म से हटा कर झूठे मार्ग पर ले जाती है। हम सक्रिय शिक्षा देते हैं और इस तरह की शिक्षा का अर्थ उस "नैतिकता" का प्रचार नहीं है, जिसे बुर्जुआ वर्ग बुर्जुआ शिक्षा तथा बुर्जुआ धर्म की ढहती दीवारों को सहारा देने के एक तरीक़े के रूप में ठीक बताता है। हमारी शिक्षा शैक्षिक संरचना के सभी चरणों को जीवन के निकटतर लाने में है। जीवन शिक्षा देता है और उतना स्वयं जीवन नहीं, जितना कि वह जनमत, जो अब जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया है।

हमें जीवन के साथ नौजवानों के संबंधों को विकसित करना चाहिए और इसका अर्थ जीवन और कोम्सोमोल के बीच संबंधों को, हमारे बच्चों के दैनंदिन जीवन और बाल संस्थानों के बीच संबंधों को विकसित करना है।

युवा कम्युनिस्ट लीग के हर सदस्य को कोम्सोमोल से जुड़े रहने की चेतना पर गर्व है। उसे अपने लेनिनीय कोम्सोमोल पर गर्व है। उसके लिए कोम्सोमोल से जुड़ा रहना सबसे बड़ी ख़ुशी है और अगर उसे कोम्सोमोल से निकाल दिया जाये तो अधिकांश मामलों में वह नैतिक या शारीरिक रूप से मर जायेगा।

यही बात बाल आंदोलनों पर भी लागू होती है। छोटा पायनियर, जो इतना छोटा होता है कि ज़मीन से दिखाई नहीं देता, अपने को लेनिनीय पायनियर मानता है और गर्व करता है कि वह क्रांतिकारी निर्माण का एक भागी है। उसे अपने लाल रूमाल पर इतना गर्व होता है, जितना कि किसी जनरल को अपने सेंट-एन्ड्रू के फ़ीते पर नहीं होता।

प्रिय से प्रिय अध्यापक भी एक लड़के या लड़की को एक अच्छी मित्र-मंडली से अधिक प्रभावित नहीं कर सकता। यदि संगठन में एक बच्चे को उसके साथी कह दें कि वह एक बुरा पायनियर है, तो इसका बड़ा ज़बर्दस्त प्रभाव होता है।

एक अग्रणी जर्मन शिक्षाशास्त्री पॉल नाटोर्प ने बड़े नगरों में किशोरों के बीच दुराचारों और आत्महत्याओं की बढ़ती घटनाओं के बारे में युद्ध से पहले लिखी पुस्तक में कहा: "मुझे यह अवश्य ही कहना चाहिए कि इसके ख़िलाफ़ संघर्ष की एकमात्र विधि सामाजिक-

जनवादियों ने पायी है, क्योंकि उनके ही युवा संगठनों के सर्वोत्तम परिणाम हैं। उनके यहां ये घटनाएं बहुत कम होती हैं, और यह इस-लिए कि उनके नौजवानों के बीच स्वस्थ सामूहिक गौरव तथा पारस्प-रिक, सामूहिक नियंत्रण क़ायम किया गया है।"[1]

लेकिन क्या तत्कालीन युवा संगठनों की तुलना, जिनके पास समाजवाद के बारे में अस्पष्ट फ़िक़रों के अलावा कुछ नहीं था, हमारे युवा संगठनों से की जा सकती है? हम मानों आतिशबाज़ी की रोशनी में रह रहे हैं, जिसके नीचे सब कुछ, यहां तक कि मटियाली चीज़ भी, हमें समाजवाद का महान त्यौहार प्रतीत होती है। इस संबंध में हम बड़े भाग्यशाली हैं।

कोम्सोमोल में हमारे नौजवान दबाये नहीं जाते, वे भूमिगत जीवन जीने के लिए मजबूर नहीं किये जाते, वे राजकीय निर्माण कार्य के भागी हैं, वे युवा पायनियर का बचकाना हाथ पकड़ कर अपने साथ ले आते हैं, उसे उत्तराधिकारी पुत्र की तरह देश की अर्थव्य-वस्था में आगे ले आते हैं, क्योंकि उस अर्थव्यवस्था का मालिक मज़दूर है, उसका मालिक किसान है तथा कोम्सोमोल के सदस्य व पायनियर उनके वारिस, उनके उत्तराधिकारी हैं।

यही कारण है कि कम्युनिस्ट शिक्षा के लिए इतने विशाल सुअवसर हमारे समक्ष खुल रहे हैं। यही कारण है कि यह बहस करने के बजाय कि अनुशासनिक क़दम लागू किये जाने चाहिए या नहीं, तथा किशोरों के बीच गुंडागर्दी से लड़ने के लिए कौन-से क़दम अच्छे क़दम होंगे, इसके बजाय हमें अपनी नज़रों के सामने यह चीज़ रखनी चाहिए: कोम्सोमोल और पायनियर आंदोलन का सही संगठन कम्युनिस्ट शिक्षा का प्रत्यक्ष, व्यापक और सच्चा मार्ग है, लेकिन मैं दुहरा रहा हूं – सही संगठन।

यहां हम कुछ नुक़्सानदेह विचलनों, उदाहरणार्थ, अत्यधिक काम का उल्लेख कर सकते हैं, जिसके बारे में अब सभी बहुत दु:ख प्रकट कर रहे हैं। नौजवान सामाजिक कार्य में सीधे कूद पड़ते हैं और अपने अध्ययनों से मुंह मोड़ लेते हैं। हम अध्यापकों की सबसे संवेदनशील और ध्यानपूर्ण सहायता से इन सभी प्रश्नों का विशेष अध्ययन करेंगे और उन्हें ठीक करेंगे, क्योंकि अध्यापक छोटी आत्मा और छोटे शरीर के, बच्चे की चेतना और बच्चे के व्यक्तित्व के विकास के प्रश्नों में विशेषज्ञ होते हैं।

विकास की मुख्य धुरी के रूप में विज्ञान के बिना, स्कूल के बिना हम ज़रा भी आगे नहीं बढ़ पायेंगे। लेकिन ऐसी लगन कि पायनियर आन्दोलन स्कूल तथा उच्च शिक्षा का स्थान ले सकता है, कभी नहीं थी। बेशक, कोई भी ऐसी दूर की कौड़ी लाने नहीं गया। एक दूसरे को अत्यंत आंतरिक, गहन और दोस्ताना ढंग से सामंजस्यपूर्वक सूत्रबद्ध करना चाहिए। यही दो-एक शब्दों में और आम तौर से सोवियत सरकार का सांस्कृतिक कार्यभार है।

हमें क ख ग से शुरू करते हुए और विज्ञान पर अंत करते हुए संस्कृति की, चिंतन के क्षेत्र में संस्कृति की, भावना के क्षेत्र में संस्कृति की आवश्यकता है। यहां मुझे आपको बता देना चाहिए कि चिंतन के क्षेत्र में विज्ञान का जो स्थान है, वही स्थान भावना के क्षेत्र में कला का है। और अपने उपलब्धियों के अनुसार पुरानी कला (जिसके कई अंश हमारे लिए नुक़्सानदेह नहीं हैं), विश्व के महान कलाकारों की कृतियों के पास देने के लिए बहुत कुछ है। इस आधार पर हम नयी कला को विकसित कर रहे हैं, जो पुरानी कला की ज़मीन से अंकुरित होती है। यह हमारी भावना को वैसे ही नियंत्रित करती है, विकसित करती है, ढालती है, पथप्रदर्शित करती है, संगठित करती है जैसे कि विज्ञान हमारे चिंतन को संगठित और पथप्रदर्शित करता है। और अगर संस्कृति कम्युनिज़्म की दिशा में हमारी प्रगति के लिए आवश्यक है तो यहां एक और बात भी कही जा सकती है: अगर कम्युनिज़्म संस्कृति की सेवा नहीं करता तो यह बिल्कुल निरर्थक है। संस्कृति, शिक्षा, विज्ञान, कला – ये केवल वह साधन ही नहीं हैं, जिसके ज़रिये हम अपने लक्ष्य पर पहुंचते हैं। वे साथ ही अपने आपमें अत्युच्च साध्य भी हैं।

वस्तुतः कम्युनिज़्म क्या है? संभवतः कम्युनिज़्म मात्र सर्वहारा को विजय की ओर ले जानेवाली नीति-विशेष का संगठन है? हम सभी भली-भांति जानते हैं कि यह नहीं है। सत्ता पर क़ब्ज़ा करना व्यर्थ होगा यदि हम लोगों को ख़ुशहाल न बनायें। सत्ता वस्तुतः इसलिए ली जाती है कि लोगों को ख़ुशहाल बनाया जा सके। शायद यह शुद्धतः आर्थिक प्रश्न है? शायद हम अपने समक्ष लोगों को स्वतंत्रता तक ले जाने का उद्देश्य इसलिए रखते हैं कि वे इतना काम न करें कि अपने को अत्यधिक थका दें, कि वे अपने सिर के ऊपर छप्पर रख सकें,

अपने पास खाद्य, कपड़े रख सकें – और बस? बेशक नहीं। क्या मनुष्य निरुद्देश्य जीवन बिताने, रोज़-रोज़ अपना पतलून पहनने, दोपहर का खाना खाने और शाम को सोने जाने के लिए ही जीता है? जी नहीं। यह सब ख़ुशहाल जीवन प्राप्त करने का मात्र एक साधन है।

मनुष्य इन साधनों की ख़ातिर नहीं जीता। उसे पहनने, खाने, आराम करने और काम करने की आवश्यकता इसलिए होती है कि वह अपने ज्ञान को विस्तृत कर सके, अपनी भावनाओं तथा अनुभूतियों को विकसित कर सके, कि ख़ुशी को जान सके, स्वयं ख़ुश हो सके और उस ख़ुशी को दूसरों को दे सके। हमारा अंतिम उद्देश्य लोगों की ऐसी बिरादराना एकता क़ायम करना है, जो अपने को अधिकाधिक ऊंचा उठाये एवं मानव की पहुंच के भीतर सभी भौतिक संपदाओं और सभी समृद्धि व सुअवसरों को विस्तारित करे...

इस तरह, संस्कृति न केवल एक साधन, बल्कि साध्य भी है। तीसरे मोर्चे का कर्मी पहले मोर्चे के कर्मियों से अपने बारे में कह सकता है: मैं तुम्हारी सहायता कर रहा हूं और मेरी सहायता के बिना तुम एक क़दम भी आगे नहीं बढ़ सकते, पर सुखद समय तब आयेगा, जब यह पहला मोर्चा – तनी संगीनें और दहाड़ती तोपें – बिल्कुल नहीं होगा। और तीसरे मोर्चे का कर्मी आर्थिक मोर्चे के कर्मियों से कह सकता हैं: तुम मेरे बिना नहीं टिके रह सकते, पर भविष्य की ओर आशा से देखा जा सकता है, जब आर्थिक उपलब्धियां आम बात बन जायेंगी, जब यह एक ऐसा रसोईघर बन जायेगा, जहां अधिकांश काम मशीनों से किया जायेगा। जब ये प्रश्न हल हो जायेंगे, तब हम, एंगेल्स के शब्दों में, आवश्यकता के राज्य से स्वतंत्रता के राज्य में प्रवेश करेंगे।[2] तब सांस्कृतिक प्रश्न मुख्य प्रश्न बने रहेंगे और तब पहला मोर्चा तथा कुछ हद तक दूसरा मोर्चा तीसरे मोर्चे से मिल जायेंगे। यह तीसरा मोर्चा अंतिम पर कम ध्यान योग्य मोर्चा नहीं है। यह इस अर्थ में अंतिम मोर्चा है कि यह सबसे अंतिम लक्ष्य को प्राप्त करता है, जिसके लिए हम सभी संघर्ष कर रहे हैं, जी और मर रहे हैं।

साथियो, मैं क्षमा चाहता हूं, मगर मैं अपने को अपनी रिपोर्ट के उस भाग तक ही सीमित नहीं रख सकता, जो हमारे सामान्य कार्यभारों की रूपरेखा प्रस्तुत करता है। इस भावना में, इस ढांचे में रिपोर्ट कोई भी दूसरा आदमी न कि सोवियत जनतंत्र का शिक्षा

कमिसार दे सकता था। इसलिए मैं अधिक ठोस कार्यभारों पर विचार करने पर कुछ समय लगाना चाहता हूं अर्थात इस समय हम तीसरे मोर्चे पर उस योजना की पूर्ति हेतु क्या कर रहे हैं और हम क्या कर सकते हैं, जिसकी रूपरेखा अभी-अभी मैंने आपके सामने पेश की है।

सबसे पहले यह पूर्णतः स्पष्ट है कि भौतिक आधार के बिना हमारे कार्य में किसी भी प्रगति की कल्पना नहीं की जा सकती। हम स्वयं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पैसा नहीं बनाते, हम पैसा नहीं छापते, जैसा कि हाल ही में कम से कम वित्त जन-कमिसारियत ने किया तथा आवश्यकता पड़ने पर और भी कर सकती है। हम ऐसी कोई वस्तुएं नहीं पैदा करते, जिन्हें विदेशों में बेचा जा सके। हमें तो इस बात की आवश्यकता है कि राज्य अपने केन्द्रीय राज्य बैंक और स्थानीय संसाधनों से हमें पैसा प्रदान करे। ये संसाधन अब तक हमें बहुत थोड़े दिये गये हैं।

मैं यह शिकायत के लिए नहीं कह रहा हूं। हमने उन अत्यल्प संसाधनों के बंटवारे पर अपने साथियों के साथ बहस करते समय काफ़ी कराहा और कोसा है, जिसपर राज्य को अस्तित्वमान होना चाहिए था। मेरा ख़्याल है कि यह चीज़ों को संकीर्ण विभागीय दृष्टिकोण से देखना होगा यदि हम कहें कि अब तक तीसरे मोर्चे को दूसरे मोर्चों से कम संसाधन दिये गये हैं। नहीं, हमें हमारे संसाधनों के अभाव की दृष्टि से, फ़ौजी कार्यभारों के महत्व तथा हमारी अर्थव्यवस्था में कम से कम सबसे बड़े छेदों को बंद करने की आवश्यकता की दृष्टि से यथासंभव अधिक दिया गया। और अब यह लज्जाजनक होगा यदि तीसरे मोर्चे के लिए निर्धारित संसाधनों में वृद्धि को एक मिनट को भी रोका गया।

और हम क्या देख रहे हैं? अखिल रूसी कार्यकारिणी समिति के पिछले अधिवेशन में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में मैंने ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला कर ख़तरे की घंटी बजायी तथा समिति का ध्यान इस तथ्य की ओर खींचा कि हमारे मोर्चे पर मामले वास्तव में असहनीय हैं।[3] और यह मैंने बिल्कुल जानबूझकर किया, क्योंकि मुझे मालूम है कि संसाधन अब उपलब्ध हैं और कि कार्यकारिणी से सचाई बता देनी चाहिए। बेशक, हमारे उत्प्रवासियों के बीच से क़लमघिस्सु लेखकों ने इससे हमारी कंगाली के बारे में निष्कर्ष निकाले। जब कभी भी हम पैसे की कमी के बारे में कहते हैं, तो वे मुझे, न० को० क्रूप्स्काया को उद्धृत करते हैं।

पर हम मात्र उनकी बकवासों के लिए आहार प्रदान करने के भय से पोत्योम्किन गांव[4] बनाने व अपने को तथा कार्यकारिणी समिति को गुलाबी रंग के चश्मे नहीं पहनाने जा रहे हैं।

हम जिन कमियों और कठोर आवश्यकता में रह रहे हैं, वे हमें मालूम हैं, जो मुख्यतः उन लोगों के अपराधों की वजह से हम पर टूट पड़ी हैं। यह एक ऐसी चीज़ है, जिससे हम चंगा हो जायेंगे और चंगा हो रहे हैं। पर चंगा होने की पहली शर्त यह है कि हमें हर घाव की ठीक ढंग से देखभाल करनी चाहिए और उसके इलाज का तरीक़ा सीखना चाहिए।

तब से हम काफ़ी आगे बढ़ चुके हैं। तब हमने ७ करोड़ ८० लाख रूबल की रक़म को एक आदर्श रक़म कहा था। हमें बहुत कम रक़म – ६ करोड़ रूबल – दी गयी। अब हमारे पास वस्तुतः वह पूरी रक़म है, जिसकी हम तब मांग कर रहे थे। यहां बताया गया है कि हाल ही में हमारे आवंटन में और ६५ लाख रूबल बढ़ा दिये गये हैं। हम ग़लत हैं। बढ़ायी गयी रक़म एक करोड़ ८० लाख रूबल की है, क्योंकि पिछड़ी जातियों के कोष के लिए आवंटित ५० लाख रूबलों में से ३५ लाख रूबलों, वेतन-वृद्धि के लिए अध्यापकों को दिये गये सभी अनुदानों को भी शामिल किया जाना चाहिए। और इस तरह हम एक करोड़ ८० लाख रूबल पाते हैं। कुल मिला कर, पिछले साल सोवियत संघ का संपूर्ण बजट – केन्द्रीय बजट – ८ करोड़ ५० लाख रूबल का था। इस साल यह १४ करोड़ रूबल का है।

यदि हम इस गति से आगे बढ़ेंगे तो बहुत शीघ्र हम निरापद स्थान पर पहुंच जायेंगे। बेशक, वित्त कमिसारियत् हमसे कहती है कि हम आपको अगले वर्ष दस प्रतिशत बढ़ती की गारंटी देते हैं। पर हम इसे एक कान से सुन कर दूसरे कान से बाहर निकाल देते हैं, क्योंकि वित्त कमिसारियत कटौती करने के लिए ही है। अगर वित्त कमिसारियत एक करोड़ कहती है तो हम अपने से कहते हैं: शायद ३-४ करोड़, इससे कम पर हम राज़ी नहीं होंगे।

साथियो, स्थानीय कोषों के संबंध में स्थिति और भी उत्साहवर्धक है, यदि बेशक वित्त कमिसारियत द्वारा प्रस्तुत हिसाब-किताब पर विश्वास किया जाये, जैसा कि वह हमें आश्वासन देती है कि वह अतिरंजित नहीं है। पिछले साल ८ करोड़ से अधिक का आश्वासन

दिया गया था, पर वास्तव में पूरे सोवियत संघ के लिए ६ करोड़ २० लाख ही दिये गये। इस साल हमें २४ करोड़ का आश्वासन दिया गया है, पर आइये हम बड़े निराशावादी बन जायें और कल्पना करें कि वास्तव में पिछले वर्ष से कम रक़म मिलेगी, उदाहरणार्थ, जैसा कि हिसाब-किताब की अच्छी नज़रवाले लोग कहते हैं – १८ करोड़। यह भी पहले से तिगुनी बड़ी रक़म है। इस तरह यदि हम इन सभी रक़मों को जोड़ दें तो प्रकट होगा कि पिछले वर्ष हमने १४ करोड़ ७० लाख ख़र्च किये और इस वर्ष हम ३२ करोड़ पर रहने जा रहे हैं।

इसके साथ ही, दृढ़ सुनिश्चित और दीर्घकालीन नारे "संपूर्ण ध्यान ग्रामीण क्षेत्र पर" की घोषणा की गयी है। इन संसाधनों का एक बड़ा हिस्सा वास्तव में इस दिशा में, ग्रामीण क्षेत्रों में, ग्रामीण कार्यों पर ख़र्च होगा। तब शायद हम मुख्य कार्यभार के बारे में संहत प्रयास आरंभ कर सकें।

हमें सार्विक अनिवार्य शिक्षा को यथार्थ बनाना चाहिए। और हमारे कितने बच्चे वास्तव में पढ़ने जाते हैं? कुछ स्थानों में २० प्रतिशत से कम और औसतन ५० प्रतिशत (अथवा यह ५० प्रतिशत से भी कम हो सकता है)। हमें स्कूलों की संख्या दुगुनी बढ़ा देनी चाहिए। हमें और दो लाख ५० हज़ार अथवा इससे भी अधिक अध्यापकों की आवश्यकता है। आप समझते हैं कि यह क्यों आवश्यक है। क्या हम इसे अभी कर सकते हैं या नहीं? अंशतः, केवल अंशतः, साथियो, क्योंकि स्कूलों का जो जाल अभी हमारे पास है वह कई दृष्टियों से छेदों से भरा हुआ है अथवा ऐसी सामग्री से बना है, जो आसानी से टूट-फूट सकती है। हमें सबसे पहले जाल को मज़बूत बनाना चाहिए और तब हम इसे विस्तारित करने के बारे में बात कर सकते हैं।

बेशक, उन स्थानों में, जहां किसान ख़ुद स्कूल बनाना चाहते हैं, उन्हें बनाया जाना चाहिए। शिक्षा कमिसारियत में हमारे पास हमेशा ऐसे आवेदनकर्ताओं का तांता बंधा रहता है, जो आकर कहते हैं: "हम स्कूल बनाना चाहते हैं, हम इमारती लकड़ी देंगे, हम श्रम प्रदान करेंगे, हम अध्यापक का ख़ुद रख-रखाव करेंगे, पर हमें अमुक-अमुक चीज़ों की कमी है।" उदाहरणार्थ, अधिक समय पहले नहीं, हमारे पास यह मामला आया था: एक आवेदनकर्ता कूर्स्क प्रांत से पहुंचता है – ४०० रूबल के उधार की ज़रूरत है! "और जहां तक

उधार का सवाल है," वह कहता है, "हम एक ऐसा उपजाऊ खेत पहले ही दिखा चुके हैं, जो इतनी रक़म की पैदावार अवश्य ही देगा। जब फ़सल पक जायेगी तो हम आपका उधार लौटा देंगे।" उन्होंने ज़िला शिक्षा कार्यालय, प्रांतीय शिक्षा कार्यालय से इस रक़म की मांग की – "नहीं," उनसे कहा गया, "हमारे पास ४०० रूबल नहीं है।" इस साथी ने मुझे एक ऐसा काग़ज़ भी दिखाया, जिसके ज़रिये बड़े प्रांतीय कार्यालय ने स्कूल बनाने के लिए १० तख़्ते जारी करने का आदेश दिया था। छोटे कार्यालय में अधिकारियों ने उत्तर दिया था: "गोदाम में कोई तख़्ते नहीं हैं।"

सो, ये साथी हमारे पास आते हैं। बेशक, हमारे पास ऐसे साधन नहीं हैं, हम बैंक नहीं हैं, हम उधार नहीं जारी कर सकते, पर तो भी मैंने इन ४०० रूबलों को देने का आदेश जारी किया, क्योंकि कुछ पैसों की कमी के कारण किसानों की शुभ अभिलाषा पर पानी फिरते हुए देखना अखरता है।

इस तरह, स्थानीय रूप से दांव-पेच करना पड़ता है। हमें किसानों की सहायता मिलनी चाहिए अन्यथा वे ठीक ही असंतोषपूर्वक बड़बड़ा रहे हैं। हम भी उस समय का सपना देख रहे हैं, जब हमारे बच्चों को स्कूल पहुंचने के लिए मीलों नहीं चलना पड़ेगा, बल्कि उनके अपने गांव में ही स्कूल होगा। जहां तक निर्माण की यह इच्छा है, जहां तक निर्माण करने में समर्थ समृद्ध प्रांत हैं, हम निर्माण कार्यक्रमों पर आपत्ति नहीं करते।

लेकिन आइये देखें कि हमारे स्कूली जाल के साथ मामला वस्तुतः कैसा है। जब हमने यह पता लगाने के लिए हिसाब-किताब किया कि हमारे स्कूलों की मरम्मत के लिए कितनी रक़म की आवश्यकता होगी, ताकि वे परी-कथा में किसी खंडहर की भांति छतों के बिना, अंगीठियों के बिना न हों (क्योंकि यह प्रश्न वास्तव में आकाश की ओर चिल्ला रहा है) – जब हमने हिसाब-किताब किया कि कितनी रक़म की आवश्यकता होगी, तो प्रकट हुआ कि मोटे तौर पर २ करोड़ ५० लाख रूबल की आवश्यकता होगी। यह रक़म भी केवल इतनी ही होगी कि विद्यमान स्कूलों को कम से कम दर्शनीय रूप में लाया जा सके। हमने इसे अखिल-रूसी कार्यकारिणी समिति के ध्यान में लाया और इसने इस आशय का एक प्रस्ताव पास किया है कि शिक्षा

जन-कमिसारियत और प्रांतीय शिक्षा कार्यालयों के अंतर्गत एक विशेष निर्माण कोष क़ायम किया जाना चाहिए। यह कोष मुख्यत: मरम्मती कार्य के लिए निर्दिष्ट होगा, लेकिन मेरे ख़्याल में, इसे ऐसे किसानों को अग्रिम पैसा देने में भी समर्थ होना चाहिए, जो स्वयं ही स्कूल बनाने चाहते हैं।[5]

स्कूल भवनों के सुव्यवस्थित हो जाने पर ही पाठ्यपुस्तकों और स्कूली उपकरणों का प्रश्न उठेगा। क्या कोई पाठ्यपुस्तकें नहीं हैं? शायद वास्तव में नहीं हैं? राजकीय प्रकाशन-गृह (गोसिज़्दात)[6] की रिपोर्ट पढ़िये: पाठ्यपुस्तकों की २ करोड़ ३ लाख प्रतियां उपलब्ध हैं, यानी मोटे तौर पर उतनी संख्या में, जितनी कि आवश्यकता है। हम इन पाठ्यपुस्तकों को लगभग सभी छात्रों को प्रदान कर सकते हैं, जो इनके लिए तरस रहे हैं। लेकिन किताबें या तो कमिसा-रियत में या प्रांतों में भंडारों में पड़ी हुई हैं। वे वहां से आगे नहीं बढ़ रही हैं या बढ़ रही हैं तो मंथर गति से।

ये नयी पाठ्यपुस्तकें हैं, जिन्हें राजकीय अध्यापक परिषद ने जांचा है, लेकिन इलाक़ों में पुरानी पाठ्यपुस्तकों का ही बोलबाला है और, जैसा कि हमारे अध्यापक बताते हैं, दरअसल उनका शाही बोलबाला है। अध्यापक उनसे छुटकारा नहीं पा सकते। वे ही भर्रायी, प्राचीन आवाज़ों में अध्यापक पर हुक्म चलाती हैं कि उसे स्कूल में क्या करना है। ये प्राचीन, फटी-पुरानी पुस्तकें हैं, जिनके लिए किसान बड़ी क़ीमतें देते हैं, पूडों में भुगतान करते हैं। (दरअसल वे कहते हैं कि रूस के कुछ हिस्सों में स्कूली किताब की क़ीमत कई-कई पूड अनाज है)। यह एक बड़ी गुत्थी है, जिसे सुलझाने में सबको मदद करनी चाहिए। अध्यापकों के प्रतिनिधि हमारे पास आये और कहा: "गोसि-ज़्दात के पास ख़राब सामग्री है, सहकारी समितियां इन मामलों पर कम ही ध्यान देती हैं, सारे मामले को अध्यापकों के हाथों में रख देना चाहिए।"

इस संबंध में, मेरा विचार है कि त्सेक्प्रोस[7] को अपने पुस्तक-प्रकाशन को विशेष रूप से विकसित करना चाहिए, जो अब अपने पुस्तक व्यवसाय को सफलतापूर्वक विकसित कर रही है। संभवत: हमें इस व्यवसाय में प्रांतीय और ज़िला शिक्षा कार्यालयों, उप-ज़िलों में शिक्षा कर्मियों को लाना चाहिए, क्योंकि ऐसी पाठ्यपुस्तकें हैं,

जो अत्यधिक महंगी नहीं हैं, तो भी वे आगे नहीं बढ़ रही हैं। और उन्हें आगे बढ़ना चाहिए। जहां कीमत ऊंची है, वहां उसे नीचे लाने के लिए एड़ी-चोटी का प्रयास करना चाहिए क्योंकि हमें बच्चों के हाथों में किताबें रखने में असफल नहीं होना चाहिए, जिनकी शिक्षा को हम एक अत्यंत महत्वपूर्ण आवश्यकता के रूप में बता रहे हैं।

समस्या पाठ्यपुस्तकों को सोचने, लिखने या छापने में नहीं है। वे सोची, लिखी और छापी जा चुकी हैं, वे गोदाम में पड़ी हुई हैं – पर स्कूलों में नहीं हैं। इस असामान्य स्थिति को समाप्त किया जाना चाहिए। नयी पाठ्यपुस्तकें अपने साथ नयी विधियां लाती हैं। न० को० क्रूप्स्काया इसके बारे में ख़ास तौर से बोलेंगी[8], अतः मैं इसकी चर्चा नहीं करूंगा। यह साफ़ है कि यह हमारा एक मुख्य कार्य होना चाहिए।

हम उस शिक्षा से संतुष्ट नहीं हो सकते, जिसे पहले पर्याप्त माना जाता था। हमें जीवंत स्कूल का रास्ता खोजना है। अध्यापकों के साथ एक परामर्श सभा में मुझे बताया गया कि किसान नये स्कूल से संतुष्ट नहीं हैं। किसान कहता है: "पुराना स्कूल लिखना-पढ़ना सिखाता था, लेकिन अब, जब लड़का घर आता है और उससे पूछते हैं, 'तुमने क्या सीखा है – लिखना, सवाल हल करना, पढ़ना?' और उसने काफ़ी लिखना-पढ़ना नहीं सीखा है। जब आप उससे पूछते हैं कि उसने क्या पढ़ा है, तो वह उत्तर देता है, 'हम सैर-सपाटों पर जाते हैं, हम माडल बनाते हैं, ड्राइंग करते हैं।'" किसान इससे ख़ुश नहीं है।

मेरे ख़्याल में, यह स्थिति अब नहीं है। मुझे याद है कि कैसे १६१६ में कोस्त्रोमा प्रांत में एक गांव में एक किसान ने मुझसे यह शिकायत की कि अध्यापिकाएं मूर्तियां बनाती हैं, गीत गाती हैं और इसके अलावा कुछ नहीं करतीं। बेशक हमारे स्कूल में जो नया है वह यह नहीं कि हम बच्चों को लिखना-पढ़ना नहीं सिखलाते, कि हमारे पास ककहरा नहीं है, बल्कि इसके बजाय हमारे पास "काम्पलेक्स विधि"[9] है। स्कूल का पहला कार्यभार और नयी विधि का पहला कार्यभार स्कूल को किसानों की समझ के निकटतर लाना है।

हम अभी ही स्कूल को किसानों की समझ के निकटतर लाने में असमर्थ हैं, क्योंकि किसान चाहता है कि हम उसके बच्चे को पूर्वाग्रहों के सामने शीश नवाना सिखायें, यानी उसे ईश्वर तथा मनुष्य के प्रति

भय में शिक्षित करें। मुझे याद है कि कैसे एक किसान ने, जो वास्तव में एक कुलक क़िस्म का किसान था (क्योंकि उस समय उसके पास एक छोटी मांड़ी की फ़ैक्टरी थी), शिकायत की कि उन्होंने न केवल देवप्रतिमाओं को स्कूल से हटा दिया है तथा धर्मग्रंथ पढ़ाना बंद कर दिया है, बल्कि उसने जब अपने वानुश्का को एक तमाचा मारा तो उसने कहा कि सोवियत सत्ता ने बच्चों को पीटने की मनाही कर दी है। और यह स्कूल का प्रभाव था। बेशक इस अर्थ में हम स्कूल को किसानों के निकटतर नहीं ला सकते। हम बच्चों को पीट नहीं सकते, लेकिन हमें स्कूल को किसान के निकटतर इस ढंग से लाना चाहिए कि वह हमारी शिक्षा के उद्देश्यों को समझ सके। हमें स्कूल को उसके निकट इस ढंग से लाना चाहिए कि हमारा किसान इस बात को समझ और देख सके कि स्कूल एक जानकार किसान के लिए अच्छा प्रशिक्षण देता है। पर यदि लड़का ठीक ढंग से नहीं लिखता-पढ़ता, तो कोई भी "काम्पलेक्स विधि" स्कूल को नहीं बचा सकती।

स्कूल को एक ओर कारगर साक्षरता के उद्देश्य का पालन करना चाहिए, जो तत्काल स्पष्ट होगी, जो स्कूल में तेज़ी से, सरल ढंग से और भली-भांति पढ़ायी जायेगी तथा इसके बाद स्कूल द्वारा कृषि का आवश्यक ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए और इस तरह कृषि की सहायता करनी चाहिए। मिसाल के लिए, यहां तक कि बुर्जुआ स्विट्ज़रलैंड में भी, जैसा कि मेरे पड़ोसी ने, जो एक माली था, मुझे बताया, उसका लड़का स्कूल से घर वापस आने पर उसे खेतीबारी पर मूल्यवान सलाह देता है। हमारे यहां, जहां खेती का स्तर नीचा है, बड़े पैमाने पर सलाह दी जा सकती है। कृषि-विज्ञान स्कूल के ज़रिये हमारी कृषि-अर्थव्यवस्था के प्रति अपनी देखभाल बढ़ा सकता है, यह सिखलाते हुए कि बीमार गाय का इलाज कैसे करें अथवा शाक-सब्ज़ियों की बुआई के तरीक़ों के बारे में जानकारी देते हुए बच्चों के ज़रिये उसे मदद कर सकता है। हर स्कूल को ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए कि बच्चे सिखे हुओं को सिखला सकें।

जब किसान यह देखेगा कि वह स्कूल के माध्यम से कृषि संबंधी उपयोगी जानकारी प्राप्त कर रहा है, तो वह स्कूल का सम्मान करेगा।

हमें स्कूल को न केवल किसानों की उदीयमान पीढ़ी के बीच कृषिवैज्ञानिक चेतना के स्तर को उठाने के साधन में, बल्कि सभी की,

वयस्क किसानों की भी चेतना के सामान्य स्तर को उठाने के एक साधन में भी बदल डालना चाहिए। अमरीका फ़ार्मरों के विशाल जाल के साथ यह पहले से ही कर रहा है। पिछले कृषि सम्मेलन में हमने इस प्रश्न को बड़ी गंभीरतापूर्वक उठाया था।

आवश्यकता इस बात की है कि कृषि कालेजों, उच्च शिक्षा संस्थानों को अपनी-अपनी देखभाल के अंतर्गत एक निश्चित क्षेत्र लेना चाहिए, कि उन्हें माध्यमिक स्कूलों के अध्यापकों और विद्यार्थियों को इकट्ठा करना चाहिए, उनमें से प्रशिक्षक तैयार करने चाहिए और फिर ये प्रशिक्षक स्कूलों का दौरा करें तथा प्रशिक्षण दें। प्रत्येक माध्यमिक कृषि स्कूल के पास देखभाल के अपने-अपने क्षेत्र होने चाहिए। गांव अध्यापक मूल ईकाई होना चाहिए। उसे, उदाहरणार्थ, मधुमक्खी-पालन, बाग़बानी, कृषि-अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं के बारे में जानना चाहिए, ताकि वह बाल क्लबों व संगठनों की स्थापना के ज़रिये दिन-प्रतिदिन, मास-प्रतिमास कृषक अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं को विकसित कर सके।

अमरीका अपने फ़ार्मरों को उनके बच्चों के माध्यम से पढ़ाता है, जिन्होंने अपनी कृषि इतनी विकसित कर ली है कि वह हमारे किसानों की पहुंच के बाहर है। हमें अपने किसानों को पढ़ाना चाहिए, जिनकी खेती बहुत निम्न स्तर पर है और निकट भविष्य में हमें इस कार्य को कम से कम कुछेक क्षेत्रों में यथार्थ बना देना चाहिए। यही स्कूल का पुनर्गठन है।

कोई यह न सोचे कि मैं राजकीय अध्यापक परिषद के पाठ्यक्रम या "काम्प्लेक्स विधि" के ख़िलाफ़ हूं। उल्टे, मैं पूरी तरह इन दोनों के पक्ष में हूं। वे सच्चे श्रम स्कूल की सिद्धि की दिशा में, सच्चे कम्यु-निस्ट स्कूल के निर्माण की दिशा में एक क़दम और एक बहुत बड़ा क़दम हैं। लेकिन हमें ऐसी विधियां सोच निकालनी चाहिए तथा ऐसे निर्देश देने चाहिए कि अध्यापकों को सिर खपाना न पड़े कि बात क्या है। और हमारे यहां ऐसा होता है। अध्यापक परिषद के पाठ्यक्रम पर माथापच्ची करता रहता है और इस दौरान बच्चे बिना पढ़े-लिखे बड़े होते रहते हैं। इसे नहीं होने दिया जा सकता। हमें अपने विधि संबंधी निदेशों और यथार्थ कार्य की संभावनाओं के बीच सामंजस्य बैठाना चाहिए।

हमसे अक्सर पूछा जाता है कि तकनीकी कौशल प्राप्त करना कैसे संभव है: "हम 'काम्प्लेक्स विधियों' के जंगल में अपना रास्ता टटोल रहे हैं तथा तकनीकी कौशल और ज्ञान प्राप्त करने में पिछड़ रहे हैं।" यह नहीं होना चाहिए। यहां सामान्य मापदंड निम्नलिखित होना चाहिए: अगर किसान स्कूल का आदर करता है तो यह अच्छा स्कूल है। पर इसे छूटें देकर और धर्म के सहारे जा कर या अनुशासन के स्तर को ढीला कर के नहीं, बल्कि ऐसे किया जाना चाहिए कि किसान यह कहे: "वे स्कूल में बच्चों को असल चीज़ पढ़ाते हैं, वे उन्हें वही पढ़ाते हैं, जिसकी उन्हें आवश्यकता है।" यह दिखाता है कि 'काम्प्लेक्स विधि' और परिषद के पाठ्यक्रम सही हैं, क्योंकि उनका उद्देश्य स्कूल को जीवंत बनाना तथा उसे जीवन के यथासंभव निकट लाना है।

अब अध्यापक समुदाय की आर्थिक स्थिति के बारे में स्मरण दिलाया जाना चाहिए, क्योंकि यह स्वत: स्पष्ट है कि वह चाहे कितना ही निस्स्वार्थ क्यों न हो (और वह बहुत निस्स्वार्थ है), आर्थिक परिस्थितियों का अस्तित्व तो है ही। जैसा कि यहां कहा गया है, वे वह आधार हैं, जिस पर हम खड़े हैं। यदि आप उससे गिरेंगे, तो सब कुछ उलटा-पुलटा हो जायेगा; आर्थिक सुरक्षा के न रहते काम करना असंभव है।

इस संबंध में, हमारे समक्ष कौन-से कार्यभार प्रस्तुत हैं? अब इस वर्ष ७० लाख के अनुदान और ५० लाख के पूरक अनुदान (स्थानीय संसाधनों से इसमें कुछ और जोड़े जाने के बादे के साथ) के ज़रिये हमने अध्यापक का औसत वेतन २८ रूबल प्रति मास तक बढ़ा दिया है। अक्सर यह कहा जाता है कि "कई प्रांतों में यह इससे भी अधिक बढ़ गया है। आप हमें ये २८ रूबल क्यों दे रहे हैं, जबकि हमें इससे ज़्यादा पहले ही मिल रहा है?" यह ग़लत है, क्योंकि पैसा सबसे ग़रीब प्रांतों को जा रहा है। अगर १ करोड़ २० लाख दिया जा रहा है, तो इसका अर्थ है कि इस रक़म से किसी न किसी की स्थिति बेहतर होगी। आख़िर, यह असंभव है कि अतिरिक्त रक़म के मिलने पर वेतनों में वृद्धि न हो, कि इस अतिरिक्त १ करोड़ २० लाख से किसी चीज़ में सुधार न हो। ऐसा नहीं होता। लेकिन क्या एक करोड़ २० लाख की यह रक़म वास्तव में आपके पास तक पहुंचेगी?

क्या स्थानीय प्राधिकरण इसका अन्य उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल नहीं करेंगे, क्या इस पैसे को प्रच्छन्न रूप में और यहां तक कि ऐसे रूप में भी दूसरे उद्देश्यों के लिए नहीं मोड़ दिया जायेगा जिससे अध्यापक समुदाय को ठेस पहुंचे? हम कहते हैं: "हम इलाक़ों के लिए १ करोड़ २० लाख दे रहे हैं। आप इसमें अपनी ओर से ३५ लाख जोड़ दीजिये और इस प्रकार वेतन बढ़ा कर औसतन २८ रूबल कर दीजिये।" और नतीजे में हमें क्या हाथ लगता है? स्कूलों की संख्या में कटौती।

अभी हाल ही में हमें ज़ारीत्सिन प्रांत (अगर यहां ज़ारीत्सिन के अध्यापक हैं, तो उन्हें इसके बारे में मालूम है) से यह अल्टीमेटम मिला है: "हमारे लिए अतिरिक्त अनुदान जल्दी से भेजिये, अन्यथा हम स्कूलों की संख्या कम कर देंगे," हालांकि ऐसी कार्रवाई कई बार मना कर दी गयी है। और इस संबंध में ज़ारीत्सिन प्रांत अकेला नहीं है। दरअसल, उन स्थानों में, जहां केन्द्रीय सरकार से अध्यापकों के वेतन में वृद्धि के बारे में निदेश प्राप्त होते हैं, वे हमारे नगण्य जाल में स्कूलों की संख्या घटा रहे हैं।

एक और तरीक़ा: वे अध्यापक को सात महीने के लिए नौकरी पर रख लेते हैं, बाक़ी पांच महीने काम न करने के महीने, गर्मी की छुट्टी के महीने हैं, जैसा चाहो रहो। इससे एक दिलचस्प स्थिति पैदा हो जाती है: आपको १५ रूबल मिलते थे, अब आपको २८ रूबल मिल रहे हैं, पर १२ महीने के बजाय ७ महीने ही। यह साफ़ ही अपमानजनक व धोखाधड़ी है। यह न केवल अध्यापकों की आंखों में, बल्कि केन्द्रीय सरकार की आंखों में भी धूल झोंकना है, जो यह नहीं चाहती है।

अथवा एक अध्यापक पर ज़्यादा, बहुत ज़्यादा भार लाद दिया जाता है, जिसे १००-१०० बच्चों को पढ़ाने के लिए बाध्य होना पड़ता है और यह किसी तरह भी नहीं किया जा सकता। कार्य का परिमाण सतत बढ़ता जाता है, जबकि अध्यापक उससे नहीं निपट सकता और वेतन में सभी बढ़ती व्यर्थ हो जाती है, उससे वस्तुतः कुछ नहीं प्राप्त होता। यहां हमें २ अध्यापकों की ज़रूरत है। यह दिन की रोशनी की तरह साफ़ है, पर यह निष्कर्ष नहीं निकाला जाता – इन्हें जैसे-तैसे पढ़ाइये और अगले साल आपको और २५ विद्यार्थी मिलेंगे। इस तरह, ऐसा आभास मिलता है मानो किसानों की आवश्य-

कताओं को स्कूली जाल को विस्तारित किये बिना ही पूरा किया जा रहा है। साफ़ है कि अगर हम नये स्कूल नहीं बना सकते, तो हमें कम से कम अध्यापकों की संख्या बढ़ानी चाहिए और इसके बिना कोई नतीजे नहीं प्राप्त होंगे।

यही कारण है कि हाल ही में विशेष क़ानून द्वारा प्रांतीय शिक्षा कार्यालयों, मज़दूर किसान निरीक्षण संस्था[10], आदि की सहभागिता से नियंत्रण आयोग क़ायम किये गये हैं, जिन्हें क़ानून के वास्तविक कार्यान्वयन की जांच-पड़ताल करने का अधिकार दिया गया है। यह उनकी ज़िम्मेदारी होगी और शिक्षा कमिसारियत में हम आपसे त्सेक्प्रोस के ज़रिये और सीधे भी क़ानून-निर्माता की इच्छा के उल्लंघन के सभी तथ्यों के बारे में सूचित करने की मांग करते हैं, जो इसमें निहित है कि अध्यापक को सामान्य अध्यापन-कार्य के लिए बारहों महीने २८ रूबल प्रति मास के हिसाब से वेतन मिलना चाहिए। अगर आयोग इस पर नज़र नहीं रखते, तो हम उनकी जवाबदेही मांगेंगे। क़ानून इस बात के लिए नहीं जारी किया जाता कि उसका उल्लंघन किया जाये, बल्कि इसलिए जारी किया जाता है कि सांस्कृतिक मोर्चे को और उच्च स्तर पर लाया जाये।

इन आर्थिक परिस्थितियों के साथ-साथ, जिन्हें बेहतर बनाया जायेगा, पेंशन संबंधी क़ानून भी है।[11]

फिर यह आवश्यक है कि अध्यापक की प्रतिष्ठा पर गंभीर ध्यान दिया जाये। यहां इसके बारे में बहुत कुछ कहा गया है और मेरे पास काफ़ी सामग्री है। मुझे आशा है, यहां तक कि विश्वास भी है कि इस ढेर-सी सामग्री में बहुत ज़्यादा अध्यापकों की व्यग्रता है (वे रूठ गये और उनके संबंध में अतिरंजना की जाती है), और यदि दूसरे पक्ष की भी सुनी जाये, तो इसमें से बहुत-सी बातों का कोई औचित्य नहीं रह जाता और यह कम बुरा प्रतीत होता है। अगर यह सही होता, तो निश्चय ही यह असंभव है कि आपके मन की गहराइयों में उथल-पुथल पैदा न हो जाये। पर यदि इसका लेशमात्र भी सही है, तो इसे अंतिम रूप से समाप्त कर देना आवश्यक है।

इस संबंध में क्या किया जाये? मेरे ख़्याल में, यह कांग्रेस अपने आपमें एक शक्तिशाली साधन है। यहां सरकार और पार्टी के प्रतिनिधियों ने अध्यापक की प्रतिष्ठा को ऊंचा उठाने, औद्योगिक कल-

कारख़ानों में सर्वहारा कर्मियों के साथ समान अधिकार-प्राप्त व्यक्ति के रूप में उसे स्वीकार करने की आवश्यकता के बारे में बड़े ही ज़ोर-शोर से बातें कीं। यहां कहा गया है कि अध्यापक समाज में एक अत्यंत महत्वपूर्ण कर्मी है, कि उसके माध्यम से किसानों के साथ सहबंध ठोस रूप ग्रहण करता है। यहां कहा गया है कि हम सरकार, पार्टी या कोम्सोमोल के किसी भी ऐसे प्रतिनिधि का कड़ा विरोध करेंगे, जो इसे नहीं मानते और अपने को इस स्तर पर नहीं ला सकते। यहां उन अपमानजनक अभिव्यक्तियों को रोकने के बारे में बहुत कुछ कहा गया है, जो अध्यापक के महत्व की समझ के अभाव में उत्पन्न होती हैं।

लेकिन कार्य जारी रहना चाहिए। यहां त्सेक्प्रोस की भूमिका बड़ी है और कुछ मामलों में त्सेक्प्रोस मौन साधे रहा है: इसे मानो अपनी शक्ति का भान ही नहीं था और उसकी शक्ति विराट है। यह कहना ग़लत है कि हमारा देश न्याय-रहित है, कि कोई ऐरा-ग़ैरा नौकरशाह अध्यापक से नाक मिट्टी में घिसवा सकता है। यह ग़लत है कि मानव की नयी पीढ़ी के पालन-पोषण में लगे एक व्यक्ति की गरिमा पर हमला किया जा सकता है और इस हमले के ज़िम्मेदार नौकरशाह से निपटने का कोई साधन न पाया जाये। ऐसे मामले कमिसारियत के ध्यान में लाये जाने चाहिए और हम अपने निरीक्षणालय में एक विशेष विभाग संगठित करेंगे और उसे सतत तत्पर रखेंगे, जो क़ानून के ऐसे उल्लंघनों से जल्दी से निपटेगा। और जहां कमिसारियत का हाथ उतना लंबा नहीं है, वहां केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति व पार्टी का, जिनका हम सहारा लेंगे, हाथ निश्चय ही इस दिशा में पर्याप्त सिद्ध होगा।

साथियो, फिर भी हम एक ऐसी स्थिति का सामना कर रहे हैं (हालांकि हम शिक्षा के सभी पहलुओं में महत्वपूर्ण सुधार की पूर्व-वेला में हैं), जिसमें प्रारंभिक शिक्षा में केवल ५० प्रतिशत बच्चे ही आते हैं। और शेष कहां जाते हैं?

हम निरक्षरता दूर करने की बात करते हैं, लेकिन हमारी आधी आबादी पुनः बेपढ़ी-लिखी ही बढ़ रही है। स्पष्टतः यहां सहायता देनी चाहिए। अभी भी उस चिर-अभिलाषित दिन के आने में कुछ देर है, जब हम शिक्षा को सबके लिए अनिवार्य और सबकी पहुंच के भीतर

बना देंगे। पर निरक्षर किशोरों की संख्या बढ़ते रहने देना भी एक ऐसी चीज़ है, जिसे हम नहीं रख सकते।

यही कारण है कि मैं उस विचार के पक्ष में गहन भावना रखता हूं, जिसे पहले न० को० क्रूप्स्काया ने पेश किया था। इस बात से बिना डरे कि कोई इसमें हमारे शैक्षिक आदर्शों का पतन देख सकता है, हम यह आवश्यक मानते हैं कि हमें ऐसे बड़े बच्चों के लिए तुरंत ही सहायक स्कूलों, भले ही एक-वर्षीय स्कूलों का जाल विकसित करना चाहिए, जो सामान्य स्कूलों में नहीं पहुंच पा रहे हैं। इस साल हमें पहली बार ऐसे स्कूल क़ायम करने हेतु प्राथमिक प्रयोगों के लिए ५० लाख मिले हैं। बेशक, ५० लाख से हम काफ़ी आगे नहीं बढ़ सकते। हमारे ख़्याल में, यह तत्काल ही स्थानीय संसाधनों का सिल-सिला बढ़ा देगा। इसके अलावा, इस वर्ष यह केवल पहला प्रयोग ही होगा। पर यह महत्वपूर्ण प्रयोग है।

पर जब हमने इस क़ानून[12] को पेश किया था, तो हमें यहां तक कि सरकार के कुछ सदस्यों से भी संशय भरे सवालों का सामना करना पड़ा था। उन्होंने हमसे पूछा, आप निरक्षरता का उन्मूलन क्यों कर रहे हैं, आप और पैसे क्यों मांग रहे हैं, जबकि आपने अभी-अभी दस लाख ३० हज़ार की अतिरिक्त रक़म पायी है? आप मूर्खता-पूर्ण काम कर रहे हैं। आप वयस्कों को क्यों पढ़ा रहे हैं? आप अपने स्कूलों पर ध्यान दें, सभी बच्चों को स्कूलों में लायें, तब निर-क्षरता का उन्मूलन करने की कोई आवश्यकता नहीं होगी, इसका उन्मूलन स्कूल में ही हो गायेगा।

रह स्पष्टतः ग़लतफ़हमी है। और अक्सर हमारे कार्य-क्षेत्र के बाहर के साथी वही समझ का अभाव प्रदर्शित करते हैं। यह बिल्कुल साफ़ है कि हम इंतज़ार नहीं कर सकते। हम ऐसे वयस्कों को निरक्षर नहीं रहने दे सकते, जो इतिहास बना रहे हैं, जिन पर हमारा कल निर्भर है। यह ऐसा कार्य नहीं है, जो बच्चों के बढ़ने तक इंतज़ार करता रहे। यह एक ऐसा कार्य है, जिसे अभी ही करना आवश्यक है।

निरक्षरता दूर करने के कार्य में हमने बड़ी कामयाबियां हासिल की हैं, क्योंकि हम सेना, पेशेवर संगठित मज़दूरों, नगरीय आबादी, कोम्सोमोल, सेना में जानेवाले युवजनों, आदि को शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। मगर जब हम निर्धारित प्रावधान के अनुसार देहातों में उच्च

आयुवाले लोगों की निरक्षरता दूर करने की ओर आगे बढ़ते हैं, तब हमें ठोस प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है: किसान के पास समय नहीं है, किसान की कोई दिलचस्पी नहीं है।

हम आश्वस्त हो चुके हैं कि निरक्षरता दूर करने की पुरानी विधि, जिसमें शिक्षक अपने घर पर रहता था और किसान उसके पास जाते थे, बिल्कुल उपयुक्त नहीं है। हम अब निरक्षरता दूर करने की ग्रुप विधि या कुछ मामलों में व्यक्तिगत विधि अपना रहे हैं। अगर किसान नहीं आयेंगे तो हम ख़ुद ही वर्णमाला के साथ उनके यहां जाते हैं। इसके अलावा, कुछ-कुछ साक्षर लोगों पर बड़ा ध्यान दिया जाना चाहिए। उन्हें साहित्य दिया जाना चाहिए, किताबें दी जानी चाहिए, उन्हें समझाना चाहिए कि पढ़ना एक आवश्यक आर्थिक कार्य है, कि वे इसके बिना नहीं रह सकते। और इसके लिए उपयुक्त साहित्य की व्यवस्था की जानी चाहिए।

ये बड़ी समस्याएं हैं। बेशक, मूलतः समूचा ग्रामीण क्षेत्र कुछ-कुछ ही साक्षर है। यदि यह कुछ मामलों में पढ़ना-लिखना भी भली-भांति जानता है, तो राजनीतिक और सांस्कृतिक रूप से कुछ-कुछ ही साक्षर है। और हमें इस साक्षरता को न केवल ग्रामीण क्षेत्र के बच्चों में, बल्कि वयस्कों में भी उठाना चाहिए। इस संबंध में समन्वय-कारी कार्य यानी एक केन्द्रीय बिन्दु में सूत्रबद्ध कार्य होना चाहिए। और इस कार्य का केन्द्रीय बिन्दु हम गांव वाचनालय[13] को बनाते हैं। गांव वाचनालय एक ऐसा स्थान होना चाहिए, जहां किसान सूच-नाएं पा सकें, जहां लोगों के लिए क़ानून, अख़बार और आज्ञप्तियां पढ़े जाते हों, जहां स्थानीय जीवन की धड़कन महसूस की जा सके, जहां पुस्तकालय हो, इसे सलाह का स्रोत और सभा-स्थल होना चाहिए। यहां समय-समय पर अत्यंत महत्वपूर्ण सांस्कृतिक प्रश्नों – स्वास्थ्य, कृषि, आदि – पर व्याख्यान होने चाहिए।

इस संबंध में वाचनालयाध्यक्ष को बहुत कुछ जानना चाहिए, उसे किसानों के साथ बात करने तथा स्थानीय शक्तियों को एकजुट करने में समर्थ होना चाहिए, स्वास्थ्य कर्मियों, कृषि मंत्रालय के प्रति-निधियों, स्थानीय किसान समितियों, स्थानीय सोवियत कर्मियों, स्कूली कर्मियों, पार्टी शाखा, कोम्सोमोल – इन सबको वाचनालय में खींच लाना चाहिए।

गांव वाचनालय को एक ऐसा केन्द्र बन जाना चाहिए, जो गांव में मौजूद सभी प्रकाश को अपनी ओर आकर्षित करे और अपनी बारी में ऐसा प्रकाश-केन्द्र बने, जो चारों ओर रोशनी फैला सके।

साथियो, कोम्सोमोल के बारे में एक अलग रिपोर्ट पेश की जायेगी, पर मैं भी इस उल्लेखनीय संगठन पर कुछ कहे बिना आगे नहीं बढ़ सकता। मुझे कहना चाहिए कि संपूर्ण जन-शिक्षा के क्षेत्र में और ख़ास तौर से गांव शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षा कमिसारियत कोम्सोमोल की बहुत आभारी है। कोम्सोमोल न केवल विराट यौवनपूर्ण उत्साह, हमसे बड़ी जीवंतता प्रदर्शित करता है, बल्कि यह बड़ी व्यावहारिकता, किसी कार्यभार को तुरंत निर्धारित करने और यथार्थ ढंग से निर्धारित करने तथा जीवन में उतारने की क्षमता भी प्रदर्शित करता है। इस दृष्टि से हम केवल कोम्सोमोल के आभारी ही नहीं हैं, हमने अपने कार्य के दौरान इसके साथ संपर्क-सूत्र बनाये हैं और हम चाहेंगे कि निम्नतम विद्यालय तक हमारे सभी शिक्षा संस्थान ये संपर्क-सूत्र क़ायम करें, जैसा कि स्वयं कमिसारियत ने किया है।

बेशक, कोम्सोमोल के कार्यों में विचलनों और कमियों से इन्कार नहीं किया जा सकता, जिनमें उनकी तरुणाई प्रकट होती है तथा जिन्हें कोम्सोमोल की केन्द्रीय समिति के सचिव ने भी इंगित किया है। लेकिन हम इतना आश्वस्त हैं कि इस कांग्रेस के बाद कोम्सोमोल का कार्य और भी नियोजित ढंग से तथा सामान्य मार्ग से अग्रसर होगा। "ग्रामीण क्षेत्रों को ध्यान देने" के मामले में कोम्सोमोल ने निस्संदेह बड़ी भूमिका अदा की है। यह ऐसे कृषि मंडलों और युवा किसानों के स्कूलों का जाल क़ायम करने में हमारी सहायता कर रहा है, जिनका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यमान कुछ बोझिल दूसरे चरण के स्कूलों या सात-वर्षीय स्कूलों का स्थान ग्रहण करना है, उनके स्थान पर ग्रामीण क्षेत्रों के अत्यधिक उपयुक्त स्कूल क़ायम करने में हमारी सहायता कर रहा है, जो ऐसे ग्रामीण बुद्धिजीवी या बुद्धिजीवी किसान तैयार करते हैं, जो सोवियत सत्ता के स्थानीय अवयवों, सहकारिता आंदोलन, आदि में काम कर सकें—एक सच्चा, सुसंस्कृत किसान। यह कार्यभार विशाल है।

चार-वर्षीय स्कूल, अपूर्ण चार-वर्षीय स्कूल की तो बात ही क्या है, ऐसी चीज़ कभी दे ही नहीं सकता। हमें किसान स्कूलों के प्रचुर जाल के लिए काम करने की आवश्यकता है।

कुछ लोगों ने हमसे यह आपत्ति व्यक्त की है: "**किसान** स्कूल ही क्यों? क्या आप किसानों को उनके अपने वर्ग की चौहद्दी में ही सीमित कर देना चाहते हैं—किसान सामान्य स्कूल में ही क्यों न पढ़े?" क्योंकि हमारे पास सामान्य स्कूल नहीं है और दरअसल हम यह नहीं रख सकते। सच्चा, पूर्ण मार्क्सवादी स्कूल, जैसा मार्क्स ने आशा की, एक ऐसा स्कूल, जो उच्च रूप से श्रम पर आधारित हो, व्यवहार में केवल एक ऐसे शैक्षिक संस्थान में ही प्राप्त किया जा सकता है, जो मिल-कारख़ाने से जुड़ा हो और उनके जीवन में हिस्सा लेता हो। यही कारण हैं कि हमारे मिल और कारख़ाना अप्रेंटिस स्कूल ("फ़ाब्ज़ा-वुच") केवल इसलिए ही महत्वपूर्ण नहीं हैं कि वे मज़दूरों की एक नयी पीढ़ी पैदा कर रहे हैं, बल्कि इसलिए भी महत्वपूर्ण हैं कि इस नयी पीढ़ी को तकनीकी दृष्टि से उच्च ढंग से प्रशिक्षित होना चाहिए तथा कम्युनिस्ट चेतना से संपन्न होना चाहिए; वे ही यह माडल पेश करते हैं कि हमें अपने सभी स्कूलों को कैसे ऊपर उठायें कि वे सच्चे मार्क्सवादी स्कूल बनें। केवल अप्रेंटिस स्कूल ही ऐसी उपयुक्त परि-स्थितियों में है, जिनके अंतर्गत मार्क्सवादी स्कूल को एक यथार्थ बनाया जा सकता है। यही कारण है कि हमने सर्वहारा के लिए पाठ्यक्रम के एक अभिन्न अंग के रूप में औद्योगिक कार्य के साथ सात-वर्षीय स्कूल तथा अप्रेंटिस स्कूल क़ायम किये हैं।

आबादी का एक छोटा प्रतिशत ही उच्च शिक्षा संस्थानों से गुज़रे-गा। बड़े भाग की पढ़ाई इस नौ-वर्षीय शिक्षा की पूर्ति के साथ ही ममाप्त हो जायेगी। वे कहां जायेंगे?

वास्तविक जीवन के अवलोकन से पता चलता है कि वे कहीं नहीं जायेंगे, वे जीवन के लिए तैयार नहीं हैं। इस संबंध में हम अत्या-वश्यक सुधार, गहन सुधार अमल में ला रहे हैं, जो दूसरे चरण के स्कूल की दो अंतिम कक्षाओं को व्यावसायिक क़िस्म के स्कूल में बदल देता है। तरह-तरह के वैकल्पिक प्रशिक्षणों की व्यवस्था की जा रही है। हम स्कूलों को प्रचार कर्मियों, सहकारिता आंदोलन कर्मियों, निरक्षरता उन्मूलन आंदोलन के अध्यापकों, वाचनालयों और सांस्कृतिक केन्द्रों के कर्मियों के प्रशिक्षण की दिशा में निदेशित कर रहे हैं। हमें इस तरह के कर्मियों की आवश्यकता है और उनके प्रशिक्षण के लिए उच्च शिक्षा की ज़रूरत नहीं है।

एक किसान इस रास्ते का अनुसरण क्यों करे? इस तरह के स्कूल हम नगरी युवजनों के लिए बना रहे हैं, जो कहीं नहीं जा सकते।

ग्रामीण स्कूल वह स्कूल है, जो ग्रामीण क्षेत्रों के लिए कर्मी प्रदान करता है। इसके ज़रिये ग्रामीण क्षेत्र ऐसे सांस्कृतिक कर्मी प्राप्त करेंगे, जो देहातों में ही रहेंगे। ग्रामीण स्कूल को पूरा करनेवाले उच्च शिक्षा या अप्रेंटिस स्कूलों में भी वैसे ही जा सकते हैं, जैसे दूसरे चरण के स्कूल पूरा करनेवाले जाते हैं; इधर अत्यधिक प्रतिभाशाली बच्चे आते हैं, जो इस या उस विषय के लिए बड़ा झुकाव या प्रतिभा प्रदर्शित करते हैं। चूंकि इन स्कूलों पर बड़ा ख़र्चा आता है और उन्हें अल्प अवधि में बड़े पैमाने पर क़ायम नहीं किया जा सकता, इसलिए यहीं कृषि अध्ययन मंडलियां सहायतार्थ आती हैं, जहां नौजवान इकट्ठा हो सकते हैं, जहां कोम्सोमोल के मार्गदर्शन में व ऐसी सांस्कृतिक शक्तियों की शिरकत से सामाजिक दिलचस्पी के प्रश्नों पर बहसें आयोजित की जा सकती हैं, जिन्हें कोम्सोमोल ने इस कार्य के लिए उपलब्ध किया है। जहां तक मेरी जानकारी है, ये कृषि अध्ययन मंडलियां सुविकसित हैं तथा कोम्सोमोल से परे किसान युवजनों में संगठन का अच्छा रूप पेश करती हैं।

स्कूल-पूर्व शिक्षा के बारे में एक शब्द और। यह क्रांतिकारी उत्साह के प्रभाव में शुरू हुआ, पर दुर्भाग्य से बाद में इसका कोई नतीजा नहीं निकला। मैं स्कूल-पूर्व शिक्षा के सामान्य महत्व के बारे में नहीं बोलने जा रहा हूं। यह सबको स्पष्ट है कि बच्चों की आत्मा को सात साल की आयु से पहले ढालना अधिक आसान होता है और कि शिक्षा के प्रति उचित दृष्टिकोण बचपन से ही शुरू हो जाना चाहिए। यह साफ़ है कि शिशु-सदन से शुरू करके और किंडरगार्टन तक स्कूल-पूर्व कार्य माता की स्थिति को अधिक आसान वना देता है। यह कार्य वह मुख्य मार्ग है, जो स्त्रियों को अपने को विकसित करने तथा सामाजिक जीवन में हिस्सा लेने में समर्थ बनाता है।[14]

यहां ग्रामीण क्षेत्र के बारे में विशेष रूप से कहने की आवश्यकता है, क्योंकि यहां हम किसान स्त्री-समुदाय – सबसे दुर्भाग्यशाली किंतु अब भी हमारी संपूर्ण ग्रामीण आबादी के आधे भाग – के साथ निकट संपर्क रख सकते हैं। हम किसान स्त्री-समुदाय के साथ बच्चों की उचित

देखरेख, बाल-रक्षा के स्वास्थ्य संबंधी पहलू के उचित संगठन के ज़रिये संपर्क क़ायम कर सकते हैं। हम यहां अत्यंत प्राथमिक ढंग से – खेल मैदान – से शुरूआत कर सकते हैं और इस तरह किसान स्त्रियों की सहायता कर और उनकी स्थिति को अधिक आसान बना सकते हैं।

पिछले वर्ष ग्रामीण क्षेत्र के विभिन्न इलाक़ों में जानेवाले विद्यार्थियों की रिपोर्टों से हम जानते हैं कि उनके कार्य ने न केवल उन बच्चों के लिए, जिनकी वे देखभाल कर रहे थे, कितने अच्छे नतीजे दिये, बल्कि किसानों के साथ सुनिश्चित संपर्क क़ायम करने के अर्थ में भी उनका कार्य कितना उपयोगी था।

निकट भविष्य में हम स्कूल-पूर्व कार्य का विकास शुरू करने के लिए आवश्यक संसाधन तथा लोग जुटाने की कोशिश करेंगे। और ग्रामीण क्षेत्र में इसका विकास शुरू करने के लिए भी, जहां यह सबसे बुरे ढंग से चल रहा है, किंतु जहां यह औद्योगिक ज़िलों से कम आवश्यक नहीं है और आंतरिक शहरी ज़िलों से बहुत अधिक आवश्यक है, जहां, फिर भी, स्कूल-पूर्व कार्य रह गया है।

मैं अध्यापकों की सामाजिक भूमिका के संबंध में कुछ और शब्द कहना चाहता हूं क्योंकि यह प्रबोधन के उन कार्यभारों से जुड़ा हुआ है, जिनकी ओर मैंने आपका ध्यान विशेष रूप से खींचा है।

मैं आपसे यह कहना चाहूंगा: अध्यापक एक ऐसा व्यक्ति है, जो नये लोगों, दरअसल ऐसे लोगों से बने समूचे समुदाय के सही विकास की देखभाल करता है। सामूहिक रूप से अध्यापक–संपूर्ण अध्यापक समुदाय–नयी पीढ़ी के उचित विकास की देखभाल कर रहा है। और हम कहते हैं: हमारे यहां न केवल यह नयी पीढ़ी निरक्षरता, अंधकार और अज्ञान में ग़लत और गड्डमड्ड ढंग से बढ़ सकती है, शारीरिक रूप से बेडौल, अपनी चेतना में विकृत ढंग से बढ़ सकती है, बल्कि हमारे यहां ग्रामीण क्षेत्रों के वयस्क भी, जो कृषक चातुर्य और कटु अनुभव की दृष्टि से बुद्धिमान होते हैं, कई मामलों में बच्चे ही रहते हैं।

सामाजिक रूप से किसान बच्चों की तरह ही हैं – उन्हें बढ़ना तथा विकसित होना है और जहां तक सामाजिक चेतना का संबंध है, उन्हें अपने अधिक विकसित, अधिक संगठित भाई – मज़दूर – के

प्रभाव में विकसित होना चाहिए। किंतु मज़दूर सर्वत्र ही किसानों के संपर्क में नहीं है। किसान पर मज़दूर का प्रभाव, असर बहुधा काफ़ी विवादास्पद, काफ़ी दूर की चीज़ है।

इस बात के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता कि किसान अपने ही भरोसे सही ढंग से बढ़ेंगे और विकसित होंगे। उन्हें भी अध्यापकों की ज़रूरत है। अन्यथा वे विरूपित हो जायेंगे और ग़लत रास्ते जायेंगे। ऐसा क्यों?

व्लादीमिर इल्यीच लेनिन ने कई मौक़ों पर हमें कहा और सिखाया था कि किसान एक दोहरा व्यक्ति है। खेतों में उसके श्रम के लिए उसे बहुत कम पारिश्रमिक दिया जाता है, इस रूप में वह मज़दूर का भाई है, वह शोषित है, वह मेहनतकश है। परंतु बाज़ार में अपने श्रम की पैदावार के विक्रेता के रूप में वह व्यापारी है। उसकी प्रकृति का एक पहलू उसे सर्वहारा की ओर खींचता है, जबकि दूसरा बुर्जुआ वर्ग की ओर खींचता है। किसान जितना ही अधिक काम करता और कम व्यापार करता है, वह उतना ही ग़रीब किसान के छोर के निकट होता जाता है, उतने ही स्वाभाविक ढंग से वह हमारा मित्र होता जाता है। किसान जितना ही अधिक ग्रामीण व्यापारी में बदलता जाता है, उसमें कुलक[15] तत्व उतना ही बढ़ता जाता है, उसकी दिलचस्पी ऐसे उद्देश्यों में उतनी ही बढ़ती जाती है, जो सर्वहारा के उद्देश्यों से मेल नहीं खा सकते। इसके साथ ही, कुलक किसान-समुदाय का अधिक विकसित, अधिक प्रभावशाली हिस्सा होते हैं, वे इसे अपने जाल मे फंसा लेते हैं और तरह-तरह की कुटिल युक्तियों और वादों से वे समूचे किसान-समुदाय को ऐसे ग़लत मार्ग पर टुटपुंजिया-बुर्जुआ विकास की ओर खींच लाते हैं, जिसे बढ़िया फ़िक़रों की आड़ में छिपाया जा सकता है...

इसका अर्थ यह है कि किसानों को दो शक्तियों, क्रांतिकारी सर्वहारा और बुर्जुआ वर्ग के बीच किसी एक को चुनना चाहिए। किसान के लिए बुर्जुआ वर्ग को चुनने का अर्थ होगा स्वयं अपने और अपने बच्चों को और दशकों के लिए बंधुआ बना देना। इसके विपरीत, मज़दूरों द्वारा स्कूलों, अख़बारों, गांव वाचनालयों, सहकारी समितियों आदि के ज़रिये ग्रामीण क्षेत्र में लाया गया कम्युनिज़्म वास्तव में गहन किसान आंदोलन है, क्योंकि अपने मार्ग के किसी भी बिंदु

पर यह किसानों के साथ ज़ोर-जबर्दस्ती नहीं करता, यह मध्यमवर्गीय एवं ग़रीब किसानों के हितों के प्रतिकूल नहीं है।

यह वही कम्युनिज़्म है, जो अर्थव्यवस्था को उस उच्च स्तर पर ला रहा है, जिसके अंतर्गत न केवल देहातों में, बल्कि शहरों में भी कोई ग़रीब नहीं रहेगा, जिसके अंतर्गत व्यक्तिगत किसान अर्थ-व्यवस्था योजनानुसार, शांतिपूर्ण तथा स्वाभाविक ढंग से सामाजिक अर्थव्यवस्था में व्यापक रूप से फैल जायेगी, किसान आज जो जीवन जी रहा है, उसके मुक़ाबले में अतुलनीय रूप से अधिक मानवोचित जीवन जीने में समर्थ बनेगा।

यही कारण है कि अभी हाल तक अध्यापक चौराहे पर खड़ा था और ये दो शक्तियां उसे अपने-अपने पक्ष में करने के लिए लड़ रही थीं। टुटपुंजिया-बुर्जुआ विचारधारा ने इसे अपना तुरुप का पत्ता बनाया कि "जन-अध्यापक हमारे साथ हैं" और कि वे अपने मन में मूलतः समाजवादी-क्रांतिकारी[16] हैं। टुटपुंजिया-बुर्जुआ सिद्धांतकारों ने कहा कि किसान-समुदाय वह मौलिक शक्ति है, जो हमें निगल जायेगी और सोवियत नगरों को धरती से मिटा देगी। वास्तव में, अब यह ख़तरा गुज़र गया है। यह साफ़ है कि इस स्थल पर सर्वहारा की विजय हुई है, कि सर्वहारा ने अध्यापक को मोहित कर लिया है, कि अध्यापक ने तथाकथित ग्रामीण सिद्धांतकारों के झूठ को महसूस कर लिया है और यह समझ लिया है कि प्रबोधक के रूप में उसे सामान्य प्रबोधन लाने की नहीं, बल्कि इस अर्थ में संगठित प्रबोधन लाने की आवश्यकता है, जो उसे एकमात्र सच्चा प्रबोधन—कम्युनिस्ट प्रबोधन—बनाता है। इसी अर्थ में अध्यापक किसान-समुदाय के साथ ऐक्य में एक बड़ा महत्वपूर्ण कारक है।

पर वह मात्र किसान-समुदाय के साथ ऐक्य में एक मौलिक कारक ही नहीं है। एक और भी ऐसी विराट शक्ति है, जिसके साथ हम अध्यापक के बिना संपर्क नहीं बना सकते, जिसके साथ केवल अध्यापक ही हम, कम्युनिस्ट पार्टी को जोड़ता है और जिसके बिना अध्यापक कुछ भी नहीं है।

यह कौन-सी शक्ति है? यह उदीयमान पीढ़ी है। हमारा ध्येय व्यर्थ होगा, यदि हमारे बच्चे हमारा अनुसरण नहीं करते। और हमसे बेहतर प्रशिक्षित लोगों के रूप में उन्हें हमारा अनुसरण करना चाहिए।

14*

उन्हें यह प्रशिक्षण ऐसे अध्यापक-शिक्षाशास्त्री से प्राप्त होता है, जो युवा कर्मी, युवा किसान के साथ खड़ा होता है, जिन्हें उन कार्यों को पूरा करना चाहिए, जिनका शुभारंभ हमने किया है।

जीवन की जैविक नदी सतत बहती रहती है, कुछ गुज़रते हैं, कुछ नये जीवन में पदार्पण करते हैं और नये प्रवेशकर्ता नदी के गंदे जल से संक्रमित होते हैं। बच्चों को पिछली पीढ़ियों की तरह-तरह की बीमारियों की छूत लग जाती है और पश्चिम में स्कूल संक्रमित हैं। लेकिन हम संक्रामक रोगों के ख़िलाफ़ रोकथाम संगठित कर रहे हैं।

दूसरी ओर, संस्कृति की यह प्राचीन, सहस्रवर्षीय नदी ने विशाल परिणाम दिये हैं। इन परिणामों को कोमलतापूर्वक और बुद्धिसंगत ढंग से उदीयमान पीढ़ी में संचारित किया जाना चाहिए। बुर्जुआ वर्ग ने क्या किया? इसने सचाई पर पर्दा डाला। इसने यदि सभी बच्चों को नहीं तो ख़ास तौर से शोषित वर्गों के बच्चों को संस्कृति के सर्वोत्तम पहलुओं को उपलब्ध नहीं किया।

अध्यापक – हमारा शैक्षिक तंत्र – एक ऐसे विशाल छन्ने की भांति है, जिससे नया जीवन गुज़रता है। उसे उस चीज़ से बुर्जुआ व सामंती गंदगी को साफ़ कर देना चाहिए, जो जन-शिक्षा कहलाती है, अध्यापक को इसे सभी अच्छी चीज़ों, सदियों के दौरान की गयी उपयुक्त खोजों से समृद्ध बनाना चाहिए, नवीनतम वैज्ञानिक खोजों और ख़ास तौर से समाज के हमारे कम्युनिस्ट विज्ञान की नवीनतम खोजों से समृद्ध बनाना चाहिए। इस तरह वह वास्तव में एक विशाल मोड़ लाने, एक विराट क्रांति पैदा करने में समर्थ होगा। यह क्रांति इस बात में निहित होगी कि लोग बेहतर हो जायेंगे। इसकी वर्कशाप से नये, शुद्ध और उदात्त मानव बन कर निकलेंगे...

हम अब भी अपाहिज और कुबड़े हैं, गंदे, भ्रष्ट और अज्ञानी हैं। पुरानी प्रणाली ने ही हमें ऐसा बनाया। लेकिन अपनी इन विरूपताओं को ध्यान में रखते हुए हमने इस बात को सुनिश्चित बनाने के लिए विशाल प्रयास किया है कि भावी मानवजाति को पूर्णतः स्वस्थ जीवन मिले।

कौन मुख्यतः इस कार्य को करेगा? अध्यापक। बेशक, यहां कोई अपने से यह पूछ सकता है: क्या अध्यापक स्वयं इस महान ध्येय के लिए तैयार है? और अपने को शिक्षित किये बिना कोई दूसरे को

कैसे शिक्षित कर सकता है? क्या अध्यापक ऐसी पूर्णता के कुछ क़रीब पहुंचता है और क्या वह इतने उदात्त कार्य को पूरा करने में समर्थ होगा?

बेशक, साथियो, अध्यापक को सीखना चाहिए, लेकिन उसे पढ़ाते हुए सीखना चाहिए। जहां तक वह कथनी और करनी में अपने को मानवजाति के उस हिस्से को पुनर्शिक्षित करने के विशाल कार्यभार में लगायेगा, जो हमारे लाल झंडे के नीचे रह रहा है, वहां तक वह स्वयं इस कार्य के दौरान दिन-प्रतिदिन कम्युनिस्ट नैतिकता की दृष्टि से देदीप्यमान और शुद्ध होता जायेगा तथा मानव के उस क़िस्म के अधिकाधिक निकट पहुंचता जायेगा, जिसे वह शायद अपने में तो नहीं प्राप्त कर सका, परंतु अपने विद्यार्थियों में अवश्य प्राप्त कर लेगा।

साथियो, ऐसा ही है हमारे समय में अध्यापक का ध्येय। और यही कारण है कि अनेकानेक लोग आपके समक्ष प्रस्तुत इस शानदार और दिलचस्प कार्य को ईर्ष्या की नज़र से देख सकते हैं।

हम सभी जानते हैं कि परिस्थितियां आपके लिए कठिन हैं, पर वे इन दिनों किसके लिए कठिन नहीं हैं? लेकिन इसके साथ ही, वे हमारे लिए हर्षमय भी हैं क्योंकि मनुष्य केवल उन चीज़ों के द्वारा ही ज़िंदा नहीं रहता, जो उसे थकावट और पीड़ा देती हैं। हम जानते हैं कि कर्त्तव्यबोध से संपूर्ण जीवन का कैसे कायापलट होता है, सो भी उस कर्त्तव्य के बोध से, जो विशाल, समूची दुनिया के इतिहास के लिए महत्वपूर्ण है। इस अर्थ में, साथियो, आप अपने को इस बात के लिए बधाइयां दे सकते हैं कि आप अध्यापक हैं और इन्हीं वर्षों के, परिवर्तन के कटु, परंतु भव्य वर्षों के अध्यापक हैं।

आप नयी दुनिया की वह अग्रणी टुकड़ी हैं, जो नये मानव के लिए तत्काल संघर्ष में लगी हुई है, उसकी अल्हड़ उम्र में उसे सहारा दे रही है, उसे बेहतर बना रही है। बेशक, ऐसे कार्य में लंबा समय लगता है। यह कार्य जब तक संपन्न होगा, तब तक शायद आपमें से जो लोग अभी नौजवान हैं, बूढ़े हो चुके होंगे। तुरंत ही नहीं, जादू की छड़ी घुमा कर नहीं, नयी कार्य-प्रणाली के ज़रिये नहीं हम इस कार्य को पूरा करेंगे, लेकिन इस कार्य को अवश्य ही पूरा करेंगे!

अस्तु, अध्यापक, जैसा कि हमारे नेताओं ने कहा है, किसान-

समुदाय के साथ संपर्क की दृढ़ कड़ी है और इस तरह वह हमारे वर्तमान को सुनिश्चित बनाता है। अध्यापक भावी पीढ़ी के साथ संपर्क की दृढ़ कड़ी है और इस प्रकार हमें हमारे भविष्य की गारंटी करता है।

साथियो, इस कांग्रेस में मौजूद दो हज़ार अध्यापकों के अलावा सोवियत संघ के लाखों शिक्षा-कर्मी यहां जो कुछ हो रहा है, उसे ध्यानपूर्वक सुन रहे हैं। इस समूचे अध्यापक-समुदाय के बीच बेशक ऐसे कुछेक लोग ही नहीं हैं, जो अब भी "कुबड़े" हैं, जो नाराज़ हैं, जो दुविधाग्रस्त हैं, जो भयभीत हैं। न केवल हमारी पार्टी और सरकार की, बल्कि आपकी कांग्रेस की भी यह आवाज़ संपूर्ण देश में गूंजे: "अध्यापक, सीधे खेड़े होइये! सीधे खड़े होइये, अध्यापक, और अपनी गरिमा-बोध के साथ असाधारण रूप से कठिन, पर असाधारण रूप से शानदार वह स्थान ग्रहण कीजिये, जो नयी संस्कृति के निर्माण में आपका है!"

सोवियत शिक्षाशास्त्र के समाजवैज्ञानिक आधार

१. समाजविज्ञान और शिक्षाशास्त्र के लिए इसका महत्व

सामाजिक जीवन के सिद्धांत के रूप में समाजविज्ञान शिक्षा संबंधी प्रश्नों से अन्वेषण के विषय के रूप में संबद्ध है।

बेशक, जन-शिक्षा – इसके उद्देश्य, इसके रूप, इसकी सीमा – सामाजिक प्रणाली, सामान्य सामाजिक प्रक्रियाओं पर निर्भर करती है और मार्क्सवादी समाजविज्ञान यह सिद्ध कर सकता है कि जन-शिक्षा उस सामाजिक समष्टि के साथ पूर्णतः मेल खाती है, जिसके अंतर्गत यह विकसित होती तथा जिसकी सेवा यह करती है।

मगर हम मार्क्सवादियों के लिए समाजविज्ञान केवल एक ऐसा वस्तुगत, आगमनात्मक विज्ञान ही नहीं है, जो एकीकारक सिद्धांतों की सहायता से प्रदत्त सामग्री पर प्रकाश डालता है। हम मार्क्सवादियों के लिए सैद्धांतिक समाजविज्ञान एक अनिवार्य औज़ार है, यह वह बुनियाद है, जिस पर हमारा व्यावहारिक समाजविज्ञान खड़ा होता है। किसी भी दूसरे क्षेत्र से अधिक इस क्षेत्र में ही मार्क्स के ये शब्द कि अन्य लोगों ने दुनिया की व्याख्या विभिन्न रूपों में की है, लेकिन हम इसे बदलने आये हैं[1], महत्वपूर्ण हैं।

इस दृष्टिकोण से हमें किन्हीं भी परिस्थितियों में न केवल शिक्षा की स्थिति का मूल्यांकन करना चाहिए, न केवल इसकी प्राकृतिक जड़ों की तह में पहुंचना चाहिए, बल्कि उस गहरी खाई को भी दर्शाना चाहिए, जो शासक वर्गों के हितों और इच्छाओं द्वारा आदेशित शिक्षा के रूपों तथा उस शिक्षा के बीच विद्यमान है, जो उत्पीड़ित जनसाधारण के हित में होगी।

हम अपने समक्ष इससे भी गहन कार्यभार रख सकते हैं। सर्वहारा के सामान्य कार्यक्रम (समाजवाद, कम्युनिज़्म), हमारे सामान्य विचारों, उस प्रणाली के लाभों – जो बहरसूरत अतुलनीय हैं – जिसकी ओर सर्वहारा बढ़ने की कोशिश कर रहा है और अंत में, उन उद्देश्यों की ओर सही प्रगति के साथ हमारे शैक्षिक सिद्धांतों के पूर्ण सामंजस्य को अपना प्रस्थान-बिंदु बनाते हुए, हम प्रदर्शित कर सकते हैं कि सर्वहारा द्वारा तैयार नया शिक्षाशास्त्र यदि पुराने शिक्षाशास्त्र का विजयी विलोम है, तो केवल इसलिए ही नहीं कि यह सर्वहारा के हित में है, बल्कि इसलिए भी कि यह संपूर्ण मानवजाति के विकास के हित में है।

सामान्य मानव उद्देश्यों के साथ वर्ग उद्देश्यों के इस अत्यंत महत्वपूर्ण सामंजस्य – शिक्षाशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्यापक के लिए ही महत्वपूर्ण – के बारे में मार्क्स, लासाल तथा हमारे महान शिक्षकों में से दूसरों ने काफ़ी स्पष्ट बयान दिये हैं।

हर परिस्थितियों में एक क्रांतिकारी मार्क्सवादी को बुर्जुआ शिक्षाशास्त्र द्वारा प्रस्तुत समस्याओं का विवेचन करते हुए उनका केवल स्वाभाविक स्पष्टीकरण ही नहीं, बल्कि उनकी आलोचना करना तथा समाजवाद के सिद्धांतों से उत्पन्न शिक्षाशास्त्र भी पेश करना चाहिए। यह सत्ता प्राप्त करने के बाद कम्युनिस्टों का एक नितांत आवश्यक कार्यभार बन जाता है। सत्तारूढ़ समाजविज्ञानी बेशक एक राजनीतिज्ञ होता है; वह बेशक पुराने का विनाशकर्ता और नूतन का निर्माता होता है; वह बेशक एक योद्धा और स्रष्टा होता है।

इस दृष्टि से यह साफ़ है कि हमारा शिक्षाशास्त्रीय समाजविज्ञान एक गहन व्यावहारिक स्वरूप ग्रहण करता है, कि इसे सामान्य सिद्धांतों की प्रस्थापना से व्यवहार में उनके कार्यान्वयन की ओर तेज़ी से बढ़ना चाहिए और ऐसा करते हुए मार्ग की सभी कठिनाइयों को भी ध्यान में रखना चाहिए; यह याद रखना चाहिए कि शैक्षिक प्रणाली का पूर्ण कायापलट तुरंत ही प्राप्त करना असंभव है; सर्वाधिक स्वीकार्य संक्रमणकालीन रूपों को निर्धारित करना चाहिए और इस बात की भी सावधानी बरतनी चाहिए कि विभिन्न शैक्षिक और वैज्ञानिक संस्थान इन संक्रमणकालीन रूपों में फंस न जायें, बल्कि समाजवादी विकास के सामान्य विस्तार के साथ-साथ प्रगति करें।

२. सोवियत जनवाद के सिद्धांतों के एक प्रतिबिम्ब के रूप में एकीकृत स्कूल

बुर्जुआ वर्ग के अधिनायकत्व के देशों में जन-शिक्षा ने जो रूप ग्रहण किया है, उस पर ग़ौर करते हुए हम सबसे पहले स्कूलों के कई मंज़िलों में विभाजन तथा उन सोपानों का कमोबेश पूर्ण उन्मूलन पाते हैं, जिनके द्वारा निचली मंज़िलों से ऊपरी मंज़िलों पर पहुंचा जा सकता है। यह न केवल समाजवाद-विरोधी, बल्कि जनवाद-विरोधी भी है।

घोषित समान राजनीतिक अधिकारों की दृष्टि से बुर्जुआ जनवाद – बेशक "जनवाद" – के देशों को कम से कम समान योग्यता के सभी बच्चों को समान शिक्षा के समान अधिकार देने के लिए कर्त्तव्यबद्ध होना चाहिए। लेकिन बुर्जुआ जनवाद, जैसा कि मार्क्स ने बड़े ही विशद ढंग से दिखाया, काल्पनिक राजनीतिक समानता तथा वास्तविक आर्थिक असमानता के बीच पूर्ण अंतर्विरोध से हमेशा क्षयग्रस्त रहा है।[2] पश्चिम यूरोपीय देशों और अमरीका की स्कूली प्रणाली में आर्थिक असमानता, यहां तक कि स्वयं स्कूली संरचना के अर्थ में भी, न्यायिक तथा राजनीतिक असमानता से कहीं अधिक गहराई तक परिलक्षित होती है।

इस दृष्टि से एकीकृत स्कूल के सिद्धांत की घोषणा केवल अमल में लाये जा रहे समाजवाद का स्वाभाविक सिद्धांत ही नहीं, बल्कि जनवादी सुधार की पूर्ति भी है। एकीकृत स्कूल, समान शैक्षिक सुअवसर वस्तुतः बुर्जुआ क्रांति में अंतिम कड़ी तथा साथ ही समाजवादी क्रांति में पहली कड़ी भी है, वैसे ही, उदाहरणार्थ, जैसे कि भूमि का राष्ट्रीय-करण अथवा राजनीतिक अधिकारों के संबंध में स्त्री-पुरुषों की समानता।

बेशक हमसे कहा जा सकता है कि यह एकीकरण यहां मात्र सिद्धांत रूप में ही प्राप्त किया गया है। व्लादीमिर इल्यीच लेनिन को कुछ तीखी मुस्कान के साथ यह कहना प्रिय था कि किसी चीज़ को "सिद्धांत रूप में" प्राप्त या स्वीकार करने का अर्थ यह है कि हम उसे व्यवहार में प्राप्त या स्वीकार करने से अभी बहुत दूर हैं। और बात सही भी है। समानता कम्युनिज़्म का एक मूलभूत सिद्धांत है। लेनिन द्वारा दी गयी समाजवाद की परिभाषा के अनुसार, यह समानता

की लगभग पूर्ण प्राप्ति है (समान श्रम के लिए समान वेतन)।[3] मगर हम, जो समाजवाद की ओर बढ़ रहे हैं – श्रम के उच्च किन्तु विभिन्न भुगतानों (जो श्रम या कार्य के दौरान समाज को किये गये योगदान के एवज़ में उपभोक्ता वस्तुओं के रूप में समाज से प्राप्त भत्ते हैं) के साथ इस समाजवाद की ओर बढ़ रहे हैं – अब भी वास्तविक आर्थिक समानता की बाह्य अभिव्यक्ति जैसी किसी चीज़ से दूर हैं। निस्संदेह, हमारे यहां कोई करोड़पति नहीं हैं, ज़बर्दस्त शोषक नहीं हैं, फिर भी संपति में और इससे भी अधिक जीवन-पद्धति में अंतर अब भी बड़े हैं। लोगों को एक दूसरे से विभाजित करनेवाली एक मुख्य सरहद नगर और ग्रामीण क्षेत्र के बीच अंतर है। बेशक, अभी वह समय बहुत दूर है, जब ग्रामीण क्षेत्र मूलतः सांस्कृतिक लाभों की प्राप्ति की दृष्टि से नगर से पीछे नहीं रह जायेगा।

इस सबका परिणाम यह होता है कि जबकि सिद्धांत रूप में एकीकृत स्कूल व समान शैक्षिक सुअवसर (कम से कम समान योग्यता के बच्चों के लिए) को स्वीकार किया जाता है, व्यवहार में नगरीय बच्चे को देहाती बच्चे से अधिक लाभ प्राप्त होते हैं। नगरीय बच्चे के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में रहनेवाले बच्चे से चार-वर्षीय, सात-वर्षीय या नौ-वर्षीय शिक्षा पूरा करना काफ़ी आसान है। हम यह भी जानते हैं कि नगरों और ग्रामीण क्षेत्रों में हम अब भी ग़रीबों और धनी समूहों के बीच शैक्षिक सुअवसरों को समान नहीं बना सकते। व्यवहार में ग्रामीण क्षेत्रों में ग़रीबों के बच्चे हमारे प्रारंभिक स्कूल में चार-वर्षीय शिक्षा पूरी करने में भी समर्थ नहीं हैं, व्यवहार में ग़रीब बिरले ही अपने बच्चों को दूसरे चरण का स्कूल, आदि पास करा पाते हैं। पर यदि हम इस बात पर ध्यान दें कि हमारे उच्च शिक्षा के संस्थानों में मज़दूर तथा किसान और उनके बच्चे विद्यार्थियों की कुल संख्या का तीन-चौथाई बनाये हैं, यदि हम अपने तकनीकी कालेजों एवं दूसरे चरण के स्कूलों में वर्ग-प्रतिनिधित्व की तुलना उस स्थिति से करें, जो पहले विद्यमान थी, तब हम पायेंगे कि हमारे देश की निर्धनता तथा इससे उत्पन्न आर्थिक असमानता के बावजूद हमने सभी स्तरों पर शिक्षा को जनसाधारण की पहुंच में लाने की दिशा में बड़ी प्रगति की है।

शिक्षा के सभी स्तरों पर समान योग्यताओं के बच्चों के लिए समान अधिकारों के साथ एकीकृत स्कूल के मानक हमारे विकास

कार्यक्रम के निश्चित मानक बने रहने चाहिए। वे देश, जो आर्थिक रूप से ऐसा स्कूल क़ायम करने में पूर्णतः समर्थ हैं, लेकिन पाखंडवश नहीं क़ायम करते, जनवादी कहलाने के भी योग्य नहीं हैं। कुछ जनवादी, अधिक प्रगतिशील अथवा अधिक चतुर जनवादी, इसे समझते हैं, और श्री एर्रिओ ने संसद में एकीकृत स्कूल संबंधी प्रारूप विधेयक दो बार पेश किया है।[4] मेरे साथ बातचीत में एर्रिओ ने दो-टूक इंगित किया कि वह इस सुधार को जनवादी प्रणाली का एक प्राकृतिक अंग मानते हैं। मगर बुर्जुआ वर्ग इस सुधार के बारे में कुछ सुनना तक नहीं चाहता, क्योंकि इससे उसका एक विशेषाधिकार – पूर्ण शिक्षा प्राप्त करने का विशेषाधिकार – छिन जायेगा।

३. मार्क्सवादियों की दृष्टि में श्रम स्कूल

जनवादी सामाजिक जीवन के क्षेत्र में जो चीज़ समान रूप से अपने तर्कसंगत अंजाम को पहुंचायी जाती है, उसे हम श्रम स्कूल कहते हैं। यह सही है कि श्रम स्कूल का सिद्धांत समाजवैज्ञानिक दृष्टि से एकीकृत स्कूल से ज़्यादा सर्वहारा से संबद्ध है।

पहले इंटरनेशनल में श्रम स्कूल के सिद्धांत के अपने सुप्रसिद्ध, संस्थापन-विवेचन में कार्ल मार्क्स ने, जैसा कि यह प्रसंग से स्पष्ट है, इस स्कूल के बारे में किसी ऐसी चीज़ के रूप में नहीं बोला, जो मज़दूर वर्ग की विजय के बाद क़ायम की जाये। उनके विचार में, इसे पूंजीवादी समाज के भीतर ही आठ घंटे के कार्य-दिवस, स्त्रियों और पुरुषों के लिए समान कार्य के लिए समान वेतन और अन्य ऐसी ही मांगों की भांति पूर्णतः प्राप्त किया जा सकता है।[5]

जैसा कि सुविदित है, कार्ल मार्क्स का विचार सारतः यह है कि उत्पादन-स्थलों पर औद्योगिक कार्य के लिए उचित रूप से संगठित अप्रेंटिसशिप जन-शिक्षा का आदर्श रूप है।

यह सीधे प्रकट है कि जन-शिक्षा का यह रूप फ़ैक्टरी, मिल से जुड़ा हुआ है। अगर मार्क्सवादी श्रम स्कूल के सिद्धांतों को कृषि स्कूलों पर भी लागू किया जा सकता है, तो यह केवल तभी संभव है, जब कृषि स्कूल यंत्रीकृत कृषि की स्थापना के भीतर हो, यानी ऐसा स्कूल, जो औद्योगीकृत कृषि के वातावरण में रह रहा हो। मार्क्स का श्रम

स्कूल गहनतः औद्योगिक स्कूल है। हमारे देश के औद्योगीकरण के साथ स्वभावतः मार्क्स द्वारा निर्दिष्ट क़िस्म के श्रम स्कूलों की स्थापना के लिए सुअवसर अधिकाधिक व्यापक रूप से प्रकट होंगे।

इससे भी अधिक, हमारे सामने औद्योगीकृत देश हैं, हमारे सामने अमरीका है, जो बुर्जुआ जनवादी रूपों की पूर्ति के संबंध में काफ़ी आगे बढ़ चुका है, तो भी यह सीधे कहना चाहिए कि उस देश में औद्योगिक जन-शिक्षा सबसे पहले केवल सर्वहारा द्वारा ही अमल में लायी जा सकती है। सभी बच्चों की शिक्षा को, चाहे वे मज़दूर वर्ग के बच्चे न हों, सर्वहाराकृत करने के लिए बुर्जुआ सरकार की समझ से परे कतिपय बड़े प्रयासों की आवश्यकता है। इस अर्थ में मार्क्स के श्रम स्कूल का रूप न केवल जनवादी औद्योगिक स्कूल का अंतिम रूप है, बल्कि दरअसल एक गहन रूप से सर्वहारा औद्योगिक स्कूल भी है। यह महत्वपूर्ण है कि मार्क्स औद्योगिक अप्रेंटिसशिप की ऐसी ही समझ और ऐसे ही संगठन के आधार पर शिक्षित सर्वहारा की बात करते हैं, जो बहुत शीघ्र ही माध्यमिक स्कूलों और कालेजों में शिक्षित बुर्जुआ वर्ग के बच्चों से आगे निकल जाने में समर्थ हो जाते हैं।[6]

हम अपनी अत्यंत पिछड़ी कृषि के साथ तुलनात्मक रूप से कमज़ोर औद्योगीकृत अपने देश में मार्क्स द्वारा निर्दिष्ट स्कूल को वस्तुतः फ़ैक्टरी अप्रेंटिस स्कूलों (फ़ाब्ज़ावुच) में ही अमल में ला सकते हैं और यह भी उसी सीमा तक जिस सीमा तक संसाधनों की कमी हमें सामान्य और राजनीतिक शिक्षा व व्यायाम प्रशिक्षण में बहुत कटौती करने के लिए बाध्य नहीं करती। इस सबको मार्क्स ने बड़ा महत्व प्रदान किया। आज उद्योग से संबंधित कुछ लोगों के बीच विद्यमान फ़ैक्टरी अप्रेंटिस स्कूलों को इस या उस औद्योगिक संस्थान की वर्तमान आवश्यकता की दृष्टि से देखने की प्रवृति ने हमारे स्कूलों के अग्रगामी दस्ते को भी अमरीकी क़िस्म के अप्रेंटिस प्रशिक्षण के स्तर पर पीछे धकेल दिया है।

स्पष्ट है कि दूसरे स्कूलों के लिए, ग़ैर-सर्वहारा शहरी बच्चों के स्कूलों के लिए, देहाती स्कूलों के लिए – चाहे वे प्रारंभिक स्कूल हों या किसान युवजनों के स्कूल हों – हम औद्योगिक श्रम के स्थानापन्न लाने के लिए बाध्य हैं अर्थात दस्तकारी या कृषक अर्थव्यवस्था पर

आधारित श्रम या बड़े औद्योगिक अथवा औद्योगीकृत कृषि क्षेत्र की यात्राएं या उपयुक्त ढंग से लिखी गयी ऐसी पाठ्यपुस्तकें और पाठ्यक्रम लाने के लिए, जो जीवंत यथार्थ पर आधारित हों तथा जिनके उद्देश्य मौखिक स्पष्टीकरणों और दृश्य-उपकरणों की सहायता से उस खाई को यथासंभव पाटना हो, जो स्वयं हमारे श्रम-कौशल के निम्न औसत स्तर की वजह से उत्पन्न हुई है। स्कूल को वस्तुतः एक श्रम स्कूल के रूप में आवश्यक उच्च स्तर पर संगठित नहीं किया जा सकता, यदि देश में स्वयं श्रम काफ़ी उच्च स्तर पर न हो।

उपर्युक्त बातों से स्पष्ट है कि समाजवैज्ञानिक दृष्टि से हम अपने स्कूल को उस हद तक एकीकृत और श्रम स्कूल कहने के अधिकारी हैं और उसकी ओर उतनी ही मात्रा में प्रयास करने के लिए बाध्य हैं, जिस हद तक हम अपनी अर्थव्यवस्था को एक समाजवादी अर्थव्यवस्था कहने के अधिकारी हैं तथा जितनी मात्रा में हमें इसे पूर्णतः समाजवादी क़िस्म की ओर आगे बढ़ाने के लिए प्रयास करना चाहिए।

४. सामाजिक जीवन में स्कूल

सामाजिक जीवन तथा सामाजिक रूप से उपयोगी श्रम में स्कूल के भाग लेने का विचार अत्यंत महत्वपूर्ण है – एक ऐसा विचार, जिस पर लेनिन ने मज़बूती से ज़ोर दिया और जो श्रम स्कूल से काफ़ी कस कर जुड़ा है।

बेशक, ठीक-ठीक कहें तो बुर्जुआ जनवादी देशों में भी बच्चों को पंडिताऊ स्कूली अध्ययन तक ही सीमित करने का कोई कारण नहीं है। लेकिन सुप्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री जॉन ड्यूई, जो श्रम स्कूल, ख़ास तौर से सामाजिक जीवन में भाग लेने वाले स्कूल के समर्थक हैं, 'भविष्य के स्कूल' नामक अपनी पुस्तक में घोषणा करते हैं कि यहां तक कि अमरीका में भी उन्हें ऐसे आठ-नौ स्कूल ही मालूम हैं, जिन्हें इस संबंध में संतोषजनक कहा जा सकता है।[7]

हम अपने समाज के तीव्र और हलचल भरे जीवन में युवजनों को यथासंभव शीघ्र भाग लेने हेतु खींचने की व्यापक इच्छा के साथ स्कूल तथा इसके आस-पास के वातावरण के बीच संबंध को बड़ा महत्व

देते हैं। मैं यहां इस विषय पर विस्तारपूर्वक बोलने नहीं जा रहा हूं, बल्कि केवल इतना ही उल्लेख करूंगा कि यह मात्र जीवन में स्कूल के ऐसे "भाग लेने" का मामला नहीं है मानो उसे बहिस्कूली जीवन के पीछे-पीछे गून में खींचा जा रहा हो और कभी अलग न होने दिया जा रहा हो। नहीं, हमारे विचार में, ग्रामीण क्षेत्रों, पिछड़े क़स्बों में और बड़े नगरों में आबादी के पिछड़े हिस्सों के बीच स्वास्थ्य-शिक्षा और आर्थिक ज्ञान व कुछ हद नक राजनीतिक ज्ञान के भी निम्न स्तर को ध्यान में रखते हुए स्कूल शुरू से ही सामाजिक कार्यकलापों को प्रोत्साहित करनेवाली स्थिति ग्रहण कर सकता है। और उनमें अपना योगदान प्रस्तुत कर सकता है। इसके लिए हमें अमरीका की ओर मुड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है, जहां स्कूल पहले से ही कृषि के क्षेत्र में इस दिशा में काम कर रहे हैं, जैसा कि प्रोफ़ेसर तुलाइकोव ने, जिन्होंने कुछ साल पूर्व अमरीका की यात्रा की थी, लिखा है।[8] केवल किसान युवजनों के संसाधनविहीन स्कूलों के कार्य पर नज़र डालना ही काफ़ी होगा। भौतिक संसाधनों की दृष्टि से सचमुच ग़रीब इन स्कूलों ने किशोरों और नौजवानों में कृषि-अर्थव्यवस्था को अपने इर्दगिर्द समृद्ध बनाने की कार्रवाई के लिए असाधारण प्यास जगा दी है। और किसान युवजनों के ये स्कूल भौतिक निर्धनता के बावजूद सर्वत्र अपने क्षेत्रों में अपने लिए कृषि-शिक्षा के केन्द्रों की हैसियत प्राप्त कर रहे हैं। कालूगा प्रांत में शिक्षा कमिसारियत के अंतर्गत पहले प्रायोगिक केन्द्र (देखिये, शैक्षिक विश्वकोश, खंड २), वहां आस-पास के गांवों में खेतीबारी के विभिन्न आंशिक सुधारों के ज़रिये स्वास्थ्य व सफ़ाई को बेहतर बनाने के स्कूलों के सफल प्रयासों और वहां राज-नीतिक चेतना के विकास में योगदान की ओर आपका ध्यान खींचना उपयुक्त होगा।[9]

लेनिन का नारा कि बच्चों और नौजवानों को अध्ययन के दौरान समाज के सामान्य रचनात्मक कार्य में भाग लेना चाहिए, चाहे यह सरल से सरल और छोटे से छोटे रूप में ही क्यों न हो, हमारा महान नारा बना हुआ है।[10] बुर्जुआ वर्ग, जो इसे कार्यान्वित कर सकता है, इसके पास से बच कर गुज़र जाता है, क्योंकि उसे निम्नवर्गीय लोगों के बच्चों के बीच सामाजिक भावना के विकास से भय है, क्योंकि इसके साथ ही बुर्जुआ वर्ग के शासन की आलोचना की भावना भी विकसित होती है।

५.श्रम स्कूल की अंतर्वस्तु के समाजवैज्ञानिक आधार

स्कूलों के कार्य की अंतर्वस्तु संबंधी प्रश्न पर आते हुए हमें समाजवैज्ञानिक दृष्टि से पुनः निम्नलिखित परिघटना पर ध्यान देना चाहिए। बेशक, बुर्जुआ वर्ग – आर्थिक दृष्टि से उच्चतः विकसित समाज में प्रभुत्वशाली वर्ग – को वैज्ञानिक सिद्धांत तथा व्यवहार में वैज्ञानिक व टेक्नोलॉजिकल स्वरूप की अनेकानेक अत्यंत बड़ी समस्याओं को हल करना था और यही पूंजीवाद की विशाल सफलता का कारण है।

यह हमारी ओर से बड़ी मूर्खता होगी, यदि हम बुर्जुआ वर्ग द्वारा या उसके निदेशन में हुई उन विराट वैज्ञानिक व टेक्नोलॉजिकल खोजों को भूल जायें, जो अब अमरीका के बुर्जुआ वर्ग के हाथों में इतनी बड़ी शक्ति (तथा अन्य देशों के बुर्जुआ वर्ग के हाथों में अपेक्षाकृत कम बड़ी शक्ति) बन गयी हैं। बेशक, हमें बुर्जुआ देशों से, पश्चिम से, सीखना चाहिए क्योंकि टेक्नोलॉजी तथा इससे संबंद्ध ज्ञान की विस्तृत मात्रा के संबंध में हम काफ़ी नीचे हैं।

किंतु बुर्जुआ वर्ग वस्तुगत रूप से सच्चे और विजयी विज्ञान के स्तर पर केवल तभी तक बना रहता है, जब तक वैज्ञानिक दृष्टिकोण की विजय बुर्जुआ वर्ग के स्वार्थों से नहीं टकराती। यही कारण है कि जब तथ्यों के सही प्रेक्षण तथा इनसे व्यापक सामान्यकारी निगमनों पर आधारित विज्ञान ने समाजविज्ञान में प्रवेश किया, तो बुर्जुआ वर्ग इस सच्चे, वैज्ञानिक समाजविज्ञान से पीछे हट गया। सच्चे, वैज्ञानिक समाजविज्ञान – मार्क्सवाद – ने दिखाया कि पूंजीवाद एक अस्थायी परिघटना है, इसने पूंजीवाद के मृत्यु की भविष्यवाणी की, इसने सर्वहारा के विजय की अनिवार्यता तथा इस विजय के असाधारण फलप्रद परिणामों को इंगित किया। बुर्जुआ वर्ग ऐसे विज्ञान को स्वीकार नहीं कर सका, इसने मार्क्सवाद से इन्कार किया, इसने मार्क्सवाद पर बिकाऊ या अर्ध-बिकाऊ प्रोफ़ेसरों का पूरा झुंड छोड़ दिया, जिन्हें सच को झूठ और झूठ को सच सिद्ध करना था। इससे भी बढ़ कर, नये समाजविज्ञान से भयभीत हो कर, जो तुरंत ही सर्वहारा विज्ञान बन गया, क्योंकि कल सर्वहारा का है, बुर्जुआ वर्ग ने जीवविज्ञान में बहुत-से अध्यायों में, ज्ञान-सिद्धांत, सामान्य दर्शन के आधारों व निष्कर्षों में संशोधन करना शुरू किया और सर्वत्र ऐसी

जालसाज़ियां आरंभ कीं, जो बड़ी हद तक विज्ञान के इन सामान्य भागों के स्वरूप को विषाक्त करते तथा तोड़ते-मरोड़ते हैं।

यदि बुर्जुआ वर्ग का प्रगतिशील हिस्सा स्कूल में धार्मिक अंधविश्वासों से सीधे बच्चों की चेतना को ज़हरीला बनाने से कतराता है (हालांकि इस संबंध में भी गहन प्रतिक्रिया स्पष्टतः दिखायी देती है), तो भी यह उसी उद्देश्य के लिए अर्ध-धार्मिक, भाववादी, अधिभूतवादी विष की खोज करने में बड़ा माहिर बना रहता है।

स्पष्टतः विकासमान समाजवाद के स्कूल में हमें ज्ञान को सभी अभौतिकवादी अशुद्धताओं से साफ़ कर देना चाहिए, बल्कि पढ़ाये जा रहे विज्ञान के अधिकांश भाग के रूप में मनुष्य तथा समाज के बारे में सच्चा विज्ञान – मार्क्सवाद – प्रस्तुत करना चाहिए। स्कूल का, वास्तव में जन-शिक्षा की समूची प्रणाली का उद्देश्य न केवल उचित ज्ञान देना, बल्कि मनुष्य की शिक्षा या "पालन-पोषण" भी है।

६. सामाजिक वातावरण और समाजवादी स्कूल

जो लोग यह कहते हैं कि नयी पीढ़ी स्वयं जीवन से, संपूर्ण सामाजिक प्रणाली से शिक्षित होती है, वे बिल्कुल सही हैं। समाजविज्ञान की दृष्टि से यह बिल्कुल सच है। लेकिन हम पहले ही कह चुके हैं कि मार्क्सवादी समाजविज्ञान प्रत्यक्ष, निष्क्रिय दावे को नहीं मानता – "सामाजिक जीवन अमुक-अमुक तरह का है, इसलिए इसके नतीजे आम नयी पीढ़ी की प्रकृति में अमुक-अमुक रूप से प्रकट होंगे।"

क्रांतिकारी मार्क्सवादी सामाजिक वातावरण का विश्लेषण यथासंभव सावधानी और वस्तुगतता के साथ करता है, लेकिन वह ऐसा इसलिए करता है कि उस वातावरण पर अत्यधिक शक्तिशाली ढंग से प्रभाव डाला जा सके।

समाजवाद के लिए आर्थिक और सांस्कृतिक संघर्ष की इस प्रारंभिक अवधि में जीवन बहुत रंग-बिरंगा है। इसमें प्रगतिशील तत्वों के साथ-साथ ऐसे बहुत-से तत्व शामिल हैं, जो संदिग्ध और यहां तककि बुरे भी हैं। सामान्यतः यह बच्चे को शैक्षिक रूप से समाजवादी की उस क़िस्म – यानी समाजवाद के योद्धा – की ओर सीधे ले जाने से बहुत दूर है, जिसके हम आकांक्षी हैं। नहीं, जीवन मानो बच्चे को हिचकोले

खिला रहा है, वह उसे कभी दायें, कभी बायें और कभी-कभी पीछे भी घसीट ले जा रहा है। यह जीवन के प्रभाव को अस्त-व्यस्त बना देता है। यह पारिवारिक जीवन में पाये जानेवाले विगत के दोषों को, जिसका अगर आधा पुराने ज़माने के परिवार की नियमावली के अनुसार बना है, तो आधा क्रांति के तूफ़ान से नष्ट-भ्रष्ट हो गया है, और कई अन्य चीज़ों को भी प्रतिबिम्बित करता है।

दुर्भाग्य से, अपने पुरानी क़िस्म के अध्यापकों के साथ, अपनी ग़रीबी, अब भी अर्ध-विकसित अध्यापन-विधियों, आदि के साथ स्वयं स्कूल भी बहुधा सच्चे शैक्षिक उद्देश्यों के लिए स्कूल-बाह्य जीवन से कुछ ही बेहतर है। लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिए। राज्य की शैक्षिक संस्था के रूप में स्कूल को सामान्य समाज के जीवन से शीघ्र नयी भावना में ओत-प्रोत हो जाना चाहिए, इसे रोज़मर्रा के जीवन की आपाधापी से ऊपर उठना चाहिए, इससे सच्ची शैक्षिक शक्तियां पैदा होनी चाहिए। स्कूल को जीवन द्वारा बच्चे पर थोपी गयी विकृतियों को ठीक करना चाहिए।

७. बाल-आंदोलन और स्कूल

चूंकि हमारे देश में, जो जहां तक आबादी के एक बड़े भाग का संबंध है टुटपुंजिया-बुर्जुआ है, अब भी स्कूल पर घोर ग़रीबी की छाप है, यह समाजवादी शिक्षा का एक साधन बनने की दिशा में बड़ी ही धीमी गति से बढ़ा है और जीवन ने शैक्षिक प्रभाव का एक और साधन पेश किया है। पार्टी ने कोम्सोमोल के भीतर अपने लिए युवा कार्यकर्ता तैयार करते हुए अब आयु-मान को कम क़र दिया है। इसने अपनी जड़ें बाल-हृदयों से जोड़ दी हैं, इसने बच्चों का एक हरावल संगठन – ओक्त्याब्रियाता और युवा पायनियर[11] – की स्थापना की है। इसमें किसी को संदेह नहीं हो सकता कि शिक्षा के एक साधन के रूप में अपनी सभी अपूर्णताओं के बावजूद यह एक बहुत शक्तिशाली उत्तोलक है। न ही किसी को इसमें संदेह हो सकता है कि अपने स्कूल का जितना ही उच्च रूप हम पायेंगे, एक राजकीय संस्था के रूप में इस स्कूल का सारे बच्चों पर और बच्चों के उस हरावल पर भी गहन प्रभाव उतना ही स्वाभाविक होगा, जिसने अपने लिए कोम्सोमोल के नेतृत्व में उसी कार्यभार को पूरा करने का उद्देश्य निर्धारित किया है।

८.अध्यापक और उसके कार्यभार

अंत में, यह पूर्णतः साफ़ है कि अध्यापक-समुदाय एक बड़ी सीमा तक पुरानी परम्पराओं की लीक से हटा है, धीरे-धीरे अक्तूबर क्रांति के प्रभाव में आते हुए इसने तथाकथित पुनर्प्रशिक्षण के लिए बड़े काम शुरू किये हैं। तो भी, स्कूल में ऐसी शानदार क्रांति का उल्लेख करते हुए एक नये अध्यापक-समुदाय की स्थापना की प्रक्रिया पर और इसलिए माध्यमिक तथा उच्च अध्यापक-संस्थानों के सही कार्य के महत्व पर विशेष ज़ोर दिया जाना चाहिए। इस लेख में मैं नये मज़दूर और किसान बुद्धिजीवी विकसित करने जैसे विशाल कार्यभार की चर्चा नहीं करूंगा। इसे इस ढंग से शिक्षित किया जाना चाहिए कि ज्ञान के संबंध में वह कम से कम पश्चिमी यूरोप के बुद्धिजीवियों – शासक बुर्जुआ वर्ग के वफ़ादार चाकरों – के बराबर हो जाये और साथ ही अपने को मज़दूर तथा किसान जनसाधारण का अभिन्न अंग भी महसूस करे।[12] यह दरअसल हमारे निर्माण-कार्य का अत्यंत महत्वपूर्ण उद्देश्य है, जिस पर हमारे महान शिक्षक लेनिन ने ज़ोर दिया था।

मार्क्सवादी अध्यापक सामान्यतः मार्क्सवादी समाजविज्ञान के लिए असाधारण रूप से विशिष्ट व्यक्ति है। मार्क्सवादी अध्यापक समाज-वैज्ञानिक शिक्षा के बिना, समाजवैज्ञानिक चीज़ों को ध्यान में रखे बिना एक क़दम भी आगे बढ़ने का साहस नहीं कर सकता, उसे इन चीज़ों की उतनी ही आवश्यकता होती है, जितनी कि अध्यापन विधियों, आदि के बारे में जानने की। पर इसके साथ ही, मार्क्सवादी अध्यापक को यथार्थ के सामने हाथ पर हाथ रख कर नहीं बैठना चाहिए, उसे स्कूल तथा अपने काम की त्रुटियों समेत अपने आस-पास विद्यमान विभिन्न त्रुटियों को स्पष्ट करना चाहिए कि वे अमुक-अमुक कारणों से हुई हैं। उसे पिछलग्गू नहीं होना और कहना चाहिए कि "आप क्या कर सकते हैं..." "आप कैसे मदद कर सकते हैं..." नहीं, मार्क्सवादी अध्यापक एक शिक्षक, यानी भविष्य का निर्माता है और उसे उस भविष्य में मात्र विगत तथा वर्तमान की उपज नहीं, बल्कि एक कारक होना चाहिए। उसे यह याद रखने दें।

नये मानव की शिक्षा*

अब तक सफलतापूर्वक या असफलतापूर्वक – और एक बड़ी सीमा तक असफलतापूर्वक क्योंकि हमारे साधन किसी भी रूप में हमारी योजनाओं तथा हमारी इच्छाओं के अनुरूप नहीं हैं – हम, शिक्षा-मोर्चे पर काम करनेवालों ने, अपने समक्ष शिक्षा के सही संगठन का उद्देश्य निर्धारित किया है। हमें बिल्कुल ठीक ही यह ध्यान दिलाया जा सकता है कि आम पहले चरण के स्कूलों और उच्च-स्तरीय स्कूलों – मज़दूर संकायों, तकनीकी कालेजों तथा विश्वविद्यालयों – में शिक्षा-कार्य में अभी बहुत कुछ करने की गुंजाइश है। किंतु हम निम्न उत्तर दे सकते हैं: बेशक, जिस हद तक हमारा देश ग़रीब है और जन-शिक्षा के लिए निर्धारित संसाधन कम हैं, उस हद तक परिणाम भी स्वभावतः असंतोषजनक हैं। लेकिन संसाधनों के कतिपय अभाव की परिस्थितियों में जहां तक सही ढंग से बनायी गयी योजना, सही ढंग से इंगित निदेशन शिक्षा कार्य पर सामान्य प्रभाव डाल सकते हैं, वहां तक इन कारकों ने अपना प्रभाव डाला है और हम उन सामान्य सिद्धांतों से एक क्षण के लिए भी पीछे नहीं हटते, जिन्होंने हमारे कार्य के लिए आधार प्रदान किया है। हम मानते हैं कि हमने शिक्षा की बिल्कुल सही मूलभूत निदेशक लाइन दे दी है, कि इस प्रश्न के प्रति हमारा सही दृष्टिकोण है और हम जानते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में हमें क्या करने की ज़रूरत है। और अगर वित्तीय तथा मानवीय संसाधनों की नयी लहर हमारे रास्ते आयेगी, तो हमारी मिल अभीष्ट ढंग से काम करने लगेगी।

उस समय से, जब हमने देश में सही ढंग से संगठित पालीतकनीकी श्रम स्कूल क़ायम करने की असंभवता को स्वीकार किया[1] – और यह इसलिए असंभव सिद्ध हुआ कि हमारे देश में उद्योग का समुचित विकास

---

* संक्षिप्त रूप में प्रकाशित। – **सं०**

15*

नहीं हुआ था – हमने इस प्रश्न पर काफ़ी काम किया है कि अपनी योजना को अधिक किफ़ायती मार्ग पर कैसे लायें, इसमें कटौती करते हुए भी उस क़िस्म के स्कूल का यथासंभव निर्माण कर लें, जिसकी मार्क्स ने कल्पना की थी, एक ऐसा स्कूल, जिसे कम से कम संक्रमण-कालीन अवधि का स्कूल माना जा सके। इन प्रश्नों पर किये गये कार्य के फलस्वरूप हमने अपनी ही एक ऐसी काम्पलेक्स विधि लागू की है[2], जो आस्ट्रिया के स्कूलों में लागू की जा चुकी है, कुछ जर्मन स्कूलों में लागू की जा रही है तथा अमरीका में तैयार की जा रही है। इसे व्यवहार में अध्ययन करने हेतु प्रारंभिक प्रेरणा स्वयं जॉन ड्यूई[3] ने दी। वर्तमान समय में ३० सुप्रसिद्ध अमरीकी शिक्षाशास्त्रियों का एक विशेष आयोग हमारी शिक्षा प्रणाली से परिचय प्राप्त करने के लिए यहां आ रहा है। यह सब इस बात का सूचक है कि कम से कम सैद्धांतिक स्थिति के संबंध में राजकीय स्कूल परिषद के पाठ्यक्रम ने प्रगतिशील शिक्षाशास्त्रीय जगत् में बड़ी दिलचस्पी जगा दी है, इसने उसमें एक प्रमुख स्थान प्राप्त कर लिया है।

शिक्षा पर एक साधारण प्रदर्शनी को, जिसे हमने डेनमार्क भेजा था, अब एक के बाद एक देश अपने यहां निमंत्रित कर रहे हैं, इसे यूरोप में आशातीत सफलता मिल रही है।[4] प्रतीत होता है कि हमारे माडल स्कूलों, हमारी काम्पलेक्स विधि और राजकीय स्कूल परिषद के पाठ्यक्रमों की मूलभूत प्रस्थापनाओं के उपयोग ने वह उच्च स्तर प्राप्त कर लिया है कि पश्चिम में शिक्षा के संकट को देखते हुए वे एक ऐसा तथ्य बन गये हैं जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

बेशक, अध्यापकों को यह मालूम ही है कि वर्तमान समय में पश्चिमी यूरोप के स्कूल कितने बड़े संकट से गुज़र रहे हैं। पश्चिमी यूरोप के सभी देशों में शिक्षा की प्रणालियों, विधियों और अंतर्वस्तु के बारे में सभी प्रश्न पूर्णतः नये ढंग से पेश किये जा रहे हैं। कहा जा सकता है कि यूरोप और अमरीका के शिक्षा-जगत् में व्यापक पैमाने पर परिवर्तन शुरू हुआ है। और यहां हमने जो बातें कही हैं, वे उन देशों के लिए भी महत्वपूर्ण हैं – और केवल कार्यप्रणाली के संबंध में ही नहीं, बल्कि शिक्षा की अंतर्वस्तु के संबंध में भी – जहां सामाजिक-जनवादी काफ़ी प्रभावशाली हैं। आस्ट्रिया में, विशेष रूप से वियेना में, स्कूल, जैसा कि आप जानते हैं, सामाजिक-जनवादियों के प्रभाव

में हैं और हमारे यहां शिक्षा के क्षेत्र में जो कुछ अपनाया जा चुका है, उसका बहुत कुछ वहां प्रतिबिम्बित हुआ है।

लेकिन जहां तक व्यापक अर्थ में शिक्षा का संबंध है, हमारे यहां कार्य ठीक नहीं चल रहा है।

पिछले दो-तीन सालों में उन सभी सभाओं में, जिनमें मैंने भाषण किये हैं, मज़दूर माता-पिताओं, ख़ास तौर से माताओं ने, हमारे स्कूलों पर गंभीर दोष लगाये हैं। वे कहते हैं कि स्कूल शिक्षक के रूप में अपनी भूमिका को नज़रअंदाज़ करते हैं, वे कहते हैं कि बच्चे आवारा होकर बढ़ रहे हैं, कि वे अनुशासनहीन बन गये हैं तथा उनसे निपटना असंभव हो गया है; मज़दूर कहते हैं कि बच्चे वैसे नहीं बन रहे, जैसा कि हम अपने भावी नागरिकों को देखना चाहते थे। स्कूल उन्हें अपने नियंत्रण में रखना नहीं जानते और कड़े अनुशासन तथा सामूहिक भावना की जगह बच्चों में व्यक्तिवादी व अर्ध-आवारा प्रवृत्ति विकसित हो रही है।

इसके अलावा, कोम्सोमोल ने हाल ही में शिक्षा कमिसारियत के कालेजियम के समक्ष एक सारगर्भित, गहराई से सोचा-विचारा स्मरण-पत्र रखा है, जिसमें हमारे स्कूलों में, मुख्यतः उच्च स्कूलों में विद्यमान अनेकानेक नकरात्मक परिघटनाओं की ओर – अश्लील प्रवृत्तियों, ऐसे गुप्त संगठनों के अस्तित्व की ओर, जो सामान्यतः बचकाने साज़िश के खेलों से शुरू होते हैं, लेकिन आगे चल कर तरह-तरह की शर्मनाक कार्रवाइयां और कभी-कभी प्रतिक्रांतिकारी कार्रवाइयां भी करने लगते हैं – ध्यान खींचा है। यह स्मरण-पत्र हमें अति गंभीर चिंतन करने के लिए बाध्य करता है। प्रतीत होता है कि जहां तक राज्य द्वारा नैतिक शिक्षा का संबंध है हमारे विद्यार्थी अब भी समुचित देखभाल और ध्यान से वंचित हैं, कि स्कूल उनके व्यक्तिगत जीवन, उनके बौद्धिक तथा नैतिक विकास को सुव्यवस्थित नहीं बना पा रहे हैं, कि नौजवान अपने को स्कूलों से बाहर संगठित करने के तरीक़े ढूंढ़ने की कोशिश कर रहे हैं और प्रायः ऐसी अत्यंत अप्रिय कार्रवाइयों में गिर जाते हैं, जो कभी-कभी उनके लिए विनाशकारी सिद्ध होती हैं।

इन लक्षणों के अलावा, मुझे कुछ अध्यापकों की बातों ने चौंका दिया है। यहां मास्को में हमारे पास ऐसे अनेकानेक मामले आ चुके हैं, जब अध्यापकों ने अनुशासनिक समस्याओं का सामना करते हुए

तथाकथित "कड़ी कार्रवाइयों" और शैतान जाने किन-किन चीज़ों के समर्थन में राय ज़ाहिर की। अध्यापकों की एक पत्रिका में मैंने एक लेख पढ़ा, जिसमें पश्चिम यूरोप तथा सोवियत संघ में अनुशासन की भयंकर स्थिति के बारे में चर्चा की गयी है और जिसकी अंतर्वस्तु को "बेंत का रोमांस" कहा जा सकता है: इसमें हमें ऐसे सोवियत अध्यापक की प्रत्यक्षतः अच्छी क़िस्म का वर्णन मिलता है, जो अपने विद्यार्थियों को जंगल में वह बेंत काटने के लिए भेजता है, जिससे बाद में वह उनकी पिटाई करता है। एक सोवियत पत्रिका में ऐसी चीज़ पढ़ कर हम शर्म से पानी-पानी हो जाते हैं। अगर शिक्षा-कर्मियों की ट्रेड-यूनियन के मुखपत्र में ऐसी घोषणाएं संभव हैं, तो उन स्थानों से तो और बुरी चीज़ों की आशा की जा सकती है, जहां बहुत कुछ स्वतः होता है और जो हमारी आंखों से ओझल हैं। बेशक, हमने यह स्पष्ट करने के लिए क़दम उठाये हैं कि ऐसी घोषणाएं किस सीमा तक अमान्य हैं।

निस्संदेह, यह सब इस बात का साक्षी है कि शिक्षा पर अपना सारा ध्यान केन्द्रित करते हुए हम नैतिक शिक्षा के मामले में पीछे रह गये हैं और अत्यधिक, मूर्खतापूर्ण ढंग से पीछे रह गये हैं। सही है कि हम अन्यथा कर भी नहीं सकते थे, क्योंकि एक ही समय में शिक्षा-सुधार पूरा करने और हमारी क्रांति की मांगों के अनुसार नैतिक शिक्षा संबंधी निदेश जारी करने की कोई संभावना नहीं थी।

इन सभी आकुलकारी तथ्यों ने हमारे कार्य में अब एक ऐसे मोड़ के बारे में आवाज़ उठाने के लिए बाध्य कर दिया है, जो नैतिक शिक्षा के मामलों को अगली पंक्ति में ला देंगे। यह इस परिघटना का एक पहलू है।

दूसरा पहलू अर्थव्यवस्था से संबद्ध है।

आप जानते हैं कि औद्योगीकरण के नारे की घोषणा और १५वीं कांग्रेस में ग्रामीण क्षेत्रों में सामूहिक कृषि के विकास को सभी संभव साधनों से बढ़ाने के नारे की घोषणा के बाद से हमने अपनी बिजली सप्लाई व्यवस्था में सुधार करने हेतु गंभीर, असाधारण रूप से कठिन अवधि में प्रवेश किया है।

हमारे पास कच्चे मालों के बड़े भंडार तथा सबसे प्रगतिशील, सबसे रचनात्मक सरकार है। लेकिन हमने देश को निदेशित करने में

असमर्थ, कौशलहीन और लुटेरी ज़ारशाही सरकार से एक ऐसा देश विरासत में प्राप्त किया है, जो एक साम्राज्यवादी युद्ध तथा गृह-युद्ध मे गुज़र चुका है और अत्यधिक विनाश तथा विशाल विघटन की स्थिति में है। हमारा कार्यभार सर्वहारा, इसकी पार्टी व सरकार की रचनात्मक शक्ति को कच्चे मालों के उन बड़े संसाधनों से ऐसे मिला देने में निहित है कि हम अपने देश को आगे बढ़ाने के लिए तेज़ गति पैदा कर सकें।

जैसा कि आप जानते हैं, इस काम के लिए बड़ी धनराशि निर्धारित की गयी है। हम बड़ी परियोजनाओं में करोड़ों रूबल लगाने में समर्थ हुए हैं। और आज, जबकि अर्थव्यवस्था में काफ़ी प्रगति हो चुकी है, जिस चीज़ के बारे में शिक्षा कमिसारियत, जिसका मुख्य कार्य आबादी के सांस्कृतिक उत्थान की देखभाल करना है, हमेशा बात करती रही है, वह अर्थव्यवस्था के संचालकों को स्पष्ट हो गयी है, यानी यह कि बड़ी परियोजनाओं, देश के यंत्रीकरण पर ख़र्च की गयी रक़म से केवल तभी वस्तुतः लाभप्रद परिणाम मिल सकते हैं, जब इसके साथ-साथ जनसाधारण की सांस्कृतिक उन्नति भी हो, अर्थात लोगों के ज्ञान और कौशल में भी उन्नति हो। मानव-योग्यता में साथ-साथ वृद्धि के बिना कोई भी मशीन, कोई भी निर्माण कुछ नहीं दे सकता।

लेनिन ने अपनी मेधा से इसे बहुत पहले देख लिया था, उन्होंने बहुत पहले कहा था कि अगर सोवियत सत्ता में आबादी का उच्च सांस्कृतिक स्तर जोड़ दिया जाये, तो हमें समाजवादी निर्माण के लिए आवश्यक सब कुछ मिल जायेगा। और इसमें उन्होंने तुरंत ही यह जोड़ दिया : लेकिन वह उच्च सांस्कृतिक स्तर स्वयं स्वर्ग से नहीं उतर आयेगा, उसे हमें उतारना होगा और हमारा देश ग़रीब है – इसका अर्थ है कि हमें अपने बजट का वितरण इस ढंग से करना चाहिए कि अर्थव्यवस्था अपने विकास तथा सुव्यवस्था के साथ-साथ आवश्यक लोगों के प्रशिक्षण के उद्देश्य के लिए बड़ी रक़में उपलब्ध करे ... [5]

यदि आपमें से किसी ने 'नये स्कूल के मार्ग पर' नामक पत्रिका के चौथे अंक में वालेन्तीना कोर्देस का लेख 'बच्चे समकालीन स्कूल मे क्या चाहते हैं और भविष्य में वे किस तरह का स्कूल देखना चाहेंगे' पढ़ा है, तो आपको एक बड़ा ही दिलचस्प उद्धरण मिला होगा। एक लड़का भावी स्कूल के बारे में कल्पना कर रहा है। वह कहता है कि

भविष्य में स्कूल यंत्रीकृत होगा। अध्यापक की जगह एक कार्यक्रमबद्ध विद्युत मशीन होगी ; व्यवस्था बनाये रखने तथा बच्चों को शिक्षित करने के लिए मशीन कक्षाओं में गश्त लगायेगी और यांत्रिक रूप से अनुशासन क़ायम करेगी। "प्रयोगशाला में विद्यार्थी परिश्रमपूर्वक काम कर रहे हैं। ड्यूटी-मशीन उनका चक्कर काटती है।" स्कूल के यंत्रीकरण की यह भोली-भाली तसवीर पेश करने के बाद इस धारणा का लेखक आगे कहता है: "पर तब मैं रहना पसंद नहीं करूंगा, क्योंकि तब मशीनें होंगी न कि लोग।"

...बेशक, यह हमारा आदर्श नहीं है। यह शायद कुछ हद तक पूंजीवाद के आगे विकास का आदर्श हो सकता है, जो आज्ञाकारी मशीनों पर अधिकाधिक ज़ोर दे रहा है और उनकी सहायता से अवज्ञाकारी, अदम्य और विद्रोही मानव सामग्री – सर्वहारा – को अनुशासनबद्ध तथा नियंत्रित करने की कोशिश कर रहा है।

समाजवाद का विचार मनुष्य को मशीन के अधीन बनाने में नहीं, बल्कि मशीन को मनुष्य के अधीन बनाने में निहित है। मार्क्स तथा एंगेल्स का एक मूलभूत सिद्धांत यह है कि उत्पादन के विराट औज़ार, जिनका आविष्कार स्वयं लोगों ने पूंजीवादी उत्पादन संबंधों के प्रभुत्व के दौरान किया, हम पर सहज शक्ति से प्रभाव डालते हैं तथा हमारे जीवन की सभी कटुता व विनाश को जन्म देते हैं। समाजवाद मशीन को अंतिम रूप से मनुष्य के अधीन बनाना है – मनुष्य को प्रथम स्थान पर पुनःस्थापित करना है।

और अगर ऐसा है, तो हमारी अर्थव्यवस्था के लिए नये, अधिक पूर्ण मानव-कर्मियों के निर्माण का प्रश्न पेश करने में हमें, बेशक, चहुंमुखी सांस्कृतिक विकास के बारे में भी सोचना चाहिए।

हमारे लिए यह महत्वपूर्ण है कि आज के मजदूरों के बेटे न केवल अच्छे उत्पादन-कर्मी हों, न केवल मशीन के साथ भली-भांति काम करने में समर्थ हों। स्वतः स्पष्ट है कि हमारे लिए यह भी महत्वपूर्ण है कि सर्वहारा अधिनायकत्व के जारी रहने की अवधि में वे समाजवादी सिद्धांतों के आधार पर हमारे संघ की जातियों के जीवन के पुनर्निर्माण के सच्चे मार्गदर्शक भी हों। इसके लिए व्यापक राजनीतिक शिक्षा और सामान्य तथा विशेषीकृत शिक्षा के उच्च स्तर की ज़रूरत है और ठीक इधर ही हमें अपना ध्यान मोड़ना चाहिए।

हमारी अर्थव्यवस्था को विकसित करने के कार्यभार द्वारा हमसे तथा संपूर्ण आबादी से की गयी इन मांगों और इस बात की समझदारी ने कि नैतिक शिक्षा के संबंध में हमारा कार्य कितना अनियमित एवं अपर्याप्त रहा है, हमारे समक्ष असाधारण रूप से महत्वपूर्ण यह सवाल रखा कि नये मानव को कैसे विकसित करें – नया, क्योंकि हमारे लिए शिक्षा का अर्थ वस्तुतः नये मानव की शिक्षा है, क्योंकि अव्यवस्थित और असंस्कृत पूंजीवादी समाज में शिक्षित पुराना मानव असंतोषजनक है।

पुराने मानव पर हम कौन-से दोष लगा सकते हैं?

हम कहते हैं: समाज सबसे पहले इस वजह से मानव-विरोधी था कि यह, मोटे तौर पर, दो समूहों में विभाजित था और आज भी है। प्राचीन काल से आज तक लोग विभिन्न नामों और विभिन्न रूपों में मालिकों तथा दासों में विभाजित रहे हैं।

इस स्थिति में, तथाकथित मालिकों में कैसी मनोवृत्ति उत्पन्न होती है, चाहे वे पुश्तैनी मालिक हों, स्थापित सत्ता हों अथवा जनवाद के लिए प्रयासरत लोग हों – जनवाद, जो नेपोलियन के शब्दों में, प्रतिभाशाली लोगों के लिए खुली जीवन-वृत्ति है? प्रभुत्व के लिए प्रयत्नशील इन लुटेरों की मनोवृत्ति क्या है?

शासक लोगों में जो मनोवृत्ति विकसित होती है, वह लुटेरे व्यक्तिवाद की मनोवृत्ति होती है। उत्पीड़क वर्ग का प्रतिनिधि समस्या को केवल इस रूप में देखता है: "मैं, मेरे स्वार्थ, मेरी सत्ता, मेरी सफलता" – और ऐसा करके वह दूसरे लोगों से अपना संबंध तोड़ लेता है। वह ख़ुद अपने, अपने बेटे और अपने मातहतों को जनसाधारण के प्रति घृणा की भावना में शिक्षित करता है। नीत्शे ने, जो साम्राज्यवाद की मनोवृत्ति, उस वित्तीय अल्पतंत्र के प्रवक्ता थे, जिसका आज पश्चिमी यूरोप और अमरीका में एकच्छत्र राज है, इसे भलीभांति समझा।[6] उन्होंने कहा: हमें अपने में पराये वर्ग के लोगों से दूर रहने की भावना, उनके प्रति कठोर और क्रूर होने, उन्हें कर्दम, नीच लोगों के रूप में, अपने सृजन-कार्य के कच्चे माल के रूप में देखने की योग्यता विकसित करनी चाहिए। मानवजाति के बड़े भाग के प्रति इस तरह का रुख़ संस्कृति के लिए इस अर्थ में एक अपंगकारी बाधा है कि वह इसे अविश्वसनीय संकीर्णता, स्वार्थपरता और ओछेपन जैसे कुलक्षण प्रदान करता है।

लेकिन इसके अलावा शासकों, मालिकों की अल्पसंख्या अपने को निरंतर भय की स्थिति में पाती है। संभवतः विश्व-इतिहास में कोई भी ऐसा काल नहीं रहा है, जब उस अल्पसंख्या ने शांत मन से शासन किया हो। ऐसे काल ज़रूर रहे हैं, जब अपनी प्रजाओं के सामने उनका आतंकपूर्ण भय दब गया, जब उन प्रजाओं ने कमोबेश इच्छापूर्वक अपनी सत्ता के चरमोत्कर्ष पर फलते-फूलते वर्ग का अनुसरण किया, लेकिन ऐसे काल भी रहे हैं, जब शासक वर्ग पतनोन्मुख थे और जब वह आतंकपूर्ण भय प्रधान कारक बन गया।

वर्तमान समय में अच्छी श्रवण-शक्तिवाला कोई भी आदमी आसानी से भय के उस स्वर को सुन सकता है, जो अमरीका और यूरोप में स्थिति के मालिकों की चेतना में ध्वनित हो रहा है। वे सभी अविश्वसनीय भय की पकड़ में हैं। बर्लिन तथा पेरिस में मुझे बड़े बुर्जुआ वर्ग के कुछ प्रतिनिधियों से मिलने का मौक़ा मिला और यह बड़ा आश्चर्यजनक है कि मुझ कम्युनिस्ट के सामने भी उन्होंने यह छिपाने की कोशिश नहीं की कि वे अपने बच्चों को इस ढंग से शिक्षित कर रहे हैं कि बुर्जुआ व्यवस्था के पतन की स्थिति में वे अपनी रोज़ी-रोटी कमा सकें। करोड़पति कहते हैं, "कौन जानता है, क्या हो जाये? मैं अपनी बेटी को विदेशी भाषाएं, शार्टहैंड और टाइपिंग सिखला रहा हूं – तब वह हमेशा अपनी जीविका कमा सकती है।" वे कहते हैं, "इन दिनों करोड़ धुएं की तरह हैं, आज करोड़ हैं, कल कुछ भी नहीं। मुझे भविष्य की गारंटी कौन दे सकता है, मुझे कौन आश्वासन दे सकता है कि आज की व्यवस्था कल भी बनी रहेगी?"

आप कल्पना कर सकते हैं कि बर्लिन में बुर्जुआ हलक़ों में कैसा आतंक व्याप्त होगा, जहां ६ लाख ५० हज़ार लोगों ने कम्युनिस्टों को वोट दिये।[7] दूसरे शब्दों में इसका अर्थ यह है कि बर्लिन एक कम्युनिस्ट नगर है। वे सभी बुर्जुआ बर्लिनवासी बहुत बुरा महसूस कर रहे होंगे।

उन मालिकों की चेतना, मनःस्थिति, चरित्र, व्यक्तित्व – सभी असाधारण रूप से विकृत हो गये हैं। ये अपाहिज, मानसिक रूप से विक्षिप्त ऐसे लोग हैं, जिनमें और सच्चे मानव – शांत, अधिकारपूर्ण, शक्तिशाली, प्रकृति पर न केवल अपनी या एक छोटे ग्रुप की ओर से, बल्कि समग्र मानवजाति की ओर से अपने प्रभुत्व के अधिकार की

घोषणा करनेवाले – के बीच ज़मीन आसमान का अंतर है।

और दूसरी ओर, दासों के शिविर में भी – बेशक मैं उत्पीड़ित वर्गों के उन लोगों को "दास" नहीं कह रहा हूं, जो समाजवादी चेतना तक विकसित हो चुके हैं, मैं बुद्धिजीवियों सहित औसत निवासियों तथा अंशतः मज़दूरों व किसानों के कुछ संस्तरों की बात कर रहा हूं – भयानक रूप से अपाहिज व्यक्ति है। यह प्रथमतः वह व्यक्ति है, जो असाधारण रूप से अपने व्यक्तित्व से वंचित हो चुका है। यहां व्यक्तिवाद टुच्ची लोलुपता में, जीवन के साधनों को अपने लिए यथासंभव अधिक खसोट लेने की इच्छा में तथा किसी भी प्रतिद्वंद्वी और अपने सभी पड़ोसियों के प्रति द्वेषपूर्ण रुख़ में व्यक्त होता है। इस तरह का व्यक्तिवाद इस वातावरण में विराट यूथचारी भावना – विद्यमान व्यवस्था की पूजा, सभी तरह के फ़ैशनों और पूर्वाग्रहों की विवेकरहित स्वीकृति – को जन्म देता है।

लोगों का यह निर्व्यक्तीकरण यूरोप में हमारे यहां से काफ़ी ज्वलंत ढंग से दिखायी देता है। मिसाल के लिए, भले ही यहां क्रांति के बाद भी आप इस तरह की यूथचारी भावना देख सकते हैं, तो भी यह यहां बहुत कम है। लेकिन यूरोप में आप ऐसे लोग देखते हैं, जो एक ख़ास सांचे के मानकीकृत हो गये हैं, जो अविश्वसनीय रूप से एक-दूसरे के सदृश हैं और जो एक-दूसरे के सदृश बनने को आतुर हैं; वे किसी भी रूप में दूसरों से भिन्न होने के विचार तक से भय खाते हैं, वह comme il faut* नहीं होगा, ऐसी चीज़ों की अनुमति नहीं दी जा सकती। सामाजिक जनवाद इस टुटपुंजिया-बुर्जुआ दलदल से कोई विशेष अंतर नहीं प्रकट करता।

यदि आप बुर्जुआ दुनिया में अब भी हावी इस पुरानी क़िस्म पर अधिक निकटता से देखें, तो आप उसकी अविश्वसनीय संकीर्णता देखेंगे। वह बड़े प्रश्नों से मात्र अख़बार से जुड़ा होता है, जिसे वह रोज़ लेता है, जैसे-तैसे पढ़ता है और फेंक देता है। उस अल्प समय में, जिसमें वह अख़बार पढ़ता है, वह बाक़ी दुनिया से जुड़ता है और पुनः अपने खोल में, अपने सूट में बंद हो जाता है, जो उसके लिए वैसे ही अनिवार्य है, जैसे कि घोंघे के लिए उसका खोल और वह उस खोल में अपने

---

*उचित (फ़्रांसीसी)। – **सं०**

संकीर्ण स्वार्थों के साथ जीता है... सामान्यतः ऐसा ही तो है पुराना मानव।

इसमें और एक बात जोड़नी आवश्यक है। इस पुरानी दुनिया में मनुष्य के लिए रहना बड़ा कटु है। बेशक, हमारे संक्रमणकाल में जीवन यहां भी कटु है। लेकिन हम मार्ग पर आगे बढ़ रहे हैं और हमारी कष्ट-मुसीबतें सृजन की कष्ट-मुसीबतें हैं, लेकिन वहां ये कष्ट-मुसीबतें हमेशा के लिए हैं तथा कहीं भी किसी बेहतर चीज़ के लक्षण नहीं दिखायी देते। इसके विपरीत, सर्वत्र इस अभिलेख का बोलबाला है: "ऐसा ही था, ऐसा ही रहेगा" और फलतः lasciate ogni speranza – सारी आशा छोड़ दो।[8]

...हमें दुनिया को अर्थ प्रदान करना चाहिए। वस्तुतः यह दुनिया महान, सुंदर और विविधतापूर्ण है, लेकिन इसका अपना कोई अर्थ नहीं है और हम लोगों के सिवाय उसे अर्थ देनेवाला, अस्तित्व को बुद्धि तथा न्याय देनेवाला कोई नहीं है।

...बेशक, सर्वहारा पुराने और नये के बीच संक्रमणकालीन क़िस्म है। सर्वहारा ही एकमात्र ऐसा मानव है और उसका सामूहिक संघ ही एकमात्र ऐसी सामाजिक शक्ति है, जो मालिकों तथा ग़ुलामों की उस दुनिया को समूल नष्ट करने के लिए मानवजाति की प्रगतिशील शक्तियों को संगठित करने में समर्थ हैं। जैसा कि सर्वविदित है, अकेले सर्वहारा का अर्थ कुछ भी नहीं है; वह केवल वर्ग के रूप में ही एक शक्ति, विश्व पैमाने की एक शक्ति बनता है। यह ऐसा उत्पादन-स्थल पर है, यह ऐसा ट्रेड-यूनियन संघर्ष में है, यह ऐसा राजनीतिक संघर्ष में भी है।

सर्वहारा एक जनसमूह के रूप में काम करता है, जनसामूहिकता उसके लिए अनिवार्य है और स्वयं पूंजीवाद ही अपने संगठित व्यापक उत्पादन के साथ उसे इस भावना में शिक्षित करता है। किसी फ़ैक्टरी में बनाये गये इंजन को ईवान या सिदोर नहीं बनाते हैं, इसे बुद्धिसंगत ढंग से संगठित ग्रुप के सहयोग में बनाया जाता है। अतः भविष्य के मानव के मूल लक्षण सर्वहारा में निर्धारित हैं।

...सर्वहारा – एक ऐसा वर्ग जिसने शोषण को झेला है और जिसे दूसरों का शोषण करने की कोई इच्छा नहीं है – संगठित, नियोजित और सामूहिक ढंग से समाज का पुनर्संगठन पूरा करने में समर्थ एक

सक्रिय सिद्धांत का प्रतिनिधित्व करता है। और यह करने में सर्वहारा अपने को किसी देश-विशेष का नागरिक नहीं महसूस करता; उसने यह विचार आत्मसात किया है कि वह केवल विश्व संघर्ष में ही विजयी हो सकता है, उसने एक अंतर्राष्ट्रीयतावादी भावना प्राप्त की है।

ये वे विशेषताएं हैं, जो सर्वहारा को मानवजाति को भावी दुनिया में ले जाने में समर्थ बनाती हैं।

तो भी, सर्वहारा संक्रमणकालीन क़िस्म है।

अगर आप उसे अधिक निकट से देखें, तो आप देखेंगे कि सर्वहारा हरावल के आंदोलन में सभी ही सर्वहारा भाग नहीं लेते, कि सर्वहारा का एक ऐसा हिस्सा है, जो पिछड़ा हुआ है, जो टुटपुंजिया-बुर्जुआ वर्ग के साथ मिल जाता है, कि पारिवारिक जीवन तथा विभिन्न अन्य चीज़ों के संबंध में भी लगभग हर सर्वहारा के चरित्र और व्यक्तित्व पर ऐसे काले दाग़ हैं, जो उसे पुरानी दुनिया के समीप ला देते हैं। अतः दूसरों पर काम करते हुए उसे स्वयं अपने पर भी बड़ा काम करना चाहिए।

मार्क्स ने कहा कि सामाजिक क्रांति की अवधि लंबी – दशकों लंबी – होगी और सर्वहारा समूची दुनिया को बदलने में स्वयं अपने को भी बदलेगा। मनुष्य की पूर्णता के रूप में शिक्षा के बारे में प्रश्न पर आते हुए हमें इस प्रस्थापना को अच्छी तरह याद रखना चाहिए।

...हम जानते हैं कि क्रांतियां निश्चित सामाजिक परिस्थितियों मे उत्पन्न होती हैं, कि मानव-समाज कतिपय सामाजिक नियमों के अनुसार विकसित होता है। लेकिन समाजवाद की प्राप्ति, जैसा कि एंगेल्स ने कहा, आवश्यकता के राज्य से, जहां स्वतःस्फूर्त नियम मनुष्य पर शासन करते हैं, स्वतंत्रता के राज्य में छलांग है[9], यानी मनुष्य – व्यक्तिगत नहीं बल्कि समष्टिगत मनुष्य – के आत्मनिर्णय के राज्य में। यह अमुक दिन को अमुक समय में इस घोषणा से नहीं आयेगा कि "भाइयो, समाजवाद आ गया!" – और स्वतःस्फूर्त नियम सीधे रद्द हो जायेंगे तथा मनुष्य स्वयं शासन करने लगेगा। नहीं, यह प्रक्रिया दशकों तक चलती है और **मानव-इच्छाओं के संगठन** की अपेक्षा करती है। मनुष्य द्वारा स्वतःस्फूर्त नियमों पर निर्भर करने का मुख्य कारण यह है कि असंख्य मानव-इच्छाएं परस्पर-विरोधी ढंग से काम करती हैं, कि मानव-समाज गैसीय स्थिति में किसी पदार्थ की तरह है –

प्रत्येक मानव-अणु चारों ओर लहर मारते हैं और अस्तव्यस्त, अव्यवस्थित ढंग से वेगपूर्वक दौड़ते हुए अपने सभी पड़ोसियों से टकराते हैं। इन अणुओं को संगठित करना, उन्हें एक दिशा प्रदान करना, उन्हें उद्देश्य और व्यवस्था देना – यही वह चीज़ है, जिसकी हमें आवश्यकता है। और जब मानव इच्छाएं एकता में संगठित हो जायेंगी, जब वे ऊर्जा के एक समन्वित पुंज की तरह काम करने लगेंगी, तब शायद कोई भी ऐसी चीज़ नहीं रह जायेगी, यहां तक कि प्रकृति के स्वतःस्फूर्त नियम भी नहीं, जो उनका प्रतिरोध कर सके। हम पहले ही जानते हैं कि आदमी इन प्राकृतिक शक्तियों से बहुत कमज़ोर होते हुए भी किस हद तक एक लाइनमैन की भांति उन्हें कभी-कभी अपनी न्यूनतम शक्ति से मोड़ते हुए और उनके विकास को एक बिल्कुल भिन्न मार्ग तथा स्वरूप प्रदान करते हुए उन्हें संचालित करने में समर्थ है। हम प्रकृति पर मनुष्यों के प्रभाव की सीमा की कल्पना भी नहीं कर सकते जब वे एक दूसरे के साथ लड़ना बंद कर देंगे और एक संगठित शक्ति के रूप में उभरेंगे। तब हमारे पास जो चीज़ होगी, वह दिन दुगुनी, रात चौगुनी रफ़्तार से बढ़ती अविश्वसनीय महत्व की शक्ति होगी।

हमारा सोवियत संगठन, हमारा पार्टी संगठन, हमारा सांस्कृतिक और समाजवाद का निर्माण करनेवाला राज्य उस मार्ग पर निश्चित मंज़िल का प्रतिनिधित्व करते हैं। बेशक, यह एक प्रारंभिक मंज़िल ही है, हमारे यहां आंतरिक संघर्ष और उथल-पुथल अब भी बहुत है, हम वस्तुतः सही ढंग से संगठित समूह होने से अब भी बहुत दूर हैं। पर हमें ऐसे संगठन के लिए प्रयास करना चाहिए और हमारे पास समाज की स्वतःस्फूर्त शक्तियों पर संगठित, सचेत कार्रवाई करने की निश्चित क्षमताएं हैं।

चूंकि हम नये मानव के निर्माण के बारे में चर्चा कर रहे हैं, यह पूर्णतः स्पष्ट है कि **शिक्षा-प्रक्रिया पर सचेत प्रभाव** की दृष्टि से हमारे सामने स्कूल ही एक मुख्य कार्यभार के रूप में प्रकट होते हैं। व्लादीमिर इल्यीच लेनिन ने कहा कि हमें ठीक स्कूलों के क्षेत्र में ही पुरानी दुनिया को बदलना चाहिए। अनेक लोगों ने इसके प्रति यह रुख़ लिया कि ये शिक्षा कर्मियों की पहली कांग्रेस[10] को संबोधित मात्र शिष्टता के शब्द हैं। नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। अंतिम विजय वस्तुतः स्कूलों के क्षेत्र में होगी और समाजवादी समाज की पहली

सच्ची उपलब्धि समाजवादी स्कूल होगी। यही कारण है कि स्कूलों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

हमारे स्कूल ग़रीब हैं ; उनके पास पुराने शिक्षा-कर्मी हैं, जिनका सर्वोत्तम हिस्सा अपने को नयी पद्धति में परिवर्तित करने का प्रयास कर रहा है, लेकिन, एक ओर, यह परिवर्तन उतना आसान नहीं है और, दूसरी ओर, केवल सर्वोत्तम हिस्सा ही इस परिवर्तन के लिए प्रयास कर रहा है, और पिछड़ा भाग, जो सबसे बड़ा भी है, यह प्रयास नहीं करता। हम एक नये तरह का अध्यापक तैयार कर रहे हैं, पर बड़े ही अकिंचन ढंग से, एक-एक पैसा लगाते हुए। ऐसी परिस्थितियों में हमारे स्कूलों में अब भी व्याप्त बड़ी कमियों पर किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

इस प्रश्न का कि "क्या हमारे राजकीय स्कूल इस ढंग से बने हैं कि समाजवादी भावना में नयी पीढ़ी की शिक्षा को सुनिश्चित बना सकें?" हम यह उत्तर दे सकते हैं कि हमारे पास इसके लिए कतिपय पूर्वपरिस्थितियां, कतिपय उपलब्धियां, कतिपय आंशिक सफलताएं हैं। यह नहीं सोचना चाहिए कि एक ऐसे समाज में स्कूल नये ढंग से तुरंत ही बनाये जा सकते हैं, जो कई मानों में अब भी एक पुराना समाज है। इसके लिए बड़े संघर्ष, नये अध्यापक-समुदाय की तैयारी और विशाल मात्रा में संसाधनों की आवश्यकता होती है।

मानव-धारा, गंदी और गंदली, दुर्गंध-युक्त धारा, लेकिन साथ ही एक शक्तिशाली धारा सतत बह रही है। यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी बहती रहती है और नयी पीढ़ियां पुरानी पीढ़ियों के अनुभव को ग्रहण करती हैं, वे पुरानी पीढ़ियों के कंधों पर खड़ी होती हैं,, वे हज़ारों हज़ार पीढ़ियों द्वारा संचित सभी मूल्यवान चीज़ों को प्राप्त करती हैं, लेकिन साथ ही वे पूर्वाग्रह, बीमारियां तथा दुर्गुण – सभी गंदगी, गंदलापन और दुर्गंध भी ग्रहण करती हैं। कहीं पर एक फ़िल्टर, एक जाल क़ायम करने की आवश्यकता है, जो अपने में से सभी मूल्यवान चीज़ों अपने कौशलों तथा उपलब्धियों के साथ संपूर्ण शक्तिशाली धारा को गुज़रने देगा, मगर गंदगी और दुर्गंध को नहीं गुज़रने देगा। केवल स्कूल ही ऐसा फ़िल्टर हो सकता है।

अध्यापक वह व्यक्ति है, जिसे नयी पीढ़ी को युग-युगों से संचित सभी उपलब्धियों को न कि पूर्वाग्रहों, दुर्गुणों तथा बुराइयों को हस्तांतरित

करना चाहिए। अध्यापक के महत्व का यही मापदंड है। अस्तु, उसे बड़े संसाधन प्रदान कीजिये, महसूस कीजिये कि उसके हाथों से ही आप उन स्वस्थ अंकुरों का पालन-पोषण कर रहे हैं, जिनकी ख़ातिर हम संघर्ष कर रहे हैं, जिनकी ख़ातिर हम ज़िंदा हैं और जिसके बिना जीवन तथा संघर्ष सार्थक नहीं होगा। यह हमारे संघर्ष में सबसे महत्वपूर्ण चीज़ है।

यह चेतना अब भी यहां नहीं है। यह चेतना अनिवार्यतः होनी चाहिए। केवल तभी नये मानव का निर्माण संभव होगा।

मैं यह कहना नहीं चाहता कि स्कूल ही नये मानव के निर्माण का एकमात्र, पूर्ण और प्रधान साधन है। मैं भली-भांति समझता हूं कि बाल व युवा संगठन कोई कम महत्वपूर्ण कारक नहीं हैं।

मैं कोम्सोमोल की चर्चा नहीं करूंगा, वह अपने लिए स्वयं ही बोल सकता है। हाल में मेरे मस्तिष्क में यह धारणा बनी है कि कोम्सोमोल के सदस्य कम से कम पार्टी स्तर के अधिक निकट आ गये हैं, कि यह नयी पीढ़ी कम से कम हमारी बराबरी में आ गयी है और शायद हमसे आगे भी बढ़ने लगी है। उसमें हमारे पास बड़ी संख्या में मेधावी लोग हैं, उसमें तरुणाई की बड़ी निधियों और बड़े व्यावहारिक आदर्शवाद के साथ आश्चर्यजनक संजीदगी – वयस्क लोगों की संजीदगी – का उल्लेखनीय सामंजस्य है। एक भव्य पीढ़ी है यह!

कोम्सोमोल के सदस्य अपनी कमियों को बहुत अच्छी तरह जानते हैं और उन्हें दूर करने हेतु अपने बारे में भली-भांति चिंता करते हैं। पर पायनियर आंदोलन – यह और मामला है: कोम्सोमोल में अपने कार्यों की देखभाल करने के लिए काफ़ी शक्ति है, लेकिन उसमें पायनियरों के कार्यों से निपटने के लिए काफ़ी शक्ति नहीं बच जा सकती है और बेशक पायनियर ख़ुद ही अपनी देखभाल नहीं कर सकते। बच्चों का यह संगठन हाल में स्पष्टतः एक दुर्बल अवस्था में रहा है, हम उसे ऐसी अन्तर्वस्तु प्रदान करने का कोई तरीक़ा नहीं पा रहे हैं, जो बच्चों के लिए अत्यधिक थकाऊ न हो (और हम उन्हें अत्यधिक थका देते हैं), जो वास्तव में उनके लिए जीवंत दिलचस्पी से भरी हो और उन्हें एक ऐसे वातावरण में, घड़िया में खींचे, जहां मनुष्य दरअसल एक नये सांचे में ढाला जाता है। यह एक विशाल कार्य है। शिक्षा जन-कमिसारियत की शक्तियों और हमारे अध्यापक-

समुदाय की शक्तियों को इसमें काफ़ी हद तक खींचा जाना चाहिए। हमें अपने बच्चों के संगठन पर बड़ा ध्यान देने की आवश्यकता है, क्योंकि स्कूल, उनकी निर्धनता तथा अध्यापकों के एक बड़े हिस्से के कालातीत विचारों को देखते हुए, प्रगतिशील बाल-संगठन की सहायता के बिना अपना कार्यभार – नयी पीढ़ी को शिक्षा देने का कार्यभार – नहीं पूरा कर सकते।

यह शब्द "शिक्षा" किस तरह का है? यह सभी भाषाओं (जर्मन में Bildung, अंग्रेज़ी में Education) में बच्चे को किसी ध्येय तक ले जाने और उसे निश्चित आदर्शों के अनुरूप विकसित करने के विचार से जुड़ा हुआ है। शिक्षा की प्रक्रिया में बच्चा कच्चा माल, ऐसा पदार्थ है, जिसे एक निश्चित रूप में ढाला जाना चाहिए। आप यह बख़ूबी समझते हैं कि मनुष्यों के पास कोई पूर्वनिर्धारित सार्विक रूप नहीं है – प्रत्येक वर्ग अपने आदर्शों के अनुसार अपने बच्चे को विकसित करता है। और यही कारण है कि **शिक्षा की अवधारणा गहन रूप से वर्ग-निर्धारित अवधारणा है** – सामंत की शिक्षा, बुर्जुआ की शिक्षा, सर्वहारा की शिक्षा बिल्कुल भिन्न-भिन्न चीजें हैं।

शिक्षा की अवधारणा में दो तत्व – शिक्षा और नैतिक शिक्षा – शामिल हैं।

... जब मैंने बर्लिन में हमारी शिक्षा-प्रणाली के मूलभूत सिद्धांतों पर एक व्याख्यान पढ़ा (इस अवसर पर राइख़स्टाग के अध्यक्ष लेबे ने सभा की अध्यक्षता की)[11], तो कहा कि हमारे स्कूलों ने व्यक्तिगत और सामाजिक अंतर्विरोधों को दूर कर दिया है, जबकि पश्चिमी स्कूल इन दोनों में से किसी न किसी दलदल में अनिवार्यतः गिरते हैं। आप कहते हैं कि स्कूल को आदमी के दांतों और पंजों को तेज़ करना चाहिए, ताकि वह अपने लिए ओहदा प्राप्त कर सके, कि स्कूल को उसे ओहदा पाने के लिए सभी आवश्यक चीज़ें देनी चाहिए (उदारतावादी स्कूल इसी दृष्टिकोण पर बना है) अथवा फ़ेर्स्टर के साथ घोषणा करते हैं कि व्यक्ति को अपने देश की सेवा करने के उद्देश्य से शिक्षित किया जाना चाहिए, कि उसे उसके लिए अपनी क़ुर्बानी देने हेतु हमेशा तैयार रहना चाहिए और अतः उसमें व्यक्तिगत ओहदा पाने की योग्यता नहीं, बल्कि मातहती की भावना विकसित की जानी चाहिए।

...हमें इस तरह की "देशभक्ति" की आवश्यकता नहीं है; हम कहते हैं, "देखिये, मानवजाति अपने को इस स्थिति में पाती है, यही कारण है कि विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी की प्रगति के बावजूद यह सुखी नहीं है और इसे सुखी बनाने के लिए अमुक-अमुक चीज़ें करने की आवश्यकता है। और हम अपने विद्यार्थी से सीधे कहते हैं कि अगर वह अपने को योग्य महसूस करना चाहता है, अपने को सच्चा मनुष्य महसूस करना चाहता है, सुख प्राप्त करना चाहता है, तो एक बड़े परिवर्तन की आवश्यकता है, इसके लिए अनुशासन की आवश्यकता है, इसके लिए सहमति की आवश्यकता है, उसके लिए संगठन की तथा विश्व-पैमाने पर संगठन की आवश्यकता है। आप यक़ीन करें कि जब मैंने यह कहा तो मेरे शब्द तालियों की गड़गड़ाहट में डूब गये, लेकिन मेरे श्रोताओं में एक भी कम्युनिस्ट नहीं था और शायद बहुत कम सामाजिक-जनवादी थे। यह हमारे विचारों की गहराई तथा सहीपन का स्पष्ट प्रमाण था; प्रतीत होता है कि हमारे तर्क का विरोध करना संभव नहीं है, क्योंकि यह तर्क है और इसके विरुद्ध कुछ नहीं किया जा सकता।

ठोस और सार्विक संबंधी प्रश्न में केवल हम ही अपने द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के साथ सच्चा दृष्टिकोण रखते हैं।

हम यथार्थवादी हैं, हम यथार्थ, ठोस कार्य की मांग करते हैं। हमें किसी भी क्षेत्र-विशेष में, व्यवसाय-विशेष में विशेषज्ञ होना चाहिए, व्यवसाय-विशेष का उस्ताद होना चाहिए। हम लफ़्फ़ाज़ों से नफ़रत करते हैं, उन लोगों से नफ़रत करते हैं, जो चीज़ों को सतही ढंग से देखते हैं, हमें सच्चे कर्मियों की ज़रूरत है और हम सच्चे कार्य की मांग करते हैं, हम हर निर्धारित कार्य की वास्तविक परिस्थितियों के सावधानीपूर्ण सर्वेक्षण की मांग करते हैं।

लेकिन हमारे लिए छोटे से छोटा कार्य भी विशाल महत्व के कार्य में शामिल होता है। कहा जा सकता है कि फ़ैक्टरी का अहाता साफ़ करना, इधर-उधर बिखरे ईंट और कांच के टुकड़ों को बीनना सबसे तुच्छ कार्य है। हमारे लिए यह विश्वव्यापी महत्व ग्रहण करता है, हमारे लिए यह हमारे आर्थिक मामलों को व्यवस्थित करने का स्वरूप धारण करता है, जो विश्व क्रांति की कुंजी है। जब हमारे यहां एक मज़दूर अपने ख़राद पर काम करते हुए अपनी उत्पादकता बढ़ाता है,

वह प्रकाश की विजय का पलड़ा भारी करने में अपना छोटा योगदान प्रस्तुत कर रहा होता है। हम केवल तभी उत्साहपूर्ण, श्रमसाध्य ठोस कार्य की मांग कर सकते हैं, जब कार्य इस आम विचार से प्रकाशित होता हो, जब यह आम विचार मानव-मस्तिष्क में मौजूद हो, जब यह सूर्य की भांति उसके कार्य पर और घट्ठे पड़े उसके हाथों पर रोशनी डालता हो।

यही कारण है कि विभिन्न अंतर्विरोधों पर अपनी विजय के साथ द्वंद्वात्मक भौतिकवाद वास्तव में वह सिद्धांत है, जो अन्य क्षेत्रों की भांति शिक्षा के क्षेत्र में भी बड़े सुअवसर और मार्गदर्शक सूत्र प्रदान करता है।

नये मानव की शिक्षा में पहली समस्या व्यायाम प्रशिक्षण की है। इसमें बड़े परिवर्तन की आवश्यकता है। व्यायाम प्रशिक्षण के प्रथम महत्व के प्रति मेरी गहन चेतना के बावजूद, इसके बावजूद कि इस मामले में बहुत कुछ शिक्षा जन-कमिसारियत पर निर्भर करेगा, हमें इस क्षेत्र में बड़ा काम करने को है और हम शायद तब तक सफल नहीं होंगे, जब तक हमें पार्टी, कोम्सोमोल और जनमत का समर्थन न मिले। वर्तमान समय में स्कूलों में, युवा पीढ़ी के पालन-पोषण के क्षेत्र में ही व्यायाम प्रशिक्षण लज्जाजनक ढंग से उपेक्षित है। यह पुराने जिमनास्टिक, कभी-कभी फ़ौजी जिमनास्टिक की छाया-मात्र होता है, जिसको स्कूल अपनी समय-तालिका में एक तुच्छ स्थान प्रदान कर देता है। सभी अन्य चीज़ों की बुनियाद होने के बजाय, कम्युनिस्ट अध्यापक के यह कहने के बजाय कि "सबसे पहले हमें यह देखना चाहिए कि हमारे बच्चे स्वस्थ हों, कि वे हृष्ट-पुष्ट व सुंदर हों, कि उन्हें अत्युत्तम ढंग से विकसित होने के लिए काफ़ी धूप और हवा मिलनी चाहिए"—हम कहते हैं: "समय-तालिका में जिमनास्टिक के लिए प्रति सप्ताह दो घंटे कैसे निकालें?"—और हम एक पुराने सार्जेंट को ढूंढ़ लाते हैं, जो हमारे बच्चों को क़वायद सिखलाता है। हमें इस मामले के प्रति अपने समूचे दृष्टिकोण को बदल डालना चाहिए।

...हमें अपने जिमनास्टिक को सचेत ढंग से लयात्मक, सामूहिक स्वरूप प्रदान करना चाहिए। हमें भी सामूहिक जिमनास्टिक, जो 'सोकोल'* में एक राष्ट्रीय सिद्धांत तथा अंशतः सौंदर्यबोधी भावना

* चेक राष्ट्रीय जिमनास्टिक संगठन। — **सं०**

(एक साथ बहुत-से लोगों द्वारा लयात्मक जिमनास्टिक का सौंदर्य) से विकसित हुआ, अपनाना चाहिए। ये हज़ारों लोग, जो एक साथ जटिल और सुसमन्वित जिमनास्टिक बड़ी सूक्ष्मतापूर्वक पूरा करते हैं – यह उत्तम स्कूल, सामूहिकता का भौतिकवादी स्कूल है।

कतिपय प्रतियोगी तत्व के साथ परन्तु हमेशा दोस्ती की सीमाओं के भीतर और बेतहाशा ज़्यादतियों तथा हास्यास्पद ढंग से उच्च पुर-स्कारों से रहित सामूहिक खेल-कूद को न केवल हमारे श्रम व सामाजिक संस्कृति का, बल्कि हमारी फ़ौजी संस्कृति का भी आधार बनना चाहिए। हम युद्ध से नफ़रत करते हैं, हम बंदूक़ों से नफ़रत करते हैं, हम फ़ौज रखना नहीं चाहते, पर जब तक हमें डराया-धमकाया जा रहा है, तब तक हमें लड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए। अस्तु, हमारे जिमनास्टिक में फ़ौजी तत्व को स्वीकार किया जाना चाहिए और इसे उपयुक्त रूप में किशोर आयु समूहों के लिए भी लागू किया जाना चाहिए।

इसी ढंग से व्यायाम प्रशिक्षण निर्मित किया जाना चाहिए और इस प्रणाली के अनुसार व्यायाम प्रशिक्षण के हमारे सिद्धांतकारों ने एक उत्तम सामान्य कोर्स तैयार किया है। इसे व्यवहार में अनेक मामलों में पूरा नहीं किया जाता, पर इसे नये मानव के निर्माण की एक महत्वपूर्ण शर्त के रूप में पूरा किया जाना चाहिए।

श्रम-अनुशासन कोई कम महत्वपूर्ण नहीं है। इससे मेरा तात्पर्य स्कूलों में अध्ययन के पाठों और प्राप्त किये जानेवाले अपने आप में कठिन ज्ञान की पारंगति के रूप में श्रम से नहीं है। यह महत्वपूर्ण है, लेकिन यह मुख्य बात नहीं है। मैं अब शारीरिक श्रम के बारे में बोल रहा हूं।

स्कूलों में शारीरिक श्रम को एक बहुत छोटा स्थान प्राप्त है। हमने एकीकृत पालीतकनीकी श्रम स्कूल के सिद्धांत तैयार किये थे, लेकिन उस पहली योजना से लगभग कुछ भी नहीं बचा है। हमारी राज्य स्कूल परिषद के कार्यक्रम में हमने मार्क्स द्वारा कल्पित स्कूल के केवल मूलभूत सिद्धांत को ही सुरक्षित रखा है। लेकिन हमारे वर्तमान व्यावहारिक पाठ्यक्रम में स्कूली वर्कशाप को बिल्कुल भुला दिया तथा छोड़ दिया गया है। कुछ उच्च कोटि के स्कूलों में वर्कशापें हैं, लेकिन वे सामान्यतः गौण भूमिका अदा करती हैं। इस तरह,

श्रम-दृष्टिकोण, श्रम-अनुशासन को छोड़ दिया जाता है, फिर भी, यह स्पष्ट है कि वे स्कूल के प्रति दिलचस्पी को काफ़ी बढ़ायेंगे। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक किसान स्कूल में बच्चे न केवल पढ़ना-लिखना सीखें, बल्कि ग्रामीण जीवन के कतिपय कौशल – बढ़ईगिरी, ज़ीनसाज़ी, लोहारी – भी सीखें। किसानों को विशाल मात्रा में वस्तुओं की ज़रूरत है, फिर भी दस्तकार धीरे-धीरे लुप्त होते जा रहे हैं और उनका स्थान कोई नहीं ग्रहण कर रहा है। अभी हाल ही में हमने अप्रेंटिसों को लेने की अनुमति दी है। इस वजह से हमारे यहां ग्रामीण दस्तकारियों का बड़ा संकट है। इसके अलावा, किसी भी श्रम-कौशल की शिक्षा स्कूल को पालीतकनीकी स्वरूप प्रदान करती है, सुप्रशिक्षित अध्यापक को अनेक प्राकृतिक परिघटनाएं प्रदर्शित करने तथा इनसे विभिन्न नियमों को निगमित करने का सुअवसर प्रदान करती है – और यह श्रम-सिद्धांत का सही कार्यान्वयन है।

यह सब हमने उस सुखद किंतु साथ ही असुखद समय में कहा, जब हम इकारस[12] की भांति क्रांतिकारी उत्साह के अपने मोम के पंखों पर उड़ रहे थे। वे मोम के पंख पिघल गये और हम धीरे-धीरे इस पापी पृथ्वी पर आ उतरे। लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि हमने ऐसा पुनः ऊपर उठने के लिए किया है, हमने अस्थायी रूप से स्कूलों से अपनी मांगें कम कर दी हैं, ताकि बाद में अधिक कारगर उड़ान प्राप्त कर सकें।

... शिक्षा का एक दूसरा विशाल विभाग सौंदर्यबोधी शिक्षा है। इस विभाग में हम व्यावहारिक रूप से कुछ भी नहीं कर रहे हैं। जब शिक्षा कमिसारियत में सोवियत स्कूलों के सिद्धांत पहली बार तैयार किये गये, तो हमने सौंदर्यबोधी शिक्षा को बड़ा महत्व दिया। बाद में, संसाधनों की कमी की वजह से कुछ स्थानों में गायन पाठों, कुछ थियेटर-कार्य, कुछ ड्राइंग के अलावा कुछ भी नहीं बचा। और मेरे यथार्थवादी मिज़ाजवाले कुछ सहयोगियों ने यहां तक कहा कि सौंदर्यबोधी शिक्षा का पागलपन इसलिए सवार हुआ कि जन-कमिसार सनकी हैं – वह कला-अनुरागी हैं और इसलिए स्कूलों में भी कला रखना चाहते हैं, लेकिन, जैसा कि सर्वविदित है, वस्तुतः महत्व की दृष्टि से इसका दसवां स्थान ही है; जब हम समृद्ध बन जायेंगे, तब कला के बारे में सोच सकेंगे।

इस तरह का विचार बड़े अज्ञान का नतीजा है। सौंदर्यबोधी शिक्षा समग्र शिक्षा का एक बड़ा तत्व है और केवल इस वजह से नहीं कि विद्यार्थी में इस या उस कलात्मक योग्यता को विकसित करना अच्छी चीज़ है, कि वह गा सके, वायलिन बजा सके या अच्छी ड्राइंग कर सके और केवल इसलिए ही नहीं, जैसा कि बुर्जुआ शिक्षाशास्त्री कहते हैं, कि बच्चे में प्रकृति तथा कलाकृतियों की क़द्र करने की योग्यता विकसित की जा सके, जो इसलिए महत्वपूर्ण है कि यह उसकी व्यक्तिगत ख़ुशी में योगदान करती है।

यह मुख्य बात नहीं है। मुख्य बात यह है कि मानव-भावनाओं तथा फलतः मानव-इच्छा को विकसित करने के लगभग कोई अन्य तरीक़े नहीं हैं। बेशक, शिक्षा को समाज के जीवन से जोड़ा जाना चाहिए, कार्य-स्थलों, उत्पादन-स्थलों और सामाजिक जीवन में शिरकत का उपयोग विद्यार्थी के क्षितिजों को व्यापक बनाने तथा अन्य लोगों के प्रति उसकी सहानुभूतियों को विकसित करने हेतु किया जाना चाहिए। लेकिन इस चीज़ को भली-भांति ध्यान में रखें कि उत्सव लगभग शुरू से अंत तक कलात्मक तत्वों से ओत-प्रोत होते हैं। यथार्थ जीवन अपने आप में इतना अस्त-व्यस्त और अंतर्विरोधी है कि इसे शिक्षा के एक साधन के रूप में इस्तेमाल करना असंभव है; इसे संगठित किये जाने की आवश्यकता है। और यह संगठन मुख्यतः कलाओं – संगीत, साहित्य, थियेटर, सिनेमा और चित्रकला – के माध्यम से पूरा किया जाता है। जहां तक बच्चे इन कलाकृतियों को सामूहिक ढंग से बनाते या सराहते हैं, वहां तक वे बच्चों की चेतना पर अमिट छाप छोड़ती हैं। यही मुख्य बात है – तोलस्तोय की प्रतिभा उनकी इस परिभाषा में पूर्णतः व्यक्त हुई – कि कला सबसे पहले शब्दों, ध्वनियों, रेखाओं, रंगों, आदि का ऐसा संगठन है, जो उनके प्रणेता की मनोदशा, भावना व अनुभव को श्रोताओं, दर्शकों या पाठकों को संप्रेषित करने में समर्थ हो। यह प्रभाव डालने की शक्ति है, यह अनुकरण की मुख्य प्रेरणा है और अगर अध्यापक सर्वथा कलाकार नहीं है, तो वह सर्वथा अध्यापक नहीं है। **सौंदर्यबोधी शिक्षा** का मतलब सबसे पहले अभिव्यक्ति के माध्यमों का ऐसा संगठन है कि वे मानव की भावनाओं पर सीधे प्रभाव डालते हैं और उन भावनाओं को बदलते भी हैं। और कला इस तरह के प्रचार-कार्य, इस ढंग से अपने इर्दगिर्द लोगों को भावना-

त्मक रूप से प्रभावित करने की उच्चतम अभिव्यक्ति है। यही कारण है कि कला का बड़ा महत्व है – यह व्यक्ति की सहानुभूतियों को अपने इर्दगिर्द के वातावरण के प्रति प्रेरित, विकसित और संगठित करती है; यह हमें समझने, प्रेम करने, घृणा करने तथा अन्य लोगों, जानवरों, वस्तुओं के अस्तित्व, अतीत और भविष्य के प्रति जीवंत प्रतिक्रिया महसूस करने को बाध्य करती है; और यदि हम इसके लिए पुरानी कला का उपयोग उससे उन तत्वों को लेते हुए कर सकते हैं, जो हमारे लिए उपयुक्त हैं, तो हमें अपनी कला को और अधिक विकसित करने की आकांक्षा करनी चाहिए, जो **हमारे** विचारों, **हमारे** सिद्धांतों, **हमारे** दृष्टिकोणों को व्यक्त करेगी और जो शैक्षिक रूप से विशाल महत्व की होगी।

हमारे लिए शिक्षा-प्रक्रिया में न केवल शारीरिक शिक्षा और सौंदर्यबोधी शिक्षा के तत्वों को, बल्कि अनुशासन के तत्वों को भी लागू करना आवश्यक है। मानव-इच्छा कठिनाइयों पर क़ाबू पाने से बढ़ती है। हम बच्चों को केवल मनोरंजन प्रदान करके ही विकसित नहीं कर सकते। भविष्य में उन्हें अक्सर कुछ प्रयासों और कुछ मुसीबतों के साथ बाधाओं को पार करना होगा। इसके लिए अनुशासन की आवश्यकता है, मनुष्य को अपने को क़ाबू में रखने, अपने को उस ध्येय की ख़ातिर कष्ट उठाने के लिए अर्पित करने में समर्थ होना चाहिए, जिसे वह उदात्त मानता है। अनुशासन का उच्चतम रूप आत्मानुशासन है। जब व्यक्ति का चरित्र काफ़ी दृढ़ होता है, तो वह अपने ध्येय पर पहुंचने हेतु मार्ग में आनेवाली कठिनाइयों को पार कर जाता है। पर अगर व्यक्ति में काफ़ी इच्छा-शक्ति नहीं होती, अगर उसमें अपर्याप्त आत्मानुशासन होता है (और यह वयस्कों तथा बच्चों दोनों पर लागू होता है), तो उसे सहायता की ज़रूरत है।

बच्चे के पास सहायता के दो स्रोत – बाल-मंडली और अध्यापक – होते हैं। अध्यापक एक प्रत्यक्ष नैतिक शिक्षक के रूप में वांछनीय नहीं है; सबसे अच्छा होगा यदि वह बच्चों में आत्मानुशासन के विकास के ज़रिये काम करे अथवा यदि वह पर्याप्त रूप से प्रभावी हो, यदि वह मानो बाल-मंडली का पथप्रदर्शक अध्यक्ष बन जाये और उसमें वह सचेत अनुशासन प्रेरित करे, जिससे शैक्षिक उद्देश्य की प्राप्ति में सहायता मिले। अनुशासन का स्रोत समष्टि होना चाहिए। यह हमेशा

व्यष्टि से बेहतर होता है। समष्टि के भीतर उन समूहों को पाना हमेशा संभव होता है, जो निश्चित अनुशासन के लिए आधार प्रदान कर सकते हैं। इसी नीति का अनुसरण किया जाना चाहिए। सम्मान की भावना विकसित की जानी चाहिए।

मुझे इस अभिव्यक्ति का प्रयोग करने में ज़रा भी संकोच नहीं है। बुर्जुआ क्रांतिकारी रोबेसपियेर ने कहा : "अभिजात वर्ग के पास सम्मान था, हमारे पास ईमानदारी है।" हम सर्वहाराओं के पास एक बार और सम्मान है। यह स्पष्टतः द्वंद्वात्मक प्रक्रिया है।

बुर्जुआ दुकानदार, जो अपने ग्राहक को एक इंच भी कम कपड़ा देकर नहीं ठगता, एक ईमानदार नागरिक कहलाने के पूर्णतः योग्य है।

एक अभिजात का सम्मान बिल्कुल भिन्न क़िस्म का था। चूंकि अभिजात वर्ग के पास बड़े आक्रामक कार्य पूरा करने को थे और वह एक फ़ौजी वर्ग, विजेताओं का वर्ग था, अतः उसके लिए आवश्यक था कि व्यक्ति अपने को अनुशासनबद्ध करने, अपने व्यक्तित्व को उस वर्ग के हितों के अधीन करने में समर्थ हो ताकि उसे और शक्तिशाली बनाया जा सके।

हम विराट ऐतिहासिक समस्याएं हल कर रहे हैं और व्यक्ति को आम उद्देश्यों के लिए अपनी क़ुर्बानी करने के लिए तैयार रहना चाहिए ; उनके लिए मर-मिटने के लिए तैयार रहना ही काफ़ी नहीं है – हम इससे भी ज़्यादा की मांग करते हैं, हम मांग करते हैं कि लोगों को इन उद्देश्यों के लिए जीना चाहिए और अपने जीवन का पल-पल जीना चाहिए। लेनिन ने कहा : अपने व्यवहार को सर्वहारा के मूल नैतिक मानकों के अनुरूप बनाओ। और इन मूल नैतिक मानकों के अनुसार वह चीज़ अच्छी है, जो सर्वहारा की विजय और उसके आदर्शों की ओर ले जाती है और वह चीज़ बुरी है, जो इस ध्येय को नुक़्सान पहुंचाती है।

इसी दिशा में सम्मान की भावना विकसित की जानी चाहिए।

सम्मान की भावना बच्चे के प्रारंभिक वर्षों से ही विकसित की जानी चाहिए। इस संबंध में शिक्षाप्रद कार्य संपन्न करनेवाला अवयव सामूहिक संगठन होना चाहिए और अगर किसी लड़के या लड़की ने लज्जाजनक झूठ बोला है, या सामूहिक कार्य में बाधा डाली है, या दुर्बलों के साथ बल-प्रयोग किया है, या यहूदी-विरोध प्रदर्शित किया

है, तो उन्हें उस सामूहिक संगठन के एक अयोग्य सदस्य के रूप में अपने सभी साथियों के समक्ष अपने दुष्कर्मों के लिए लज्जा महसूस करनी चाहिए। छोटे व्यक्ति को अपने ग्रुप के समक्ष अपने दोष को स्वीकार करते हुए शर्म से लाल-लाल हो जाना चाहिए।

हमारे लिए सम्मान की भावना का यही अर्थ है। यह सामूहिक अनुशासन के लिए विशाल शक्ति है। यदि अध्यापक इस तरह का अनुशासन प्राप्त कर सकता है, तो इसके ज़रिये वह बहुत कुछ प्राप्त कर लेगा।

ब्वॉय-स्काउटों के संगठनकर्ता बाडन-पावेल बच्चों में एक स्काउट के सम्मान की भावना विकसित करने में प्रशंसनीय ढंग से सफल हुए। तब तो और भी अधिक हमें अपने पायनियर आंदोलन में इस भावना को विकसित करना चाहिए। मैं उस घटना को स्मरण करता हूं, जब मैंने कुछ छोटे पायनियरों से बात की और उनसे पूछा, "क्या आपमें से कोई सिगरेट नहीं पीता?" और उन्होंने उत्तर दिया, "एक पायनियर के लिए सिगरेट पीना **लज्जापूर्ण** है।" और यह ऐसे निश्चित स्वर में, ऐसे दो-टूक ढंग से कहा गया था कि स्पष्ट था कि "लज्जापूर्ण" शब्द यों ही नहीं कहा गया था, बल्कि सिगरेट पीनेवाला वास्तव में लज्जित होगा। और लज्जा ऐसी शक्ति है, जो मानवजाति के बीच सदियों से निर्मित हुई है, लज्जा सामाजिक मांगों का परिणाम है और यह जंगली जानवर की भांति बर्बर वृत्ति को वश में रखने में समर्थ है। इसीलिए, मेरे विचार में, "सम्मान" शब्द से संकोच प्रदर्शित करने का कोई कारण नहीं है तथा हमें यह सामूहिक, वर्ग-सम्मान की भावना केवल वयस्कों में ही नहीं, बल्कि बच्चों में भी विकसित करनी चाहिए।

नये मानव को विकसित करने के मामले में हमें उस अशिष्ट व्यवहार पर विशेष ध्यान देना चाहिए, जो हमारे दैनंदिन जीवन में अब भी घटित होता है – हम अब भी स्त्रियों को पैरों तले रौंद रहे हैं। हम तब तक किसी भी तरह आगे नहीं बढ़ पायेंगे, जब तक, पहले, हम स्त्रियों को स्वतंत्र रूप से विकसित होने का सुअवसर नहीं प्रदान करते और दूसरे, परिवार शोषण का एक साधन होना बंद नहीं हो जाता। वास्तव में, कभी-कभी उस ढंग पर अपनी घृणा और रोष व्यक्त करने हेतु शब्द पाना मुश्किल हो जाता है, जिस ढंग से

कुछ कम्युनिस्ट और कोम्सोमोल के सदस्य यौन संबंधी प्रश्नों और स्त्रियों के प्रति रुख़ के बारे में बोलते हैं। इस संबंध में हममें से बहुतों के अंदर अब भी एक ऐसा बर्बर शोषक बैठा हुआ है कि आप ऐसे कम्युनिस्ट को किसी भी बुर्जुआ के साथ खड़ा कर सकते हैं। लेनिन यह जानते थे, लेनिन ने इसे कलंकित किया और हमें भी इस अपराध को कलंकित करना चाहिए।

यह कभी-कभी स्त्री-पुरुषों के बीच तथाकथित स्वतंत्र संबंधों की आड़ में प्रकट होता है। पुरुष ऐसे "स्वतंत्र" संबंधों को थोड़ा रंग देने को प्रवृत्त होते हैं – वे अब पारिवारिक जीवन की बिल्कुल परवाह नहीं करते, क्योंकि परिवार एक बुर्जुआ संस्था है – इसलिए पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए। "पानी का गिलास" सिद्धांत प्रकट होता है, यानी पारस्परिक संबंध को घटाकर मात्र शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति तक ही सीमित कर दिया जाता है। लेकिन जहां तक बच्चों का संबंध है, उन्हें तो स्त्रियां ही जन्म देती हैं न कि पुरुष, अतः पुरुष को कुछ भी नहीं झेलना पड़ता, जबकि स्त्री को बड़ी मुसीबतें झेलनी पड़ती हैं।

... इसका संबंध परिवार के बाहर संबंधों से है। परिवार के अंदर संबंधों में व्लादीमिर इल्यीच लेनिन अपनी विशाल दूरदर्शिता से इस पर ज़ोर दिया करते थे : हमने स्त्रियों को समान अधिकार प्रदान किये हैं, लेकिन हमने उन्हें घरेलू कामों से छुटकारा नहीं दिलाया है। बेशक, कोई पुरुष अपनी पत्नी की सहायता कर सकता है और यहां मित्रतापूर्ण संबंध बहुत कुछ प्राप्त कर सकता है। लेकिन इस समस्या के मौलिक हल के लिए हमारी जीवन-पद्धति का पुनर्निमाण किया जाना चाहिए। इस वजह से नये रिहायशी गृहों के निर्माण, सामुदायिक भोजन-व्यवस्था और सामुदायिक लांड्रियों की स्थापना और उन पारिवारिक नर्सरियों से छुटकारे पर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है, जो बच्चे की देखभाल के लिए बड़ी मात्रा में शारीरिक श्रम की मांग करती हैं।

घरेलू कामकाज को, जो लेनिन के शब्दों में, श्रम का सबसे विसंगठित, सबसे दासोचित रूप तथा लगायी गयी शक्ति के अर्थ में सबसे अकिफ़ायती है, मौत की सज़ा देनी चाहिए; घरेलू कामकाज को धीरे-धीरे पहले नगरों में और फिर बाद में ग्रामीण क्षेत्रों में पूर्णतः

समाप्त कर दिया जाना चाहिए। यह समाजवाद के निर्माण का एक पूर्वाधार, एक पूर्वशर्त है। बिना इसके हम स्त्रियों की बड़ी संख्या को समाजवाद के निर्माण में नहीं खींच पायेंगे और न ही हम स्त्रियों और पुरुषों के समान अधिकारों को कार्यान्वित कर पायेंगे।

...हमें अपने व्यक्तिगत रोज़मर्रा के जीवन को सामाजिक जीवन में बदल डालना चाहिए। नये मानव का विकास सामाजिक संगठन पर, मिलों और फ़ैक्टरियों, आम तौर पर सेवा कार्य से बाहर होनेवाली जीवन प्रक्रियाओं पर बड़ा निर्भर करता है। इसलिए हमारे यहां क्लबों को विशेष महत्व प्राप्त करना चाहिए। मैं इस मुद्दे पर विशेष रूप से चर्चा नहीं करूंगा, सभी ही अब इस पहलू के महत्व को समझते हैं। इस संबंध में हम पहले ही लंबा रास्ता तय कर चुके हैं। दुनिया में कहीं भी जनवादी क्लबों का विकास इतने बड़े पैमाने पर नहीं हुआ है, जितने बड़े पैमाने पर हमारे यहां हुआ है, भले ही इसे काफ़ी बेहतर बनाने की अब भी गुंजाइश है।

इसके साथ ही, हमारा सभी रिहायशी निर्माण, हमारी सांस्कृतिक नीति की दिशा ऐसी होनी चाहिए कि हम सामाजिक मानव के कारण व्यक्ति को न भुला दें। हमें हरेक व्यक्ति के अपने कमरे के अधिकार को स्वीकार करना चाहिए, जिसे व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार सुसज्जित किया जा सकता है, जहां वह अपनी एकांतता में रह सकता है; समाजवादी समाज में भी व्यक्तिगत परिवार रखने का अधिकार स्वीकार किया जाना चाहिए, जिसमें परिवार आवश्यक है; बच्चों का पालन-पोषण समाज द्वारा किया जा सकता है, पर तो भी, अगर कोई दंपति अपना व्यक्तिगत जीवन जीना चाहता है, तो उसे इसके लिए सभी सुअवसर प्रदान किये जाने चाहिए। समाजवाद का चित्रण व्यक्ति के ऐसे समाजीकरण के रूप में नहीं किया जाना चाहिए, जिसका परिणाम क्षेत्रबाह्यता जैसी कोई चीज़ हो – जिसमें व्यक्ति बाह्यीकृत हो जाये, वह अपना आपा ही खो बैठे, अपना आंतरिक जीवन जीने और अपना व्यक्तित्व विकसित करने में ही असमर्थ हो जाये। यह ग़लत है। बोल्शेविकों के बारे में फ़ुलोप-मिल्लेर की पुस्तक (बड़ी, सुंदर सचित्र पुस्तक) में कहा गया है कि लेनिनीय बोल्शेविक वैयक्तिक विकास, मौलिकता और व्यक्तिगत जीवन के अधिकार से इन्कार करते हैं और केवल लुनाचार्स्की ही

दूसरे विचार रखते हैं, लेकिन उन्होंने इस बारे में अपनी पुस्तक को बर्लिन में N.N. नाम से प्रकाशित किया, क्योंकि वह इस पर अपना नाम देने से डरते थे।

बेशक मैंने N. N. नाम से कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं की, पर मैंने हमेशा खुले तौर पर भाषणों और लेखों में यह विचार व्यक्त किया है कि समाजवाद व्यक्तित्व को चूर-चूर करने और मिटाने के बजाय उसके बड़े विकास की पूर्वकल्पना करता है। हमारे दूसरे दर्जनों साथियों ने भी यही बात कही है। हमारा हमेशा यह दृष्टिकोण रहा है कि समाजवाद के अंतर्गत व्यक्तित्व का पूर्णतम रूप से प्रस्फुटन होता है और जब मैंने इस व्याख्यान के आरंभ में पश्चिमी यूरोप में जनसाधारण की यूथचारी वृत्ति के ख़िलाफ़ प्रतिवाद किया, तो मेरे दिमाग़ में यह बात थी कि समाजवादी समाज के लिए लाक्षणिक संरचना "दानेदार" है। जिस तरह एक आर्केस्ट्रा में प्रत्येक आवाज़ का अपना सुर होता है और सभी सुर एक-साथ मिल कर सिम्फ़नी बनाते हैं, उसी तरह यहां सामान्य कंसर्ट में अपना नया योगदान प्रस्तुत करने में समर्थ अत्यंत मौलिक व्यक्तित्व विकसित हो सकते हैं।

कुछ लोग यह सवाल पूछते हैं: क्या हम पीछे नहीं जा रहे हैं? क्या हम पतन, थकान के लक्षण नहीं देख रहे हैं? हमारे उच्च स्कूलों में कुछ ऐसे घृणास्पद अड्डे हैं, जो दिखाते हैं कि विकर्षण शुरू हो रहा है, कि हम पीछे जा रहे हैं।

बेशक, हमारे बीच ऐसी प्रक्रियाएं घट रही हैं, लेकिन मेरे विचार में, वे प्रधान प्रक्रियाएं नहीं हैं, यह बात नहीं है कि वे ही मुख्य स्वर तय करतीं और हमारी समूची प्रगति को निर्धारित करती हैं। लेकिन ये चीज़ें हमारे यहां हैं। क्यों हैं? क्योंकि हम संक्रमणकालीन अवधि में रह रहे हैं।

हम अपने अस्तित्व, अपनी प्रगति के लिए प्राकृतिक शक्तियों के साथ, अपनी ग़रीबी के साथ संघर्ष कर रहे हैं। हम वर्ग-शत्रु के साथ – उन बुर्जुआ तत्वों के साथ तीव्र संघर्ष में उतर रहे हैं, जो हम पर कपटपूर्ण ढंग से प्रभाव डालने की कोशिश कर रहे हैं; हम बड़े बुर्जुआ वर्ग के उन अवशेषों या टुकड़ख़ोरों के साथ, जो बड़े ज़ोर-शोर से हमें नुक़सान पहुंचाने की कोशिश कर रहे हैं; हम कूपमंडूकता के साथ, संस्कृति-विहीनता के साथ, कूपमंडूकी संस्कृति-विरोधी रवैये

के साथ और विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में पिछड़ेपन के साथ संघर्ष कर रहे हैं। यह संस्कृतिविहीनता नासूर की तरह है, जिसकी जड़ें और अपवृद्धियां हमारे पार्टी अवयव की गहराइयों और हमारे हृदय तक जाती हैं। इस सबके साथ हम निर्मम और अथक संघर्ष कर रहे हैं। क्रांतिकारी संघर्ष की पहली अवधि में शत्रु हमारे सामने था, हम उससे लड़े, घायल हुए, हममें से बहुत-से लोग मृत्यु को प्राप्त हुए, लेकिन उस समय सब कुछ आमने-सामने था, सब कुछ साफ़ था। अब वैसा नहीं है। इतिहास ने दूसरा मोड़ लिया है और हमसे केवल विनाश की ही नहीं, बल्कि निर्माण की भी मांग करता है। उसने ये मांगें हमारे युवजनों से भी की है। क्या हम निर्माण करना जानते हैं? नहीं, हमें और भी लंबा तथा कठिन अध्ययन करना चाहिए। फिर भी, हम सभी ही को अध्ययन का सुअवसर नहीं प्रदान कर सकते। प्रारं-भिक स्कूलों से हम उच्च स्कूलों और मज़दूर संकायों को विद्यार्थियों की कुल संख्या का आधा से कुछ अधिक भेजते हैं, लेकिन अपनी निर्धन-ता की वजह से हम उनके एक बड़े भाग को आगे शिक्षा दिये बिना ही छोड़ देते हैं और अपूर्ण शिक्षा के साथ यही लोग अधिकांशतः अपने को बेकार पाते हैं। वे लोग, जो अब भी पढ़ रहे हैं, बुरी परिस्थि-तियों में पढ़ रहे हैं – उनके पास कोई पाठ्यपुस्तकें नहीं हैं, वे बुरी तरह सज्जित विद्यालयों में पढ़ते हैं, उनकी प्रारंभिक तैयारी ठीक से नहीं होती और अगर उन्हें कोई वज़ीफ़ा मिलता है, तो वह नगण्य-सा ही मिलता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि विद्यार्थियों को उन पर लादे गये कार्यों को वहन करना कितना कठिन है। अध्ययन करना और साथ ही सामाजिक दायित्वों को भी निभाना पड़ता है, क्योंकि हमें अपने वर्ग के साथ संपर्क नहीं खोना चाहिए, अन्यथा प्रक्रिया के अंत में हमारे पास ऐसा दिशा-विहीन, वर्गच्युत "विशेषज्ञ" होगा, जिसका मज़दूर और किसान जन-समुदाय से कोई संपर्क नहीं रह गया होगा। यह सभी विद्यार्थियों के लिए अतिरिक्त कठिनाइयां पैदा करता है। और अंततः जब उन्हें काम मिल जाता है, तो क्या यह हमेशा वही काम होता है, जिसे वे करना चाहते हैं, क्या यह व्यक्ति-विशेष के लिए एकदम उबाऊ नहीं हो सकता है? अक्सर उनके भाग्य में किसी दफ़्तर में क्लर्क होना, कोई तुच्छ काम करना – और वही काम रोज़-रोज़ करना – बदा होता है।

कार्य के साथ यह असंतोष और उबाऊपन नौजवानों को बोहेमियनवाद*, शराबख़ोरी और दुराचारिता की ओर इस पुट के साथ धकेलते हैं कि आख़िरकार हम ऊंचे लोग हैं, हम उस पुराने टुट-पुंजिया-बुर्जुआ वातावरण में नहीं रह सकते, हम उच्चतर स्वतंत्रता तथा नैतिकता से मुक्ति के रास्ते की तलाश कर रहे हैं और इस तरह की सूक्तियां बोहेमियन की "नयी बाइबिल" हैं। और वहां, जहां वे बोहेमियनवाद तक नहीं उठ सकते क्योंकि उनकी शिक्षा इस चीज़ के लिए भी पर्याप्त नहीं है, तो वे सीधे गुंडागर्दी, मक्कारी, शराबख़ोरी और खुले तथा छिपे तमाम तरह के मूर्खतापूर्ण कामों पर उतर आते हैं; यहां वे उपद्रव करते हैं क्योंकि वे उब गये होते हैं, वे परिस्थितियों का सामना नहीं कर सकते क्योंकि वे अपने को आगे बढ़ते इस समाज का अंग नहीं महसूस करते, वे अपने को उपेक्षित महसूस करते हैं।

इसका अर्थ यह है, साथियो, कि नैतिक और सांस्कृतिक रूप से हम प्रत्येक लड़ाई में कम घायल या हताहत लोग नहीं खो रहे हैं। लड़ाई के पहले जनरल के सामने जाकर यह नहीं कहा जा सकता, "घायलों या मृतकों के बिना लड़ाई जीत जाओ"। यहां भी वही बात लागू होती है: नैतिक रूप से पतित लोगों को खोये बिना हम आगे नहीं बढ़ सकते।

... मित्रता वह महान कुंजी है, जो अनेकानेक बंद संदूक़ों को खोल देती है। अपना संतुलन खोये व्यक्ति को समयोचित समर्थन देना, उसे सही करना, फटकारना, उसे अपने साथियों के बीच "ताड़ना देना", उस दलदल से बाहर निकालना, जिसमें वह धंसता जा रहा है – यही हमें करने की आवश्यकता है। हमें एक-दूसरे के प्रति देखभाल करने की आवश्यकता है। समष्टि का स्वस्थ और नैतिक रूप से मज़बूत हिस्सा उस हिस्से के प्रति ज़िम्मेदार है, जो डूब रहा है, और अक्सर इस वजह से डूब रहा है कि वह बुरी परिस्थितियों में है।

"संस्कृति में क्रांति" के नारे की घोषणा का अर्थ नये मानव के निर्माण की दिशा में हमारी गति को अत्यधिक तेज़ करना है। इसका अर्थ उन सिद्धांतों तथा विधियों का सावधानीपूर्ण पुनर्मूल्यांकन

---

* अपने को सामाजिक नियमों से स्वतंत्र माननेवाले व्यक्ति का आचार-व्यवहार (विशेषकर कलाकार, अभिनेता, आदि)। – **अनु०**

भी है, जिनका अब तक हम अनुसरण करते रहे हैं।

...आदमी देर तक पैरों के बल बैठा रहे, तो वे सुन्न हो जाते हैं और वह अपने पैरों को महसूस नहीं करता, परंतु जब वह खड़ा होता है, तो रक्त के पुनः संचरण की वजह से उनमें झिनझिनी पैदा हो जाती है। यह सुखद नहीं लगता, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि पैरों में रोग शुरू हो रहा है, बल्कि उल्टे यह दिखाता है कि सुन्न पड़े पैर ठीक हो रहे हैं। ठीक इसी तरह, सांस्कृतिक कार्य के क्षेत्र में जिस आलोचना ने अपनी आवाज़ उठानी शुरू की है, वह दिखाती है कि हमारा सोवियत, हमारे मज़दूरों का रक्त पुनः स्पंदित होने लगा है और कुछ हद तक हमारे निर्माण-कार्य का यह सुन्न पड़ा क्षेत्र अब हमारे शक्तिशाली सोवियत जीवन की सामान्य प्रणाली में खुल रहा है।

सोवियत स्कूल के शैक्षिक कार्यभार*

समाजवादी क्रांति तथा शिक्षा के कार्यभार

हम समाज के मूलभूत रूपांतरण की प्रक्रिया से गुज़र रहे हैं। समाज का यह रूपांतरण – समाजवादी क्रांति, "पृथ्वी पर न्याय की स्थापना" – लंबे अर्से से मानव-चिंतन पर हावी रहा है। और समाजवादी क्रांति के बारे में हमारे मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारों के साथ ऐसी अनेकानेक प्रवृत्तियां भी रही हैं, जिन्होंने यह उल्लेख किया कि समाज – ख़ास तौर से बुर्जुआ समाज – की संरचना कितनी असंतोषजनक है तथा मनुष्य कितना अनैतिक, असौंदर्यबोधी और अपूर्ण है। मैं यहां इस बहुत दिलचस्प प्रश्न के ब्योरे में नहीं जाऊंगा कि इस अवधारणा की प्रस्थापना कैसे की जाती है कि मनुष्य कैसा होना चाहिए। मैं तो सिर्फ़ यही उल्लेख करूंगा कि अन्य सामाजिक सुधारकों (बड़े और छोटे, व्यक्तिगत और जन-आंदोलनों) ने अक्सर माना है कि जीवन का सुधार बच्चे और वयस्क के रूप में मनुष्य के पुनर्निर्माण के ज़रिये, विशेष शिक्षा के माध्यम से लाया जा सकता है और लाया जाना चाहिए; उनके विचार में, एक पूर्ण मनुष्य सामाजिक जीवन के आगे विकास और सुधार की पूर्वशर्त है।

हम उदारतावादियों और यूटोपियाइयों के इस दृष्टिकोण को बिल्कुल अस्वीकार करते हैं। हमने कहा कि उस समाज के भीतर, जिसमें हम रह रहे हैं, मानवजाति का रूपांतरण सौंदर्यशास्त्रीय उपदेशों या नैतिक विधियों से नहीं प्राप्त किया जा सकता, भले ही शासक वर्गों द्वारा इनकी अनुमति क्यों न दी जाये। हमारी स्कीम दूसरी ही है: एक वर्ग के रूप में सर्वहारा, पूंजीवाद द्वारा निर्धनीकृत वर्ग, वह वर्ग, जो संपूर्ण जीवन और मानवजाति के अस्तित्व के बुद्धिसंगत गठन के लिए दुनिया के सभी सर्वहाराओं की एकता के विचार की समझ

---

*संक्षिप्त रूप में प्रकाशित। – **सं०**

पर आसानी से पहुंच सकता है – यह वर्ग स्वयं किसी भी रूप में पूर्ण न होते हुए भी वह एकमात्र क्रांतिकारी शक्ति है, जो अपने हाथों में सत्ता ले सकती है और सभी अन्य शक्तियों को अपनी इच्छा तथा आदेशों का पालन करवाने के लिए विवश कर सकती है तथा फिर जीवन के पुनर्संगठन के लिए आगे बढ़ सकती है। मार्क्स ने इसे इस रूप में व्यक्त किया: सर्वहारा की सामाजिक क्रांति एक लंबी कालावधि में होगी; कुछ दशकों तक सर्वहारा को न केवल अपने वातावरण को बदलना होगा, बल्कि अपने आपको भी बदलना होगा और प्रक्रिया के अंत में, समाजवादी व्यवस्था की स्थापना के समय सर्वहारा वह मानव-रूप बन जायेगा, जो जीवन-निर्माण के लिए अभी विद्यमान रूप से काफ़ी उपयुक्त होगा।

समाजवादी से कम्युनिस्ट संरचना में संक्रमण के लिए आवश्यक समय को काफ़ी कम करने संबंधी शैक्षिक प्रक्रिया के बारे में लेनिन की शिक्षाओं में अत्यंत दिलचस्प और उपयोगी निर्देश पाये जा सकते हैं। व्लादीमिर इल्यीच ने ज़ोर दिया कि कम्युनिस्टों और सर्वहारा के लिए यह सोचना एक भ्रम, एक घातक भूल होगी कि समाजवाद का उद्देश्य केवल औपचारिक मानव संबंधों, क़ानूनों को बदलना है. या मशीनों से शुरू करके और रिहायशी परिस्थितियों तथा रोज़मर्रा जीवन के कार्यों पर आते हुए लेकिन स्वयं मानव के बारे में प्रश्न को पूर्णतः नज़रअंदाज़ करते हुए केवल भौतिक संबंधों को बदलना है। व्लादीमिर इल्यीच ने ज़ोर दिया कि वह निर्माण-कार्य, जो स्वयं में मनुष्य में परिवर्तन नहीं लाता, मूलतः उद्देश्यविहीन, अर्थविहीन है, कि सर्वहारा द्वारा प्राप्त की जानेवाली राजनीतिक व आर्थिक सफलताओं की दृष्टि से भी उसे अपने हाथों में सत्ता लेने के तुरंत बाद सांस्कृतिक क्रांति में जुट जाना चाहिए। क्योंकि राजनीतिक चेतना का दृढ़ीकरण और किसानों तथा मेहनतकश बुद्धिजीवियों पर सर्वहारा के प्रभाव की सीमा मज़दूर जनसाधारण द्वारा प्राप्त राजनीतिक शिक्षा व संस्कृति के स्तर पर निर्भर करती हैं।[1]

हमारा स्थान ग्रहण करनेवाली नयी पीढ़ियों की राजनीतिक शिक्षा ही सब कुछ नहीं है, आर्थिक कार्यभार भी मानव की ओर ध्यान देने की मांग कोई कम अडिग रूप से नहीं करते। वयस्कों की पुनर्शिक्षा और युवजनों तथा बच्चों की शिक्षा आगे की आर्थिक व राजनीतिक

सफलताओं की पूर्वशर्त हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि वही मानव जीवन का रूपांतरण पूरा करती हैं, जो सर्वहारा के समूचे आंदोलन को सच्चा अर्थ प्रदान करता है। इस अर्थ में, शैक्षिक प्रक्रिया एक मुख्य स्थान प्राप्त करती है।

लेनिन सही थे, जब उन्होंने कहा कि हमारी पीढ़ी को पुराने पूर्वाग्रहों और जीवन की कुरूपताओं की कमर तक गंदगी में खड़ा रहते हुए ही मानव-जीवन को रूपांतरित करना पड़ेगा।[2] हम अपाहिज लोग हैं, हम अब भी समाजवादी नहीं हैं, बल्कि हम इस दिशा की प्रवृत्तियां देख रहे हैं, तो भी बड़े प्रयास से हम अपने व्यवहार को उस चीज़ के अनुरूप बना सकते हैं, जिसे हम चाहते हैं।

वे लोग, जिन्होंने अपने जीवन के बड़े हिस्से या मात्र अपनी युवावस्था को भी पुरानी व्यवस्था में बिताया है, अपने को सभी प्रकार की अहम्मन्यताओं तथा व्यक्तिवादी टुटपुंजिया-बुर्जुआ जीवन के अन्य आकर्षणों से बड़ी कठिनाई से मुक्त कर पाते हैं।

मानव के ऐसे देदीप्यमान उदाहरण, जैसा कि लेनिन थे, अपनी दृढ़ता और सामंजस्य से हमें चकित कर देते हैं, एक ऐसी चीज़, जो कम्युनिस्टों के बीच भी, सर्वहाराओं के बीच भी औसत क़िस्म में विरले ही मिलती है। मामला इस बात में निहित है कि जीवन के बड़ी हद तक अव्यवस्थित वातावरण में पली पीढ़ी को यथासंभव तेज़ी से ऐसे लोगों के रूप में शिक्षित किया जाये, जिनके आचरण तथा कार्य की आदतें और सामान्य शारीरिक गठन हमारे द्वारा कल्पित समाजवादी व्यवस्था की मांगों के अनुरूप हों।

क्रांति के बावजूद शिक्षा की प्रक्रिया अब भी कठिनाइयों से भरी हुई है। हम इस बात की गारंटी नहीं कर सकते कि आगामी पीढ़ी, हमारी सबसे निकटवर्ती पीढ़ी अपने को जीवन की पुरानी परिस्थितियों से स्वतंत्र कर पायेगी, क्योंकि हमारी संक्रमणकालीन अवधि में वे परिस्थितियां उन विभिन्न द्वीपों या द्वीपिकाओं के चारों ओर तूफ़ानी तथा अब भी काफ़ी गंदे समुद्र की तरह हैं, जिन पर समाजवादी व्यवस्था पहले ही क़ायम की जा रही है। शिक्षा की कठिनाइयां विशाल हैं।

मानव-इतिहास या मानव-सभ्यता में शिक्षा-प्रक्रिया का सामान्यतः क्या स्वरूप है, इसका क्या अर्थ है और इस अर्थ को कैसे हमारे हाथों में बदला जा रहा है?

मनुष्य सभी जानवरों से अपनी उस भूमिका द्वारा भिन्न होता है, जो सामाजिक रूप से प्राप्त तथा सामाजिक रूप से हस्तांतरित अनुभव द्वारा अदा की जाती है। पांच हज़ार वर्ष की अवधि में मनुष्य किसी भी दूसरे जानवर की भांति शरीर-रचना और शरीर-क्रिया-वैज्ञानिक रूप से बिल्कुल नहीं बदला है। यदि आप, मिसाल के लिए, लंदन में इसी साल जन्मे एक बच्चे को लें और उसे आस-पास की सभ्यता से पूर्णतः अलग करके पालें-पोसें, तो आप उससे एक ऐसा अपूर्ण जानवर ही तैयार करेंगे, जो अन्य जानवरों से जीवन के लिए कम उपयुक्त होगा, क्योंकि जानवर सहज प्रवृत्तियों की बड़ी विरासत पाते हैं, जो मनुष्य के बारे में नहीं कहा जा सकता। लेकिन यदि आप पांच हज़ार साल पहले के अपने जीवन के चरमोत्कर्ष पर पहुंचे मानव और आज के उसी आयु के मानव अथवा एक बर्बर और समकालीन अंग्रेज़ की तुलना करें, तो अंतर बहुत बड़ा होगा।

यह अंतर ज्ञान में, प्रकृति पर शक्ति में है, जो भाषा, विगत सभ्यता के परिणामों, आदि की पारंगति से शुरू करके शिक्षा प्रक्रिया में प्राप्त होते हैं।

मानव-समाज को युग-युगों से संचित विशाल पूंजी प्राप्त है, जो निरंतर बढ़ती रहती है। प्रत्येक नयी पीढ़ी उस उच्च स्तर का उपयोग करती है, जिस पर वह आ पहुंचती है, इस तरह वह आनुवंशिकता के ज़रिये नहीं, बल्कि उस पारंगति के ज़रिये एक विशाल विरासत प्राप्त करती है, जो जानवरों के साथ नगण्य भूमिका अदा करती है, पर मनुष्य के लिए सब कुछ होती है। यह पीढ़ियों के बीच एक अत्यंत दिलचस्प और मज़बूत संबंध क़ायम करता है। यह इतिहास की धारा की तरह है, जिसमें अधिकाधिक नये लोग पदार्पण करते रहते हैं, लेकिन जो स्वतः एक है क्योंकि ये लोग स्कूलों, पुस्तकालयों और आर्थिक जीवन व संस्कृति के संपूर्ण संगठन, आदि के ज़रिये पुराने को ग्रहण करते हैं और स्वयं नये का निर्माण करते हैं।

पर मानव-समाज में नयी-नयी आनेवाली, यह साफ़, ताज़ी, सद्यः जन्मी मानव-सामग्री, जो पुरानी, मुर्झायी पत्तियों का स्थान ग्रहण करती है, विगत की विशाल उपलब्धियों को अपनाते हुए विगत के रोगों को भी अपनाती है। अगर आदमी कुटिल, अपाहिज समाज में पैदा होता है, तो वह समाज उसे अपनी व्यवस्था के अधीन

करने में उसे अपाहिज बना देता है: वह विगत के सभी पूर्वाग्रहों, सभी कुरूपताओं, सभी दोषों को ग्रहण कर लेता है। प्रत्येक नयी पीढ़ी को न केवल विगत की संचित निधियों के लाभ प्राप्त होते हैं, बल्कि वह इसके रोगों (मेरा आशय सामाजिक रोगों से है न कि शारीरिक रोगों से) से भी संदूषित हो जाता है। हमारा कार्यभार मानवजाति की जीवित धारा में एक शक्तिशाली फ़िल्टर या – यदि हम इस मानव-धारा की प्रकाश-धारा से तुलना करें – एक ऐसा प्रिज़्म खड़ा करना है, जो नयी मानव-सामग्री को अपने को सभ्यता द्वारा निर्मित सभी रचनात्मक चीज़ों से लैस करने में समर्थ बनाये, लेकिन जो सामाजिक कुरूपताओं, पूर्वाग्रहों, तरह-तरह के रोगों को न गुज़रने दे और मानव-धारा को शोधित रूप में आगे बढ़ने दे।

हमारे स्कूलों का दोहरा कार्य है: एक ओर, नयी संस्कृति पर, नये विज्ञान पर, और सबसे पहले सर्वहारा विज्ञान, मार्क्सवाद पर, सर्वहारा संगठन पर, हमारे कम्युनिस्ट विचारों पर ज़ोर देते हुए विगत में प्राप्त संपूर्ण ज्ञान को हस्तांतरित करना; दूसरी ओर, पुराने विचारों को बच्चों तक पहुंचने से रोकना, इस बात की कोई कोर-कसर न छोड़ना कि बच्चे उन सभी चीज़ों से संदूषित न होने पायें, जिनके ख़िलाफ़ हम पुराने समाज में संघर्ष कर रहे हैं।

...हमें शिक्षाशास्त्र के संपूर्ण इतिहास तथा दुनिया में इसकी वर्तमान दशा में पारंगत होना चाहिए। लेकिन हम भली-भांति जानते हैं कि इसके निर्देशों के लक्ष्य सामान्यतया उन लक्ष्यों के बिल्कुल विपरीत हैं, जिन्हें हमने अपने समक्ष निर्धारित किया है; अधिक से अधिक हम वहां अराजनीतिक स्कूल, "स्वतंत्र बच्चे" का स्कूल[3] पाते हैं, जो हमारे स्पष्टतः वर्गीय स्कूल से किसी भी रूप में संबद्ध नहीं है। हमें इस भवन को ऊपर से नीचे तक अपने हाथों से और भौतिक साधनों की कमी के होते हुए निर्मित करना पड़ा। उन निर्देशों को, जो हमारे नेताओं ने हमें दिये हैं, एक पैम्फ़्लेट के रूप में प्रकाशित किया जा सकता है और हम इनका उपयोग एक कुतुबनुमा की भांति करते हैं। पर इतने विशाल भवन को खड़ा करने के लिए अकेले यह कुतुबनुमा ही काफ़ी नहीं है।

हमारे पास अब भी केवल इस चीज़ के लिए ही पर्याप्त साधन नहीं हैं कि हम सभी बच्चों को शिक्षा दे सकें, बल्कि हमारे पास इस

चीज़ के लिए भी पर्याप्त साधन नहीं हैं कि अपने स्कूलों को किसी समुचित मानक पर निर्मित कर सकें। यहां तक कि हमारे प्रारंभिक स्कूल भी सभी बच्चों के लिए पूरे नहीं पड़ते और दूसरे चरण के स्कूल तो केवल एक नगण्य प्रतिशत के लिए ही पूरे पड़ते हैं। हम अब प्रत्येक विद्यार्थी के संपूर्ण स्कूली जीवन पर उस रक़म का ५० प्रतिशत ख़र्च कर रहे हैं, जो अभिशप्त ज़ारशाही रूस में ख़र्च की जाती थी; हम अपने प्रारंभिक स्कूलों के अध्यापकों को उनके युद्ध-पूर्व नगण्य वेतन का ७५ प्रतिशत तथा दूसरे चरण के स्कूलों में ५० प्रतिशत देते हैं। इससे स्पष्ट है कि हमारे सामने कितनी बड़ी कठिनाइयां, कितनी भयंकर बाधाएं खड़ी हैं। इसमें किसी का कोई दोष नहीं है, क्योंकि अत्यल्प राजकीय साधनों को किसी और ढंग से आवंटित नहीं किया जा सकता है।

सर्वहारा अधिनायकत्व के काल में शिक्षा के उद्देश्य

प्रशिक्षण नैतिक शिक्षा से अविच्छेद्य रूप से जुड़ा हुआ है। प्रशिक्षण और नैतिक शिक्षा दोनों का कार्यभार एक शब्द **शिक्षा** में सम्मिलित है। रूसी शब्द **ओब्राज़ोवानिये** और जर्मन शब्द Bildung इस प्रक्रिया के अर्थ को बहुत सटीक ढंग से संप्रेषित करते हैं। बच्चों को किसी ऐसी चीज़ के रूप में देखा जाता है, जिसने अभी अपना अंतिम "रूप" ग्रहण नहीं किया है, मानो वह कोई ऐसी अर्ध-तैयार वस्तु या कोई कच्चा माल हो और उसे अंतिम रूप दिया जाना हो। यदि हमें मार्क्स की इस प्रस्थापना से शुरू करना चाहिए कि एक आदमी का काम, एक साधारण दस्तकार का काम भी अत्यधिक बुद्धिमान ऊदबिलावों और दक्ष मधुमक्खियों से इस अर्थ में भिन्न होता है कि आदमी को काम करते हुए अपने कार्य के उद्देश्य का पहले से ही अनुमान होता है।[4]

शिक्षा-प्रक्रिया भी एक श्रम-प्रक्रिया है और इसलिए यह जानना आवश्यक है कि आप किस चीज़ का प्रयत्न कर रहे हैं, आप अपनी सामग्री से क्या बनाना चाहते हैं। अगर कोई सुनार कुछ सोने को नष्ट कर देता है, तो उसे पुनः ढाला जा सकता है। यदि बहुमूल्य पत्थर नष्ट हो जाते हैं, तो वे रद्दी माल बन जाते हैं। लेकिन हमारी नज़रों में बड़े से बड़ा हीरा भी उतना मूल्यवान नहीं हो सकता, जितना

कि एक नवजात मानव है। मानव को नष्ट करना या तो एक बड़ा अपराध है या अनजाने किया गया बड़ा नुक़्सान। इस बहुमूल्य सामग्री पर इस पूर्वानुमान के साथ कुशलतापूर्वक काम करना चाहिए कि आप उससे क्या बनाना चाहते हैं।

हम किस तरह के मानव का निर्माण करना चाहते हैं?

शिक्षा के क्षेत्र में महान आदर्शवादियों ने, जो कुछ हद तक हमारे पूर्ववर्ती थे और जिनसे हम अंतिम आदर्श की प्राप्ति के संबंध में जुड़े हुए हैं, शिक्षा के कार्यभार को निम्नलिखित रूप में निर्धारित किया: **सामंजस्यपूर्ण मानव का निर्माण किया जाना चाहिए,** अर्थात एक ओर, उसकी आवश्यकताएं विकसित (और पूरी) की जानी चाहिए और दूसरी ओर, उसकी सभी योग्यताएं विकसित की जानी चाहिए। यह करते समय इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए कि ये आवश्यकताएं तथा योग्यताएं इस ढंग से संगठित की जायें कि वे एक-दूसरे को बाधा न पहुंचायें, कि अंतिम परिणाम एक पूर्ण मनुष्य होना चाहिए, वैसे ही जैसे एक मशीन बनाते समय हम इस बात का ध्यान रखते हैं कि उसका एक अंग दूसरे को बाधा न पहुंचाये, कि उसकी कारगरता यथासंभव अधिक हो।

आम तौर से ऐसा सोचा जाता है कि विशेषीकरण इस उद्देश्य में बाधक है। मैं यह नहीं मानता, क्योंकि अगर आदमी विशेषीकरण पर इतना लट्टू हो जाये कि उसकी मानवता ही नष्ट हो जाये, तो यह रोग, मूर्खता है। लेकिन अगर विशेषीकरण उस भूमिका को व्यक्त करता तथा सहायता पहुंचाता है, जिसे व्यक्ति-विशेष समाज में अदा कर रहा होता है, तो यह सामंजस्यपूर्ण व्यक्तित्व के आदर्श से नहीं टकराता। मनुष्य को सामान्य शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, उसे ऐसा व्यक्ति बनना चाहिए, जिसके लिए कोई भी मानवीय चीज़ परायी न हो। पर इसमें कोई विशेषज्ञता अथवा, योग्यताओं के अनुसार, कई विशेषज्ञताएं जुड़नी चाहिए, यहां कोई परस्पर-विरोध या टकराव नहीं है।

लेकिन सामंजस्यपूर्ण मानव और हमारे इस युग के बीच टकराव तो है ही। आज हम एक संक्रमणकालीन अवधि के लिए, संघर्ष के लिए, बहुत उग्र संघर्ष के लिए शिक्षित कर रहे हैं, जो सामंजस्यपूर्ण वातावरण नहीं प्रदान करता। हम महान शिक्षाशास्त्रियों के आदर्शों

का उत्तर निम्नलिखित रूप में दे सकते हैं (और फ़िख़्ते ने इसे समझा[5]) : सामंजस्यपूर्ण मानव के निर्माण पर अपने विचार को एकग्र करना व्यर्थ है, क्योंकि वह असामंजस्यपूर्ण समाज में रह रहा होगा। यहां एक टकराव होगा और इसका परिणाम यह होगा कि या तो मनुष्य को समाज छोड़ कर संन्यासी बनना पड़ेगा (क्योंकि इस समाज में हर चीज़ ही उसे सदमा पहुंचायेगी, उसे अपनी योग्यताएं प्रकट करने की संभावनाओं से वंचित करेगी), या वह किसी डॉन क्विग्ज़ोट की तरह समाज में जीवन के तेज़ कोनों पर चोट खायेगा, उन कार्यभारों को समझने में असमर्थ होगा, जिनके लिए ऐसी कुछ योग्यताएं प्रदर्शित की जानी चाहिए, जो सामंजस्य से लेशमात्र भी मेल नहीं खातीं।

बेशक, हम अपने समक्ष संन्यासी बनाने के कार्यभार नहीं रख रहे हैं, चाहे वे उच्च शिक्षित संन्यासी ही क्यों न हों। दूसरी तरफ़ से देखा जाये तो एक सामंजस्यपूर्ण मनुष्य संघर्ष करने, युद्ध करने नहीं जा सकता। क्या हम वर्तमान समय में मनुष्य को इस ढंग से तैयार कर सकते हैं कि वह आम तौर पर युद्ध से नफ़रत करे, तोलस्तोयी शांतिवादी विचार रखे? जब हमारा सामना उदारतावादी शिक्षाशास्त्रियों से होता है तो अक्सर हम उनसे यह सुनते हैं: "आप बच्चों को वर्ग-द्वेष की भावना में शिक्षित करना चाहते हैं, बच्चों को निर्मम चीज़ों के बारे में नहीं बताना चाहिए, लोगों से द्वेष करने हेतु बच्चों को विषाक्त नहीं बनाना चाहिए, इसे स्वयं जीवन को करने दें, जब यह आवश्यक होगा, लेकिन अभी इससे बच्चे की रक्षा की जानी चाहिए।"

सामंजस्यपूर्ण समाज में सामंजस्यपूर्ण मानव को रक्तपात या निर्ममता की कोई ज़रूरत नहीं होती। लेकिन यदि हम निश्चित समय को गंवाकर बच्चे को एक योद्धा तथा विशिष्ट व्यक्ति के रूप में तैयार करने में असफल हो जायें, तो इससे काफ़ी चीज़ों के निर्माण में बाधा पहुंचेगी, **यह सामंजस्यपूर्ण समाज के निर्माण में बाधक होगा।** हमारे वर्ग-शत्रु तथा अन्य हज़ारों बाधाओं पर सघन प्रयास और संघर्ष के ज़रिये क़ाबू पाया जाना चाहिए और हमें सघन संकल्प, सघन आलोचनात्मक योग्यताओं से संपन्न ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है, जो विशाल प्रयास करने और बड़ा आत्म-त्याग करने में समर्थ हो। हम सामंजस्य के उद्देश्यों को मन में पहले से ही सोच लेते हैं, लेकिन

संघर्ष की प्रक्रिया को और ही तरह के लोगों की ज़रूरत होती है। संघर्ष की प्रक्रिया से गुज़र रहे समाजवाद और विजयी समाजवाद के बीच अंतर किया जाना चाहिए। विजयी समाजवाद – यह एक वर्गहीन समाज है[6], लेकिन संघर्ष की प्रक्रिया से गुज़र रहा समाजवाद उत्पीड़ित मानवता है, जो अपने वर्ग-शत्रुओं के जीवित शरीरों और जीवित चेतना से बने अपने जीवित बंधनों को तोड़ रही होती है।

हम ऐसे मनुष्य को शिक्षित करना चाहते हैं, जो हमारे समय का सामूहिकतावादी होगा, जो व्यक्तिगत हितों की अपेक्षा सामाजिक जीवन द्वारा रहेगा। नये नागरिक को समाजवादी निर्माण के राजनीतिक तथा आर्थिक संबंधों की सहानुभूति से ओत-प्रोत होना चाहिए, उनका उच्च मूल्यांकन करना चाहिए, उनमें अपने जीवन का उद्देश्य और सार देखना चाहिए। इससे उत्पन्न उसके कार्यकलाप, वे चाहे कोई भी दिशा ग्रहण करें – चाहे संगठन के क्षेत्र में या विशुद्धतः शारीरिक श्रम के क्षेत्र में – हमेशा इसी उत्साह से ओत-प्रोत होने चाहिए, संपूर्ण समष्टि के अनुरूप होने चाहिए। आदमी को "**हम**" के रूप में सोचना चाहिए, उसे इस "**हम**" का एक जीवंत, उपयोगी और सुसंगत अंग बनना चाहिए। अपने सभी व्यक्तिगत स्वार्थों को दरकिनार कर देना चाहिए। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि हम स्वाभाविक मानव इच्छाओं, **अपनी** आवश्यकताएं पूरी करने की इच्छाओं, व्यक्तिगत सहज-प्रवृत्तियों को नष्ट करना चाहते हैं। हम तो सिर्फ़ यही कहते हैं कि सामूहिक जीवन की मांगों को वरीयता दी जानी चाहिए।

इसके साथ ही हम लोगों को झुंड में बदलने, वैयक्तिकता को विलयित करने, मौलिकता को समाप्त करने के लिए प्रयास नहीं कर रहे हैं। बिल्कुल नहीं! हम चाहते हैं कि आदमी का व्यक्तिगत चरित्र सामूहिक आधार पर पूर्ण रूप से विकसित हो। यह समाज में श्रम के व्यापक विभाजन की गारंटी है। केवल वह समाज ही, जो अपने संघटक अलग-अलग व्यक्तियों की विविधता से भरा हो, जो स्पष्ट रूप से व्यक्त व्यक्तियों से बना हो, वास्तव में सुसंस्कृत, समृद्ध समाज है। यूथचारी व्यक्तित्व पर बोनापार्तवाद, सभी तरह की व्यक्ति-पूजा आसानी से हावी हो जाती है। यूथचारी व्यक्ति उन सभी चीज़ों के प्रति आलोचनात्मक रुख़ नहीं रख सकता, जिन्हें जीवन उसके

मामने पेश करता है। हमें वैयक्तिक मौलिकताओं, प्रतिभाओं, उद्देश्य-पूर्ण कौशलों को पूर्ण क्षेत्र प्रदान करना चाहिए, जिन्हें व्यक्ति-विशेष ने अपने लिए चुना है और जिन्हें समाज ने उसके लिए निर्दिष्ट किया है। तब हमें क्या करना चाहिए? मनुष्य को हमारी महान संक्रमणकालीन अवधि के अनुरूप वस्तुतः शिक्षित करना चाहिए।

शारीरिक शिक्षा के बारे में

द्वंद्वात्मक भौतिकवाद, जिसका हम अनुसरण कर रहे हैं, यथा-तथ्य शैक्षिक ज्ञान के आधार पर हमारे शिक्षाशास्त्र को निर्मित करने के लिए हमें कर्त्तव्यबद्ध करता है। बाल-वैज्ञानिकों से हमें बाल-अवयव की प्रकृति, इसके विकास और इस विकास की स्वतःस्फूर्त प्रवृत्तियों के बारे में पूर्णतः स्पष्ट निर्देश प्राप्त करने चाहिए। हमें शरीर-रचना विज्ञान, शरीर-क्रिया विज्ञान और सामाजिक-जीवविज्ञान की दृष्टि से बाल-अवयव के बारे में यथातथ्य ज्ञान की आवश्यकता है; तब यह साफ़ हो जायेगा कि आठ साल का बच्चा किस मानसिक कच्चे माल के साथ स्कूल आया है और यह कच्चा माल किस स्रोत से प्राप्त हुआ है। यह सब जीववैज्ञानिक और समाजवैज्ञानिक बाल-विज्ञान का कार्य है।

यह बिल्कुल साफ़ है कि जब हम बच्चों से संबंधित प्रश्न तय करते हैं, तो उनके शरीर-रचना वैज्ञानिक और शरीर-क्रिया वैज्ञा-निक पहलू को सर्वप्रथम स्थान प्राप्त होना चाहिए। बच्चे का शारीरिक गठन सभी बाक़ी बातों का आधार होना चाहिए। बच्चे के विकास के दौरान उचित स्वास्थ्य-रक्षा के बिना, उचित रूप से संगठित शारी-रिक व्यायाम और खेल-कूद के बिना हम स्वस्थ पीढ़ी कभी नहीं प्राप्त कर पायेंगे। इस मामले को "स्वयं जीवन" पर छोड़ देकर, जो भयानक अव्यवस्था की स्थिति में है, बचपन में स्वास्थ्य-रक्षा पर कम ध्यान देकर हम एक बड़ा अपराध कर रहे हैं।

हमें इन मामलों के संपूर्ण महत्व को समझना आवश्यक है। बच्चे के सही यौन विकास के बारे में सोचा भी नहीं जा सकता, यदि वह दमघोंटू वातावरण में पलता है, गंदगी में रहता है और इस तरह वह अपने विकास में अवरुद्ध तथा अस्वस्थ है। अच्छी कार्य-क्षमताओं से संपन्न पीढ़ी का पालन करने के बारे में सोचा भी नहीं जा सकता,

यदि उस पीढ़ी के लोग थुलथुल मांस-पेशियां, अर्धविकसित हड्डियां और ख़राब दिल रखने जा रहे हैं। इस बीच में, यदि हम समस्या के इस पहलू पर ध्यान दें, तो एक भयंकर स्थिति देखेंगे। मैं नहीं कह सकता कि हमने इस पर पर्याप्त ध्यान दिया है, कि हमने इसके महत्व को वास्तव में समझ लिया है। हमारे स्कूल की समय-तालिका में तथाकथित शारीरिक व्यायाम को एक बिल्कुल नगण्य स्थान प्राप्त है। हमने अब भी शारीरिक व्यायाम के प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए, इसके सुविज्ञ उस्तादों की पर्याप्त संख्या को सुनिश्चित बनाने के लिए प्रायः कुछ नहीं किया है। लेकिन संशोधनात्मक जिमनास्टिक के बिना, विद्यार्थी के शरीर को सही ढंग से विकसित करनेवाले सामान्य जिमनास्टिक के बिना, उस अर्थ में खेल-कूद को काफ़ी शामिल किये बिना, जिस अर्थ में हमने सोवियत खेल-कूद को परिभाषित किया है, हम निस्संदेह स्कूल की पूरी तसवीर को ही झुठलायेंगे और हमें नकारात्मक नतीजे मिलेंगे।

सामान्य व्यायाम के साथ-साथ हमें फ़ौजी व्यायाम के उन आधुनिक रूपों को भी ध्यान में रखना चाहिए, जो आदमी को सच्चा योद्धा, संकल्पशील, कार्य में एकाग्र तथा कारगर प्रयास और संघर्ष में पटुता और शक्ति प्रदर्शन के समर्थ बनाते हैं। विदेशों में इस सबको एक व्यक्तिवादी स्वरूप प्रदान किया जाता है, वहां इसका उद्देश्य यह है कि आदमी अपना रास्ता बनाने, जीविका प्राप्त करने में अपने दांतों तथा पंजों का इस्तेमाल करने में समर्थ हो। हम अपने सोवियत खेल-कूद में बिल्कुल भिन्न सिद्धांतों से शुरू करते हैं और स्वभावतः भिन्न परिणामों पर पहुंचेंगे। हमारे यहां फ़ौजी सेवा, फ़ौजी प्रशिक्षण है, लेकिन उनका चरित्र बिल्कुल दूसरा ही है: वहां वे उत्पीड़न की सेवा करते हैं, यहां स्वतंत्रता के लिए संघर्ष। हमारी बंदूक़ अन्य सभी अस्त्रों की भांति ही बुरी है और समाजवाद के अंतर्गत हम इसे समाप्त कर देंगे, लेकिन वर्तमान समय में इसका एक **भिन्न सामाजिक महत्व है।**

श्रम शिक्षा के बारे में

अगला प्रश्न – स्कूल में श्रम तथा इसके शैक्षिक महत्व का प्रश्न – अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न है। हमने हमेशा श्रम स्कूल में इस मामले में दो मार्ग अपनाये हैं।

हमारा विचार रहा है कि शिक्षा की प्रक्रिया श्रम-विधियों से पूरी की जानी चाहिए अर्थात इसे ऐसी एकतरफ़ा कार्रवाई नहीं होनी चाहिए, जिसमें विद्यार्थी केवल पुस्तकों या अध्यापक के व्याख्यानों से ज्ञान प्राप्त करे। ज्ञान-आत्मसात्करण की इस प्रक्रिया में बच्चे को यथार्थतः भाग लेना चाहिए। विद्यार्थी के कमोबेश संपूर्ण अवयव को उसके लिए दिलचस्प प्रकिया में हिस्सा लेना चाहिए, जहां उसे ज्ञान प्राप्त करते हुए कुछ सैद्धांतिक तथा शारीरिक कठिनाइयों पर क़ाबू पाना होता है। स्कूल में श्रम-प्रणाली की बदौलत, जो यहां मज़बूत होती जा रही है, स्वयं शिक्षा में श्रम-तत्व सम्मिलित है, यानी यह सामग्री जमा करने, सभी तरह के तथ्यों की स्वतंत्र रूप से तुलना करने, रिपोर्टों के सामूहिक विचार, सभी तरह की बहसों, आदि के ज़रिये सामूहिक कार्य में प्राप्त किया जाता है।

शिक्षा की हर प्रक्रिया संतोष और आनंद से भरी होनी चाहिए, पर यह निष्कर्ष कि स्कूली श्रम को स्वैच्छिक कार्य का स्वरूप प्रदान किया जाना चाहिए, सिर्फ़ बहुत छोटे बच्चों के लिए प्रयुक्त शिक्षा के रूपों को छोड़ कर, समग्रतः एक ग़लत निष्कर्ष है। कुछ थकान की हद तक जा कर भी बच्चे को बाधाएं पार करने का प्रशिक्षण देना आवश्यक है। जीवन में प्रायः अपने को थकाना पड़ता है। हमें बच्चे को अपनी शक्तियों का किफ़ायत से इस्तेमाल करने का प्रशिक्षण देना चाहिए, यानी उसे कठिन परिक्षम करने की ही नहीं, बल्कि अपने भीतर उन संसाधनों की खोज करने की भी शिक्षा देनी चाहिए, जिनसे प्रेरित हो कर वह अपने को काम में लगा सके, उसे इस विचार में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए कि श्रम एक नये तरह का आनंद, प्राप्त उद्देश्य का आनंद प्रदान करता है। हमें उसे युक्तियुक्त, संगठित ढंग से काम करने, कठिनाइयों पर क़ाबू पाने और सामूहिक श्रम के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए।

लक्ष्यों को निर्धारित करने में, निश्चित दिशा में शक्ति को युक्तियुक्त ढंग से ख़र्च करने के कौशल में व्यवहार का किसी भी तरह का ज्ञान प्राप्त करने में सुव्यवस्थित उदाहरण के रूप में बड़ा महत्व है। पुरानी पद्धति के स्कूल में वे अक्सर कहा करते थे कि स्कूल इतना ज्ञान प्रदान करने के लिए नहीं बनाया गया है जितना विद्यार्थियों को कतिपय औपचारिक कौशल प्रदान करने के लिए। इस तर्क का प्रयोग

मृत भाषाओं के अध्ययन के लिए किया जाता था: वे (भाषाएं) सामग्री के औपचारिक पहलुओं में पारंगति की विधि को प्रथम स्थान देती हैं, जो आकारगत तर्कशास्त्र द्वारा प्रस्तुत विधि से अधिक समृद्ध, अधिक विविध है, क्योंकि यह अपवादों तथा विरोधाभासों से भरी हुई है।

उन लोगों ने, जिन्होंने इस मामले को कुछ अधिक गहराई से देखा, घोषणा की कि ये अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण हैं कि वे आदमी को, चाहे उसे कोई भी काम दिया जाये, उसकी मूल प्रकृति के बारे में चिंता किये बिना औपचारिक रूप से पूरा करने के लिए प्रशिक्षित करते हैं। ठीक इसी चीज़ को विल्हेल्म द्वितीय को दी गयी एक याचिका में शामिल किया गया, जिसमें कहा गया कि आपके पास बहुत अच्छे नागरिक, बहुत अच्छे नौकरशाह होंगे, जो काफ़ी से लेकर बजरी तक किसी भी चीज़ को पीसने में समर्थ अच्छी चक्की की भांति होंगे, ये वे लोग होंगे, जो आदेशों को असाधारण कुशलता के साथ पूरा करेंगे और औपचारिक दृष्टि से सब कुछ पूर्णतः ठीक-ठीक होगा।[7]

सारी न्यायिक शिक्षा तथा आर्थिक या प्रशासनिक क्षेत्र में शिक्षा, जो हमारे यहां कभी नहीं थी, वस्तुतः ऐसी ही थी। हमारे यहां प्राप्त नौकरशाही-प्रशासकीय योग्यताओं के साथ लोग अपने जीवन के अंत तक जाते थे; वे केवल काग़ज़ तैयार करते थे और महत्वपूर्ण अफ़्सर या नौकरशाह बन जाते थे। एक समय हमें उच्च स्कूल की वर्दियों में बंद करते हुए और बैरक-कक्ष के अनुशासन के अधीन करते हुए हमारे साथ भी वैसा ही करने की कोशिश की गयी थी। हमने बाह्य अनुशासन के भारी हाथ तथा अजनबी विचारों के साथ अजनबी आदेश के अनुसार अपनी योग्यताओं के प्रयोग को महसूस किया।

हमें कुछ और ही चीज़ की ज़रूरत है। अपनी शैक्षिक प्रणाली में हम गहन रूप से वास्तविक अंतर्वस्तु प्रदान करते हैं, मामले के औपचारिक पहलू पर नहीं, मानसिक श्रम के रूपों की केवल पारंगति पर नहीं, बल्कि बुद्धिसंगत शारीरिक श्रम पर ज़ोर देते हैं, जो अब अपने उच्चतम रूप में मशीनों से श्रम, फ़ैक्टरियों में श्रम है। हमारा हमेशा ही यह दृष्टिकोण रहा है (और इसने हमें अग्रणी अमरीकी स्कूल से पृथक किया है) कि श्रम स्कूल को बच्चों और किशोरों को पालीतकनीकी ज्ञान यानी अनेकानेक उदाहरणों पर आधुनिक उन्नत,

वैज्ञानिक रूप से संगठित श्रम के मूल सिद्धांतों, नियमों और प्रक्रियाओं की समझ प्रदान करनी चाहिए। अब तक हम यह जन-स्कूलों में प्राप्त करने में असफल रहे हैं, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि विचार ग़लत है; असफलता का कारण हमारे उद्योग का अविकास, हमारी कृषि का नीचा स्तर है, इसके होते हुए हमारे स्कूलों के लिए उचित, औद्योगिक रूप से संगठित श्रम के सुरक्षित तटों पर पहुंचना संभव नहीं है।

इसका केवल एक ही हल था – स्कूल के भीतर या केन्द्रीय रूप से कई स्कूलों के लिए अच्छी वर्कशापें संगठित करना। ग्रामीण स्कूलों में फलोद्यान, शाक-सब्ज़ी वाटिकाएं, प्रारंभिक पशुपालन क़ायम करना, जो विस्तृत तथा उन्नत कृषि अर्थव्यवस्था के पैमाने पर निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करने की संभावना प्रदान करेंगे। हम यह आवश्यक सीमा तक करने में सफल नहीं हुए हैं। परंतु बहुत-से सुसंचालित स्कूलों में काफ़ी अच्छे ढंग से निर्मित श्रम-प्रक्रियाएं पायी जा सकती हैं। इसके प्रमुख उदाहरण फ़ैक्टरी अप्रेंटिस स्कूल तथा औद्योगिक सात-वर्षीय स्कूल हैं। वे हमें ऐसी चीज़ें प्रदान करते हैं, जिन्हें अब भी हम शहरी और ग्रामीण स्कूलों में नहीं रख सकते।

शिक्षा में श्रम का महत्व विशाल है। कहने की आवश्यकता नहीं कि समूचा तथाकथित "मानसिक श्रम" उस चीज़ के संबंध में एक स्थानापन्न ही है, जिसे हम एक संपूर्ण व्यक्ति के रूप में सोचते हैं। भाववाद में, माख़वाद[8] जैसे भाववादी रूपों में विचलित होने की बुद्धिजीवियों की, यहां तक कि तकनीकी बुद्धिजीवियों की भी निरंतर प्रवृत्ति बड़ी सीमा तक इस वजह से है कि लोग भौतिक वस्तुओं से वास्ता नहीं रखते। यह सही है कि वे लिखते समय अपने हाथों में क़लम या पेंसिल पकड़ते हैं, अपने घरों में मेज़ के पास कुर्सी पर बैठते हैं, लेकिन मूलतः वे सिर्फ़ प्रयोगशाला में **देखते** या अधिक से अधिक **प्रेक्षण करते** हैं। वे आमने-सामने प्रकृति के साथ संघर्ष नहीं करते, वे इसे शारीरिक शक्ति द्वारा नहीं जीतते और इस वजह से वे इसके जीवंत, गतिशील यथार्थ को नहीं महसूस करते। यहीं अहंवाद, यानी इस विचार की जड़ें हैं कि दुनिया हमारी अनुभूतियों से बनी है। यह न तो समाजवादी संघर्ष, न ही समाजवादी व्यवहार से किसी भी रूप में मेल खाता है।

हमें भौतिकवादी आदमी की ज़रूरत है और एक ख़राद पर काम करते हुए आप भौतिकवाद के बारे में उससे कहीं अधिक ज्ञान प्राप्त

कर लेंगे, जितना कि आप किसी भौतिकवादी दार्शनिक की कृतियों को पढ़ कर प्राप्त करेंगे, क्योंकि परवर्त्ती मामले में आपके पास केवल विचार, व्याख्या, शब्द होंगे, लेकिन आप वह अनुभव नहीं पायेंगे, जो सर्वहारा को भौतिकवादी बनाता है – ऐसा भौतिकवादी कि अगर वह संयोगवश सांस्कृतिक पिछड़ेपन की वजह से धार्मिक भी होता है, तो जैसे ही वह काम करते अपने उन साथियों के संपर्क में आता है, जो चीज़ों के प्रति अधिक सही दृष्टिकोण रखते हैं, वैसे ही यह सब पल भर में उससे ग़ायब हो जाता है। यहां मुख्य बात केवल दस्त-कारी कौशल, केवल अपनी मांस-पेशियों पर बेहतर नियंत्रण प्राप्त करना नहीं है – यहां बात उपलब्ध औज़ारों से परिचित होने की है और ये औज़ार अब बड़े महत्व के बन गये हैं।

मार्क्स और एंगेल्स ने हमें शिक्षा दी कि उपलब्ध औज़ारों, हमारी मशीनों ने मानव समाज को अपने वश में कर लिया है और समाजवाद का कार्यभार इसमें निहित है कि उत्पादन के इन साधनों को, जिन्होंने मानवजाति को वर्गों में विभाजित होने के लिए मजबूर कर दिया, जिन्होंने सत्ता बुर्जुआ वर्ग के हाथों में दे दी, विजित तथा मनुष्य के अधीन किया जाये।

... बेशक, हमारे यहां अब भी बहुत-से ओब्लोमोव[9] हैं। हमें ओब्लो-मोववाद को समूल उखाड़ देने, अपने तालमेल, अपनी रफ़्तार को पुन-र्व्यवस्थित करने की आवश्यकता है। केवल शहरीकरण, केवल मशीनें ही हमें नयी रफ़्तार दे सकती हैं, मनुष्य का पुनर्निर्माण कर सकती हैं। ग्रामीण रफ़्तार, ग्रामीण कठिन और धीमा श्रम, जाड़े में काम से लंबे अर्से तक निरर्थक छुट्टी की आदत – यह सब जीवन की अत्यंत धीमी रफ़्तार बनाता है और इसने नगरों पर, हममें से प्रत्येक पर अपनी छाप छोड़ी है। हम सब में वह पुराना देहाती किसान कुछ न कुछ है, जो बैल-गाड़ी पर एक पैर लटकाये बैठा रहता है, जबकि बैल शैतान जाने कितने समय में एक मील की दूरी तय करता है। और दूर-दूर तक फैले इन स्तेपियों से, शीतकालीन निष्क्रियता से हमें अपनी रफ़्तार को श्री फ़ोर्ड की रफ़्तार में लाना है, जब आदमी के पास ज़रा बैठने की फ़ुर्सत नहीं है, जब क्षण भर भी ध्यान बंटने पर मशीन उसकी उंगली काट खायेगी।

फ़ैक्टरी उत्पादन हमारे मज़दूरों से किसानों की धीमी रफ़्तार

के इस अवशेष को दूर कर देता है। उनसे श्रम की जिस मात्रा की मांग की जाती है, वह असाधारण तीव्रता के साथ प्रदान की जानी चाहिए। इस तरह का श्रम हमें पश्चिमी यूरोपीय श्रम पर विजय प्राप्त करने तथा अपने को औद्योगिक श्रम की भावना में पुनर्शिक्षित करने की संभावना प्रदान करेगा, एक ऐसे मानव के निर्माण की संभावना प्रदान करेगा, जो रफ़्तार और यथातथ्यता की दृष्टि से नया मानव होगा, जिसे मशीन की सहायता के बिना नहीं निर्मित किया जा सकता।

शिक्षा पर श्रम के प्रभाव के कई अन्य पहलू भी हैं, पर मैं अपने को इन्हीं तक सीमित रखूंगा।

प्रशिक्षण और नैतिक शिक्षा के बीच संबंध के बारे में

शिक्षा प्रशिक्षण और नैतिक शिक्षा से बनी है और दोनों ही एक दूसरे से अविच्छेद्य रूप से जुड़े हैं। प्रशिक्षण के लिए हम पुरानी संस्कृति यानी उन सभी चीज़ों को लेते हैं, जिन्हें अब तक मानवजाति ने निर्मित किया है; हम उन चीज़ों को भी लेते हैं, जिन्हें बुर्जुआ संस्कृति ने अस्वीकार कर दिया है – मार्क्सवाद और इससे उत्पन्न सभी चीज़ें, जो नयी दुनिया की शुरूआत हैं। मार्क्सवाद विज्ञान के संपूर्ण विकास से उत्पन्न होता है, पर बुर्जुआ वर्ग ने इसे इस आधार पर इन्कार कर दिया कि यह उसके हितों के विपरीत है। मार्क्सवाद में मानव-चिंतन बुर्जुआ ढांचे से आगे बढ़ गया ठीक वैसे ही जैसे उद्योग उससे आगे बढ़ गया है। इसी अंतर्विरोध में, एंगेल्स के अनुसार, समाजवादी आंदोलन का अंकुर और इसकी सफलता की गारंटी है।[10]

प्राकृतिक विज्ञानों के क्षेत्र में मार्क्सवाद बहुत गहरी छाप डालता है। यह प्राकृतिक विज्ञान का पूर्णतः संशोधन करता है, इसे उन मिलावटों से मुक्त करता है, जिन्हें बुर्जुआ चिंतन ने उसमें कर दिया है और अब भी कर रहा है। बुर्जुआ चिंतन भली-भांति महसूस करता है और कुछ मामलों में बिल्कुल ठीक-ठीक समझता है कि सही ढंग से प्रस्तुत प्राकृतिक विज्ञान अपनी सभी शाखाओं के साथ अनिवार्यतः मार्क्सवाद की ओर ले जाता है। इसीलिए बुर्जुआ चिंतन डार्विनवाद पर हमला करता है, तकनीकी जीवविज्ञान पर हमला करता है,

क्योंकि यह सोचता है कि वरना यह अपनी व्यवस्था को नहीं बचा सकता। ख़ास तौर से यह मानव के विश्व-दृष्टिकोण की जड़ तक गहरे जाते हुए तथा वहां अपने विषों को भरते हुए प्राकृतिक विज्ञान के पूर्वाधारों को झुठलाता है। बुर्जुआ वर्ग डरता है कि प्राकृतिक विज्ञानों के भीतर मार्क्सवाद के पुष्प खिलने न लगें।

हमें प्राकृतिक विज्ञान इस ढंग से पढ़ाना चाहिए कि इसमें कोई रहस्यवाद, चाहे यह अत्यंत परिष्कृत रहस्यवाद ही क्यों न हो, न रहने पाये ताकि यह सुसंगत भौतिकवाद हो।

प्राकृतिक विज्ञानों की अंतर्वस्तु शैक्षिक कार्यों का एक बड़ा समुच्चय खोलती है: मार्क्सवाद की वैज्ञानिक अंतर्वस्तु को ऐसे रूप में प्रदान करना, जो बच्चों की पहुंच के भीतर हो; बच्चों को प्रकृति में मनुष्य के बारे में, मानव-समाज के ऐतिहासिक विकास के बारे में, मानव-समाज में व्याप्त अन्याय के बारे में, सर्वहारा क्रांति के अर्थ के बारे में, अक्तूबर क्रांति के अर्थ के बारे में, दूसरी शक्तियों के संबंध में हमारे देश में निर्मित परिस्थितियों के बारे में, हमारी क्रांति से उत्पन्न कार्यभारों, आदि के बारे में यानी मोटे तौर पर उन संपूर्ण समस्याओं के बारे में निश्चित धारणा प्रदान करना, जिन्हें हमें अब प्रस्तुत विधियों के अनुसार सहज रूपों से शुरू करके और धीरे-धीरे अधिक पूर्ण रूपों पर आते हुए चक्रीय ढंग से पढ़ाना चाहिए।

समाजविज्ञान की अंतर्वस्तु भी एक बड़ी शैक्षिक शक्ति प्रस्तुत करती है।

लेकिन यह पूर्णतः निर्विवाद है कि कोई व्यक्ति बहुत कुछ जान सकता है, मगर अपने इस ज्ञान से ज़रा भी नहीं बदल सकता है। नैतिक शिक्षा का कार्यभार मनोदशा का निर्माण करना, या पाव्लोव[11] के शब्दों में, निरंतर और प्रतिबंधित प्रतिवर्तों की एक ऐसी निश्चित प्रणाली का निर्माण करना है, जो जीवन में मनुष्य के निश्चित स्थान की गारंटी करेगी। इसके लिए हमारे पास कोई शारीरिक विधि नहीं है, लेकिन यह तो हम जानते हैं कि मनुष्य अपने प्रतिवर्तनों को कितने शक्तिशाली ढंग से बदल देता है, जब उस पर वह चीज़ अपना प्रभाव डालती है, जिसे भावना कहा जाता है। जब मनुष्य प्रभावित होता है, जब आनंद, दुःख, घृणा अनुभव करता है, जब वह हंसता है, तो इसका अर्थ यह है कि तंत्रिका-प्रणाली में गहन प्रक्रियाएं हो रही

हैं। ये प्रक्रियाएं केवल सतही हो सकती हैं, पर वे अत्यंत गहन भी हो सकती हैं। जब लोग कहते हैं कि "इसने मुझ पर अविस्मरणीय प्रभाव डाला है", "मेरे संपूर्ण जीवन पर अपनी छाप छोड़ी है", आदि, तो यह गहन भावावेग के क्षणों को ही प्रकट करता है, जो वस्तुतः नये प्रतिवर्तन पैदा करते हुए, इस या उस परिघटनाओं के प्रति नयी प्रतिक्रियाएं प्रेरित करते हुए, तंत्रिका-प्रणाली के इस या उस अंगों को पुनर्व्यवस्थित करते हैं – मनुष्य का पुनर्जन्म होता है, वह नया रूप ग्रहण करता है।

तंत्रिका-प्रणाली को अनुप्राणित किये बिना, प्रेरित किये बिना सरल से सरल आंदोलन भी चलाना असंभव है, यहां तक कि, उदाहरणार्थ, लोगों को जमा करना और उनसे आग बुझवाना भी असंभव है। शैक्षिक प्रभाव डालने की तो बात ही दूर है। अतः शिक्षण सामग्री को भावात्मक रंग देकर, भावनात्मक प्रतिक्रियाएं प्रेरित करके और भावनाओं के ज़रिये विद्यार्थियों की चेतना में परिवर्तन पैदा करके इस या उस बाह्य प्रभाव की किसी भी बोध-प्रक्रिया को शैक्षिक स्वरूप प्रदान किया जा सकता है।

स्वयं प्रेरित हुए बिना या दूसरों को प्रेरित किये बिना समाज-विज्ञान शांतिपूर्वक पढ़ाया जा सकता है। मगर ऐसा विज्ञान उबाऊ होगा, यह वैसे ही होगा, जैसे कीप से पानी बह जाता है, आप चाहे जितना पानी डालें, यह दूसरे सिरे से बाहर निकल जाता है। फिर भी, समाजविज्ञान से अधिक जीवंत, अधिक भावुक कोई विषय नहीं है। यह प्रकृति के साथ मनुष्य के संघर्ष, एक-दूसरे के बीच लोगों के संघर्ष, हमारे वर्तमान महान उद्देश्यों तथा उस अंधकार के बीच टकराव की जीती-जागती तसवीर पेश करता है, जिस पर विजय प्राप्त की जानी है। छोटे से छोटे बच्चे को भी संस्कृति का इतिहास शानदार परी-कथा के रूप में बताया जा सकता है – जी हां, इससे बेहतर कोई कहानी नहीं है, उसकी कल्पना ही नहीं की जा सकती! लेकिन आवश्यकता इस बात की है कि सामग्री को इस ढंग से मिलाना चाहिए कि वह जीवंत बन जाये, कि वह (मिसाल के लिए, वर्ग संघर्ष) रचनात्मक बन जाये, मात्र तथ्यों का संग्रह नहीं, मात्र एक प्रक्रिया नहीं, बल्कि गतिशील प्रक्रिया बन जाये। सामग्री प्रस्तुत करने के लिए निश्चित योग्यता की आवश्यकता होती है। बेशक नाटकीय योग्यता नहीं,

बल्कि स्वर की निश्छलता, भाषा की सरलता, अध्यापक की ईमानदारी और लगन। इसमें विभिन्न संसाधनों – सुचिंतित यात्राएं, कलाकृतियों (साहित्यिक और चित्रात्मक) के ज़रिये पुष्टि, जीवन के इस या उस पहलू में यथार्थ प्रवेश – से मदद ली जा सकती है।

विगत का अध्ययन संग्रहालयों की यात्राओं, संग्रहों के अध्ययन के ज़रिये इसे जीवंत बना सकते हैं, जबकि वर्तमान का अध्ययन स्वयं जीवन में प्रवेश करके, इसका निकट से परिचय प्राप्त करके किया जा सकता है। इस तरह, हम कलात्मक शिक्षा के प्रश्न पर पहुंच जाते हैं।

इस तरह का विचार प्रकट किया जाता है कि कलात्मक शिक्षा का उद्देश्य कलाकारों को प्रशिक्षित करना, विशेष प्रतिभाओं से संपन्न लोगों की खोज करना या प्रत्येक बच्चे में इस या उस सीमा तक कलात्मक योग्यता विकसित करना है। एक लक्ष्य के रूप में सौंदर्यबोधवाद को अस्वीकार किया जाना चाहिए। अगर इस संबंध में हम अपने मार्ग पर कुछ प्राप्त कर सके, तो बहुत अच्छा होगा। व्यावसायिक कला शिक्षा कला स्कूलों में प्राप्त की जानी चाहिए।

लेकिन एक दूसरा विचार भी है, जो निम्नलिखित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है: कलात्मक शिक्षा का उद्देश्य कलाकृतियों, कलाकार के रचनात्मक कार्यों, आम तौर पर कला तथा प्रकृति के जीवन को उचित रूप से सराहने हेतु बच्चों को उनके प्रारंभिक वर्षों से ही प्रशिक्षित करना है, इसका उद्देश्य आनंदानुभूति प्रेरित करनेवाली मानव प्रतिभा की कृतियों तथा प्रकृति और ललित प्रकाश से भरी मानव-जीवन की परिघटनाओं से सौंदर्यबोधी आनंद प्राप्त करने की शिक्षा देना है। यह अच्छी चीज़ है, लेकिन यह भी हमारे समय के लिए मुख्य बात नहीं है। यह भी गौण ही बात है।

कलात्मक शिक्षा का मूल ध्येय बच्चों की भावनाओं पर प्रभाव डालने के ऐसे साधनों की खोज करने में निहित है, जो उन्हें कम्युनिस्ट प्रवृत्तियों, कम्युनिस्ट गुणों, कम्युनिस्ट प्रतिवर्तनों की भावना में अत्यंत शक्तिशाली और स्थायी ढंग से शिक्षित करेंगे। कला का मुख्य काम मानव का पुनर्शिक्षण है। जहां तक साहित्य, चित्रकारी, संगीत मनुष्य के पुनर्शिक्षण में सहायता करेंगे, वहां तक वे अपने विचारधारात्मक पहलू में उपयोगी हैं। समाजविज्ञान को जीवंत, प्रेरक,

उत्साहवर्धक और इनके ज़रिये शैक्षिक होना चाहिए। कला को इसी दिशा में मोड़ा जाना चाहिए। इसके बिना काम नहीं चल सकता, क्योंकि साहित्य हमें पुराना और नया जीवन दिखा देता है। लेखक और प्रचारक में जो चीज़ भेद करती है, वह यह है कि लेखक हमें प्रेरित करता है, कि वह जिन बिम्बों की रचना करता है, वे हमें पुलकित कर देते हैं, झकझोर देते हैं। अतः हमें साहित्य को बेशक आयु-समूह के अनुसार क्रियाशील बनाना चाहिए। इसी तरह, अध्यापक को किसी भी गैलरी के चित्रों से, चाहे यह त्रेत्याकोव गैलरी[12] हो या कोई प्रांतीय म्युज़ियम, बच्चे की भावनाओं को शिक्षित करनेवाले तत्वों को निकालने में समर्थ होना चाहिए। यही बाल-थियेटरों और बच्चों को थियेटर ले जाने का भी उद्देश्य है।

इसी उद्देश्य का पालन बच्चों के स्वतंत्र कलात्मक सृजन-कार्य में किया जाना चाहिए। बच्चों का सृजन-कार्य एक सामूहिक कार्य होना चाहिए। उत्सवों में हिस्सा लेना, उत्सव संगठित करना – यह सामाजिक जीवन में शिरकत है, लेकिन पूर्ण रूप से संगठित शिरकत है। उत्सव सामाजिक जीवन का कलात्मक संगठन है, जिसमें सब कुछ संकेन्द्रित होता है, सब कुछ सम्मिलित होता है, सब कुछ प्रभावकारी प्रेरक रूप ग्रहण किया होता है। इसका अनुभव प्राप्त करने के लिए लोग एकसाथ इकट्ठा होते हैं, मिलजुल कर उत्सव की स्थापना करते हैं, मिलजुल कर खुशी मनाते हैं। स्कूल में आयोजित उत्सव व्यापक जीवन का एक अंग है। उत्सव के ज़रिये जीवन स्कूल में उतर आता है, स्कूल में अपनी गूंज पाता है।

इसी आधार पर बच्चों के कलात्मक सृजन-कार्य के अन्य रूपों को आगे बढ़ना चाहिए। अलबम बनाना, ऐसे चित्र बनाना, जो इस या उस घटना, जीवन के इस या उस पहलू को प्रतिबिम्बित करते हैं, उन विभिन्न कलाकृतियों की प्रदर्शनी आयोजित करना, जो कलात्मक रूप में विभिन्न पहलुओं के साथ बहिर्स्कूली जीवन को प्रतिबिम्बित करती हैं; किसी घटना-विशेष से सम्बद्ध नाट्य-प्रदर्शन प्रस्तुत करना और बच्चों को अन्य बच्चों, माता-पिताओं, अपने इर्द-गिर्द लोगों के लिए नाटक या रंगारंग प्रस्तुतीकरण तैयार करने का कलात्मक कार्यभार देना – ये सभी विधियां एक ओर समाजविज्ञान को और दूसरी ओर सामाजिक जीवन में वास्तविक भागीदारी को, वर्तमान राजनीति

के प्रति बच्चों की प्रतिक्रिया को महत्व देती हैं और वे स्मृति में लंबे अर्से तक बनी रहेंगी। पुराने स्कूलों में भी, जो हमारे लिए अनुपयुक्त थे, खेले गये नाटकों ने हम पर पूरे के पूरे वर्षों की शिक्षा की तुलना में बड़ी और प्रभावशाली छाप छोड़ी, क्योंकि इन नाटकों में मनुष्य कार्यशील, रचनात्मक, सक्रिय भूमिका अदा करता है। कलात्मक शिक्षा के उन सभी रूपों को हमारे स्कूलों में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करना चाहिए।

कलात्मक शिक्षा को सामाजिक शिक्षा की एक विधि के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए और उसे एक उचित स्तर पर लाया जाना चाहिए। हमें एक बार पुनः अपने सामान्य सिद्धांतों की समीक्षा करनी चाहिए तथा अपनी सारी शिक्षा को अब तक के मुक़ाबले में सामाजिक-राजनीतिक शिक्षा के अधिक निकट लाना चाहिए और इस क्षेत्र में सभी चीज़ों को मुख्य धुरी से जोड़ देना चाहिए। तब हम शिक्षा के विशुद्धतः सौंदर्यबोधी पहलू को ऊपर उठाने में भी समर्थ होंगे, क्योंकि हम इसे एक निश्चित अंतर्वस्तु प्रदान कर रहे होंगे, इसे राजनीतिक रूप से मूल्यवान चीज़ से पूरित कर रहे होंगे।

स्कूल में संगठित हरेक त्यौहार सामान्य सामाजिक जीवन का अंग बन जाता है और बड़ा शैक्षिक महत्व रखता है। यही महत्व सामाजिक रूप से उपयोगी श्रम भी रखता है। बच्चों द्वारा श्रम में सीधी भागीदारी स्वयं ही एक ऐसी संगठित शक्ति है जो स्वास्थ्य-व्यवस्था या दैनंदिन पर्यावरण को सुधारने अथवा अज्ञानता से लड़ने में सहायता करती है – यह सब मूर्त रूप ग्रहण कर रहा है, जीवन में कार्यान्वित हो रहा है।

समाज में घटनाओं के प्रति अत्यंत चपलतापूर्वक प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए बच्चों को संगठित करना आवश्यक है। केवल यही महत्वपूर्ण नहीं है कि बच्चे अपने क़स्बे में पार्क की देखरेख में हिस्सा लें अथवा कुछ अनपढ़ बच्चों या वयस्कों को पढ़ाने का काम लें, बल्कि यह भी महत्वपूर्ण है कि वे चीन में घटनाओं के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करें और पार्टी द्वारा दिये गये राजनीतिक नारों के प्रति संवेदनशीलता प्रकट करें। हमें दैनिक अख़बार लेना चाहिए और, अगर इन शब्दों का इस्तेमाल करना सही है, तो उसे ऐसी भाषा में व्यक्त करना चाहिए कि बच्चों की समझ में आ सके। इस तरह की चीज़ पायनियर अख़बारों

में पहले ही की जा रही है। जन-अख़बारों में प्रकाशित सूचनाओं को बच्चों तक पहुंचाना स्कूल का नियमित काम होना चाहिए। इस कार्य में भावात्मक दिलचस्पी पैदा करना आवश्यक है। बच्चों को सभाओं, त्यौहारों, आदि द्वारा बड़ी घटनाएं मनानी चाहिए। बच्चों को बड़ी घटनाएं उन्हीं रूपों में मनानी चाहिए, जिन रूपों में वयस्क उन घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं।

स्कूल पर प्रतिक्रियावादी प्रभावों से संघर्ष के बारे में

सामाजिक संगठन अब स्कूलों पर निकट से ध्यान दे रहे हैं। स्थानीय सोवियतों ने विशेष स्कूल विभाग क़ायम किये हैं। स्कूलों पर ध्यान केवल वे लोग ही नहीं देते, जिन्हें इसके लिए नियुक्त किया गया है; स्थानीय सोवियतें, ट्रेड-यूनियनें और दूसरी सोवियत संस्थाएं भी उन पर ध्यान दे रही हैं। स्कूल के आस-पास की श्रमिक आबादी स्कूल के जीवन में हिस्सा लेती है। कोम्सोमोल स्कूलों को प्रोत्साहन देता है। शिक्षा कमिसारियत गर्वपूर्वक यह कह सकती है कि यह कोम्सोमोल की आवाज़ को हमेशा ध्यानपूर्वक सुनती है।

इस समय जनमत स्कूलों के बारे में चिंतित है: क्या वहां प्रतिक्रिया घात में नहीं बैठी है? क्या वहां जानबूझ कर तोड़-फोड़ नहीं की जा रही है? क्या वहां परिवर्तन के प्रति अत्यधिक प्रतिरोध और पुराने अध्यापकों में अपने को परिवर्तित करने की अयोग्यता नहीं है? अथवा क्या ऐसे बहुत अदक्ष नये अध्यापक नहीं हैं, जो सही काम करना चाहते हैं, पर करने में असमर्थ हैं? अथवा क्या ऐसे कम्युनिस्ट नहीं हैं, जो अपने दायित्वों को नहीं संभाल पा रहे हैं? जनमत हमें निश्चित आलोचनात्मक समीक्षा के अधीन रख रहा है तथा अध्यापक से पूछता है: क्या आप अपनी सारी शक्तियों को अपने काम में लगा रहे हैं और क्या वे उतने ही युक्तियुक्त ढंग से लगायी जा रही हैं, जितने युक्तियुक्त ढंग से वे लगायी जानी चाहिए? अगर किसी आदमी ने अपनी सारी शक्तियों को युक्तियुक्त ढंग से लगाया है, तो उस पर कोई दोष नहीं लगाया जा सकता।

फिर भी, सारा काम इसी चीज़ में नहीं निहित है।

हमारे पास अच्छे, ईमानदार, लोकोपकारी हृदयों के साथ,

बच्चों के विभिन्न समूहों में कार्य करने की सुंदर, सुदक्ष विधियों के साथ अध्यापक हैं। ऐसा अध्यापक स्कूल में अपने कार्य को बड़ी ईमानदारी से करता है। वह कहता है: "मैं अपनी सारी शक्तियां आपको दे रहा हूं, मुझे लगता है कि मैं उपयोगी काम कर रहा हूं: मैं बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाता हूं, मैं उनकी सौंदर्यबोधी योग्यताओं को विकसित करता हूं, मैं उन्हें अच्छे और बुरे के बारे में बताता हूं, मैं उनसे प्रार्थनाएं कहने के लिए नहीं कहता, मैं उन्हें ईश्वर-भय नहीं सिखाता, हालांकि मैं किसी को यह भी आश्वस्त नहीं करता कि यह करना ग़लत होगा। राजनीतिक रूप से आपके साथ मेरा कोई झगड़ा नहीं है, चाहे इस वजह से ही कि मेरे कोई राजनीतिक दृष्टिकोण नहीं हैं। अगर मैं राजनीतिक शिक्षा के अर्थ में बहुत कम कर रहा हूं, तो आप ही बताइये कि मुझे क्या करना है। मैं आपके निर्देशों के अनुसार काम करने के लिए तैयार हूं, बशर्ते कि एक अध्यापक के नाते मेरे विचारों को ठेस नहीं पहुंचे। लेकिन अगर आप कहें कि मुझे बच्चों में वर्ग-द्वेष विकसित करना चाहिए, कि मुझे उन्हें इस चीज़ के बारे में बताना चाहिए कि बुर्जुआ वर्ग का पूर्णतः उन्मूलन किया जाना चाहिए, तो मुझे माफ़ कीजिये, मेरे पास कठोर दिल नहीं है और बच्चों को कठोर दिल देना ग़लत है। मैं तो बच्चों को सिर्फ़ यही बता सकता हूं कि सभी लोगों से प्रेम करना चाहिए, कि समाजवाद प्रेम और शांति का राज्य है और इसलिए उन्हें समाजवाद से प्रेम करना चाहिए। इन सीमाओं के भीतर मैं आप से सहमत हूं।"

ऐसे अध्यापकों को **प्रस्तुत अवधि** में अयोग्य ठहराना चाहिए, जब हमें ज़ोर-शोर से हमला करना चाहिए, बच्चों को अपने पक्ष में करने हेतु शक्तिशाली क़दम उठाने चाहिए। हमारा कार्य अक्सर सभी तरह के राजनीतिक तत्वों से पेचीदा बन जाता है। जहां-तहां हमारे शत्रु हरक़त कर रहे हैं, वे स्कूलों में भी हरक़त कर रहे हैं और हमें उन शत्रुओं से लड़ना है। उन लोगों से, जो नहीं लड़ सकते, हमें कहना चाहिए, "शांति काल में आप अध्यापक रह सकते हैं, पर अभी आपको बच्चों के पास फटकने नहीं दिया जा सकता।"

लेकिन ऐसी नीति अत्यंत ख़तरनाक भी हो सकती है: यदि हम शत प्रतिशत मांग करेंगे, तो अपने बहुत-से अध्यापकों को खो बैठेंगे। विभिन्न रंगों के ये अध्यापक अक्सर अत्यंत अनुभवी, अपने काम के

बड़े ज्ञानी, अध्यापन विधियों के अच्छे विशेषज्ञ और अच्छे शिक्षाशास्त्री होते हैं, लेकिन उनके कार्य में संशोधन करने की आवश्यकता है। कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं ने अब कुछ प्रौढ़ता प्राप्त कर ली है। उन्हें अपने कौशलों को एक-दूसरे से जोड़ना चाहिए।

स्कूल अन्य प्रभाव भी अनुभव करते हैं: टुटपुंजिया-बुर्जुआ वर्ग के पुराने, अवरुद्ध वातावरण से बच्चे हमारे स्कूलों में आते हैं। ये बच्चे अपने साथ यहूदी-विरोध के सभी रूप, धार्मिक विचार, तरह-तरह की राजनीतिक गप्पें, तरह तरह की गंदी चुग़लियां ले कर स्कूलों में आते हैं। उनके बीच, विशेष रूप से वरिष्ठ कक्षाओं में, हम तरह-तरह की स्वार्थी, ऊंचे ओहदे पाने की प्रवृत्तियां देख सकते हैं। हम ऐसे सभी संभव संगठन प्रकट होते हुए देख सकते हैं, जिनमें वे ऐक्यबद्ध होते हैं। बेशक, युवा लोगों में अपने जीवन की एक ख़ास अवधि में गोपनशीलता की बड़ी प्रवृत्ति होती है, उनमें "बंद" संगठनों, अपने बीच षड्यंत्र रचने और षड्यंत्र करने, अपने को कुछ महत्वपूर्ण मानने की ललक होती है। अमरीकी शिक्षाशास्त्रियों के अनुसार, इस तरह के संगठन १४-१५ साल के बच्चों के बीच अनिवार्यत: प्रकट होते हैं। वे अपनी ही तरह की सामाजिक प्रवृत्तियों के जागरण के द्योतक हैं, जिन्हें हमें अपनी सामाजिक व्यवस्था की अंतर्वस्तु से संतुष्ट करना चाहिए। ऐसे संगठन विघटित होते हैं और फिर नये सिरे से बनते हैं; कभी-कभी पता चलता है कि ऐसे संगठन पूर्णत: अश्लील होते हैं; कभी-कभी वे प्रतिक्रांतिकारी भी हो सकते हैं। कूपमंडूकी वातावरण का प्रभाव अपने संपूर्ण द्वेष, अपनी संपूर्ण टुटपुंजिया जीवन-पद्धति के साथ ज़ोर दिखाता है।

अगर हम उधर, परिवार में अपना रास्ता नहीं बनाते, तो यह हमारा गला घोंट देगा। लेकिन हम उस पर स्वयं बच्चों के ज़रिये (ख़ास तौर से ग्रामीण स्कूलों में) प्रभाव डाल सकते हैं और हमें माता-पिताओं के साथ ध्यानपूर्वक संपर्क बनाये रखते हुए उसे अनिवार्यत: प्रभावित करना चाहिए। यह एक बहुत बड़ा और बहुत पेचीदा काम है, लेकिन लोगों को इसके लिए तैयार करने हेतु आवश्यक प्रक्रिया को तेज़ करने के लिए मैं कोई और रास्ता, कोई और साधन नहीं देखता।

हम एक प्रायोगिक क्षेत्र का निर्माण कर रहे हैं, ताकि हम यहां

चयनित सामग्री तथा भिन्न कोटि के अध्यापकों की सहायता का उपयोग करते हुए अध्यापन की विधियों को सीख सकें। मेरा मतलब पायनियर आंदोलन से है। हमारा विश्वास है कि कम्युनिज़्म की ओर पहले ही से प्रवृत्त तथा पायनियर आंदोलन में शामिल होनेवाले बच्चे हमें उन्हें वह नाभिक, वह अंकुर बनाने का सुअवसर देंगे, जो उनके निकटवर्ती लोगों पर, स्कूल के ईर्द-गिर्द के वातावरण पर अपना प्रभाव डालेगा।

प्रश्न उठता है कि स्कूल की दुनिया और पायनियरों की दुनिया के बीच परस्पर संबंध कैसा होना चाहिए? यह आवश्यक है कि अध्यापक तथा पायनियर नेता को एक-दूसरे में पूर्ण विश्वास हो; हमें **ध्यानपूर्वक सहयोग** की एक विधि क़ायम करनी चाहिए **और कोम्सोमोल के युवजनों के साथ इस संपर्क में अध्यापकों को सीखना चाहिए।** कोम्सोमोल – यह कोई अलग-थलग वातावरण नहीं है, इसकी गर्मी दूसरे लोग भी महसूस करते हैं और गर्मी अक्सर सभी तरह की अशुद्धताओं को जला देती है। कोम्सोमोल के सदस्यों की पांतों से अध्यापक भी आयेंगे, जो हमारे कार्य को जारी रखेंगे।

परिशिष्ट

अनातोली लुनाचार्स्की : जीवन-परिचय

अनातोली वसील्येविच लुनाचार्स्की का जन्म ११ नवम्बर, १८७५ को पोल्तावा (उक्राइना) में एक उदार सरकारी अधिकारी के परिवार में हुआ था। अभी लुनाचार्स्की कीयेव जिम्नेज़ियम (माध्यमिक स्कूल) में ही थे कि वह क्रांतिकारी आंदोलन में कूद पड़े और मिलों तथा फ़ैक्टरियों व मज़दूर मंडलों में प्रचार चलाया। १८९५ में वह रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी के सदस्य हो गये और तब से अपने जीवन को रूसी सर्वहारा की पार्टी, समाजवाद के लिए संघर्ष, उस ध्येय से जोड़ दिया, जिसके लिए व्लादीमिर इल्यीच लेनिन लड़े।

राजनीतिक "अविश्वसनीयता" की वजह से लुनाचार्स्की को मास्को विश्वविद्यालय में प्रवेश नहीं मिला। वह अपनी शिक्षा स्विट्ज़रलैंड में, ज़ूरिख़ विश्वविद्यालय में जारी रखने के लिए बाध्य हुए, जहां उन्होंने १८९५-९७ में दर्शनशास्त्र और प्राकृतिक विज्ञान का अध्ययन किया। १८९७ में लुनाचार्स्की रूस लौटे। रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की मास्को समिति के सदस्य चुन लिये जाने के बाद वह सक्रिय कांतिकारी कार्य में लग गये। १८९९ में इस कार्य में उनकी गिरफ़्तारी और निर्वासन ने बाधा डाली। लेकिन निर्वासन में भी लुनाचार्स्की ने अपने क्रांतिकारी और प्रचार कार्य, क्रांतिकारी प्रकाशनों में अपने सहयोग को नहीं छोड़ा।

लेनिन के निमंत्रण पर, जिन्होंने युवा क्रांतिकारी के प्रचार और पत्रकारिता कार्य पर निकट से ध्यान जमाये रखा, लुनाचार्स्की ने १९०४ में रूस छोड़ दिया और जेनेवा से प्रकाशित बोल्शेविक अख़बार 'व्येर्योद' (आगे बढ़ो) और 'प्रोलेतारी' (सर्वहारा) के संपादक-मंडल के सदस्य बन गये और इसी समय से लुनाचार्स्की तथा लेनिन के बीच

फलप्रद सहयोग शुरू हुआ। लेनिन लुनाचार्स्की के बारे में उच्च धारणा रखते थे और उन्हें "असाधारण प्रतिभाओं का व्यक्ति" कहा (म० गोर्की, 'व्ला० इ० लेनिन')। अप्रैल, १९०५ में लेनिन ने लुनाचार्स्की को रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की तीसरी कांग्रेस में विचार-विमर्श के एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न – सशस्त्र विद्रोह के प्रश्न – पर उद्घाटन रिपोर्ट पेश करने के लिए नियुक्त किया।

रूस में क्रांतिकारी घटनाओं के विकास ने, जिसने १९०५ में प्रथम रूसी क्रांति का शुभारंभ किया, लुनाचार्स्की को स्वदेश लौटना संभव बनाया। उन्होंने सेंट पीटर्सबर्ग में क्रांतिकारी कार्यों का संगठन किया, बोल्शेविक अख़बार 'नोवाया जीज़्न' (नया जीवन) के प्रकाशन में सक्रिय भाग लिया, जिसमें वह लेनिन के विचारों के एक मेधावी प्रचारक, समाज के क्रांतिकारी रूपांतरण के एक उत्कट योद्धा के रूप में प्रकट होते हैं। लंबा समय नहीं गुज़रने पाया कि लुनाचार्स्की को पुनः गिरफ़्तार कर लिया गया, लेकिन वह छिप कर भाग निकलने में सफल हुए और एक बार पुनः विदेश चले गये। बोल्शेविकों के एक प्रतिनिधि के रूप में उन्होंने दूसरे इंटरनेशनल की स्टुटगार्ट (१९०७) और कोपेनहेगेन (१९१०) कांग्रेसों में भाग लिया।

१९०५-०७ की पहली रूसी क्रांति की पराजय लुनाचार्स्की को कुछ ग़लत सैद्धांतिक निष्कर्षों की ओर ले गयी। बाद में उन्होंने लिखा कि लेनिन की कड़ी आलोचना ने उन्हें अपने दृष्टिकोण की ग़लती और लेनिन की अकाट्य सच्चाई को समझने में सहायता की, जो पहली रूसी क्रांति की पराजय के बाद शुरू प्रतिक्रिया के कठिन वर्षों में आगे विकास की दिशा को देखने और पार्टी को अधिक दृढ़तापूर्वक एकजुट करने तथा उसे नये वर्ग संघर्षों की तैयारी में लगाने में समर्थ थे।

अप्रैल, १९१७ में, फ़रवरी क्रांति के बाद, जिसने ज़ारशाही को गिरा दिया, लुनाचार्स्की रूस लौट आये और लेनिन के मार्ग-दर्शन में पेत्रोग्राद में क्रांतिकारी कार्रवाइयों में जुट गये। उन कार्रवाइयों का एक पहलू बुद्धिजीवियों को क्रांति के पक्ष में लाना था।

पेत्रोग्राद में महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति की विजय के बाद (१९१७) लेनिन की अध्यक्षता में पहली सोवियत सरकार का गठन हुआ। लेनिन के सुझाव पर लुनाचार्स्की उस सरकार के एक सदस्य

बने। वह शिक्षा जन-कमिसारियत के अध्यक्ष थे और इस पद पर १२ साल रहे। सितम्बर, १९२९ में लुनाचार्स्की को सोवियत संघ की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति से सम्बद्ध अकादमी समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया और १९३३ में उन्हें स्पेन में सोवियत संघ का राजदूत नियुक्त किया गया। स्पेन जाते हुए रास्ते में ही वह गंभीर रूप से बीमार हो गये और २६ दिसम्बर को दक्षिण फ़्रांस में मेन्तोन में उनकी मृत्यु हो गयी। लुनाचार्स्की को मास्को में लाल चौक में क्रेमलिन दीवार के साये में दफ़नाया गया।

११ विदेशी भाषाओं पर पूर्ण अधिकार के साथ एक प्रकांड विद्वान, मेधावी मनीषी, कला और साहित्य के क्षेत्रों में सुप्रसिद्ध सिद्धांतकार, मौलिक आलोचक, लेखक, नाटककार, पत्रकार और वक्ता के रूप में लुनाचार्स्की ने समाजवादी संस्कृति की रचना में विशाल योगदान किया। उनका नाम समाजवादी संस्कृति, समाजवादी बुद्धिजीवियों, सोवियत साहित्य और कला, मार्क्सवादी-लेनिनवादी सौंदर्यशास्त्र तथा कला-आलोचना, शिक्षाशास्त्र और शिक्षा के विकास में एक संपूर्ण अवधि से अविच्छेद्य रूप से जुड़ा हुआ है।

लुनाचार्स्की ने समाजवादी संस्कृति के प्रचार में एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। विदेशी प्रेस उन्हें यूरोपीय देशों में सबसे सुसंस्कृत और सुशिक्षित शिक्षा-मंत्री कहा करता था। वह रोमां रोलां, आंरी बार्बूस, बर्नार्ड शॉ और प्रगतिशिल जर्मन लेखक और कला-सिद्धांत-कार बेर्तोल्द ब्रेख़्त के दोस्त थे, जो सभी महान प्रतिभाओं से संपन्न सोवियत शिक्षा कमिसार की बड़ी क़द्र करते थे। रोमां रोलां के शब्दों में, अनातोली लुनाचार्स्की "अपने देश के बाहर सोवियत चिंतन और कला के सार्विक रूप से सम्मानित दूत थे।"

लुनाचार्स्की को साहित्य, संगीत, थियेटर, चित्रकारी, वास्तु-कला, नीतिशास्त्र, दार्शनिक और क्रांतिकारी चिंतन के इतिहास, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, धर्म-विरोधी प्रचार, शिक्षाशास्त्र, शिक्षा, आदि पर अनेकानेक कृतियों की रचना का श्रेय था। लुनाचार्स्की अनेक नाटकों के लेखक थे: 'राजा का नाई' (१९०६), 'फ़ाउस्ट और नगर' (१९१८), 'ओलिवर क्रॉमवेल' (१९२०), 'थामस काम्पानेल्ला' (१९२२), 'डॉन क्विग्ज़ोट मुक्त' (१९२२), 'विष' (१९२६), आदि।

लुनाचार्स्की द्वारा छोड़ी गयी इस महान और विविध विरासत में शिक्षा संबंधी कृतियों का एक महत्वपूर्ण स्थान है। ऐसी कृतियों की संख्या ३०० से अधिक है। वे सोवियत शिक्षा-प्रणाली के निर्माण के लगभग सभी पहलुओं , क्रांति द्वारा शिक्षाशास्त्र तथा शिक्षा-संस्थाओं के समक्ष निर्धारित सभी कार्यभारों को प्रतिबिम्बित करती हैं। इनमें से अनेक कृतियां सैद्धांतिक दिलचस्पी से कहीं बढ़ कर हैं। उनका एक बड़ा भाग आज भी अपना औचित्य बनाये हुए है और शिक्षा के सिद्धांत तथा व्यवहार में बहुत-से जटिल प्रश्नों के बारे में नये सिरे से सोचने तथा निर्णय लेने में हमें सहायता करता है।

पहले शिक्षा जन-कमिसार के रूप में लुनाचार्स्की सोवियत स्कूल के मूल प्रेरक थे। लेनिन के आह्वान पर उन्होंने नयी, समाजवादी शिक्षा-प्रणाली के निर्माण का नेतृत्व किया। उन्होंने शिक्षा और संस्कृति के मार्क्सवादी आदर्शों को पहली बार व्यवहार में कार्यान्वित करने का बीड़ा उठाया। यह अक्तूबर क्रांति के बाद के वर्षों की अविश्वसनीय रूप से पेचीदा परिस्थितियों में किया जाना था। "जनता को वह विराट भूमिका निभाने में यथासंभव तेज़ी से ज्ञान की बड़ी से बड़ी मात्रा प्रदान करना, जिसे क्रांति ने उसे दे दिया है" इन्हीं शब्दों में लुना-चार्स्की ने शिक्षा जन-कमिसार के रूप में अपने कार्य का उद्देश्य और अर्थ व्यक्त किया।

इस कार्य का क्षेत्र और पैमाना असामान्य रूप से व्यापक था। इसमें निरक्षरता के उन्मूलन से ले कर जनता की राजनीतिक शिक्षा तक, सभी स्तरों के शिक्षा संस्थानों से लेकर विज्ञान, कला, साहित्य, आदि तक संस्कृति और शिक्षा के सभी पहलू सम्मिलित थे। और इन विविध कार्यकलापों पर अत्यधिक सुसंस्कृत तथा कम्युनिस्ट आदर्शों के एक अत्यंत उत्कट योद्धा के रूप में लुनाचार्स्की के व्यक्तित्व की गहरी छाप है।

टिप्पणियां

इस संग्रह में सम्मिलित लुनाचार्स्की के लेखों और भाषणों संबंधी टिप्पणियां दो प्रकार की हैं। पहला लेखों या भाषणों के ऐतिहासिक और शैक्षिक पहलुओं का संक्षिप्त परिचय और दूसरा तथ्यात्मक विवरण।

शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस में भाषण
२६ अगस्त, १९१८

महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति के बाद के प्रथम वर्षों में जन-शिक्षा पर कांग्रेसों ने नये, समाजवादी स्कूल के विकास की दिशा निर्धारित करने और सोवियत शिक्षाशास्त्र के विचारधारात्मक और सैद्धांतिक आधार निर्मित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इन कांग्रेसों ने अध्यापक-समुदाय को सोवियत सरकार के पक्ष में खींचने, समाज के भीतर उपलब्ध सभी शक्तियों को स्कूलों को मौलिक ढंग से पुनर्निर्मित करने की समस्याओं को हल करने के लिए जुटाने में जो भूमिका अदा की, वह विशेष रूप से महत्वपूर्ण थी। १९१८ में रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र में अध्यापकों की १६४ स्थानीय कांग्रेसें तथा शिक्षा-कर्मियों की ८१ कांग्रेसें आयोजित की गयीं।

जनता के लिए शिक्षा के समाजवादी संगठन के सिद्धांतों को तैयार करने संबंधी इन विविध कार्यों के निष्कर्षों की समीक्षा शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस ने की, जिसमें ७०० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। कांग्रेस मास्को में २५ अगस्त से ४ सितम्बर, १९१८ तक हुई। लेनिन ने इस कांग्रेस में भाषण दिया। उनके भाषण ने नये, समाजवादी समाज के निर्माण में जनता के लिए शिक्षा के महत्व की, सर्वप्रथम स्कूलों के महत्व की रूपरेखा प्रस्तुत की।

कांग्रेसों ने 'एकीकृत श्रम स्कूल संबंधी क़ानून' के प्रारूप पर विचार-विमर्श किया, जिसे अखिल-रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने स्वीकार कर लिया। इस क़ानून के साथ ही कांग्रेस द्वारा स्वीकृत 'एकीकृत श्रम स्कूल के मूलभूत सिद्धांतों' को भी प्रकाशित किया गया।

दोनों दस्तावेज़ों ने सोवियत स्कूल के इतिहास में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। उन्होंने रूस के स्कूलों में होनेवाले मौलिक रूपांतरणों की विचारधारात्मक, सैद्धांतिक और सांगठनिक तैयारी को पूरा किया तथा उन रूपांतरणों के व्यावहारिक कार्यान्वयन के एक नये चरण का शुभारंभ किया।

[1] यहां इशारा अमरीका के राष्ट्रपति थामस जेफ़रसन के विचार की ओर है। लुनाचार्स्की ने इसके बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी 'संपादकों

की ओर से' में लिखा था, जो कांग्रेस से कुछ समय पहले पत्रिका 'वेस्तनिक नारोद्नोगो प्रोस्वेश्चेनिया सोयूज़ा कोम्मून सेवेर्नोइ ओब्लास्ती' ('कम्यूनों के उत्तरी प्रादेशिक संघ का शिक्षा संदेशवाहक'), १९१९, नं० १, अगस्त, पृष्ठ २१, में प्रकाशित हुई: "थामस जेफ़रसन ने... १७८६ में यानी फ़्रांसीसी क्रांति के आरंभ के तीन साल पहले अपने महान पूर्ववर्ती को (यानी जार्ज वाशिंगटन को – **लेखक**) यह लिखा – 'मेरे लिए यह स्वत:सिद्ध है कि हमारी स्वतंत्रता केवल स्वयं जनता के हाथों में ही सुरक्षित रह सकती है और केवल तभी, जब जनता ने शिक्षा का एक निश्चित स्तर प्राप्त कर लिया हो। यही कारण है कि सामान्य योजना के अनुसार शिक्षा का कार्यान्वयन राज्य का प्रथम कर्त्तव्य है।'"

[2] २७ फ़रवरी, १९१७ को पेत्रोग्राद मज़दूरों तथा सैनिकों के क्रांतिकारी विद्रोह की विजय रूस में बुर्जुआ-जनवादी फ़रवरी क्रांति की पहली घटना थी। ज़ारशाही का तख़्ता उलट दिया गया। मार्च, १९१७ के प्रारंभिक दिनों में बुर्जुआ-जनवादी क्रांति देश के अधिकांश नगरों और कस्बों में विजयी हो चुकी थी। फ़रवरी क्रांति महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति के पथ पर एक अत्यंत महत्वपूर्ण मंज़िल थी।

फ़रवरी क्रांति के परिणामस्वरूप एक ऐसी स्थिति क़ायम हो गयी, जिसमें सत्ता के दो केन्द्र – बुर्जुआ अस्थायी सरकार तथा मज़दूर और किसान प्रतिनिधियों की सोवियतें – प्रकट हुए। मार्च – अप्रैल, १९१७ में अस्थायी सरकार का मुख्य उद्देश्य, लेनिन के शब्दों में, "यथासंभव सावधानी से और चुपचाप क्रांति को विफल करना तथा किसी भी आश्वासन को पूरा किये बिना सभी आश्वासनों की प्रतिज्ञा करना था" (व्ला० इ० लेनिन, 'क्रांति के सबक़', जुलाई, १९१७)। ज़ारशाही का तख़्ता उलटनेवाली फ़रवरी क्रांति प्रस्तुत समस्याओ को हल करने में असफल रही। लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविक पार्टी ने बुर्जुआ-जनवादी क्रांति को समाजवादी क्रांति में तेज़ी से रूपांतरित करने संबंधी कार्रवाई विकसित की।

[3] पहला सोवियत संविधान १९१८ में सोवियतों की पांचवीं अखिल-रूसी कांग्रेस द्वारा स्वीकृत रूसी संघ का संविधान था।

१९२४ में अखिल-संघीय सोवियतों की दूसरी कांग्रेस ने सोवियत समाजवादी जनतंत्र संघ के पहले संविधान को स्वीकार किया।

नवम्बर, १९३६ में सोवियतों की आठवीं (असाधारण) अखिल-संघीय कांग्रेस ने सोवियत संघ का एक नया संविधान स्वीकार किया। इस संविधान ने १९२४ में स्वीकृत संविधान के समय से हुए गहन परिवर्तनों को क़ानूनी मान्यता दी और सोवियत संघ में समाजवाद की विजय को प्रतिबिम्बित किया।

सोवियत संघ के वर्तमान संविधान – विकसित समाजवादी समाज के संविधान – को ७ अक्तूबर, १९७७ को सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के एक विशेष अधिवेशन ने पुष्ट किया। यह बल देना है कि "विकसित समाजवादी समाज कम्युनिज़्म के मार्ग पर एक स्वाभाविक, तर्कसंगत चरण है," कि "सोवियत राज्य सर्वहारा अधिनायकत्व के कार्यभारों को पूरा करके संपूर्ण जनता का राज्य बन गया है।" संविधान आयोग के अध्यक्ष लेओनीद ब्रेज्नेव ने सर्वोच्च सोवियत के विशेष अधिवेशन में अपने भाषण में कहा था, "नया संविधान सोवियत राज्य के विकास के संपूर्ण ६० वर्षों का परिणाम है। यह इसका एक अनूठा प्रमाण है कि अक्तूबर क्रांति द्वारा घोषित विचारों और लेनिन की अवधारणाओं को जीवन में सफलतापूर्वक साकार किया जा रहा है।"

' फ़रवरी क्रांति के बाद अस्थायी सरकार के शिक्षा मंत्रालय के सलाहकारी निकाय के रूप में **शिक्षा राजकीय समिति** क़ायम की गयी। अक्तूबर क्रांति के बाद लुनाचार्स्की ने जनता को संबोधित अपनी पहली घोषणा ('जनता के लिए शिक्षा पर', २९ अक्तूबर, १९१७) में इस समिति के समक्ष सोवियत अधिकारियों के साथ सहयोग की पेशकश की। समिति ने इस पेशकश को ठुकरा दिया और काम करना बंद कर दिया। नवम्बर, १९१७ में रूसी जनतंत्र की जन-कमिसार परिषद की एक आज्ञप्ति द्वारा इसे भंग कर दिया गया।

९ नवम्बर, १९१७ को केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति की एक आज्ञप्ति ने शिक्षा राजकीय आयोग की स्थापना की, जिसका कार्य "शिक्षा का सामान्य मार्गदर्शन" था। जून, १९१८ में 'रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र में जन-शिक्षा के संगठन पर' जन-कमिसार

परिषद की एक आज्ञप्ति के अनुसार राजकीय आयोग के सदस्यों में शिक्षा कमिसारियत के प्रमुख कर्मी, केन्द्रीय सोवियत, ट्रेड-यूनियन और सहकारी समितियों के प्रतिनिधि, प्रादेशिक शिक्षा कार्यालयों के प्रतिनिधि शामिल थे। यह आयोग शिक्षा जन-कमिसार के नेतृत्व में काम करनेवाला था।

[5]१५ नवम्बर, १९१७ को अध्यापक-समुदाय को संबोधित करते हुए लुनाचार्स्की ने लिखा, "... रूसी बुद्धिजीवी वर्ग के सर्वोत्तम अंश ने दशकों से जनता की सेवा की है और उस सेवा पर उसे गर्व रहा है। इसने शिक्षा, जन-समुदाय की चेतना को प्रेरित करने के ध्येय को विशेष महत्व का माना है... अध्यापक, सच्चे अध्यापक को... सभी कठिनाइयों और पथ-विचलनों को झेलते हुए हमेशा जनता के साथ रहना चाहिए। जाइये और जनता की सेवा कीजिये।"

[6]**अखिल-रूसी अध्यापक यूनियन** की स्थापना जून, १९०५ में की गयी थी। १९०९ में यह भंग हो गयी। १९१७ में फ़रवरी क्रांति के बाद इसे पुनर्स्थापित किया गया और इसकी शाखाएं लगभग सभी स्थानों में क़ायम हो गयीं।

अपने कार्य की पहली और दूसरी अवधि में अखिल-रूसी अध्यापक यूनियन राजनीतिक रूप से बुर्जुआ और टुटपुंजिया-बुर्जुआ पार्टियों के प्रभाव में थी। इसने १९१७ की अक्तूबर क्रांति के प्रति शत्रुतापूर्ण रुख़ अपनाया। दिसम्बर, १९१७ में अध्यापक यूनियन की परिषद ने अध्यापकों की हड़ताल संगठित करने का प्रयास किया, लेकिन इसका आह्वान सफल नहीं हुआ।

१९१८ की शरत् तक यूनियन का प्रतिक्रांतिकारी नेतृत्व अपना प्रभाव खो चुका था और इसकी अनेक स्थानीय शाखाएं सोवियत सरकार के साथ निकट सहयोग करने लगी थीं। अखिल-रूसी कार्यकारिणी समिति के २३ दिसम्बर, १९१८ के एक निर्णय द्वारा अखिल-रूसी अध्यापक यूनियन को भंग कर दिया गया।

[7]अपने लेख 'हमने शिक्षा मंत्रालय पर कैसे क़ब्ज़ा किया' (१९२७) में लुनाचार्स्की ने लिखा: "सोवियत सत्ता और शिक्षा मंत्रालय के अधिकारियों के बीच निपटारा करना असंभव सिद्ध हुआ।" अधिकारियों

ने तोड़फोड़ करने का निर्णय किया और खुली घोषणा की कि "वे कभी हार नहीं मानेंगे।" लुनाचार्स्की ने स्मरण किया कि कैसे पहली बार वह और अन्य लोग मंत्रालय आये – "हम बिल्कुल खाली कमरों से हो कर गुज़रे।" केवल कुछ क्लर्कों ने शिक्षा जन-कमिसारियत के प्रतिनिधियों से भेंट की।

[8] जब सोवियत सरकार मार्च, १९१८ में पेत्रोग्राद से मास्को स्थानांतरित हुई, तो लुनाचार्स्की ने रूसी संघ की जन-कमिसार परिषद को संबोधित अपने स्मरणपत्र में कहा : "मैं अपने साथी कमिसारों के समक्ष यह प्रस्ताव करने का दायित्व लेता हूं कि मुझे पेत्रोग्राद में कमिसारियत का आधिकारिक प्रतिनिधि नियुक्त किया जाये... मैं अपने पर जो दायित्व ले रहा हूं, उसके प्रति सचेत हूं, इस बात के प्रति सचेत हूं कि यह कितनी भारी, ख़तरनाक और अनर्थकारी पद है, जिसे ग्रहण करने की मैं अनुमति मांग रहा हूं, लेकिन जब तक मैं भ्रम में न हूं, यह करना मेरा कर्त्तव्य है।"

लुनाचार्स्की पेत्रोग्राद में १९१९ के प्रारंभ तक रहे, वह रूसी संघ के शिक्षा जन-कमिसार तथा उत्तरी प्रदेश के कम्यूनों के संघ के शिक्षा जन-कमिसार के कार्यों को पूरा करते हुए समय-समय पर मास्को आते रहते थे। मई, १९१९ में उत्तरी प्रदेश के कम्युनों के संघ को भंग कर दिया गया और केन्द्रीय सरकारी निकायों ने इसका शासन संभाल लिया।

[9] २७ फ़रवरी, १९१८ को राजकीय शिक्षा आयोग ने "सभी अध्यापन पदों और शिक्षा प्रशासन में सभी पदों के निर्वाचक स्वरूप' पर एक निर्णय जारी किया। इस निर्णय ने सभी स्थानीय सोवियतों के लिए जुलाई, १९१८ के अंत तक सभी स्कूली कर्मियों का चुनाव कराना अनिवार्य बना दिया। इन चुनावों का उद्देश्य शिक्षा सेवा का जनवादीकरण करना, स्कूलों से प्रतिक्रांतिकारी तत्वों को हटाना और स्थानीय आबादी के विश्वासपात्र शिक्षा कर्मियों को लाना था।

[10] 'धर्म और चर्च तथा धार्मिक समाजों की स्वतंत्रता पर' जन-कमिसार परिषद की आज्ञप्ति (अनेकानेक कृतियों में 'राज्य से चर्च और चर्च

से स्कूलों के अलगाव पर' शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित) २० जनवरी, १९१८ को घोषित की गयी। अनेक स्थानों में पादरियों और अखिल-रूसी अध्यापक यूनियन में काम करनेवाले लोगों के प्रभाव के अंतर्गत किसान-सभाओं ने स्कूलों में धर्म-ग्रंथ की शिक्षा को बनाये रखने की मांग करते हुए प्रस्ताव पास किये थे। लेकिन १९१७-१८ के शैक्षिक वर्ष के अंत तक स्कूलों में एक विषय के रूप में धर्म-ग्रंथ का पढ़ाया जाना सर्वत्र बंद हो गया था।

[11]१९१८ के पूर्वार्ध में शिक्षा प्रशासन की निम्नलिखित प्रणाली बन गयी: केन्द्रीय निकाय – राजकीय शिक्षा आयोग और शिक्षा कमिसारियत; स्थानीय सोवियतों के अंतर्गत शिक्षा विभाग और प्रत्येक शिक्षा विभाग और शिक्षा विभागों के अन्तर्गत नियंत्रक निकायों के रूप में निर्वाचित होनेवाली जन-शिक्षा परिषदें।

[12]क्रांति-पूर्व रूस में शिक्षा प्रशासन की निम्नलिखित प्रणाली प्रचलित थी: केन्द्रीय प्रशासकीय निकाय १८०२ में क़ायम शिक्षा मंत्रालय था; स्थानीय नियंत्रण का प्रयोग स्कूली क्षेत्रों के न्यासी (१८०४ से) करते थे; प्रत्येक क्षेत्र में अनेक प्रशासकीय इकाइयां – गुबेर्निया – आती थीं, जिनमें से प्रत्येक में १८७४ में जन-स्कूल निदेशालय क़ायम किये गये, जो प्रारंभिक स्कूलों के प्रभारी होते थे। प्रारंभिक स्कूलों का प्रत्यक्ष नियंत्रण प्रारंभिक स्कूलों के निरीक्षणालय के हाथों में था (निरीक्षक का पद १८६७ में शुरू किया गया)।

२१ दिसम्बर, १९१७ को राजकीय शिक्षा आयोग के एक निर्णय द्वारा प्रारंभिक स्कूलों के निदेशालयों और निरीक्षणालयों को समाप्त कर दिया गया। १९१८ के पूर्वार्ध में स्कूली क्षेत्रों का उन्मूलन कर दिया गया।

[13]सूचीबद्ध सुधारों में से कुछ एकदम अस्थायी थे। उस अवधि में परीक्षाओं, प्रमाणपत्रों और अंक देने की प्रणाली का उन्मूलन आवश्यक था, क्योंकि अध्यापक-समुदाय का प्रतिक्रियावादी हिस्सा उनका उपयोग मज़दूर माता-पिताओं द्वारा स्कूलों में अपने बच्चों का दाख़िला पाने से रोकने के लिए कर सकता था।

[14]६ अगस्त, १९१८ को लुनाचार्स्की ने चर्च और राज्य के अलगाव पर खुली बहस में भाग लिया, जहां उनका प्रतिद्वंद्वी पुरोहित बोयार्स्की था। लुनाचार्स्की अनीश्वरवाद के कट्टर समर्थक थे। उन्होंने कहा कि धर्म न केवल प्रवंचना, बल्कि मुख्यतः जनसाधारण की "आत्मप्रवंचना" है और इसीलिए यह ज़रूरी है कि इससे सबसे पहले विचारधारात्मक अस्त्रों से लड़ा जाये।

लुनाचार्स्की ने बार-बार कहा कि शिक्षा के क्षेत्र में धर्म के विरुद्ध संघर्ष धर्म की स्वतंत्रता संबंधी संविधान की मूलभूत प्रस्थापनाओं का क़तई विरोधी नहीं है। उन्होंने कहा कि इसे प्रशासकीय कार्रवाई के किसी रूप में नहीं परिवर्तित होना चाहिए अथवा अशिष्ट दबाव का रूप नहीं धारण करना चाहिए, बल्कि सही अर्थ में समझाने-बुझाने का विषय बने रहना चाहिए।

[15]१८६६ में नार्वे ने एकीकृत स्कूल प्रणाली लागू की, जिसमें मध्यवर्ती स्कूल (६ से १५ साल तक के बच्चों के लिए छः साल का कोर्स) शामिल थे और इनके बाद तीन साल के अध्ययन कोर्स के साथ उच्च स्कूल (जिम्नेज़ियम) थे।

[16]लुनाचार्स्की यहां मार्क्स के कथन का पदान्वय कर रहे हैं, जिन्होंने कहा, "अब तक दार्शनिकों ने दुनिया की विभिन्न तरीक़ों से **व्याख्या** ही की है; मुख्य बात इसे **बदलना** है।" (का० मार्क्स, 'फ़ायरबाख़ पर निबंध', १८४५)।

[17]लुनाचार्स्की अपने लेख 'वर्ग स्कूल पर' (देखिए, पृष्ठ ९३–१२५) में इसके बारे में विस्तृत रूप से उल्लेख करते हैं।

[18]यहां लुनाचार्स्की का संकेत जर्मन दार्शनिक और शिक्षाशास्त्री, तथाकथित "सामाजिक शिक्षाशास्त्र" के प्रमुख प्रतिनिधि पॉल नाटोर्प (१८५४–१९२४) की ओर है। सामाजिक शिक्षाशास्त्र के सभी समर्थकों की भांति नाटोर्प ने माना कि शिक्षाशास्त्र का मुख्य कार्यभार यह स्पष्ट करना है कि कौन-सी सामाजिक परिस्थितियां अच्छी शिक्षा के लिए

सर्वाधिक अनुकूल हैं। नाटोर्प के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य अपने को नैतिक रूप से पूर्ण बनाने के लिए मनुष्य को प्रेरित करना है, यह व्यक्तिगत ख़ुशी के लिए अनिवार्य है; इसे प्राप्त करने का सर्वोत्तम साधन लोगों की इच्छा-शक्ति की सक्रियता और सामूहिक चेतना को विकसित करना है।

[19]**उच्च स्कूलों के शिक्षा-कर्मियों का अखिल-रूसी सम्मेलन** मास्को में ८–१४ जुलाई, १६१८ को हुआ। इसमें ४०० से अधिक प्रतिनिधियों – प्रोफ़ेसरों, विद्यार्थियों, उच्च शिक्षा संस्थानोंवाले नगरों के शिक्षा विभागों के कमचारियों – ने भाग लिया। लुनाचार्स्की के शब्दों में, सम्मेलन का उद्देश्य "उच्च शिक्षा संस्थानों में पढ़ानेवाले प्रोफ़ेसरों के साथ इस बात पर सहमति पर पहुंचना था कि उच्च शिक्षा को नये रूस की आवश्यकताओं के अनुरूप कैसे बनाया जाये"।

[20]१६१८ की गरमी में युवा सोवियत जनतंत्र ने अपने को युद्धरत मोर्चों से घिरा पाया। पूर्वी मोर्चों पर, उराल और वोल्गा क्षेत्रों में तीव्र संघर्ष चल रहा था, जहां से आंतरिक और विदेशी प्रतिक्रियावादी शक्तियों ने मास्को पर हमला करने की योजना बनायी। इसके साथ ही, प्रतिक्रांतिकारी फ़ौजों ने रूसी ज़ार निकोलाई द्वितीय को मुक्त कराने का इरादा बनाया, जो येकातेरीनबुर्ग (अब स्वेर्दलोव्स्क) में बंदी था। १६१८ की गरमी के अंत तक पूर्वी मोर्चे पर लाल सेना का अस्थायी रूप से पीछे हटना रुक चुका था और १६१८ की शरत् में उसने आक्रमण करना शुरू कर दिया।

[21]**अध्यापक प्रशिक्षण कर्मियों का सम्मेलन** १८–२५ अगस्त, १६१८ को हुआ। इसने भावी अध्यापकों के लिए प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना तथा इनके लिए पाठ्यक्रम की तैयारी संबंधी प्रश्नों पर विचार किया।

[22]दिसम्बर, १६१७ में जन-कमिसार परिषद ने उन सभी शिक्षा संस्थानों को शिक्षा जन-किमसारियत को हस्तांतरित करने का एक निर्णय पास किया, जो पहले पादरियों के नियंत्रण में थे। ५ जून, १६१८ को

सभी दूसरे विभागों के अंतर्गत शिक्षा संस्थानों को शिक्षा जन-कमिसारियत को हस्तांतरित करने की जन-कमिसार परिषद की एक आज्ञप्ति जारी की गयी।

[23] जन-कमिसार परिषद की १६ अगस्त, १६१८ की एक आज्ञप्ति ने सर्वोच्च राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था परिषद के तत्वावधान में विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी विभाग की स्थापना की। इस विभाग का अध्यक्ष जन-कमिसार परिषद द्वारा नियुक्त किया गया और इसकी अधिशासी समिति के सदस्यों को सर्वोच्च राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था परिषद के अध्यक्षमंडल ने शिक्षा कमिसारियत के साथ परामर्श में नियुक्त किया।

सामाजिक शिक्षा पर
३ नवंबर, १६१८ को पेत्रोग्राद में दिया गया भाषण

अक्तूबर क्रांति द्वारा उठायी गयी बड़ी शिक्षा समस्याओं में सामाजिक शिक्षा की समस्या को मुख्य स्थान प्राप्त था। रूसी शैक्षिक चिंतन में सामाजिक शिक्षा के प्रश्नों का क्रांतिकारी जनवादियों निकोलाई चेर्निशेव्स्की (१८२८–१८८६) और निकोलाई दोब्रोल्यूबोव (१८३६–१८६१) की कृतियों में विशद विवेचन किया गया है। समाज के क्रांतिकारी पुनर्गठन का मार्ग प्रशस्त करने के उद्देश्य के लिए सामाजिक शिक्षा के कार्यभारों की पूर्ति – यह शिक्षा-क्षेत्र में उनके भ्रमणों का एक मुख्य स्वर था। लुनाचार्स्की ने सामाजिक शिक्षा के मामलों का विवेचन एक क़दम आगे बढ़ कर किया था।

[1] **मूसिका-शिक्षा** (इसकी व्युत्पत्ति यूनानी शब्द "मूसिका" – कलादेवियों द्वारा शासित सभी विद्याएं – से हुई है)। इसने पांचवीं और चौथी शताब्दियों ई० पू० में एथेन्स में यूनानी शिक्षा प्रणाली में सर्वोत्कृष्ट अभिव्यक्ति पायी। इसमें उच्च वर्ग की नैतिक, सौंदर्यबोधी और सामान्यतः सांस्कृतिक शिक्षा शमिल थी।

[2] **जिम्नेज़ियम** – प्राचीन यूनान में राजकीय शिक्षा संस्था।

[3] **प्लेटो** (४२७–३४७ ई० पू०) के शैक्षिक विचार उनके 'राज्य' और 'क़ानून' में अत्यंत पूर्ण ढंग से व्यक्त किये गये हैं, जिनमें वह आदर्श राज्य की शिक्षा प्रणाली का वर्णन करते हैं। इस आदर्श राज्य की सामाजिक संरचना तीन वर्गों के अस्तित्व की पूर्वकल्पना करती है: शासक-दार्शनिकों का छोटा वर्ग (और इन्हीं शासक-दार्शनिकों के बच्चों के लिए प्लेटो की शिक्षा प्रणाली बनी), राज्य की रक्षा करने वाले योद्धा और अधिकारविहीन "अन्य लोग", जो आबादी का बड़ा हिस्सा बनाते हैं। विशेषाधिकार-प्राप्त वर्ग के बच्चों की शिक्षा सामाजिक स्वरूप की है। अपने प्रथम दिनों से ही बच्चे विशेष शैक्षिक संस्थाओं को सौंप दिये जाते हैं, जहां उनका पालन-पोषण और शिक्षण "आदर्श शिक्षक" के संरक्षण में होता है। यह "आदर्श शिक्षक", प्लेटो के शब्दों में, "सभी दृष्टियों से सर्वोत्तम पुरुष" होता है, जिसे शासक "सर्वोत्तम नागरिकों" के बीच से चुनते हैं।

[4] **हम्बोल्ट**, विल्हेल्म (१७६७–१८३५) – जर्मन दार्शनिक, भाषाशास्त्री और राजनीतिज्ञ; उन्होंने एकीकृत स्कूल प्रणाली की स्थापना, चर्च नियंत्रण से स्कूलों के अलगाव और जिम्नेज़ियमों में माध्यमिक शिक्षा के सुधार का समर्थन किया। उनके प्रयासों के परिणामस्वरूप बर्लिन विश्वविद्यालय (अब जर्मन जनवादी जनतंत्र में हम्बोल्ट विश्वविद्यालय के नाम से सुप्रसिद्ध) की स्थापना हुई।

[5] **फ़ेर्स्टर**, फ़ेडरिक विल्हेल्म (१८६९–१९५६) – जर्मन धर्मविज्ञानी, दार्शनिक और शिक्षाशास्त्री। उन्होंने आचरण, संकल्प और भावना के प्रशिक्षण को ईसाई धर्म की दृष्टि से देखा।

[6] **स्मिथ**, ऐडम (१७२३–१७९०) – अंग्रेज़ अर्थशास्त्री और दार्शनिक, बुर्जुआ राजनीतिक अर्थशास्त्र के क्लासिकीय स्कूल के प्रमुख प्रतिनिधि।

[7] देखिये, 'शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस में भाषण', टिप्पणी नं० 18.

[8] **पेस्तालोज़्ज़ी**, जोहान्न हेनरिख़ (१७४६–१८२७) – स्विस जनवादी शिक्षाशास्त्री, प्रारंभिक शिक्षा सिद्धांत के एक संस्थापक तथा शिक्षा पर अनेक सुप्रसिद्ध रचनाओं के लेखक।

पेस्तालोज़्ज़ी के विचार में, शिक्षा का उद्देश्य मानव प्रकृति की सभी शक्तियों तथा योग्यताओं का सामंजस्यपूर्ण विकास होना चाहिए। यह आवश्यकता उनके द्वारा प्रारंभिक शिक्षा के संबंध में विकसित संपूर्ण सिद्धांत और विवेचन का आधार है, जिसमें मानसिक, नैतिक, शारीरिक और श्रम शिक्षा शामिल थी। पेस्तालोज़्ज़ी के प्रारंभिक अवस्था में शिक्षा-विधि के सिद्धांत में मुख्य चीज़ विकासकारी शिक्षा का उनका विचार है: शिक्षा के दौरान विद्यार्थियों की चिंतन-शक्ति तथा बोध-शक्ति का विकास और मस्तिष्क के सक्रिय प्रयोग की आदत का विकास। पेस्तालोज़्ज़ी ऐसे स्कूलों के निर्माण के पक्ष में थे, जो जनसाधारण के बच्चों की पहुंच के भीतर हों और उनकी आवश्यकताओं तथा अभिरुचियों को पूरा करते हों।

[9] **कोंदोर्से**, मरी जान आंतुआन निकोला दे (१७४३–१७९४) – फ़्रांसीसी दार्शनिक, ज्ञान-प्रचारक, गणितज्ञ, समाजविज्ञानी; फ़्रांस में १७८९-९४ की बुर्जुआ क्रांति में सक्रिय हिस्सा लिया।

विधान सभा की शिक्षा समिति के एक सदस्य के रूप में कोंदोर्से ने व्यापक जनसाधारण के लिए शिक्षा के संगठन की एक योजना पेश की। इसमें एक चरण से दूसरे चरण में स्वतंत्र रूप से जाने के साथ एक एकीकृत स्कूल प्रणाली के निर्माण, स्त्री-पुरुषों के शैक्षिक सुअवसर की समानता, चर्च से अलगाव तथा सबके लिए निःशुल्क शिक्षा का प्रावधान था। कोंदोर्से राजनीति और राज्य से स्कूलों की स्वतंत्रता के पक्षधर थे। उनकी योजना स्वीकार नहीं की गयी।

[10] **मोंतेन**, मिशेल दे, (१५३३–१५९२) – फ़्रांसीसी दार्शनिक और लेखक। अपनी मुख्य कृति 'प्रयोग' (१५८०) में उन्होंने यह दिखाते हुए धर्म-विरोधी रुख़ लिया कि धर्म एक ऐसी खोज थी, जिसका उद्देश्य लोगों को नियंत्रण में रखनेवाली लगाम बनना था। मोंतेन ने सामाजिक श्रेणियों की प्रणाली और मध्ययुग के संपूर्ण विश्व-दृष्टिकोण की आलोचना

की। लोगों की "प्राकृतिक समानता", व्यक्ति के अधिकारों के सिद्धांत की रक्षा करते हुए उन्होंने लोगों से "हर चीज़ का मूल्यांकन बुद्धि से न कि आम धारणा से करने", स्वीकृत सत्ता के जुए को उतार फेंकने और उन पुरुषों की भांति काम करने का आह्वान किया, जो सभी चीज़ों का मूल्यांकन बुद्धि की रोशनी में करते हैं और मात्र विश्वास के आधार पर कुछ भी स्वीकार नहीं करते।

[11] **लेपेलेत्ये**, दे सेंट-फ़ार्जो, लुई मिशेल (१७६०–१७९३) – फ़ांसीसी बुर्जुआ क्रांति में सक्रिय हिस्सा लिया; अपने समय की शिक्षा की सबसे जनवादी योजना – 'जन-शिक्षा योजना' (१७९३) – के लेखक। इस योजना का मूल उद्देश्य सार्विक निःशुल्क शिक्षा लागू करना, राज्य के ख़र्चे पर बोर्डिंग आवास के साथ "राष्ट्रीय शिक्षा गृहों" का निर्माण करना था, जिनमें ५ से ११–१२ साल तक के सभी बच्चे शिक्षित किये जानेवाले थे। लेपेलेत्ये का विचार था कि इस आधार पर शिक्षा के संगठन से सामाजिक असमानता को दूर करने और सामाजिक नैतिकता को सुधारने में सहायता मिलेगी। रोबेसपियेर ने लेपेलेत्ये की योजना स्वीकार कर ली थी, लेकिन कन्वेंशन ने इसे पास नहीं किया।

[12] **शिलर**, फ़्रेडरिक (१७५९–१८०५) – जर्मन कवि, दार्शनिक और इतिहासकार यहां लुनाचार्स्की का इशारा शिलर की कृति 'मानव की सौंदर्यबोधी शिक्षा पर' में व्यक्त विचारों की ओर है।

[13] **बेबेल**, अगस्त (१८४०–१९१३) – जर्मन तथा अंतर्राष्ट्रीय मज़दूर आंदोलन के एक प्रसिद्ध नेता, जर्मन सामाजिक-जनवाद के संस्थापकों में से एक, दूसरे इंटरनेशनल के प्रमुख नेता। बेबेल स्त्रियों को बुर्जुआ समाज के बंधनों से मुक्त करने के संघर्ष में एक प्रेरक शक्ति थे:, राइख़्स्टाग में स्त्रियों के अधिकार के बारे में उनके भाषणों को व्यापक प्रचार मिला। यहां लुनाचार्स्की जिस विचार का उल्लेख कर रहे हैं, उसे बेबेल ने 'स्त्री और समाजवाद' (१८८३) में प्रस्तुत किया था।

[14] **पालेस्त्रा** – प्राचीन यूनान में विशेष जिम्नास्टिक स्कूल, जिसमें १२–१६ साल के लड़कों को शिक्षा दी जाती थी। उच्च परिवारों में जन्मे बेटे १६ या १८ साल की उम्र से जिम्नेज़ियमों में पढ़ते थे।

शिक्षा क्या है?

बहिस्स्कूली शिक्षा के प्रशिक्षकों के लिए पाठ्यक्रमों के उद्घाटन पर दिया गया भाषण २० दिसंबर, १९१९

लुनाचार्स्की का भाषण नवोदित सोवियत राज्य के समक्ष प्रस्तुत बहिस्स्कूली या ग़ैर-स्कूली शिक्षा संगठित करने संबंधी एक अत्यंत महत्वपूर्ण सामाजिक-शैक्षिक कार्यभार के बारे में है। लुनाचार्स्की राजनीतिक, सामाजिक, सांगठनिक और शैक्षिक पहलुओं को ध्यान में रखते हुए अपनी सामान्य दृष्टिसीमा के साथ इस समस्या का विवेचन प्रस्तुत करते हैं।

[1] **फ़ायरबाख़,** लुडविग (१८०४–१८७२) – जर्मन भौतिकवादी दार्शनिक और अनीश्वरवादी, मार्क्सवाद के पूर्ववर्ती।

लुनाचार्स्की के ध्यान में फ़ायरबाख़ का यह वक्तव्य है कि "ईश्वर ने अपने रूप में मनुष्य की सृष्टि नहीं की है, जैसा कि बाइबिल कहती है, यह तो मनुष्य था, जिसने अपने रूप में ईश्वर की सृष्टि की..."

[2] **बोरोदीन,** अ० प० (१८३३-१८८७) – सुप्रसिद्ध रूसी संगीतकार। बोरोदीन की सबसे महत्वपूर्ण संगीत रचना 'राजा ईगोर' है, जो राष्ट्रीय वीर-काव्य का एक आदर्श है।

[3] यहां लुनाचार्स्की महान रूसी कवि अलेक्सान्द्र पुश्किन (१७९९–१८३७) की 'सूक्ति (काव्य-संग्रह)' से एक पंक्ति उद्धृत कर रहे हैं।

[4] यहां लुनाचार्स्की का संकेत फ़्रांसीसी लेखक मोपासां (१८५०–१८९३) की एक कहानी 'अकेलापन' की ओर है, जिसमें वह बुर्जुआ संसार में मनुष्य के आत्मिक अलगाव का चित्रण करते हैं।

[5] यहां उद्धृत विचार महान जापानी कलाकार होकुसाई (१७६०–१८४९) का है, जिन्होंने कहा, "छः साल की आयु में मैंने चीज़ों के रूप को सही ढंग से संप्रेषित करने की कोशिश की। ५० साल

तक मैंने कई चित्र बनाये, लेकिन जब तक ७० साल की उम्र पर नहीं पहुंचा, तब तक कोई भी महत्वपूर्ण चीज़ नहीं प्राप्त कर पाया। ७३ साल की उम्र में मैं जानवरों, चिड़ियों, कीटों और पौधों की संरचना का अध्ययन कर रहा था। इस तरह, मैं कह सकता हूं कि जब तक मैं ८० साल का नहीं हो जाता, तब तक मेरी कला विकसित होती रहेगी और ९० साल की उम्र पर पहुंच कर ही मैं कला के मर्म को समझ पाने में समर्थ होऊंगा।"

6 **जन-विश्वविद्यालय** – सब के लिए खुली सांस्कृतिक संस्थाएं, शैक्षिक स्तर को उठाने तथा मेहनतकश लोगों की आत्मिक आवश्यकताओं को पूरा करने का एक कारगर साधन। जन-विश्वविद्यालयों की व्यापक व्यवस्था एक ऐसा बड़ा कार्यभार थी, जिसे सोवियत संघ १९४१-४५ के महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध में नाज़ीवाद की पराजय के कुछ वर्ष बाद जा कर ही पूरा करने में समर्थ हो सका। छठे दशक में जन-विश्वविद्यालय व्यापक रूप से विकसित हो गये और आठवें दशक के प्रारंभ तक देश में लगभग १६ हज़ार जन-विश्वविद्यालय थे, जिनमें ३० लाख से अधिक लोग पढ़ रहे थे। शिक्षाशास्त्र के अध्ययन के लिए जन-विश्वविद्यालय विशेष रूप से लोकप्रिय हैं जिनमें विद्यार्थियों की कुल संख्या का लगभग एक-तिहाई पढ़ता है।

7 लुनाचार्स्की का इशारा सितम्बर, १९१८ में बुल्गारिया में हुए सैनिक विद्रोह की ओर है।

कम्युनिस्ट प्रचार और जन-शिक्षा

अख़बार 'इज़्वेस्तिया' में २६ मार्च, १९१९ को प्रकाशित लेख

सोवियत राज्य में राजनीतिक-शैक्षिक कार्य के संगठन पर प्रेस में चल रही बहस ने यह लेख लिखने का अवसर प्रस्तुत किया। इस बहस के परिणामस्वरूप १९२० में शिक्षा कमिसारियत में बहिर्स्कूली विभाग का पुनर्संगठन करके राजनीतिक शिक्षा के लिए जनतंत्र की मुख्य समिति ('ग्लावपोलीतप्रोस्वेत') क़ायम की गयी; कम्युनिस्ट पार्टी तथा

सोवियत राज्य की सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्री, प्रमुख शिक्षाशास्त्री, व्ला० इ० लेनिन की पत्नी और निकटतम सहयोगी न० को० क्रूप्स्काया (१८६९–१९३९) को इस समिति का नेतृत्व करने के लिए नियुक्त किया गया। लेकिन इस लेख के प्रकाशन के लिए उपर्युक्त अवसर संबद्ध समस्याओं के क्षेत्र को पूरी तरह नहीं इंगित करता। सांगठनिक प्रश्न के परे लुनाचार्स्की एक बड़ी राजनीतिक और सामाजिक-शैक्षिक समस्या, कम्युनिस्ट पार्टी के समस्त शैक्षिक कार्य की एक अत्यंत महत्वपूर्ण समस्या को देखते हैं और वस्तुतः इसी समस्या को वह अपने लेख का शीर्षक बनाते हैं।

अपने निरूपणों को परिष्कृत बनाते हुए लुनाचार्स्की इस लेख में शिक्षा के वर्ग-स्वरूप के बारे में पहले व्यक्त अपने विचारों का सारांश प्रस्तुत करते हैं तथा सोवियत सरकार की शिक्षा नीति के उद्देश्य और कार्यभार निर्धारित करते हैं।

[1] लुनाचार्स्की के ध्यान में जर्मन मज़दूर आंदोलन के प्रमुख नेता फ़र्दीनांद लासाल (१८२५–१८६४) के निम्नलिखित शब्द हैं: "चतुर्थ वर्ग, जिसके हृदय में विशेषाधिकारों के कोई अंकुर नहीं हो सकते, वस्तुतः इसी वजह से संपूर्ण मानवजाति का पर्यायवाची है... राज्य में चतुर्थ वर्ग का शासन नैतिकता, संस्कृति और विज्ञान की ऐसी समृद्धि लायेगा, जिसे इतिहास में अब तक नहीं देखा गया है।"

सोवियत रूस में बहिर्स्कूली शिक्षा के कार्यभार

बहिर्स्कूली शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस में दिया गया भाषण ६ मई, १९१९

बहिर्स्कूली शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस मास्को में ६ से १९ मई, १९१९ तक हुई। कांग्रेस में लगभग ८०० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। लेनिन ने कांग्रेस में दो बार भाषण किया। कांग्रेस ने निर-

क्षरता के उन्मूलन, बहिस्र्कूली शिक्षा के लिए संस्थाओं की राजकीय प्रणाली की स्थापना, आदि पर कई प्रस्ताव पास किये। वर्तमान स्थिति पर एक विशेष प्रस्ताव पास किया गया। कांग्रेस के आयोजन के समय गृह-युद्ध चल रहा था। नवोदित सोवियत जनतंत्र के सिर पर भयानक ख़तरा मंडरा रहा था।

बहिस्र्कूली शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस ने देश में निरक्षरता दूर करने के लिए व्यापक सामाजिक आंदोलन विकसित करने में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। कांग्रेस के प्रतिनिधियों ने रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र की जन-कमिसार परिषद से वयस्क आबादी (५० साल की आयु तक) तथा स्कूलों में न जानेवाले किशोरों के बीच निरक्षरता के अनिवार्य उन्मूलन पर एक आज्ञप्ति जारी करने का निवेदन किया। शिक्षा जन-कमिसारियत ने १६१६ के अंत में एक प्रारूप आज्ञप्ति प्रस्तुत की और उसी वर्ष २६ दिसम्बर को रूसी सो० सं० स० ज० की आबादी के बीच निरक्षरता के उन्मूलन पर आज्ञप्ति पर लेनिन ने हस्ताक्षर किये। यह सबके लिए शिक्षा में सोवियत सरकार का पहला राजकीय दस्तावेज़, सांस्कृतिक क्रांति पर एक अद्वितीय घोषणापत्र था। आज्ञप्ति ने निरक्षरता पर जन-आक्रमण, सांस्कृतिक मोर्चे के इस क्षेत्र में सोवियत राज्य द्वारा उत्साहपूर्ण, योजनाबद्ध कार्रवाई की शुरूआत की।

सोवियत सरकार ने निरक्षरता उन्मूलन को आवश्यक कार्यभार के रूप में प्रस्तुत ही नहीं किया, बल्कि इसके कार्यान्वयन के लिए आवश्यक परिस्थितियां भी प्रदान कीं। पूरे देश में शिक्षा राजकीय व्यय पर दी जानेवाली थी। शिक्षा कमिसारियत को निरक्षरों को पढ़ाने में पढ़े-लिखे लोगों से अनिवार्य राष्ट्रीय सेवा लेने का अधिकार प्रदान किया गया। आज्ञप्ति ने निरक्षरता उन्मूलन कार्य में कम्युनिस्ट पार्टी, ट्रेड-यूनियनों और कोम्सोमोल की स्थानीय शाखाओं, महिलाओं के बीच काम के लिए आयोग और अन्य संगठनों की व्यापक भागीदारी निर्धारित की। १६ जून, १६२० को शिक्षा जन-कमिसारियत में क़ायम अखिल-रूसी निरक्षरता उन्मूलन असाधारण आयोग निरक्षरता उन्मूलन के राष्ट्रव्यापी आंदोलन का प्रधान निकाय था।

[1] स्कूल-पूर्व शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस मास्को में अप्रैल, १९१९ में हुई।

[2] **रिकार्डो**, डेविड (१७७२–१८२३) – अंग्रेज़ अर्थशास्त्री, औद्योगिक क्रांति के काल में भूस्वामी अभिजात वर्ग के साथ संघर्ष में औद्योगिक बुर्जुआ वर्ग के सिद्धांतकार। कार्ल मार्क्स के शब्दों में, रिकार्डो ने "क्लासिकीय राजनीतिक अर्थशास्त्र को अंतिम रूप प्रदान किया।"

माल्थस, थॉमस राबर्ट (१७६६–१८३४) – अंग्रेज़ अर्थशास्त्री, पादरी, माल्थसवाद के संस्थापक, जो भोंडा समाजवैज्ञानिक सिद्धांत था। अपने 'जनसंख्या के सिद्धांत पर निबंध' में उन्होंने ऐसे विचारों का प्रतिपादन किया, जो बाद में बुर्जुआ सामाजिक चिंतन, ख़ास तौर से, १९वीं सदी के अंत में राजनीतिक अर्थशास्त्र संबंधी विचारों में व्यापक बने।

यहां लुनाचार्स्की का इशारा मार्क्स की उस बात की ओर है, जो उन्होंने माल्थस के बारे में 'बेशी मूल्य का सिद्धांत' में कही थी: "माल्थस के वैज्ञानिक निष्कर्ष सामान्यत: शासक वर्गों और विशेषत: शासक वर्गों के प्रतिक्रियावादी तत्वों के प्रति 'लिहाज़ रखनेवाले' हैं; दूसरे शब्दों में, वह इनके हितों के लिए विज्ञान को झुठलाते हैं।"

[3] न० को० क्रूप्स्काया ने कांग्रेस के अपने स्वागत भाषण में जनता की बहिर्स्कूली शिक्षा और राजनीतिक शिक्षा के बीच निकट संपर्कों की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। क्रूप्स्काया ने प्रस्ताव किया कि जनतंत्र में बहिर्स्कूली शिक्षा के कार्यों में राजनीतिक मार्गदर्शन को शिक्षा जन-कमिसारियत के बहिर्स्कूली विभाग को सौंप दिया जाये, जो बहिर्स्कूली कार्य के विभिन्न क्षेत्रों के समन्वयन के लिए ज़िम्मेदार होगा। क्रूप्स्काया के प्रस्तावों में बहिर्स्कूली शिक्षा की एकीकृत राजकीय प्रणाली के निर्माण की व्यवस्था थी, जो पूरे देश में सारे सांकृतिक और शैक्षिक कार्य के एकीकरण का आधार बननेवाली थी। इन प्रस्तावों को रूसी जनतंत्र में बहिर्स्कूली शिक्षा के संगठन संबंधी आज्ञप्ति में शामिल कर लिया गया, जिसे कांग्रेस ने स्वीकार किया।

वर्ग स्कूल पर।

बुर्जुआ और कम्युनिस्ट श्रम स्कूल

स्वेर्दलोव विश्वविद्यालय में शिक्षा कमिसारियत की शाखा के लिए दिया गया भाषण
२६ अप्रैल, १९२०

इस भाषण में लुनाचार्स्की लोगों के मन में व्यापक रूप से बैठे इन भ्रमों को दूर करते हैं कि राज्य वर्गों से ऊपर है और राजकीय संस्थाओं – चर्च, सेना, प्रेस, बुर्जुआ सरकार – के वर्ग उद्देश्यों और वर्ग स्वरूपों को प्रकट करते हैं। इनके अनुरूप, बुर्जुआ स्कूल की भी सामाजिक भूमिका "जनसाधारण की मनःस्थिति को भ्रष्ट करने के साधन के रूप में प्रकट होती है।"

लुनाचार्स्की बुर्जुआ स्कूल के मुक़ाबले में कम्युनिस्ट स्कूल प्रस्तुत करते हैं। वह नये एकीकृत श्रम पालीतकनीकी स्कूल के आदर्श और उद्देश्य निरूपित करते हैं और उनके कार्यान्वयन के ठोस मार्ग भी दिखाते हैं।

अपने भाषण में लुनाचार्स्की पहली बार श्रम शिक्षा संबंधी अपने विचारों तथा पालीतकनीकी शिक्षा की अपनी अवधारणा का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करते हैं।

इस भाषण में लुनाचार्स्की द्वारा व्यक्त विचारों ने आज भी अपना महत्व नहीं खोया हैं। दिसम्बर, १९७७ में सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति और सोवियत मंत्रिपरिषद द्वारा 'सामान्य स्कूलों में विद्यार्थियों को दिये गये प्रशिक्षण और शिक्षा के आगे सुधार तथा कार्यकारी जीवन के लिए उनकी तैयारी पर' पास किया गया प्रस्ताव "स्कूली विद्यार्थियों को उपयोगी, उत्पादक श्रम के लिए तैयार करने" के महत्व पर विशेष ज़ोर देता है और सामान्य स्कूलों में श्रम शिक्षा के व्यापक पाठ्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।

[1] **ब्रिआन,** आरिस्तीद (१८६२–१९३२) – फ़्रांसीसी राजनीतिज्ञ और राजनयिक। १९वीं सदी के नौवें दशक से समाजवादी आंदोलन में भाग लिया। १९०२ में संसद का सदस्य चुने गये, १९०६ में बुर्जुआ सरकार

के सदस्य बने, फलतः समाजवादी पार्टी से निकाल दिये गये। १६०६ और १६३१ के बीच ११ बार प्रधानमंत्री बने।

[2] **चेर्नोव,** व० म० (१८७६–१९५२) – सामाजिक क्रांतिकारी पार्टी के एक नेता और सिद्धांतकार। १६१७ में बुर्जुआ अस्थायी सरकार में कृषि मंत्री थे और किसानों के विरुद्ध निर्मम दमन कार्रवाइयां कीं। अक्तूबर क्रांति के बाद वह सोवियत-विरोधी विद्रोहों के संगठनकर्ता थे। १६२० में विदेश चले गये, जहां उन्होंने अपनी सोवियत-विरोधी कार्रवाइयां जारी रखीं।

त्सेरेतेली, इ० ग० (१८८२–१९५२) – मई-जून, १६१७ में डाक और तार संचार मंत्री और बाद में बुर्जुआ अस्थायी सरकार में आंतरिक मामलों के मंत्री थे। सोवियत सत्ता की विजय के बाद विदेश चले गये।

[3] **कोनोवालोव,** अ० इ० (जन्म १८७५) – पुराने रूस में सूती उद्योगपति, व्यापार और उद्योग मंत्री और बाद में बुर्जुआ अस्थायी सरकार में उप-प्रधानमंत्री। अक्तूबर क्रांति के बाद विदेश चले गये।

ल्वोव, ग० ये० (१८६१–१९२५) – प्रिंस, बड़ी भूसंपत्तियों के मालिक; मार्च-जुलाई, १६१७ में बुर्जुआ अस्थायी सरकार में मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष, आंतरिक मामलों के मंत्री। अक्तूबर क्रांति के बाद विदेश चले गये और सोवियत रूस के ख़िलाफ़ सशस्त्र हस्तक्षेप के संगठन में हिस्सा लिया।

तेरेश्चेन्को, म० इ० (जन्म १८८८) – करोड़पति, चीनी उद्योगपति। १६१७ में बुर्जुआ अस्थायी सरकार में वित्त-मंत्री और बाद में विदेशी मामलों के मंत्री थे। १६१७ के बाद विदेश चले गये, सोवियत राज्य के ख़िलाफ़ सशस्त्र हस्तक्षेप के एक संगठनकर्ता थे।

[4] **लॉयड जार्ज,** डेविड (१८६३–१९४५) – अंग्रेज़ राजनीतिज्ञ, राजनयिक और लिबरल पार्टी के नेता। १८६० से संसद के सदस्य, १६०५-०८ में व्यापार मंत्री, १६०८-१५ में वित्त-मंत्री, १६१६-२२ में प्रधानमंत्री। लॉयड जार्ज लफ़्फ़ाज़ी के ज़रिये जनता की आंखों में धूल झोंकने की बुर्जुआ प्रणाली के सर्वाधिक प्रखर प्रवक्ता थे।

मिलेरां, अलेक्सांद्र एत्येन (१८५९–१९४३) – फ़्रांसीसी राजनीतिज्ञ, १९वीं सदी के अंतिम दशक में समाजवादियों में शामिल हो गये और फ़्रांसीसी समाजवादी आंदोलन के अवसरवादी ग्रुप का नेतृत्व किया। १८९९ में प्रतिक्रियावादी बुर्जुआ सरकार के सदस्य बने, जहां उन्होंने पेरिस कम्यूनार्डों के हत्यारे, युद्ध-मंत्री जनरल गैलिफ़े (१८३०–१९०९) के साथ काम किया।

मिलेरां की इस कार्रवाई ने ही मिलेरांवाद अथवा मंत्रीवाद, सरकारी समाजवाद – समाजवादी पार्टियों के नेताओं द्वारा बुर्जुआ वर्ग के साथ राजनीतिक सहयोग का एक रूप – को जन्म दिया।

१९०४ में मिलेरां को समाजवादी पार्टी से निकाल दिया गया; १९०९ से १९१५ तक की अवधि में वह विभिन्न मंत्री-पदों पर रहे और १९२०-२४ में फ़्रांसीसी जनतंत्र के राष्ट्रपति थे।

[5] **काउत्स्की**, कार्ल (१८५४–१९३८) – जर्मन सामाजिक-जनवादी आंदोलन और दूसरे इंटरनेशनल के एक नेता और सिद्धांतकार; आरभं में मार्क्सवादी, लेकिन आगे चल कर मार्क्सवाद से गद्दारी करके मज़दूर आंदोलन में मौजूद एक अत्यंत ख़तरनाक और हानिकर उस अवसरवादी प्रवृत्ति – मध्यमार्ग (काउत्स्कीवाद) – के विचारधारा-निरूपक बन बैठे, जो मार्क्सवाद को कथनी में स्वीकार करते हुए करनी में पूंजीवाद के समर्थन में सफ़ाई, वर्ग-संघर्ष और समाजवादी क्रांति से इन्कार की दिशा ग्रहण कर लेता है।

[6] यहां लुनाचार्स्की महान रूसी व्यंग्यकार सैल्तिकोव-श्चेद्रीन (१८२६–१८८९) की उक्ति की ओर इशारा कर रहे हैं, जिन्होंने ज़ारशाही सरकार तथा इसके शिक्षा मंत्रालय की "शिक्षा नीति" का बार-बार मज़ाक उड़ाया।

लेनिन ने भी इसी उक्ति का बार-बार प्रयोग किया। १९१३ में लिखित 'शिक्षा मंत्रालय की नीति पर' शीर्षक लेख में लेनिन ने उल्लेख किया कि "हमारे 'शिक्षा' (इस उक्ति के लिए क्षमा करें) मंत्रालय का उद्देश्य जनता को अशिक्षित बनाना और रूस में जन-शिक्षा की तुच्छ स्थिति को छिपाना है।" "जन-अशिक्षा मंत्रालय", लेनिन ने ज़ोर दिया, "वस्तुतः पुलिस निगरानी मंत्रालय है, जो युवजनों का मज़ाक़ उड़ाता है और लोगों की ज्ञान-जिज्ञासा का दुरुपयोग करता है।"

मंत्रालय की नीति ने यह सबकी आंखों के सामने सिद्ध कर दिया कि "रूसी सरकार से बढ़ कर रूस में जनता की शिक्षा का अधिक ज़हरीला, अधिक हठी दुश्मन और कोई नहीं है।"

[7] यहां लुनाचार्स्की ने जिन आंकड़ों को उद्धृत किया है, वे वस्तुतः ऊंचे प्रतीत होते हैं। १८९७ में की गयी पहली रूसी जनगणना ने दिखाया कि देहाती वर्गों से आनेवाले प्रति एक लाख लोगों पर केवल तीन व्यक्तियों को उच्च शिक्षा तथा प्रति एक हज़ार पर केवल एक व्यक्ति को माध्यमिक शिक्षा प्राप्त थी।

[8] **पाउल्सेन**, फ़्रेडरिक (१८४६–१९०८) – जर्मन दार्शनिक और शिक्षा-शास्त्री, बर्लिन विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर। उन्होंने अपना ध्यान मुख्यतः नीतिशास्त्र और शिक्षाशास्त्र के अंतर्संबंध तथा अन्योन्याश्रितता की समस्याओं और समष्टि के एक अंग के रूप में मनुष्य को शिक्षित करने की विधियों की खोज पर दिया। वह वैज्ञानिक अनुसंधान के नवीनतम आंकड़ों को प्रस्तुत करते हुए तथा अधिक सक्रिय अध्यापन विधियों का इस्तेमाल करते हुए शिक्षा की अंतर्वस्तु को नूतन बनाने के समर्थक थे।

[9] देखिये, टिप्पणी नं०5, 'सामाजिक शिक्षा पर'।

[10] **बुइसोन**, फ़र्दीनांद (१८४१–१९३२) – फ़्रांसीसी शिक्षाशास्त्री और सक्रिय जन-कार्यकर्ता; १८७९–१८९६ में फ़्रांस में प्रारंभिक शिक्षा के निदेशक और १८९६ से सोर्बोन में अध्यापन पीठ के अध्यक्ष; १९वीं सदी के अंत में स्कूली सुधारों (निःशुल्क प्रारंभिक शिक्षा, धर्म-निरपेक्ष शिक्षा, आदि संबंधी क़ानूनों) के एक प्रवर्तक। उन्होंने चर्च से स्कूल के अलगाव और स्कूली पाठ्यक्रमों से धर्म को हटाने के समर्थन में आवाज़ उठायी। वह 'अध्यापन और प्रारंभिक स्कूल शब्दकोश' (चार खंडों में) के संपादक थे, जो १९वीं सदी के नौवें दशक में प्रकाशित हुआ।

[11] 'बावर्चिनों के बच्चों पर' परिपत्र, जैसा कि यह इस नाम से सुप्रसिद्ध हुआ, १८ जून, १८८७ को शिक्षा-मंत्री इ० द० देल्यानोव द्वारा जारी

किया गया। इस परिपत्र ने माध्यमिक शिक्षा के संस्थानों में फ़ीस बढ़ा दी और विद्यमान नियमों और क़ानूनों पर "बिना कोई ध्यान दिये" अवांछित विद्यार्थियों को निकाल देने की सिफ़ारिश की; इसने "साधन-विहीन अथवा पर्याप्त साधनों से रहित व्यक्तियों" के इस आशय के किसी भी निवेदन को "दृढ़तापूर्वक इन्कार कर देने" की भी मांग की कि उनके बच्चों को जिम्नेज़ियमों (माध्यमिक स्कूलों) में प्रवेश दिया जाये। परिपत्र में कहा गया था कि "अगर इस नियम का दृढ़तापूर्वक पालन किया जाये, तो जिम्नेज़ियम और उनके तैयारी विभाग कोचवानों, नौकरों, बावर्चियों, धोबिनों, पंसारियों, आदि के बच्चों की उपस्थिति से बच जायेंगे, जिनके बच्चों – विशेष प्रतिभाओं से संपन्न संभावित अपवादों को छोड़ कर – को उस जीवन-क्षेत्र से निकाल कर आगे लाना वांछनीय नहीं है, जिससे वे संबद्ध हैं।"

[12] **क्लासिकीय शिक्षा** – प्राचीन यूनानी और लैटिन भाषाओं तथा उनके साहित्यों के अध्ययन पर आधारित सामान्य माध्यमिक शिक्षा प्रणाली। आधुनिक (वास्तविक) प्रणाली में प्राचीन भाषाओं की शिक्षा नहीं दी जाती थी और मुख्य ध्यान प्राकृतिक विज्ञानों, गणितशास्त्र और भौतिक विज्ञान के अध्ययन तथा आधुनिक भाषाओं को दिया जाता था।

रूस में क्लासिकीय शिक्षा का विचार १७वीं सदी से फैलना शुरू हुआ। लेकिन १९वीं सदी के मध्य तक माध्यमिक स्कूलों में दी गयी शिक्षा मिश्रित स्वरूप की थी: उसमें क्लासिकीय और आधुनिक प्रणालियों की विशेषताएं देखी जा सकती थीं। क्लासिकीय पक्ष पर ज़ोर देने की प्रवृत्ति १९वीं सदी के उत्तरार्ध में प्रकट हुई। क्लासिकीय शिक्षा पर ज़ोर माध्यमिक शिक्षा के लिए चयन में वर्गगत मानदंडों के साथ-साथ दिया गया।

१८७१-७२ के प्रतिक्रियावादी "स्कूली सुधार" ने क्लासिकीय जिम्नेज़ियम को विश्वविद्यालय में प्रवेश-अधिकार प्रदान करनेवाले रूसी माध्यमिक स्कूलों के एकमात्र पूर्ण मान्यता-प्राप्त क़िस्म के रूप में पुष्ट किया। उसी सुधार द्वारा अस्तित्व में लाये गये आधुनिक स्कूलों ने अपने विद्यार्थियों को यह अधिकार नहीं प्रदान किया। इस नियम के राजनीतिक महत्व पर ज़ोर देते हुए तत्कालीन आंतरिक मामलों के मंत्री प० अ० वालूयेव ने सम्राट अलेकसांद्र द्वितीय को लिखा:

"शिक्षा की आधुनिक प्रणाली ने क्लासिकीय प्रणाली की तुलना में हमेशा और हर जगह भौतिकवाद तथा भोंडे समाजवादी विचारों के प्रसार को बड़ा क्षेत्र प्रदान किया है।"

इस राजनीतिक रुख़ के अनुसार रूसी स्कूलों में क्लासिकीय शिक्षा को एक अत्यंत औपचारिक, "वैयाकरण का" दृष्टिकोण प्रदान किया गया था। इसका उद्देश्य समकालीन जीवन की अत्यंत महत्वपूर्ण समस्याओं से विद्यार्थियों का ध्यान हटाना, रूस के युवजनों में नागरिक चेतना के किसी भी जागरण को रोकना और निर्धन बच्चों को विश्वविद्यालय में पहुंचने से रोकने के एक फ़िल्टर के रूप में काम करना था।

क्लासिकीय शिक्षा रूस में महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति तक माध्यमिक शिक्षा का प्रधान रूप बनी रही।

[13] यहां लुनाचार्स्की पाउल्सेन की पुस्तक 'जर्मनी में शिक्षा के विकास की ऐतिहासिक रूपरेखा' से उद्धृत कर रहे हैं।

[14] लुनाचार्स्की का इशारा मास्को में १९१७ की अक्तूबर क्रांति की घटनाओं की ओर है।

[15] **रूसो**, जान जाक (१७१२–१७७८) – फ़्रांसीसी दार्शनिक, ज्ञान प्रचारक, लेखक, शिक्षाशास्त्री।

रूसो के शिक्षाशास्त्रीय विचारों ने उपन्यास 'एमिल या शिक्षा पर' में अपनी पूर्णतम अभिव्यक्ति पायी। रूसो ने शिक्षा की सामंती, सामाजिक श्रेणियों पर आधारित प्रणाली की आलोचना की, जो बच्चे की वैयक्तिकता को कुचल देती थी। स्वतंत्रता को मनुष्य का मुख्य स्वाभाविक अधिकार मानते हुए उन्होंने स्वतंत्र शिक्षा का विचार प्रस्तुत किया। रूसो ने नैतिक शिक्षा को विशेष महत्व दिया, जिसे उन्होंने श्रम शिक्षा के साथ निकट रूप से जुड़ा हुआ माना।

मानवतावादी और जनवादी विचारों से प्रेरित रूसो के शैक्षिक विचारों ने १८वीं सदी के अंत और १९वीं सदी के प्रारंभ में प्रगतिशील शिक्षा के विकास पर बड़ा प्रभाव डाला।

[16] देखिये, टिप्पणी न०8, 'सामाजिक शिक्षा पर'।

20*

[17] **हेर्बार्त**, जोहान्न फ़्रेडरिक (१७७६–१८४१) – जर्मन भाववादी दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक और शिक्षाशास्त्री। उन्होंने दर्शनशास्त्र और मनोविज्ञान के आधार पर शिक्षाशास्त्र की सैद्धांतिक बुनियाद देने की कोशिश की।

अनेक सकारात्मक विचारों के साथ हेर्बार्त की शैक्षिक अवधारणा, विशेषकर "बच्चों के निदेशन" के उनके सिद्धांत में शामिल नैतिक शिक्षा की प्रस्थापनाओं ने उनकी संपूर्ण शैक्षिक प्रणाली को एक दकियानूसी स्वरूप प्रदान किया।

[18] **फ़्रेबेल**, फ़्रेडरिक (१७८२–१८५२) – जर्मन शिक्षाशास्त्री, पेस्तालोज़्ज़ी के शिष्य, स्कूल-पूर्व शिक्षा के सिद्धांतकार। १८३७ में उन्होंने "बच्चों के खेल और शिक्षा" के लिए एक संस्थान खोला, जिसे उन्होंने "किंडरगार्टन" नाम दिया। फ़्रेबेल द्वारा विकसित किंडरगार्टन और स्कूल-पूर्व शिक्षा प्रणाली को दुनिया के अनेक देशों में स्वीकृत और विकसित किया गया।

[19] क्रांति-पूर्व रूस में सैकड़ों तरह के "जन" प्रारंभिक स्कूल थे, लेकिन माध्यमिक स्कूलों से उनका कोई संबंध नहीं था। माध्यमिक शिक्षा, उच्च शिक्षा की तो बात ही क्या, धनी वर्गों का विशेषाधिकार थी। मेहनतकश माता-पिताओं के बच्चों की एक अत्यल्प संख्या ही माध्यमिक स्कूलों में प्रवेश पा सकती थी। १८९७ की जनगणना ने दिखाया कि पुरुषों के लिए माध्यमिक स्कूलों में किसान-मूल के बच्चों की संख्या कुल विद्यार्थियों की मात्र ७.७ प्रतिशत और स्त्रियों के लिए माध्यमिक स्कूलों में केवल ६.४ प्रतिशत थी।

अक्तूबर क्रांति ने शिक्षा के मामले में सभी विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया। १६ अक्तूबर, १९१८ को जारी 'रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र में एकीकृत श्रम स्कूल पर' आज्ञप्ति के अनुसार नौ-वर्षीय शिक्षा के लिए एकीकृत श्रम स्कूल क़ायम किया गया, जो दो चरणों में विभाजित था: पहला, ८–१३ साल के बच्चों के लिए और दूसरा १३–१७ साल के बच्चों के लिए। शिक्षा बर्ष १९३२-३३ से सामान्य स्कूलों में अध्ययन काल को बढ़ा कर दस साल कर दिया गया।

[20] यहां लुनाचार्स्की का इशारा लेव तोलस्तोय के शिष्यों – उस धार्मिक, यूटोपियाई सामाजिक प्रवृत्ति की ओर है, जो रूस में १९वीं सदी के अंत में महान रूसी लेखक लेव तोलस्तोय (१८२८–१९१०) के प्रभाव में अस्तित्व में आयी। तोलस्तोय के शिष्यों ने नैतिक आत्मपूर्णता, "विश्व-प्रेम" की शिक्षा, "बुराई के अहिंसात्मक विरोध" और शारीरिक श्रम के द्वारा नैतिक शुद्धता के ज़रिये समाज को रूपांतरित करने का प्रस्ताव किया। लेनिन ने लिखा कि तोलस्तोय के शिष्यों ने "उनके मत के सबसे कमज़ोर पहलू को जड़सूत्र में बदल दिया है।"

[21] **ब्लोन्स्की**, पावेल पेत्रोविच (१८८४-१९४१) – सोवियत शिक्षाशास्त्री और मनोवैज्ञानिक। सोवियत सत्ता के पहले दिनों से ही उन्होंने स्कूलों के रूपांतरण और शिक्षा तथा मनोविज्ञान संबंधी सोवियत चिंतन के सैद्धांतिक आधारों के प्रतिपादन में सक्रिय भूमिका अदा की। यहां लुनाचार्स्की का इशारा उनकी पुस्तक 'श्रम स्कूल' (१९१९) की ओर है, जिसने पालीतकनीकी श्रम स्कूल के विचारों और सिद्धांतों के निर्माण पर काफ़ी प्रभाव डाला था।

कालाश्निकोव अलेक्सेइ गेओर्गियेविच (१८९३–१९६२) – सोवियत भौतिकविज्ञानी, शिक्षक, शिक्षाशास्त्री; 'सोवियत शैक्षिक विश्वकोश' (तीन खंडों में, १९२७-२९) के संपादक। यहां लुनाचार्स्की कालाश्निकोव के पैम्फ़लेट 'निकट भविष्य के औद्योगिक श्रम स्कूल की समस्याएं' की ओर इशारा कर रहे हैं, जो १९१९ में प्रकाशित हुआ था।

[22] मार्च, १९१९ में आयोजित रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की आठवीं कांग्रेस ने नया (दूसरा) पार्टी कार्यक्रम स्वीकार किया। इसमें अन्य बातों के अलावा यह कहा गया: "सर्वहारा अधिनायकत्व की अवधि में, यानी कम्युनिज़्म की पूर्ण प्राप्ति के लिए आवश्यक परिस्थितियों की तैयारी की अवधि में, स्कूलों को केवल सामान्यत: कम्युनिज़्म के सिद्धांतों को प्रचारित करने का एक साधन ही नहीं, बल्कि मेहनतकशों के अर्ध-सर्वहारा और ग़ैर-सर्वहारा संस्तर पर सर्वहारा का विचारधारात्मक, सांगठनिक और शैक्षिक प्रभाव लाने का भी साधन होना चाहिए, ताकि अंततः कम्युनिज़्म प्राप्त करने में समर्थ नयी पीढ़ी का पालन-पोषण किया जा सके।"

सर्वहारा राज्य को कैसे स्कूल की ज़रूरत है?

ट्रेड-यूनियन भवन में दिया गया भाषण
४ दिसम्बर, १९२२

पहले विश्व-युद्ध द्वारा जनित तथा गृह-युद्ध के दौरान बदतर बनी देश की विनाशकारी आर्थिक परिस्थितियां सोवियत राज्य के विकास के मार्ग में बाधा डालनेवाली सबसे बड़ी कठिनाइयों में से थीं। उद्योग और कृषि के विघटन की अवस्था में सोवियत सरकार के समक्ष एक ऐसी नीति विकसित करने का कार्यभार प्रस्तुत था, जो देश की अर्थव्यवस्था के यथासंभव शीघ्र पुनर्निर्माण को सुनिश्चित बनाये। यह नीति नयी आर्थिक नीति (नेप) के नाम से सुप्रसिद्ध हुई। रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की १०वीं कांग्रेस के निर्णय पर इसका कार्यान्वयन १९२१ में शुरू हुआ, जिसके परिणामस्वरूप चौथे दशक के उत्तरार्ध में देश में समाजवाद की विजय हुई।

नयी आर्थिक नीति को वैज्ञानिक आधार लेनिन ने प्रदान किया था। इसका उद्देश्य मुद्रा-माल संबंधों को व्यापक क्षेत्र प्रदान करते हुए तथा समाजवादी निर्माण में किसानों को खींचते हुए आर्थिक आधार पर समाजवादी उद्योग और किसानी लघु माल-उत्पादन के बीच संश्रय को मज़बूत बनाना था। समाजवादी राज्य के हाथों में नियंत्रण को बनाये रखते हुए नयी आर्थिक नीति ने पूंजीवादी तत्वों के कुछ विकास को छूट दी।

नयी आर्थिक नीति के कार्यान्वयन ने समाजवादी अर्थव्यवस्था के आधार के निर्माण को पूरा करना यानी कृषि और छोटे उद्योगों को पुनरुज्जीवित करना, और फिर बड़े पैमाने के उद्योगों को विकसित करना, कृषि का समाजवादी पुनर्गठन करना और अंततः समाजवाद का भौतिक तथा टेक्नोलॉजिकल आधार निर्मित करना संभव बनाया।

लुनाचार्स्की ने यह भाषण उस समय दिया था, जब पूंजीवादी तत्वों के साथ संघर्ष तीव्र हो रहा था, जब निजी पूंजी के ख़िलाफ़ आक्रमण आगे बढ़ रहा था।

[1] यहां इशारा मास्को में ११–१९ अक्तूबर, १९२२ को आयोजित मज़दूर किसान युवा संघ की पांचवीं अखिल-रूसी कांग्रेस की ओर है। इस

कांग्रेस ने 'नयी आर्थिक नीति की परिस्थितियों में कम्युनिस्ट शिक्षा के मूलभूत कार्यभार', 'मेहनतकश युवजनों की शिक्षा', 'देहातों में काम', आदि समस्याओं पर विचार-विमर्श किया।

[2] लुनाचार्स्की के ध्यान में रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की दसवीं कांग्रेस में प्रस्तुत लेनिन की रिपोर्ट है, जिसने नयी आर्थिक नीति को सैद्धांतिक आधार प्रदान किया और कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की चौथी कांग्रेस में प्रस्तुत उनकी रिपोर्ट 'रूसी क्रांति के पांच वर्ष तथा विश्व-क्रांति की संभावनाएं'।

[3] स्कूलों के लिए नये पाठ्यक्रम तैयार करना तीसरे दशक में शिक्षा जन-कमिसारियत का एक अत्यंत जटिल कार्य था। १९१८–१९२९ के वर्षों में पाठ्यक्रमों की लगभग हर साल – १९१८, १९१९, १९२०, १९२१, १९२३, १९२५, १९२७ और १९२९ में – समीक्षा की जाती रही और उन्हें अधिक सही बनाया जाता रहा।

१९२२ तक स्कूलों में प्राप्त कार्य-अनुभव ने कमिसारियत को आश्वस्त कर दिया, जैसा कि लुनाचार्स्की ने अपनी रिपोर्ट में इंगित किया, कि पाठ्यक्रम और कार्य-प्रणाली संबंधी सामग्री को एकसमान बनाना आवश्यक हो गया था। उसी साल राजकीय वैज्ञानिक परिषद – कार्य-प्रणाली संबंधी शिक्षा कमिसारियत का मुख्य वैज्ञानिक केन्द्र – ने सभी स्कूलों के लिए समान पाठ्यक्रम तैयार करने का कार्य शुरू किया।

[4] माध्यमिक शिक्षा को देहातों में रहनेवाले युवजनों की पहुंच के भीतर यथासंभव व्यापक रूप से लाने के लिए १९२३ में 'ग्रामीण युवजनों के लिए स्कूल' क़ायम किये गये। ये पहले चरण के स्कूलों पर आधारित और तीन-वर्षीय पाठ्यक्रम पेश करनेवाले सामान्य शिक्षा के लिए अपूर्ण माध्यमिक स्कूल थे।

[5] **ड्यूई**, जॉन (१८५९–१९५२) – अमरीकी शिक्षाशास्त्री, भाववादी दार्शनिक, व्यावहारिकतावाद के एक प्रमुख प्रतिनिधि। ड्यूई की प्रणाली के अनुसार स्कूलों में अलग-अलग विषयों की शिक्षा की सुसंगत प्रणाली

के साथ कोई नियमित पाठ्यक्रम नहीं था। केवल उन्हीं विषयों को पढ़ाया जाता था, जो व्यावहारिक रूप से लागू किये जा सकते थे।

6 अपने लेख 'ईसाई-धर्म और कम्युनिज़्म' में लुनाचार्स्की ने इसी उपमा को निम्नलिखित रूप में प्रयोग किया : "पोम्पे को याद करें, जिसने कहा, 'मेरे पांव पटकते ही असंख्य सैनिक प्रकट हो उठेंगे।' उससे कहा गया, 'तब अपने पांव पटको,' क्योंकि अगर उसने अपना पांव पटका भी होता, तो भी कोई सैनिक नहीं प्रकट हुआ होता।"

यहां लुनाचार्स्की का इशारा दिसम्बर, १९२२ में हुई शिक्षा-कर्मियों की चौथी कांग्रेस की ओर है।

8 **प्रांतीय शिक्षा विभागों (गुबोनो)** के अध्यक्षों की तीसरी अखिल-रूसी कांग्रेस मास्को में अक्तूबर, १९२२ में हुई थी।

9 **केन्द्रीय सामाजिक शिक्षा बोर्ड (सोत्स्वोस या ग्लावसोत्स्वोस) –** १९२१ में क़ायम, शिक्षा जन-कमिसारियत का एक अंग; उसका संबंध सामान्य शिक्षा स्कूलों, स्कूल-पूर्व संस्थानों, अल्पवयस्कों की सामाजिक-क़ानूनी रक्षा के संस्थानों (अनाथालयों, बाल अपराधी संस्थाओं) तथा अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों से था। १९३० में ग्लावसोत्स्वोस के कार्यों का विभाजन कर दिया गया। १९३३ में प्रारंभिक स्कूलों, माध्यमिक स्कूलों, अध्यापक प्रशिक्षण और बाद में बाल-गृहों के लिए अलग बोर्ड क़ायम किये गये।

10 दिसम्बर, १९२२ में आयोजित सोवियतों की दसवीं अखिल-रूसी कांग्रेस ने समाजवाद के निर्माण के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण और अत्यावश्यक समस्या के रूप में शिक्षा और स्कूलों के प्रश्न पर विचार-विमर्श किया। कांग्रेस ने संपूर्ण श्रमजीवी लोगों से "जनसाधारण की शिक्षा में सहायता करने, इस मोर्चे पर मज़दूरों और किसानों के राज्य की स्थितियों को मज़बूत करने में, जो अबसे मूल महत्व का एक कार्य होगा, प्रयास और संसाधनों के रूप में सब कुछ संभव देने के लिए" अपील की।

लुनाचार्स्की ने २७ दिसम्बर को इस कांग्रेस में अपनी रिपोर्ट पेश की।

[11] **फ़ैक्टरी प्रशिक्षण स्कूल (फ़ाब्ज़ावुच)** – इनकी स्थापना १६१८ में उत्पादन में काम करनेवाले युवजनों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण के एक रूप में हुई। १६२१-२२ में कोम्सोमोल की पहल पर हुनरमंद कर्मियों को प्रशिक्षित करने के उद्देश्य से ऐसे स्कूलों का बड़े पैमाने पर निर्माण शुरू हुआ। ये प्रारंभिक स्कूल के स्तर की सामान्य शिक्षा भी देते थे।

१६२६ में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के समाजवादी पुनर्निमाण के आरंभ के साथ सात-वर्षीय फ़ैक्टरी स्कूल क़ायम किये गये, जो व्याव-सायिक योग्यताएं और सात-वर्षीय शिक्षा प्रदान करते थे। फ़ैक्टरी प्रशिक्षण स्कूलों में शिक्षा और उत्पादक श्रम के समन्वय के महत्व पर ज़ोर देते हुए लुनाचार्स्की ने कहा कि "वे इस बात का नमूना प्रस्तुत करते हैं कि हम अपनी सभी शिक्षा को सच्चे मार्क्सवादी स्कूल के निकट कैसे लायें।"

१६६०-६३ में फ़ैक्टरी प्रशिक्षण स्कूलों को व्यावसायिक और तकनीकी स्कूलों के रूप में पुनर्संगठित किया गया। आठवें दशक में सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की २४वीं कांग्रेस (१६७१) के निर्णयों के अनुसार एक ऐसे नये रूप का व्यापक विकास हुआ है, जो आगामी वर्षों में व्यावसायिक प्रशिक्षण के क्षेत्र में बहुत कुछ दे सकता है – माध्य-मिक व्यावसायिक और तकनीकी कालेज, जो उच्च-स्तरीय तकनीकी प्रशिक्षण और सामान्य माध्यमिक शिक्षा साथ-साथ प्रदान करते हैं।

[12] लुनाचार्स्की का आशय फ़ैक्टरी प्रशिक्षण स्कूलों में काम करने के लिए अध्यापकों को प्रशिक्षित करनेवाले पाठ्यक्रमों से है; ये १६२१ में भूतपूर्व रानी कैथरीन संस्थान – एक निजी, विशेषाधिकार-प्राप्त शिक्षा-संस्थान, जहां केवल अभिजात परिवारों की लड़कियां पढ़ती थीं – के भवन में खोले गये।

[13] १६२० में अपनी कृति 'वामपंथी कम्युनिज़्म – एक बचकाना मर्ज़' (भाग २, 'बोल्शेविकों की विजय की एक बुनियादी शर्त') में लेनिन ने लिखा: "शायद अब लगभग हर आदमी यह बात समझता है कि यदि हमारी पार्टी में बहुत सख़्त, सही मानी में लौह अनुशासन न होता और यदि पूरे का पूरा मज़दूर वर्ग, अर्थात उसके सभी विचारशील,

ईमानदार, आत्मत्यागी और पिछड़े हुए हिस्सों को साथ ले चलने या उनका नेतृत्व करने में समर्थ, प्रभावशाली अंशक पार्टी का पूर्ण एवं निस्संकोच समर्थन न करते, तो बोल्शेविकों के हाथ में सत्ता ढाई साल तो क्या, ढाई महीने भी न रह पाती।"

[14] यहां लुनाचार्स्की पीटर महान (१६७२–१७२५) की नौसैनिक संहिता के एक अंश को अपनी स्मृति से उद्धृत कर रहे हैं: "चूंकि बुराई की जड़ धन-लिप्सा में है... अतः सभी कमांडरों को अपने को ग़लत ढंग से पैसा लेने से बचाना चाहिए और केवल अपने को ही नहीं, बल्कि औरों को भी बड़ी कड़ाई के साथ इससे बचाना चाहिए और जितना मिलता है, उतने से ही संतुष्ट रहना चाहिए, क्योंकि अक्सर इस बुराई की वजह से राज्य के बहुत-से हित खो जाते हैं... सभी कमांडरों को हमेशा इसे ध्यान में रखना और पालन करना चाहिए।"

स्कूल का दर्शन और क्रांति

तोम्स्क में शिक्षा-कर्मियों और कला-कर्मियों की यूनियनों की संयुक्त बैठक में दिया गया भाषण
२२ मई, १९२३

नये, समाजवादी स्कूल के निर्माण ने, जो हर घंटे दर्जनों नये सवाल पेश करता था, तथा नयी आर्थिक नीति के फलस्वरूप बुर्जुआ और टुटपुंजिया-बुर्जुआ शिक्षा-अवधारणाओं के ख़िलाफ़ विचारधारात्मक संघर्ष में लाये गये तीव्रीकरण ने सैद्धांतिक दृष्टिकोणों के स्पष्ट रूप से परिभाषित किये जाने की मांग की। यह स्पष्ट करना आवश्यक था कि शिक्षा के मूलभूत प्रश्नों की मार्क्सवादी समझ क्या है: शिक्षा क्या है, इसका सारतत्व क्या है, इसके उद्देश्य और कार्यभार क्या हैं। प्रस्तुत भाषण इन सवालों का उत्तर देता है।

इस भाषण में हम सामान्य मानवीय शैक्षिक आदर्शों की मूलतः समाजवादी प्रकृति के बारे में लुनाचार्स्की के प्रिय विचार का और आगे विकास पाते हैं।

[1] **राजकीय वैज्ञानिक परिषद (गूस)** – रूसी जनतंत्र की शिक्षा कमिसारियत के अंतर्गत वैज्ञानिक और कार्य-प्रणाली अध्ययनों का एक प्रमुख केन्द्र, जिसकी स्थापना १६१६ में की गयी। १६३२ में इसे समाप्त कर दिया गया और इसके कार्यों को रूसी जनतंत्र की शिक्षा जन-कमिसारियत की अध्यापन कार्यप्रणाली परिषद, वैज्ञानिक कार्य-प्रणाली परिषद और उच्च शिक्षा संस्थान समिति के विशेषीकृत आयोगों ने ग्रहण कर लिया।

[2] यहां लुनाचार्स्की मोलियेर के हास्य-नाटक Ze Bourgeois gentilhomme के नायक म० जुर्दे की ओर इशारा कर रहे हैं।

[3] **ज़ेम्स्त्वो स्कूल** – क्रांति-पूर्व रूस में प्रारंभिक स्कूल, जो स्थानीय स्वशासी निकायों (ज़ेम्स्त्वो) द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में खोले गये थे। इनका रख-रखाव स्थानीय कोषों से होता था। ज़ेम्स्त्वो की स्थापना १८६४ में की गयी और उसी साल पहली बार ये स्कूल प्रकट हुए।

अनेक प्रगतिशील रूसी शिक्षाशास्त्रियों ने इन स्कूलों में काम किया। १६वीं सदी के अंत में रूस में "ज़ेम्स्त्वो स्कूल" या "ज़ेम्स्त्वो शिक्षा" उस सबका पर्यायवाची था, जो शिक्षा सिद्धांत और व्यवहार में नया तथा प्रगतिशील था।

[4] देखिये, टिप्पणी नं० 8, 'वर्ग स्कूल पर'।

[5] देखिये, टिप्पणी नं० 8, 'सामाजिक शिक्षा पर'।

[6] यहां इशारा लुनाचार्स्की के लेख 'शिक्षा के इतिहास की संक्षिप्त रूपरेखा' की ओर है, जो उनकी कृतियों के संग्रह 'जन-शिक्षा की समस्याएं' में प्रकाशित हुआ था।

[7] **तालेइरां** या तालेइरां-पेरीगोर, शार्ल मोरीस दे (१७५४–१८३८) – फ़्रांसीसी राजनयिक और राजनीतिज्ञ। उन्होंने १७६१ में स्कूलों के सुधार की जो योजना प्रस्तुत की, उसने मध्यम बुर्जुआ हलक़ों के विचारों को प्रतिबिम्बित किया और इसे शिक्षा की सामंती प्रणाली के ख़िलाफ़

निर्दिष्ट किया गया था; इसमें सार्विक और धर्म-निरपेक्ष शिक्षा की व्यवस्था थी।

लेपेलेत्ये और **कोंदोर्से** – देखिये, टिप्पणी नं० 10 और 9, 'सामाजिक शिक्षा पर'।

[8] **रूसो**, **हार्बर्त** और **फ़्रेबेल** – देखिये, टिप्पणी नं० 15, 17 और 18, 'वर्ग स्कूल पर'।

पेस्तालोज़्ज़ी – देखिये, टिप्पणी नं० 8, 'सामाजिक शिक्षा पर'।

फ़िख़्ते, जोहान्न गोट्टलिब (१७६२–१८१४) – जर्मन भाववादी दार्शनिक, क्लासिकीय जर्मन दर्शन के प्रतिनिधि, जेना और बर्लिन विश्वविद्यालयों के प्रोफ़ेसर। उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में सैद्धांतिक और व्यावहारिक कार्य पर काफ़ी ध्यान दिया। अपने 'जर्मन राष्ट्र को संबोधित भाषण' में फ़िख़्ते ने राष्ट्रीय शिक्षा की एक ऐसी प्रणाली के निर्माण की योजना प्रस्तुत की, जो सभी जर्मनों के लिए एक-जैसी होगी। श्रम शिक्षा पर, बच्चों को श्रम के सामान्य वैज्ञानिक आधार के बारे में परिचित कराने की आवश्यकता पर फ़िख़्ते के विचार विशेष रूप से दिलचस्प हैं।

[9] **लूथर**, मार्टिन – धर्मसुधार आंदोलन के प्रसिद्ध नेता, जर्मनी में प्रोटेस्टेंट मत (लूथरपंथ) के प्रवर्त्तक; जर्मनी के बर्गरों की विचारधारा के निरूपक।

सोवियत निर्माण प्रणाली में शिक्षा के कार्यभार

पहली अखिल-संघीय अध्यापक कांग्रेस में दी गयी रिपोर्ट १६ जनवरी, १९२५

१९२३-२५ के वर्षों में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की पुनःस्थापना में महत्वपूर्ण सफलताएं प्राप्त की गयीं। इस आर्थिक बहाली ने सांस्कृतिक और शैक्षिक विकास के लिए आवश्यक आधार प्रदान किया और अपनी

बारी में जन-शिक्षा के समक्ष ऐसे नये कार्यभार प्रस्तुत किये, जिनका हल समाजवादी निर्माण-कार्य का एक अभिन्न अंग बन गया। मास्को में ११–१६ जनवरी, १९२५ को हुई पहली अखिल-संघीय अध्यापक कांग्रेस में इन कार्यभारों पर विचार-विमर्श किया गया।

व्यापक अध्यापक-समुदाय (पूर्ण मतदान के अधिकारों के साथ १५५६ प्रतिनिधियों में से ७२ प्रतिशत ग्रामीण शिक्षा कर्मी और २८ प्रतिशत नगरी शिक्षा कर्मी थे) की मनोदशा और अभिरुचियों को अभिव्यक्त करते हुए कांग्रेस ने दिखाया कि सोवियत सत्ता के वर्षों में अध्यापक-समुदाय की राजनीतिक आशाओं और विचारधारात्मक दृष्टिकोणों तथा उसके व्यावहारिक कार्य के स्वरूप और दिशा में मूलभूत परिवर्तन घटित हुए। कांग्रेस ने अध्यापकों के विचारधारात्मक और राजनीतिक रूपांतरण में प्राप्त पार्टी की उपलब्धियों को प्रतिबिम्बित किया।

[1] यहां लुनाचार्स्की पॉल नाटोर्प की पुस्तक 'जनगण की संस्कृति और व्यक्ति की संस्कृति' को उद्धृत कर रहे हैं, जो १९११ में प्रकाशित हुई थी।

[2] फ़्रेडरिक एंगेल्स ने १८७८ में प्रकाशित 'ड्यूहरिंग मत-खंडन' में लिखा कि समाजवादी क्रांति की पूर्ति के बाद ही "... मनुष्य पूर्ण चेतना के साथ अपने इतिहास का ख़ुद निर्माण करेगा। यही वह बिन्दु है, जिसके आगे मनुष्य जब कभी कुछ सामाजिक कारणों को गतिमान बनायेगा, तो उनके मुख्यतः और निरन्तर बढ़ती हुई मात्रा में अभिप्रेत परिणाम होंगे। यह मनुष्य की आवश्यकता के जगत् से स्वतन्त्रता के जगत् में छलांग होगी।"

[3] लुनाचार्स्की ने १५ अक्तूबर, १९२४ को ११वीं अखिल-रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के दूसरे अधिवेशन को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट में उन्होंने देश में शिक्षा के विकास के लिए सभी संभव सहायता दिये जाने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। अधिवेशन ने स्कूलों के सुधार के लिए व्यापक कार्यों की योजना बनायी।

[4] **पोत्योम्किन गांव** – निन्दात्मक लक़ब, जिसका इशारा उन अवास्तविक "प्रदर्शन" गांवों की ओर है, जिन्हें प्रिंस ग० अ० पोत्योम्किन (१७३९–१७९६) के आदेश से रानी कैथरीन द्वितीय (१७२९–१७९६) के यात्रा-मार्ग पर बनाये गये थे, जब उसने १७८७ में क्रीमिया की यात्रा की थी।

[5] ११वीं अखिल-रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के दूसरे अधिवेशन के प्रस्ताव में कहा गया है: "अखिल-रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति शिक्षा वर्ष १९२५-२६ से केन्द्रीय तथा स्थानीय बजटों के योगदान से एक विशेष स्कूल कोष की स्थापना को आवश्यक मानती है।" ९ अगस्त, १९२६ को लुनाचार्स्की द्वारा रखे गये प्रस्ताव के बाद रूसी जनतंत्र में स्कूल निर्माण के लिए ऋण कोष पर एक क़ानून भी पास किया गया।

[6] **रूसी जनतंत्र का राजकीय प्रकाशन गृह (गोसिज़्दात)**, मास्को में जन-शिक्षा कमिसारियत के तत्वावधान में २१ मई, १९१९ को संगठित पहला बड़ा सोवियत प्रकाशन गृह।

[7] **त्सेक्प्रोस** – शिक्षा-कर्मियों की ट्रेड-यूनियन की केन्द्रीय समिति (१९२२–१९३४)।

[8] न० को० क्रूप्स्काया ने, जो तीसरे दशक में राजनीतिक शिक्षा के लिए जनतंत्र की केन्द्रीय समिति तथा शिक्षा जन-कमिसारियत की राजकीय वैज्ञानिक परिषद की वैज्ञानिक और शैक्षिक विभाग की भी अध्यक्ष थीं, पहली अखिल-संघीय अध्यापक कांग्रेस में एक रिपोर्ट पेश की, जिसने नये पाठ्यक्रमों, नयी पाठ्यपुस्तकों, अध्यापन की नयी विधियों और सांगठनिक रूपों को तैयार करने संबंधी समस्याओं पर विचार-विमर्श किया। इस रिपोर्ट में कम्युनिस्ट बाल-आंदोलन संबंधी मामलों को काफ़ी स्थान दिया गया था।

[9] लुनाचार्स्की के ध्यान में तथाकथित "काम्पलेक्स कार्यक्रम" और "काम्पलेक्स विधि" है, जो राजकीय वैज्ञानिक परिषद के वैज्ञानिक-शैक्षिक विभाग द्वारा तैयार किये गये थे; १९२३ में इन्हें स्कूलों में लागू

करना भी शुरू किया गया। लेकिन काम्पलेक्स कार्यक्रमों के कुछ अच्छे पहलुओं के बावजूद वे अध्ययन-विषयों को स्वतंत्रता और गुणात्मक विशेषता से वंचित करते थे और इसलिए जन-स्कूलों ने उन्हें नामंजूर कर दिया।

[10] **मज़दूर किसान निरीक्षण संस्था** – १९२० में क़ायम राजकीय नियंत्रण निकाय, जो १९३४ तक काम करता रहा। बाद में इसे क्रमशः सोवियत नियंत्रण निकाय, राज्य और पार्टी नियंत्रण निकाय तथा १९६५ से जन-नियंत्रण निकाय के रूप में पुनःसंगठित किया गया।

[11] यहां लुनाचार्स्की का इशारा १९२४ में सोवियत सरकार द्वारा स्वीकृत अध्यापकों के वेतन बढ़ाने संबंधी आज्ञप्ति की ओर है। कांग्रेस के कार्य के दौरान १५ जनवरी, १९२५ को अध्यापकों तथा अन्य शिक्षा कर्मियों के लिए पेंशन-व्यवस्था संबंधी आज्ञप्ति भी स्वीकृत की गयी।

[12] १९२४ में सोवियत सरकार ने निरक्षरता-उन्मूलन केन्द्रों की स्थापना के लिए और कोषों के आवंटन पर यहां लुनाचार्स्की द्वारा चर्चित निर्णय लिया था।

[13] **गांव वाचनालय** – ग्रामीण सांस्कृतिक संस्था का एक रूप, जो सोवियत सत्ता के प्रारंभिक वर्षों में प्रकट हुआ। गांवों में ऐसे वाचनालयों की स्थापना का विचार लेनिन ने पेश किया था। तीसरे और चौथे दशकों में गांव वाचनालय देहातों में ज्ञानप्रसार कार्य के केन्द्र थे। उन्होंने निरक्षरता के उन्मूलन, देहातों में सबके लिए प्रारंभिक शिक्षा को यथार्थ बनाने और कृषि के सामूहिकीकरण को पूरा करने में सोवियतों और पार्टी निकायों की सहायता की।

बाद के बर्षों में इन वाचनालयों के स्थान पर क्लब और सांस्कृतिक प्रासाद क़ायम किये गये।

[14] अगले वर्षों में लुनाचार्स्की के इन शब्दों ने पुष्टि पायी। १९२७ में १,०७,५०० बच्चों के साथ २,१०० स्कूल-पूर्व संस्थान थे, १९३२ में इनकी संख्या बढ़ कर १०,६१,७०० बच्चों के साथ १९, ६०० हो गयी।

१९७७ के प्रारंभ में १,१७,००० स्कूल-पूर्व संस्थान थे, जिनमें १,२१,०८,००० बच्चे जाते थे।

[15] **कुलक** (रूसी में शब्दशः अर्थ "मुट्ठी") – इस शब्द का प्रयोग उदीयमान ग्रामीण बुर्जुआ वर्ग को, जो ग़रीब किसानों का निर्ममतापूर्वक शोषण करता था, सूचित करने के लिए १९वीं सदी के अंतिम दशक में शुरू हुआ। कुलकों ने महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति का शत्रुतापूर्ण विरोध किया। गृह-युद्ध के दौरान और बाद में वे टुटपुंजिया-बुर्जुआ प्रतिक्रांति के मुख्य सामाजिक शक्ति बने। तीसरे दशक में कुलकों ने सोवियत-विरोधी आंदोलन चलाया और राज्य को निर्धारित क़ीमतों पर अनाज बेचने से इन्कार करते हुए "अनाज हड़तालें" संगठित कीं। सोवियत सरकार की नीति कुलकों की कार्रवाइयों को सीमित करना और धीरे-धीरे उन्हें निकाल बाहर करना थी।

कृषि में सामूहिकीकरण के प्रारंभ ने कुलकों का तीव्र विरोध पैदा किया। उन्होंने सोवियत-विरोधी विद्रोह संगठित किये, सामूहिक फ़ार्म आंदोलन के सक्रिय कार्यकर्ताओं की हत्या कर दी। इन परिस्थितियों को देखते हुए सोवियत सरकार ने तीसरे दशक के अंत में एक वर्ग के रूप में कुलकों के उन्मूलन की नीति अपनायी। कुलकों को सामूहिकीकरण के क्षेत्र से निकाल दिया गया, उनकी संपत्ति का अधिग्रहण कर लिया गया और उसे सामूहिक फार्मों की संपत्ति बना दिया गया।

सोवियत संघ में सामूहिक फ़ार्म जीवन-पद्धति की विजय ने किसानों को कुलकों के शोषण से मुक्त कर दिया और उन परिस्थितियों को समाप्त कर दिया, जिन्होंने कुलकों के अस्तित्व को संभव बनाया था।

[16] **समाजवादी-क्रांतिकारी** – टुटपुंजिया-बुर्जुआ पार्टी के सदस्य, जो रूस में १९०२ से १९२२ तक बनी रही। समाजवादी-क्रांतिकारियों ने टुटपुंजिया-बुर्जुआ वर्ग और धनी किसानों के विचारों व हितों को प्रकट किया। महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति की विजय के बाद समाजवादी पार्टी के नेताओं ने षड्यंत्र और विदोह संगठित करते हुए सोवियत सरकार के ख़िलाफ़ तोड़फोड़ की कार्रवाइयां कीं। १९१८ में समाजवादी-

क्रांतिकारियों ने लेनिन की हत्या करने की कोशिश की और कम्युनिस्ट पार्टी के अन्य महत्वपूर्ण नेताओं की हत्या कर दी। सोवियत सरकार के ख़िलाफ़ इन कार्रवाइयों की वजह से समाजवादी-क्रांतिकारी पार्टी अलग-थलग पड़ गयी और अंततः उसका आत्म-विघटन हो गया।

सोवियत शिक्षाशास्त्र के समाजवैज्ञानिक आधार

१९२७

पहला सोवियत 'शैक्षिक विश्वकोश' (तीन खंडों में), जिसमें यह लेख प्रकाशित किया गया था, अक्तूबर क्रांति की दसवीं वर्षगांठ के अवसर पर तैयार किया गया था। 'शैक्षिक विश्वकोश' शिक्षा के सभी पहलुओं की सैद्धांतिक और व्यावहारिक समस्याओं को मार्क्सवादी दृष्टिकोण से एकसाथ लाने और उनकी व्याख्या करने का पहला प्रयास था। इसमें शिक्षाशास्त्र के सभी पहलुओं पर जन-शिक्षा और सांकृतिक-शैक्षिक कार्य संबंधी सामग्रियां और सैद्धांतिक पृष्ठभूमि दी गयी थी। इसमें हम सोवियत शिक्षा के अग्रणी व्यक्तियों – अ० व० लुनाचार्स्की, न० कों० क्रूप्स्काया, पा० पे० ब्लोन्स्की, स० त० शात्स्की और कई अन्य लेखकों के लेख पाते हैं। 'शैक्षिक विश्वकोश' का प्रकाशन शैक्षिक जीवन की एक महान घटना था। इसने अध्यापक-समुदाय के लिए विचार-धारात्मक और सैद्धांतिक अस्त्र प्रदान करने और सोवियत शिक्षाशास्त्र के मार्क्सवादी-लेनिनवादी आधारों की व्याख्या करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

लुनाचार्स्की का लेख पहले खंड का आरंभिक लेख था। इसने अनेक अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य-प्रणाली और सैद्धांतिक समस्याएं प्रस्तुत कीं, जिनका बाद में सोवियत शिक्षा अध्ययनों में गहराई से विवेचन किया गया।

[1] देखिये, टिप्पणी नं० 16, 'शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस में भाषण'।

[2] बुर्जुआ जनवाद की क़लई खोलना कार्ल मार्क्स के कार्य में प्रमुख महत्व रखता है। लेनिन ने लिखा: "मार्क्स ने अपने जीवन में सबसे अधिक

संघर्ष टुटपुंजिया जनवाद तथा बुर्जुआ जनवाद की भ्रान्तियों के ख़िलाफ़ किया था। मार्क्स ने सबसे अधिक खिल्ली स्वतंत्रता तथा समानता की खोखली बात की उड़ाई थी, क्योंकि वह केवल मज़दूरों को भूखों मरने की आज़ादी को या अपनी श्रम-शक्ति बेचनेवाले व्यक्ति की उस बुर्जुआ के साथ समानता को छिपाने का काम देती है, जो कथित रूप से उसके श्रम को खुले बाज़ार में स्वतंत्रतापूर्वक और समानतापूर्वक ख़रीदता है। मार्क्स ने इस बात को अर्थशास्त्र से संबंधित अपनी सभी रचनाओं में समझाया है।" (रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की आठवीं कांग्रेस में पेश की गयी देहातों में काम की बाबत रिपोर्ट, २३ मार्च, १९१९)।

[3] लुनाचार्स्की के दिमाग़ में लेनिन का यह वक्तव्य है कि "हर कोई, जिसने दूसरे के बराबर सामाजिक श्रम किया है, सामाजिक उत्पाद का समान अंश पाता है..." (व्ला० इ० लेनिन, 'राज्य और क्रांति', १९१७)।

[4] **एर्रिओ**, एदूआर्द (१८७२–१९५२) – फ़्रांसीसी राजनीतिज्ञ, पत्रकार, इतिहासकार और लेखक; फ़्रांसीसी अकादमी के सदस्य (१९४७); १९१९ में संसद-सदस्य बने; १९२४-२५ और १९३२ में प्रधानमंत्री और विदेशमंत्री थे। १९२४ में एर्रिओ सरकार ने सोवियत संघ के साथ राजनीतिक संबंध क़ायम किये और १९३२ में सोवियत संघ के साथ अनाक्रमण संधि की। नाज़ी फ़ौजों द्वारा फ़्रांस पर कब्ज़ा किये जाने के समय एर्रिओ ने राष्ट्रीय शक्तियों के प्रतिरोध का समर्थन किया। उन्होंने १९४२-४५ के वर्ष जर्मन यंत्रणा-शिविर में बिताये और उन्हें सोवियत सेना ने मुक्त कराया।

तीसरे दशक में फ़्रांस में "नयी शिक्षा" के समर्थन में आंदोलन शुरू हुआ, जिसने १८ साल तक के सभी बच्चों को शिक्षित करने के लिए स्कूल का निर्माण करने के विचार को प्रचारित किया। १९२४ में एर्रिओ सरकार ने इस विचार को शामिल करते हुए एक प्रारूप क़ानून पेश करने के लिए एक आयोग गठित किया। १९२७ में फ़्रांसीसी संसद ने इसे अस्वीकार कर दिया।

[5] यहां लुनाचार्स्की का इशारा कार्ल मार्क्स की 'अस्थायी जनरल कौंसिल के डेलिगेटों के लिए निर्देश। विभिन्न प्रश्न' रचना की ओर है, जिसमें

मुद्दा ४ शिक्षा पर, पालीतकनीकी श्रम स्कूल के कार्यभारों और सिद्धांतों पर मार्क्स के विचारों को निरूपित करता है। ३–८ सितम्बर, १८६६ को पहले इंटरनेशनल की जेनेवा कांग्रेस ने इन 'निर्देशों' को प्रस्ताव के रूप में स्वीकार कर लिया। उसी कांग्रेस ने अंतर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ का संविधान तथा नियमावली भी स्वीकार की।

[6] 'अस्थायी जनरल कौंसिल के प्रतिनिधियों के लिए निर्देश। विभिन्न प्रश्न' रचना में कार्ल मार्क्स ने ज़ोर दिया कि "सवेतन उत्पादक श्रम, मानसिक शिक्षा, शारीरिक व्यायाम और पालीतकनीकी प्रशिक्षण का समन्वय मज़दूर वर्ग को सामंत और बुर्जुआ वर्गों के स्तर से काफ़ी ऊंचा उठा देगा।"

[7] लुनाचार्स्की का इशारा जॉन ड्यूई और ए० ड्यूई की पुस्तक 'भविष्य के स्कूल' की ओर है, जिसमें सबसे अच्छे नौ अमरीकी स्कूलों के कार्यकलापों का उल्लेख है।

[8] यहां इशारा न० म० तुलाइकोव की पुस्तक 'संयुक्त राज्य अमरीका में कृषि कालेज' की ओर है।

[9] शिक्षा का पहला प्रायोगिक केन्द्र रूसी जनतंत्र की शिक्षा कमिसारियत के अंतर्गत माडल और प्रायोगिक संस्थानों का एक समूह था, जिसे प्रमुख सोवियत शिक्षाविद् स० त० शात्स्की (१८७८–१९३४) ने क़ायम किया था। इसके दो विभाग – कालूगा प्रांत में ग्रामीण विभाग और मास्को में शहरी विभाग थे।

[10] यहां लुनाचार्स्की का इशारा २० अक्तूबर, १९२० को कोम्सोमोल की तीसरी कांग्रेस में दिये गये लेनिन के भाषण के एक अंश की ओर है: "...इस समय १५ साल के युवजनों की पीढ़ी को अपने सभी शैक्षिक कार्यों को इस ढंग से हल करना चाहिए कि हर दिन, हर गांव और शहर में नौजवान लोग आम श्रम की कतिपय समस्या के व्यावहारिक समाधान में भाग लें, चाहे वह छोटी से छोटी और सरल से सरल क्यों न हो। कम्युनिस्ट निर्माण की सफलता तब सुनिश्चित बन जाती है, जब कम्युनिस्ट प्रतियोगिता के विकास के साथ-साथ यह हर गांव में किया जाता है और युवजन सिद्ध करते हैं कि वे श्रम को संगठित कर सकते हैं।"

[11] **पायनियर संगठन** – १० से १५ साल की आयु के बच्चों का सार्वजनिक स्वैच्छिक संगठन; यह मई, १९२२ में क़ायम किया गया। १९२३-२४ में **ओक्त्याब्रियाता संगठन** बन गये, जिनमें ७–९ साल के स्कूली बच्चे शामिल थे। इन संगठनों का उद्देश्य पायनियर संगठनों के लिए बच्चों की तैयारी करना था।

[12] मज़दूरों और किसानों के बीच से नये बुद्धिजीवियों की शिक्षा से संबंधित लुनाचार्स्की की अन्य कृतियां हैं: 'बुद्धिजीवी, इनका विगत, वर्तमान और भविष्य' (१९२४), 'बुद्धिजीवी और धर्म' (१९२५), आदि।

नये मानव की शिक्षा

लेनिनग्राद में दिया गया भाषण
२३ मई, १९२८

लुनाचार्स्की ने अपनी बहुत-सी कृतियों में शिक्षा की समस्याओं के विभिन्न पहलुओं का विवेचन किया है, जिनसे पाठक प्रस्तुत पुस्तक के पृष्ठों में परिचित हो चुके हैं। लेकिन १९२८ में दिये गये दो भाषणों– 'नये मानव की शिक्षा' और 'सोवियत स्कूल के शैक्षिक कार्यभार' में उन्होंने इनका अत्यधिक पूर्ण और चहुंमुखी विवेचन किया। इन भाषणों ने कुछ हद तक इस विषय पर उनके चिंतन का सार प्रस्तुत किया। वे कम्युनिस्ट शिक्षा के मूलभूत उद्देश्यों के बारे में लुनाचार्स्की के विचारों का संश्लेषण पेश करते हैं।

समाज और मनुष्य के रूपांतरण में स्कूल की भूमिका के बारे में लेनिन के विचारों को विकसित करते हुए और इस बात पर ज़ोर देते हुए कि समाजवादी स्कूल को "समाजवादी समाज की पहली सच्ची रूपरेखा होनी चाहिए" 'नये मानव की शिक्षा' व्याख्यान में लुनाचार्स्की ने स्कूल के शैक्षिक कार्यभारों तथा नैतिक, श्रम, शारीरिक और सौंदर्य-बोधी शिक्षा की अंतर्वस्तु और रूपों का गहन विश्लेषण किया।

[1] १९१८ में आयोजित शिक्षा पर पहली अखिल-रूसी कांग्रेस की एकीकृत श्रम स्कूल की घोषणा में घोषित पालीतकनीकी श्रम स्कूल के सिद्धांतों को व्यवहार में कार्यान्वित करने के लिए एक लंबी अवधि और कम्युनिस्ट

पार्टी तथा संपूर्ण सोवियत लोगों द्वारा काफ़ी सघन कार्य की आवश्यकता थी। दिसम्बर, १९७७ में सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति और सोवियत मंत्रिपरिषद द्वारा 'सामान्य स्कूलों के विद्यार्थियों के प्रशिक्षण और नैतिक शिक्षा के आगे सुधार और श्रम के लिए उनकी तैयारी पर' स्वीकृत निदेश ने ज़ोर दिया कि आज सोवियत सामान्य स्कूल "वस्तुतः संपूर्ण जनता का स्कूल है, जिसने निरंतर एकीकृत श्रम पालीतकनीकी स्कूल के लेनिनीय सिद्धांतों को कार्यान्वित किया है।"

[2] देखिये, टिप्पणी नं० 9, 'सोवियत निर्माण प्रणाली में शिक्षा के कार्यभार'।

[3] देखिये, टिप्पणी नं० 5, 'सर्वहारा राज्य को कैसे स्कूल की ज़रूरत है?'

[4] **शिक्षा पर सोवियत प्रदर्शनी** १९२७ में डेनमार्क में महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति की दसवीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में सोवियत शिक्षा-प्रणाली और सोवियत शिक्षाशास्त्र की उपलब्धियों को प्रदर्शित करने के लिए संगठित की गयी थी।

बाद के वर्षों में विदेशों में शिक्षा पर सोवियत प्रदर्शनियां एकाधिक बार आयोजित की गयीं। १९५५ में जेनेवा में यूनेस्को के अंतर्गत शिक्षा पर एक स्थायी सोवियत प्रदर्शनी क़ायम की गयी।

[5] यहां लुनाचार्स्की का इशारा लेनिन के लेख 'सहकारिता के बारे में' (१९२३) के एक अंश की ओर है: "सांस्कृतिक क्रांति अब हमारे देश को एक पूर्णतः समाजवादी देश में बदल देने के लिए काफ़ी है, परन्तु इस सांस्कृतिक क्रान्ति के रास्ते में शुद्धतः शिक्षा संबंधी (क्योंकि हम निरक्षर हैं) और भौतिक ढंग की बहुत बड़ी-बड़ी कठिनाइयां हैं (क्योंकि सुसंस्कृत होने के लिए हमें उत्पादन के भौतिक साधनों को निश्चित हद तक विकसित कर लेना चाहिये, हमारे पास निश्चित भौतिक आधार होना चाहिये)।"

[6] **नीत्शे**, फ़्रेडरिक (१८४४–१९००) – जर्मन भाववादी दार्शनिक, जिन्होंने "अतिमानव" का सिद्धांत पेश किया।

नीत्शे का नाम २०वीं सदी के पहले दशकों में यूरोप के (ख़ास तौर से जर्मनी के) सांस्कृतिक जीवन में अत्यंत प्रतिक्रियावादी धाराओं

से जुड़ा हुआ था। नीत्शेवाद नीत्शे के दर्शन और विचारधारा को साम्राज्यवाद की परिस्थितियों, अंधराष्ट्रवादियों और सैन्यवादियों की आकांक्षाओं पर लागू करने का परिणाम था; इसने अपनी अंतिम अभिव्यक्ति नाज़ीवाद में पायी। नाज़ियों ने उनकी शिक्षाओं की प्रतिक्रियावादी प्रवृत्तियों को चरम तक ले जाते हुए नीत्शे को अपना सिद्धांतकार घोषित किया।

[7] यहां लुनाचार्स्की का इशारा १९२८ में राइखस्टाग के चुनावों की ओर है, जिन्होंने जर्मनी में कम्युनिस्ट और सामाजिक-जनवादी पार्टियों के उम्मीदवारों को मिले वोटों की संख्या में काफ़ी वृद्धि प्रदर्शित की।

[8] महान इतालवी कवि दांते आलिगियेरी (१२६५–१३२१) की कृति 'दिव्य सुखांतिकी' से परोक्ष उद्धरण: "यहां प्रवेश करनेवालो, अपनी सभी आशाएं छोड़ दो" – नरक के द्वारों पर लिखे गये शब्द (भाग ३, 'नरक')।

[9] देखिये, टिप्पणी नं० 2 'सोवियत निर्माण प्रणाली में शिक्षा के कार्यभार'।

[10] लुनाचार्स्की का इशारा २८ आगस्त, १९१८ को हुई शिक्षा-कर्मियों की पहली अखिल-रूसी कांग्रेस में दिये गये लेनिन के भाषण की ओर है। समाजवादी समाज के निर्माण में नये समाजवादी स्कूल की भूमिका पर ज़ोर देते हुए लेनिन ने अपने भाषण में कहा कि ऐसे स्कूल का निर्माण "उस संघर्ष का एक महत्वपूर्ण अभिन्न अंग है, जो अब हम चला रहे हैं..." "शिक्षा के क्षेत्र में हमारा कार्य बुर्जुआ वर्ग का तख़्ता उलटने के संघर्ष का एक अंग है..." "... मेहनतकश लोग ज्ञान के लिए लालायित हैं क्योंकि यह उन्हें जीतने के लिए आवश्यक है... वे देखते हैं कि उनके संघर्ष के विजयी अंत के लिए शिक्षा कितनी अनिवार्य है।"

[11] लुनाचार्स्की ने २६ नवम्बर, १९२५ को नये रूस के मित्रों के जर्मन समाज के निमंत्रण पर बर्लिन में बीथोवेन हॉल में एक व्याख्यान दिया। इस सभा के बारे एक रिपोर्ट 'नारोद्नोय प्रोस्वेश्चेनिये ('जन-शिक्षा') पत्रिका, १९२६ में प्रकाशित हुई थी।

[2] **इकारस** – यूनानी पुराण कथा के अनुसार यह युवक डेडालस का बेटा था। पिता द्वारा बनाये मोम के पंखों पर समुद्र पार करने की कोशिश करते हुए जब वह सूर्य के निकट पहुंचा, तो मोम पिघल गया और इकारस समुद्र में गिर गया।

सोवियत स्कूल के शैक्षिक कार्यभार

सामाजिक अध्ययनों के शिक्षकों के सम्मेलन में दी गयी रिपोर्ट
२७ जून, १९२८

यहां प्रकाशित रिपोर्ट में अनेक मुद्दे अपने उद्देश्यों, संबद्ध समस्याओं और व्यक्त विचारों में 'नये मानव की शिक्षा' पर उस व्याख्यान से मिलते-जुलते हैं, जिसे लुनाचार्स्की ने सामाजिक अध्ययनों के अध्यापकों के सम्मेलन के आयोजन से एक महीने पहले भिन्न श्रोताओं के समक्ष दिया था।

[1] लेनिन ने अनेक अवसरों पर ज़ोर दिया कि समाजवाद का निर्माण "...जनसाधारण को पुनर्शिक्षित करने के धीमे और निरंतर कार्य से ही प्राप्त किया जा सकता है" (व्ला० इ० लेनिन, 'रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) के कार्यक्रम का मसविदा', १९१९)। ३ नवम्बर, १९२० को शिक्षा-कर्मियों के सम्मेलन में उनके भाषण के इसी मुख्य विचार को लुनाचार्स्की यहां स्पष्ट कर रहे हैं। लेनिन ने कहा: "हम यह यूटोपियाई विचार नहीं रखते कि मेहनतकश लोग समाजवादी समाज के लिए तैयार हैं... शिक्षा-कर्मियों और संघर्ष में हरावल दस्ते के रूप में कम्युनिस्ट पार्टी को मेहनतकश लोगों को प्रबुद्ध और प्रशिक्षित करने में सहायता करना अपना मुख्य कार्यभार मानना चाहिए, ताकि वे पुरानी प्रणाली से विरासत में प्राप्त पुरानी आदतों और दस्तूरों को उतार फेंक सकें... संपूर्ण समाजवादी क्रांति का यह मुख्य कार्यभार विभिन्न समस्याओं के विचार-विमर्श के दौरान कभी उपेक्षित नहीं किया जाना चाहिए..."

[2] यहां लुनाचार्स्की का इशारा २० जनवरी, १९१९ को दूसरी अखिल-रूसी ट्रेड-यूनियन कांग्रेस में लेनिन के भाषण के इस अंश की ओर है:

"मज़दूर पुराने समाज से चीन की विशाल दीवार द्वारा कभी नहीं अलग थे। उन्होंने पूंजीवादी समाज की परंपरागत मानसिकता का बहुत कुछ बनाये रखा है। मज़दूर ख़ुद 'नये लोग' बने बिना अथवा पुरानी दुनिया की गंदगी से साफ़ हुए बिना एक नये समाज का निर्माण कर रहे हैं; वे अब भी अपने घुटनों तक उस गंदगी में खड़े हैं। हम उस गंदगी को साफ़ करने का केवल सपना ही देख सकते हैं। यह सोचना बिल्कुल यूटोपियाई होगा कि यह गंदगी एक ही झटके में साफ़ हो जायेगी।"

[3] **"स्वतंत्र बच्चों" के स्कूल** – "स्वतंत्र शिक्षा" के सिद्धांत के आधार पर अपने कार्य संगठित करनेवाले स्कूल (१९वीं सदी के उत्तरार्ध और २०वीं सदी के प्रारंभ में बुर्जुआ शिक्षाशास्त्र की एक धारा; इसका आदर्श बच्चों की शक्तियों और योग्यताओं का निर्बाध, स्वतंत्र विकास – व्यक्तित्व का पूर्ण विकास – था)।

रूस में "स्वतंत्र शिक्षा" के विचारों को अंशतः "स्वतंत्र बाल-भवन" में लागू किया गया, जो १९०६ में मास्को में खोला गया था और १९०९ तक काम करता रहा।

[4] यहां लुनाचार्स्की का इशारा मार्क्स की 'पूंजी' के निम्नलिखित उद्धरण की ओर है: "मकड़ी ठीक बुनकर की तरह ही जाला बुनती है और शहद की मक्खी इस ख़ूबी के साथ अपनी कोठरियां बनाती है कि बहुत से वास्तुकार देख कर सिर नीचा कर लेते हैं। लेकिन अनाड़ी से अनाड़ी वास्तुकार और अच्छी से अच्छी शहद की मक्खी में फ़र्क़ यह होता है कि वास्तुकार वास्तव में भवन बनाने के पहले उसे अपनी कल्पना में बनाता है।"

[5] देखिये, टिप्पणी नं० 8, 'स्कूल का दर्शन और क्रांति'।

[6] ७ अक्तूबर, १९७७ को सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के विशेष अधिवेशन द्वारा स्वीकृत सोवियत समाजवादी जनतंत्र संघ का संविधान ज़ोर देता है कि आज सोवियत संघ में "एक विकसित समाजवादी समाज का निर्माण हो चुका है... यह परिपक्व समाजवादी सामाजिक संबंधों का समाज है, जिसमें सभी वर्गों और सामाजिक संस्तरों के

एक-दूसरे के निकट आने और उसकी सभी जातियों एवं उपजातियों की क़ानूनी और वास्तविक समानता तथा उनके बीच बिरादराना सहयोग के आधार पर जनता के एक नये ऐतिहासिक समुदाय – सोवियत जनता – का गठन हुआ है।"

संविधान कहता है: "विकसित समाजवादी समाज कम्युनिज़्म के मार्ग पर एक स्वाभाविक, तर्कसंगत चरण है। सोवियत राज्य का सर्वोच्च लक्ष्य वर्गहीन कम्युनिस्ट समाज निर्मित करना है।"

[7] देखिये, 'वर्ग स्कूल पर'।

[8] **माख़वाद** – दर्शन और विज्ञान की कार्यप्रणाली में एक आत्मवादी-भाववादी धारा, जो आस्ट्रियाई भौतिकविज्ञानी और दार्शनिक **एर्न्स्ट माख़** (१८३८–१९१६) और उनके अनुयायियों की रचनाओं के प्रभाव में २०वीं सदी के प्रारंभ में अस्तित्व में आयी। आत्मवादी भाववाद की भावना के अनुसार माख़वादियों ने दावा किया कि संसार "अनुभवों का समुच्चय" है और अतः विज्ञान का काम मात्र उन अनुभवों का वर्णन करना है। माख़वाद ने अपने को "प्राकृतिक विज्ञानों का दर्शन" के रूप में प्रतिष्ठापित किया और दर्शन में भौतिकवाद और भाववाद दोनों से ऊपर होने की कोशिश की। लेनिन ने अपनी कृति 'भौतिकवाद और आलोचनात्मक अनुभववाद' (१९०९) में इन मिथ्या दावों और माख़वाद की आत्मगतवादी भाववादी स्वरूप की तीव्र आलोचना की।

[9] **ओब्लोमोव** – १९वीं सदी के सुप्रसिद्ध रूसी लेखक गोंचारोव के उपन्यास का मुख्य पात्र, एक भूदास-स्वामी ज़मींदार, जो दूसरों की मदद के बिना अपने कपड़े तक नहीं पहन सकता था।

[10] लुनाचार्स्की के दिमाग़ में 'ड्यूहरिंग मत-खंडन' (१८७७-७८) में एंगेल्स द्वारा व्यक्त विचार हैं। इस कृति में (भाग ३, 'समाजवाद') में एंगेल्स लिखते हैं: "... जिस प्रकार अपने ज़माने में पुराना मैनुफ़ैक्चर और उसके प्रभाव में पहले से अधिक विकासमान दस्तकारी, शिल्पी संघों के सामंती बंधनों से टकरायी थी, उसी प्रकार अब आधुनिक उद्योग,

जिसका और भी पूर्ण विकास हो चुका है, उन सीमाओं से टकरा रहा है, जिनके भीतर पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली ने जड़ जमा रखा है। नयी उत्पादक शक्तियां अभी से उनका उपयोग करनेवाली पूंजीवादी प्रणाली से आगे निकल गयी हैं। उत्पादक शक्तियों तथा उत्पादन प्रणाली के बीच चलनेवाला यह संघर्ष मनुष्य के मन के भीतर उत्पन्न नहीं हुआ है... उसका हमारे मन के बाहर, वस्तुगत अस्तित्व है और यहां तक कि वह उन मनुष्यों की इच्छा तथा कार्यों से भी स्वतंत्र है, जिन्होंने इस संघर्ष को आरंभ किया है। आधुनिक समाजवाद इस वास्तविक संघर्ष के मानसिक प्रतिबिम्ब के सिवाय और कुछ नहीं है। वह मनुष्यों के मन में और सबसे पहले इस संघर्ष से प्रत्यक्ष रूप में उत्पीड़ित वर्ग के, मज़दूर वर्ग के, मन में इस संघर्ष का वैचारिक प्रतिबिंब है।"

11 **पाव्लोव**, इ० प० (१८४९–१९३६) – सुप्रसिद्ध सोवियत शरीरक्रिया-विज्ञानी, उच्चतर तंत्रिकाक्रियाओं के भौतिकवादी सिद्धांत के निर्माता। जानवरों और मनुष्य में मस्तिष्क की उच्चतर क्रियाओं के अध्ययन के प्रति संगत भौतिकवादी दृष्टिकोण का आधार "प्रतिबंधित प्रतिवर्तों" – अवयव की जटिल अनुकूलन प्रतिक्रियाएं, जो ख़ास परिस्थितियों के प्रत्युत्तर में उत्पन्न होती हैं – का उनका सिद्धांत है।

त्रेत्याकोव कला गैलरी (मास्को) – रूसी और सोवियत कला-कृतियों का सबसे बड़ा संग्रहालय। उसका नाम इसके संस्थापक, रूसी कला-जगत् की सुप्रसिद्ध हस्ती प० म० त्रेत्याकोव (१८३२–१८९८) के नाम पर रखा गया है। त्रेत्याकोव ने, जिन्होंने १८५६ में कला-चित्र जमा करने शुरू किये, अपने समक्ष राष्ट्रीय कला की एक ऐसी गैलरी बनाने का उद्देश्य रखा, जो सबकी पहुंच के भीतर हो। १८९२ में उन्होंने अपने संग्रह को मास्को नगर को प्रदान कर दिया। १९१८ में त्रेत्याकोव गैलरी का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। सोवियत सत्ता के वर्षों में उसकी कलाकृतियों के संग्रह में दसगुनी वृद्धि हुई है।

नाम-निर्देशिका

अनातोली वसील्येविच लुनाचार्स्की (१८७५–१९३३) १९१७ से १९२९ तक सोवियत संघ के पहले शिक्षा जन-कमिसार थे।

लुनाचार्स्की ने शिक्षा के संगठन और मार्गदर्शन में महान भूमिका अदा की। एक प्रकांड विद्वान और सुसंस्कृत व्यक्ति के रूप में उन्होंने नये सामान्य स्कूल के जटिल निर्माण-कार्यों के समाधान और जन-शिक्षा के कार्य में व्यापक श्रमिक समुदाय को खींचने में विशाल योगदान किया। एक लेखक और पत्रकार के रूप में लुनाचार्स्की ने समृद्ध साहित्यिक विरासत छोड़ी। उन्होंने सोवियत संस्कृति के विभिन्न पहलुओं पर अनेकानेक रचनाएं लिखीं। शिक्षा और पालन-पोषण संबंधी विषयों पर लुनाचार्स्की के भाषणों और लेखों का यह संग्रह उनकी विरासत का महत्वपूर्ण अंग है।